**(सरकारी गजट उत्तर प्रदेश भाग-4 में प्रकाशित)**

*सचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज की विज्ञप्ति संख्या परिषद् – **9/989**, के सातत्य में शैक्षिक सत्र **2020-21** के लिए स्वीकृत नवीनतम पाठ्यक्रम पर आधारित एकमात्र पाठ्य-पुस्तक*

# हिन्दी

## कक्षा-11

- गद्य
- कथा साहित्य
- काव्य
- संस्कृत दिग्दर्शिका


*सम्पादकद्वय*

**डॉ० रमेश कुमार उपाध्याय**
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच०डी०
भूतपूर्व साहित्य विभागाध्यक्ष,
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज

**डॉ० योगेन्द्र नारायण पाण्डेय**
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत),
बी० एड०, पी-एच०डी०
स्नातकोत्तर (शिक्षा प्रशासन) वरिष्ठ प्रवक्ता
महगाँव इण्टर कॉलेज,
महगाँव, कौशाम्बी


**माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ० प्र०, प्रयागराज द्वारा**
**स्वीकृत पाठ्यक्रम पर आधारित**


**संस्करण 2020-21**

# प्राक्कथन

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ0प्र0, प्रयागराज द्वारा नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार हिन्दी विषय में 100 अंकों का एक प्रश्न-पत्र निर्धारित किया गया है। उत्तीर्णांक 33 अंक और समय 3 घण्टे है।

हिन्दी साहित्य में समय-समय पर युगानुरूप परिस्थितियाँ दिखायी देती हैं। बदलते समय को साहित्य ने दक्षतापूर्वक ग्रहण किया है और पाठकों के समक्ष प्रस्तुत भी किया है। साहित्य के विभिन्न रूपों में गद्य को सर्वथा गम्भीर माना गया है, क्योंकि इसमें बौद्धिकता के साथ व्यावहारिकता का आग्रह अधिक दिखायी देता है। पहले यह विधा काव्य के ही निकट समझी जाती थी, परन्तु आज उपन्यास, कहानी, निबन्ध आदि अनेक रूपों में इसने अपनी अलग क्षमता प्रदर्शित की है। इन सबको विस्तार से प्रस्तुत करना एक छोटी-सी पुस्तक के लिए सम्भव नहीं है। प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक **'गद्य'** के प्रस्तुतीकरण में ध्यान रखा गया है कि माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ0 प्र0 द्वारा निर्धारित **कक्षा-11** के पाठ्यक्रमानुसार यह विद्यार्थी और सुधी अध्यापकों के लिए बोधगम्य हो।

छायावाद के बाद का समय तो हिन्दी गद्य के लिए स्वर्णयुग कहा जा सकता है। यह ऐसा समय था जब देश ने पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़कर स्वाधीनता के मुक्त वातावरण में साँस ली। स्वतन्त्रता के बाद के साहित्य में राष्ट्र के नवनिर्माण पर बल दिया गया। इस युग के निबन्ध समसामयिक जन-समस्याओं के भी दर्पण हैं। प्रस्तुत पुस्तक में साहित्य के बदलते स्वरूप के परिप्रेक्ष्य में इसका दर्शन होगा। ऐसा लगता है कि यह प्रक्रिया अभी भी प्रवहमान है। यह स्वाभाविक ही है कि साहित्य भविष्य में भी समाज का दर्पण बना रहे।

गद्य के अन्तर्गत सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम से सम्बन्धित नवीन जानकारी दी गयी है, तो **'काव्य'** के अन्तर्गत रचनाओं का संकलन करते समय कवियों के कालक्रम पर विशेष ध्यान दिया गया है। **'काव्य'** में कबीर, जायसी, सूर, तुलसीदास, केशवदास, बिहारी, भूषण, सेनापति, देव एवं घनानन्द की चर्चित रचनाओं का संकलन विद्यार्थियों की रुचि एवं स्तर के अनुकूल किया गया है ताकि विद्यार्थी पाठ्यवस्तु को सरलता से ग्रहण कर सकें। विद्यार्थियों की सुविधा हेतु प्रत्येक पाठ के प्रारम्भ में कवि-परिचय तत्पश्चात् काव्य-रचना और अन्त में प्रश्न-अभ्यास दिये गये हैं, जिससे विद्यार्थी परीक्षा के अनुरूप तैयारी कर सकें।

कथा साहित्य में जिन कहानियों का संकलन किया गया है, वे हिन्दी के आधुनिक काल की देन हैं। **'कथा साहित्य'** में पाँच चर्चित लेखकों की श्रेष्ठ कहानियों का संकलन किया गया है। विद्यार्थियों की सुविधा एवं उन्हें कहानी विधा का विधिवत ज्ञान प्रदान करने के उद्देश्य से प्रस्तुत संकलन में भूमिका के अन्तर्गत हिन्दी कहानी का गद्य साहित्य में स्थान, कहानी की परिभाषा, कहानी के प्रकार, कहानी के प्रमुख तत्त्वों का विवेचन एवं कहानी के उद्भव एवं विकास का पूर्ण विवरण दिया गया है।

हिन्दी का पूर्ण ज्ञान कराने के उद्देश्य से संस्कृत के अन्तर्गत दस पाठों का समावेश किया गया है। व्याकरण की समुचित जानकारी के लिए हिन्दी एवं संस्कृत व्याकरण को भी इस पाठ्यपुस्तक में स्थान दिया गया है।

यद्यपि पुस्तक को उपयोगी बनाने का भरसक प्रयास किया गया है, तथापि लेखन में सम्भावनाएँ सर्वदा विद्यमान रहती हैं। भविष्य में यदि विद्वज्जनों की ओर से रचनात्मक सुझाव आये तो उनका स्वागत किया जायेगा। यदि उनके सुझावों से पुस्तक और समृद्ध हो, तो हम उनके आभारी होंगे।

**–संपादक एवं प्रकाशक**

**माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज द्वारा 2021**
**की परीक्षा के लिए निर्धारित नवीन पाठ्यक्रम**

# हिन्दी

## कक्षा-11

**पूर्णांक : 100**

☞ इस विषय में 100 अंकों का एक प्रश्न-पत्र तीन घण्टे का होगा। सम्पूर्ण प्रश्न-पत्र दो खण्डों में विभाजित है—

**(क)** गद्य, पद्य, खण्डकाव्य, नाटक और कहानी।

**(ख)** संस्कृत–गद्य, पद्य, निबन्ध, काव्य सौन्दर्य के तत्त्व, संस्कृत व्याकरण और अनुवाद।

## खण्ड - 'क'

**50 अंक**

1. **हिन्दी गद्य का विकास** (गद्य की पाठ्य-पुस्तक में दिये गये पाठों पर आधारित विभिन्न कालों में गद्य की भाषा-संरचना, विधाओं में परिवर्तन, युग-प्रवर्तक लेखकों का योगदान एवं प्रमुख रचनाएँ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न। **1× 5 = 5 अंक**
2. **काव्य साहित्य का विकास** (विविध कालों की काव्य प्रवृत्तियाँ, उनमें परिवर्तन, प्रतिनिधि कवि एवं उनकी प्रमुख कृतियाँ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न। **1× 5 = 5 अंक**
3. पाठ्यक्रम में निर्धारित गद्यांशों पर आधारित पाँच प्रश्न। **2× 5 = 10 अंक**
4. पाठ्यक्रम में निर्धारित पद्यांशों पर आधारित पाँच प्रश्न। **2× 5 = 10 अंक**
5. (क) संकलित गद्य के पाठों के लेखकों का साहित्यिक परिचय, जीवनी, कृतियाँ तथा भाषा-शैली।
   (शब्द सीमा अधिकतम 80) **3 + 2 = 5 अंक**

   (ख) **काव्य-सौष्ठव**—कवि-परिचय, जीवनी, कृतियाँ, साहित्यिक विशेषताएँ।
   (शब्द सीमा अधिकतम 80) **3 + 2 = 5 अंक**
6. **कहानी**—चरित्र-चित्रण, कहानी के तत्त्व एवं तथ्यों पर आधारित लघु उत्तरीय प्रश्न।
   (शब्द सीमा अधिकतम 80) **5 × 1 = 5 अंक**
7. **नाटक**—निर्धारित नाटक की विशेषताएँ एवं पात्रों के चरित्र-चित्रण पर आधारित लघु उत्तरीय प्रश्न।
   (शब्द सीमा अधिकतम 80) **5 × 1 = 5 अंक**

## खण्ड - 'ख' 50 अंक

8. (क) पठित पाठ्य-पुस्तक के निर्धारित पाठों के संस्कृत गद्य का संदर्भ सहित हिन्दी में अनुवाद। **2 + 5 = 7 अंक**

   (ख) पठित पाठ्य-पुस्तक के निर्धारित पाठों के संस्कृत पद्य का संदर्भ सहित हिन्दी में अनुवाद। **2 + 5 = 7 अंक**

9. पाठों पर आधारित अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों का संस्कृत में उत्तर (कोई दो प्रश्न करना है)। **2 + 2 = 4 अंक**

10. **काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व**

   **(क) सभी रस**–(परिभाषा, उदाहरण एवं पहचान) **1 + 1 = 2 अंक**

   **(ख) अलंकार**–(1) शब्दालंकार–अनुप्रास, यमक, श्लेष (परिभाषा अथवा उदाहरण) **2 अंक**

   (2) अर्थालंकार–उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, सन्देह, भ्रान्तिमान, अनन्वय, प्रतीप, दृष्टान्त तथा अतिशयोक्ति (परिभाषा एवं उदाहरण)

   **(ग) छन्द**– (1) मात्रिक–चौपाई, दोहा, सोरठा, रोला, कुण्डलिया, हरिगीतिका, बरवै (लक्षण एवं उदाहरण) **1 + 1 = 2 अंक**

   (2) वर्णवृत्त–इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, सवैया, मत्तगयंद, सुमुखी, सुन्दरी, बसन्ततिलका (लक्षण एवं उदाहरण)

   (3) मुक्तक–मनहर (लक्षण एवं उदाहरण)

11. **निबन्ध**–हिन्दी में मौलिक अभिव्यक्ति। दिये हुए विषय पर निबन्ध, (जनसंख्या, पर्यावरण, स्वास्थ्य शिक्षा आदि की जानकारी हेतु इन विषयों पर भी निबन्ध पूछे जायेंगे)। **2 + 7 = 9 अंक**

   **संस्कृत व्याकरण**–(क्रम संख्या 13 एवं 14 से वस्तुनिष्ठ प्रश्न पूछे जायेंगे)

12. **(क) सन्धि**– (1) स्वर सन्धि–एचोऽयवायावः एङः पदान्तादति, एङिपररूपम् **1 × 3 = 3 अंक**

   (2) व्यंजन–स्तोः श्चुनाश्चुः, ष्टुनाष्टुः, झलांजशझशि, खरिच, मोऽनुस्वारः, तोर्लि, अनुस्वारस्ययि पर सवर्णः

   (3) विसर्ग–विसर्जनीयस्य सः, ससजुषोरुः, अतोरोरप्लुतादप्लुते, हशिच, रोरि

   **(ख) समास**–अव्ययीभाव, कर्मधारय, बहुव्रीहि। **1 + 1 = 2 अंक**

13. **(क) शब्दरूप**– (1) संज्ञा–आत्मन्, नामन्, राजन्, जगत्, सरित्। **1 + 1 = 2 अंक**

   (2) सर्वनाम–सर्व, इदम्, यद्।

   **(ख) धातुरूप**– लट्, लोट्, विधिलिङ्, लङ्, लृट् (परस्मैपदी) स्था, पा, नी, दा, कृ, चुर् **1 + 1 = 2 अंक**

   **(ग) प्रत्यय**– (1) कृत्–क्त, क्त्वा, तब्यत्, अनीयर् **1 + 1 = 2 अंक**

   (2) तद्धित–त्व, मतुप, वतुप

   **(घ) विभक्ति परिचय**– अभितः परितः, समयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि, येनाङ्गविकारः, सहयुक्तेऽप्रधाने, नमः स्वस्तिस्वाहा स्वधाऽलंवषड्योगाच्च, षष्ठीशेषे, यतश्चनिर्धारणम् **1 + 1 = 2 अंक**

14. हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद। **2 + 2 = 4 अंक**

## ➡ हिन्दी व्याकरण–

(क) शब्दों में सूक्ष्म अन्तर

(ख) अनेकार्थी शब्द

(ग) अनेक शब्दों के लिए एक शब्द (केवल दो शब्द)

(घ) वाक्यों में त्रुटिमार्जन (लिंग, वचन, कारक, काल एवं वर्तनी सम्बन्धी त्रुटियाँ)

(ङ) लोकोक्ति एवं मुहावरे

निर्धारित पाठ्य वस्तु (माध्यमिक शिक्षा परिषद् द्वारा निर्धारित अंश) का अध्ययन करना होगा।

## खण्ड - 'क'

| पुस्तक का नाम | लेखक का नाम | पाठ का नाम |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| **गद्य हेतु निर्धारित पाठ्य वस्तु** | *1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र | भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है? |
| | *2. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी | महाकवि माघ का प्रभात वर्णन |
| | 3. श्यामसुन्दर दास | भारतीय साहित्य की विशेषताएँ |
| | *4. सरदार पूर्ण सिंह | आचरण की सभ्यता |
| | *5. डॉ. सम्पूर्णानन्द | शिक्षा का उद्देश्य |
| | 6. रायकृष्ण दास | आनन्द की खोज, पागल पथिक |
| | *7. राहुल सांकृत्यायन | अथातो घुमक्कड़, जिज्ञासा |
| | *8. रामवृक्ष बेनीपुरी | गेहूँ बनाम गुलाब |
| | *9. सड़क सुरक्षा | |
| **काव्य हेतु निर्धारित पाठ्य वस्तु** | *1. कबीरदास | साखी, पदावली |
| | 2. मलिक मुहम्मद जायसी | नागमती वियोग-वर्णन |
| | *3. सूरदास | विनय, वात्सल्य, भ्रमरगीत |
| | *4. गोस्वामी तुलसीदास | भरत-महिमा, कवितावली, गीतावली, दोहावली, विनय पत्रिका |
| | 5. केशवदास | स्वयंवर-कथा, विश्वामित्र और जनक की भेंट |
| | *6. कविवर बिहारी | भक्ति एवं श्रृंगार |
| | *7. महाकवि भूषण | शिवा-शौर्य, छत्रसाल प्रशस्ति |
| | 8. विविधा | सेनापति, देव, घनानन्द |
| | *9. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र | प्रेम माधुरी, यमुना छवि |
| | *10. जगन्नाथदास रत्नाकर | उद्धव प्रसंग, गंगावतरण |
| **कथा साहित्य हेतु निर्धारित पाठ्य वस्तु** | *1. प्रेमचन्द | बलिदान |
| | *2. जयशंकर 'प्रसाद' | आकाशदीप |
| | *3. भगवतीचरण वर्मा | प्रायश्चित |
| | *4. यशपाल | समय |
| | 5. जैनेन्द्र कुमार | ध्रुव यात्रा |

## ➡ नाटक (सहायक पुस्तक)

| पुस्तक तथा लेखक | प्रकाशक | अनुदानित जिले |
|---|---|---|
| 1. कुहासा और किरण लेखक–श्री विष्णु प्रभाकर | भारतीय साहित्य प्रकाशन, 204-ए वेस्ट एण्ड रोड, सदर, मेरठ। | मेरठ, आजमगढ़, मुरादाबाद, बलिया रायबरेली, झाँसी, सुल्तानपुर, लखीमपुर खीरी, बदायूँ, पीलीभीत। |
| 2. आन की मान लेखक–श्री हरिकृष्ण प्रेमी | कौशाम्बी प्रकाशन, दारागंज प्रयागराज | वाराणसी, लखनऊ, इटावा, बरेली, फर्रूखाबाद, एटा, शाहजहाँपुर, उन्नाव, हमीरपुर। |
| 3. गरूड़ ध्वज लेखक–लक्ष्मीनारायण मिश्र | साहित्य भवन, प्रा. लि., 93, के. पी. कक्कड़ रोड, प्रयागराज। | आगरा, गोरखपुर, जौनपुर, फैजाबाद बिजनौर, फतेहपुर, गोण्डा प्रतापगढ़, बहराइच, ललितपुर। |
| 4. सूत पुत्र लेखक–डॉ. गंगासहाय 'प्रेमी' | रामप्रसाद एण्ड सन्स, अस्पताल रोड, आगरा। | प्रयागराज, सहारनपुर, अलीगढ़, मुजफ्फर-नगर, गाजीपुर, मेनपुरी, जालौन, हरदोई, बाराबंकी। |
| 5. राजमुकुट लेखक–श्री व्यथित 'हृदय' | सिम्बुल लैंग्वेज कारपोरेशन अस्पताल रोड, आगरा | कानपुर, बुलन्दशहर, मथुरा, बस्ती, मिर्जापुर, देवरिया, बांदा, रामपुर। |

## खण्ड - 'ख'

# संस्कृत दिग्दर्शिका

### ● पाठ्य वस्तु

*1. वन्दना
*2. प्रयागः
*3. सदाचारोपदेशः
*4. हिमालयः
*5. गीतामृतम्
6. चरैवेति-चरैवेति
*7. लोभः पापस्य कारणम्।
8. विश्वबन्द्याः कवयः
9. चतुरश्चौरः
10. सुभाषचन्द्रः
परिशिष्ट, व्याकरण, शब्दरूप, धातुरूप।

**नोटः** सामान्य हिन्दी के छात्रों को '*' वाले पाठों का अध्ययन करना है।

●●

# विषय-सूची

## खण्ड - 'क'

## गद्य


- यह संकलन ........ 11
- भूमिका ........ 13
- हिन्दी गद्य के विकास पर आधारित प्रश्न ........ 25
- अध्ययन-अध्यापन ........ 33

1. * **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** ........ 35
   भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?
2. * **आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी** ........ 42
   महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन
3. **श्यामसुन्दरदास** ........ 49
   भारतीय साहित्य की विशेषताएँ
4. * **सरदार पूर्णसिंह** ........ 57
   आचरण की सभ्यता
5. * **डॉ० सम्पूर्णानन्द** ........ 66
   शिक्षा का उद्देश्य
6. **राय कृष्णदास** ........ 74
   आनन्द की खोज, पागल पथिक
7. * **राहुल सांकृत्यायन** ........ 79
   अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा
8. * **रामवृक्ष बेनीपुरी** ........ 87
   गेहूँ बनाम गुलाब
9. * **सड़क सुरक्षा** ........ 94

- परिशिष्ट (टिप्पणियाँ) ........ 96


## काव्य


- यह संकलन ........ 99
- भूमिका ........ 100
- काव्य साहित्य के विकास पर आधारित प्रश्न ........ 116
- अध्ययन-अध्यापन ........ 129

1. * **कबीर दास** ........ 131
   साखी, पदावली
2. **मलिक मुहम्मद जायसी** ........ 141
   नागमती-वियोग-वर्णन

3. * **सूरदास** .................... 152
विनय, वात्सल्य, भ्रमर-गीत
4. * **गोस्वामी तुलसीदास** .................... 162
भरत-महिमा, कवितावली, गीतावली, दोहावली, विनयपत्रिका
5. **केशवदास** .................... 177
स्वयंवर-कथा, विश्वामित्र और जनक की भेंट
6. * **कविवर बिहारी** .................... 187
भक्ति एवं शृंगार
7. * **महाकवि भूषण** .................... 194
शिवा-शौर्य, छत्रसाल-प्रशस्ति
8. **विविधा** .................... 202
सेनापति, देव, घनानन्द
● **परिशिष्ट ( टिप्पणियाँ )** .................... 211

## कथा साहित्य

● यह संकलन .................... 218
● भूमिका .................... 219
● संकलित कहानियों का सारांश .................... 227
1. * **प्रेमचन्द** .................... 230
बलिदान
2. * **जयशंकर प्रसाद** .................... 236
आकाशदीप
3. * **भगवतीचरण वर्मा** .................... 243
प्रायश्चित
4. * **यशपाल** .................... 248
समय
5. **जैनेन्द्र कुमार** .................... 253
ध्रुव-यात्रा

## नाटक

● **निर्धारित नाटकों का आलोचनात्मक अध्ययन** .................... 264
1. **कुहासा और किरण** .................... 266
विष्णु प्रभाकर
2. **आन का मान** .................... 268
हरिकृष्ण 'प्रेमी'
3. **गरुड़ध्वज** .................... 270
पं. लक्ष्मीनारायण मिश्र
4. **सूतपुत्र** .................... 272
डॉ. गंगासहाय 'प्रेमी'
5. **राजमुकुट** .................... 274
व्यथित हृदय

# खण्ड - 'ख'

## संस्कृत दिग्दर्शिका


**प्रथमः पाठः** *वन्दना ........ 276
**द्वितीयः पाठः** *प्रयागः ........ 278
**तृतीयः पाठः** *सदाचारोपदेशः ........ 281
**चतुर्थः पाठः** *हिमालयः ........ 284
**पञ्चमः पाठः** *गीतामृतम् ........ 286
**षष्ठः पाठः** चरैवेति-चरैवेति ........ 289
**सप्तमः पाठः** *लोभः पापस्य कारणम् ........ 291
**अष्टमः पाठः** विश्ववन्द्याः कवयः ........ 293
**नवमः पाठः** चतुरश्चौरः ........ 295
**दशमः पाठः** सुभाषचन्द्रः ........ 298

**काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व** ........ 301
- रस ........ 301
- छन्द ........ 306
- अलंकार ........ 311
- पत्र-लेखन ........ 318
- निबन्ध लेखन ........ 321

**1. संस्कृत व्याकरण** ........ 335
(क) सन्धि ........ 335
(ख) शब्द-रूप ........ 340
(ग) धातु-रूप ........ 344
(घ) प्रत्यय ........ 347
(ङ) विभक्ति-परिचय ........ 349
(च) समास ........ 351

**2. हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद** ........ 353

**3. हिन्दी व्याकरण** ........ 367
(क) शब्दों में सूक्ष्म अन्तर ........ 367
(ख) अनेकार्थी शब्द ........ 370
(ग) अनेक शब्दों के लिए एक शब्द (केवल दो शब्द) ........ 373
(घ) वाक्यों में त्रुटिमार्जन (लिंग, वचन, कारक, काल एवं वर्तनी सम्बन्धी त्रुटियाँ) ........ 378
(ङ) लोकोक्ति एवं मुहावरे ........ 383


### सामान्य हिन्दी के छात्रों के लिए

**सामान्य हिन्दी** के छात्रों को '*' वाले पाठों का अध्ययन करना है।

| **पुस्तक का नाम** | |
|---|---|
| **गद्य–** | भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, सरदार पूर्णसिंह, डॉ0 सम्पूर्णानन्द, राहुल सांकृत्यायन, रामवृक्ष बेनीपुरी, सड़क सुरक्षा। |
| **पद्य–** | संत कबीरदास, सूरदास, गोस्वामी तुलसीदास, कविवर बिहारी, महाकवि भूषण। |
| **कथा साहित्य–** | प्रेमचन्द, जयशंकर 'प्रसाद', भगवतीचरण वर्मा, यशपाल। |
| **नाटक–** | कुहासा और किरण, आन का मान, गरुड़ध्वज, सूतपुत्र, राजमुकुट। |
| **संस्कृत दिग्दर्शिका–** | वन्दना, प्रयागः, सदाचारोपदेशः, हिमालयः, गीतामृतम्, लोभः पापस्य कारणम्। |

# खण्ड–'क'

# गद्य

## यह संकलन

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश द्वारा निर्धारित नवीनतम पाठ्यक्रमानुसार कक्षा-11 के छात्र-छात्राओं के लिए हिन्दी विषय की अनिवार्य पाठ्य-पुस्तक के रूप में गद्य गरिमा का प्रणयन किया गया है। इस पुस्तक का प्रणयन करते समय सभी उद्देश्यों का पूरा ध्यान रखा गया है। इसका **पहला उद्देश्य** यह रहा है कि छात्र-छात्राएँ हिन्दी गद्य के विगत सौ-डेढ़ सौ वर्षों के विकास से पूर्णरूपेण परिचित हो जायँ।

वस्तुतः हिन्दी गद्य से यहाँ तात्पर्य खड़ीबोली गद्य से है जिसका साहित्य में अनवरत् प्रयोग भारतेन्दु से आरम्भ होता है। इसीलिए भारतेन्दु को आधुनिक युग का जनक कहा जाता है। उन्हें ही इस बात का श्रेय है कि वे हिन्दी साहित्य को मध्य युग से निकालकर आधुनिक युग में ले आये। भारतेन्दु-युग में हिन्दी गद्य का स्वरूप स्पष्ट और स्थिर होने लगा। द्विवेदी-युग में वह व्याकरण के नियमों से अनुशासित हुआ। उसका परिष्कार और परिमार्जन हुआ। छायावाद-युग में वह अलंकृत हुआ। उसमें लाक्षणिकता का समावेश हुआ। उसकी अभिव्यंजना शक्ति बढ़ी और वह सूक्ष्म, कोमल भावनाओं तथा सुकुमार एवं रंगीन कल्पना चित्रों को व्यक्त करने में समर्थ हुआ। प्रगतिवादी-युग में ठोस सामाजिक यथार्थ को व्यक्त करने की प्रतिबद्धता के कारण उसमें कुछ परुषता और खरापन आया है और वह जीवन के बाह्य विस्तार को अभिव्यक्ति देने में समर्थ हुआ। इस युग की समाप्ति के साथ ही देश स्वतंत्र हुआ। हमारी आकांक्षाएँ बढ़ीं। हम देश-विदेश की साहित्यिक गतिविधियों से परिचित होने, आधुनिक जीवन के द्वंद्व, तनाव, संकुलता और बुद्धिवादिता को ग्रहण करने और जीवन की दौड़ में आगे बढ़ने के लिए व्यग्र हो उठे। इस पूरे परिवेश को अभिव्यक्ति देने के प्रयत्न में हिन्दी गद्य साहित्य में अनेक विधाओं का विकास हुआ। उसकी शब्द-सम्पदा में वृद्धि हुई। वह आधुनिक जीवन के बाह्य विस्तार को समेटने और आन्तरिक रहस्यों को व्यंजित करने में समर्थ हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के गद्य से आगे चलकर मोहन राकेश के गद्य तक की यात्रा के क्रम को छात्र-छात्राएँ भूमिका के अन्तर्गत विस्तार से पढ़ सकेंगे।

प्रस्तुत संकलन का **दूसरा उद्देश्य** कक्षा-11 के छात्रों को हिन्दी-गद्य की सभी प्रमुख विधाओं से परिचित कराना है। इसलिए इस संकलन में उन विधाओं को छोड़कर जिनका अध्ययन छात्रों को स्वतंत्र रूप से कराया जायेगा, शेष सभी को प्रतिनिधित्व दिया गया है। संस्मरण, शब्दचित्र, गद्यगीत, रिपोर्ताज, यात्रा-वृत्त आदि निबंधों की परम्परा में विकसित होनेवाली गद्य की अपेक्षाकृत

नयी विधाएँ हैं। प्रस्तुत संकलन में रामवृक्ष बेनीपुरी का **'गेहूँ बनाम गुलाब'** शब्दचित्र का, राय कृष्णदास का **'आनन्द की खोज, पागल पथिक'** गद्यगीत का प्रतिनिधित्व करनेवाली रचनाएँ समाविष्ट हैं।

इस संकलन का **तीसरा उद्देश्य** निबंधों के सभी प्रकार के रूपों और शैलियों से छात्रों को परिचित कराना है। इसलिए निबंधों का चयन करते समय उनके सभी रूपों को समाविष्ट करने की चेष्टा की गयी है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का **'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?'** निबंध विचारात्मक होने के साथ ही तत्कालीन सुधारवादी चेतना को व्यक्त करनेवाला है। द्विवेदी जी का **'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन'** वर्णनात्मक निबंध है। वह इस तथ्य का भी साक्षी है कि द्विवेदी-युगीन लेखक हिन्दी के अभावों को दूर करने के लिए संस्कृत से सामग्री लेने में संकोच नहीं करता था। अध्यापक पूर्णसिंह ने हिन्दी-गद्य को लाक्षणिक बनाकर उसे एक नया आयाम दिया था। उनका **'आचरण की सभ्यता'** निबंध भावावेगपूर्ण प्रवाहमयी शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। महापंडित राहुल सांकृत्यायन हमारे देश के सबसे बड़े घुमक्कड़ थे। **'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा'** में घुमक्कड़ी के लिए आवश्यक प्रवृत्तियों और साधनों का उत्तम प्रतिपादन हुआ है।

डॉ0 सम्पूर्णानन्द देश के जाने-माने विद्वान् और शिक्षाविद् थे। उनका **'शिक्षा का उद्देश्य'** निबंध शिक्षा के व्यावहारिक एवं नैतिक दोनों प्रकार के उद्देश्यों पर प्रकाश डालनेवाला विचारात्मक शैली का श्रेष्ठ निबंध है। बाबू श्यामसुन्दर दास हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् और अनन्य सेवक थे। उन्होंने साहित्य के सभी पक्षों पर सुगम एवं सुबोध शैली में विचार किया है। उनका **'भारतीय साहित्य की विशेषताएँ'** निबन्ध उनके व्यक्तित्व के अनुरूप है। इस प्रकार प्रस्तुत संग्रह में वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, भावात्मक, आत्म-व्यंजक, व्यंग्यात्मक आदि सभी शैलियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले निबंध संगृहीत हैं।

छात्रों का मानसिक संस्कार करना, उनके जीवन के प्रति रचनात्मक, स्वस्थ एवं व्यापक दृष्टिकोण विकसित करना, मानवीय भावनाओं एवं मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करना तथा राष्ट्र की एकता और अखण्डता की चेतना जागृत करना साहित्य-शिक्षा का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की पूर्ति संकलन का **चौथा उद्देश्य** है। प्रस्तुत संकलन इस लक्ष्य की पूर्ति में पूर्णतः समर्थ है। निबंधों का चयन करते समय उनमें निहित मन्तव्यों एवं मूल्यों के प्रभाव और उपयोगिता पर भी विचार किया गया है। संकलन के सभी निबंध सुरुचिपूर्ण हैं। उनमें नैतिक एवं रचनात्मक दृष्टि को ही महत्त्व दिया गया है। वे देश की एकता के पोषक एवं व्यापक मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करनेवाले हैं।

जीवन के सभी उपादानों और तत्त्वों की भाँति भाषा एवं साहित्य भी गतिशील तत्त्व है। इनका स्वरूप समय एवं युग-प्रवृत्ति के परिवर्तन के साथ बदलता रहता है। इसलिए साहित्य के विद्यार्थी को संस्कारतः आग्रह-मुक्त होना चाहिए। न उसमें प्राचीन के प्रति मोह होना चाहिए और न नवीनता के प्रति आग्रह। प्रस्तुत संकलन में प्राचीन एवं नवीन के संतुलन पर भी ध्यान रखा गया है। हिन्दी भाषा और साहित्य का जो रूप आज है वह पहले नहीं था और आगे भी वह नहीं रहेगा, उसमें विकास और परिष्कार होता आया है और होता रहेगा। हर जीवित भाषा में यह विकास-प्रक्रिया चलती रहती है। इसलिए आज के मानदण्ड को आधार बनाकर भारतेन्दु-कालीन भाषा एवं वर्तनी को सुधारना या बदलना इतिहास के साथ अन्याय करना होगा। साथ ही भविष्य के लिए आज से ही कोई आग्रह बनाकर चलना भी अनुचित होगा।

विश्वास है कि छात्र-छात्राएँ इस पाठ्य-पुस्तक की सहायता से साहित्य और भाषा के प्रति संतुलित दृष्टि विकसित करने में समर्थ होंगे।

●●

# भूमिका

**गद्य क्या है?–**छन्द, ताल, लय एवं तुकबन्दी से मुक्त तथा विचारपूर्ण एवं वाक्यबद्ध रचना को 'गद्य' कहते हैं। गद्य शब्द 'गद्' धातु के साथ 'यत्' प्रत्यय जोड़ने से बनता है। 'गद्' का अर्थ होता है—बोलना, बतलाना या कहना। सामान्यतः दैनिक जीवन में प्रयुक्त होनेवाली बोलचाल की भाषा में गद्य का ही प्रयोग किया जाता है। गद्य का लक्ष्य विचारों या भावों को सहज, सरल एवं सामान्य भाषा में विशेष प्रयोजन सहित संप्रेषित करना है। ज्ञान-विज्ञान से लेकर कथा-साहित्य आदि की अभिव्यक्ति का माध्यम साधारण व्यवहार की भाषा गद्य ही है, जिसका प्रयोग सोचने, समझने, वर्णन, विवेचन आदि के लिए होता है। वक्ता जो कुछ सोचता है, उसे तत्काल अनायास गद्य के रूप में व्यक्त भी कर सकता है। ज्ञान-विज्ञान की समृद्धि के साथ ही गद्य की उपादेयता और महत्ता में वृद्धि होती जा रही है। किसी कवि या लेखक के हृदयगत भावों को समझने के लिए ज्ञान की आवश्यकता है और गद्य ज्ञान-वृद्धि का एक सफल साधन है। इसीलिए इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, धर्म, दर्शन आदि के क्षेत्र में ही नहीं, अपितु नाटक, कथा-साहित्य आदि में भी इसका एकच्छत्र प्रभाव स्थापित हो गया है। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो आधुनिक हिन्दी-साहित्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना गद्य का आविष्कार ही है और गद्य का विकास होने पर ही हमारे साहित्य की बहुमुखी उन्नति भी सम्भव हो सकी है।

हिन्दी गद्य के सम्बन्ध में यह धारणा है कि मेरठ और दिल्ली के आस-पास बोली जानेवाली खड़ीबोली के साहित्यिक रूप को ही हिन्दी गद्य कहा जाता है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से ब्रजभाषा, खड़ीबोली, कन्नौजी, हरियाणवी, बुन्देलखण्डी, अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी इन आठ बोलियों को हिन्दी गद्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है। हिन्दी गद्य के प्राचीनतम् प्रयोग हमें 'राजस्थानी' एवं 'ब्रजभाषा' में मिलते हैं।

**गद्य और पद्य में अन्तर–**हिन्दी साहित्य को दो भागों में बाँटा गया है—(1) गद्य साहित्य तथा (2) पद्य (काव्य) साहित्य। विषय की दृष्टि से गद्य और पद्य में यह अन्तर है कि गद्य के विषय विचार-प्रधान और पद्य के विषय भाव-प्रधान होते हैं। दूसरी भाषाओं के समान इस भाषा के साहित्य में भी पद्य का अवतरण गद्य के बहुत पहले हुआ है। पद्य में कार्य की अनुभूति, उक्ति-वैचित्र्य, सम्प्रेषणीयता और अलंकार की प्रवृत्ति देखी जाती है, जबकि गद्य में लेखक अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है। गद्य में तर्क, बुद्धि, विवेक, चिन्तन का अंकुश होता है तो पद्य में स्वतन्त्र कल्पना की उड़ान होती है। गद्य में शब्द, वाक्य, अर्थ आदि सभी प्रायः सामान्य होते हैं, जबकि पद्य में विशिष्ट। कविता शब्दों की नयी सृष्टि है, इसलिए इसका कोई भी शब्द कोशीय अर्थ से प्रतिबन्धित नहीं होता, जीवन की अनुभूतियों से उसका भावात्मक सम्बन्ध होता है, जबकि गद्य भावात्मक सन्दर्भों के स्थान पर वस्तुनिष्ठ प्रतीकात्मक अर्थ ग्रहण करता है। गद्य को 'निर्माणात्मक अभिव्यक्ति' कहा गया है अर्थात् ऐसी अभिव्यक्ति जिसमें निर्माता के चारों ओर प्रयोग के लिए तैयार शब्द रहते हैं। गद्य की भाषा काव्य की अपेक्षा अधिक स्पष्ट, व्याकरणसम्मत और व्यवस्थित होती है। उक्ति-वैचित्र्य और अलंकरण की प्रवृत्ति भी गद्य की अपेक्षा काव्य में अधिक होती है। गद्य में विस्तार अधिक होने के कारण किसी बात को खोलकर कहने की प्रवृत्ति रहती है, जबकि काव्य में किसी बात को संकेत रूप में ही कहने की प्रवृत्ति होती है। गद्य में यथार्थ, वस्तुपरक और तथ्यात्मक वर्णन पाया जाता है, जबकि काव्य में वर्णन सूक्ष्म, संकेतात्मक होता है। गद्य में विरला ही वाक्य अपूर्ण होता है, काव्य में विरला ही वाक्य पूर्ण होता है। इस प्रकार गद्य और पद्य विषय, भाषा, प्रस्तुति, शिल्प आदि की दृष्टि से अभिव्यक्ति के सर्वथा भिन्न दो रूप हैं और दोनों के दृष्टिकोण एवं प्रयोजन भी भिन्न होते हैं। गद्य में व्याकरण के नियमों की अवहेलना नहीं की जा सकती, जबकि पद्य में व्याकरण के नियमों पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। यद्यपि ऐसा नहीं है कि गद्य में भावपूर्ण चिन्तनशील मनःस्थितियों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती और ऐसा भी नहीं है कि पद्य में विचारों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती, किन्तु मुख्य रूप से गद्य एवं पद्य की प्रकृति उपर्युक्त प्रकार की ही होती है।

# हिन्दी गद्य का स्वरूप और विकास

विषय और परिस्थिति के अनुरूप शब्दों का सही स्थान-निर्धारण तथा वाक्यों की उचित योजना ही उत्तम गद्य की कसौटी है। यद्यपि वर्तमान में प्रचलित हिन्दी भाषा खड़ीबोली का परिनिष्ठित एवं साहित्यिक रूप है, परन्तु खड़ीबोली स्वयं अपने आपमें कोई बोली नहीं है। इसका विकास कई क्षेत्रीय बोलियों के समन्वय के फलस्वरूप हुआ है। विद्वानों ने इसके प्राचीन रूप पर आधारित तत्त्वों की खोज करने के बाद यह माना है कि खड़ीबोली का विकास मुख्यतः ब्रजभाषा एवं राजस्थानी गद्य से हुआ है। कुछ विद्वान् इसको दक्खिनी एवं अवधी गद्य का सम्मिश्रित रूप भी मानते हैं। आज हिन्दी गद्य का जो साहित्यिक रूप है; उसमें कई क्षेत्रीय बोलियों का विकास दृष्टिगोचर होता है।

हिन्दी गद्य के आविर्भाव के सम्बन्ध में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। कुछ दसवीं शताब्दी मानते हैं तो बहुतेरे तेरहवीं शताब्दी। 'राजस्थानी' एवं 'ब्रजभाषा' में हमें गद्य के प्राचीनतम् प्रयोग मिलते हैं। राजस्थानी गद्य की समय-सीमा ग्यारहवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तथा ब्रजभाषा गद्य की समय-सीमा चौदहवीं शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक मानना उचित प्रतीत होता है। अतः यह स्पष्ट है कि दसवीं-ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी के मध्य ही हिन्दी गद्य का आविर्भाव हुआ था। अध्ययन की दृष्टि से हिन्दी गद्य साहित्य के विकास को निम्नलिखित कालक्रमों में विभाजित किया जा सकता है—

1. पूर्व भारतेन्दु-युग अथवा प्राचीन युग — 13वीं शताब्दी से 1868 ई० तक
2. भारतेन्दु-युग — सन् 1868 ई० से 1900 ई० तक
3. द्विवेदी-युग — सन् 1900 ई० से 1922 ई० तक
4. शुक्ल-युग (छायावादी युग) — सन् 1922 ई० से 1938 ई० तक
5. शुक्लोत्तर युग (छायावादोत्तर युग) — सन् 1938 ई० से 1947 ई० तक
6. स्वातन्त्र्योत्तर युग — सन् 1947 ई० से अब तक।

## ➥ प्राचीन-युगीन गद्य

इस युग के अन्तर्गत हिन्दी गद्य के उद्भव से भारतेन्दु युग के पूर्व तक का समय लिया गया है। वस्तुतः हिन्दी गद्य-साहित्य के आदिकाल में हिन्दी गद्य के प्राचीन रूप ही यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं। राजस्थान व दक्षिण भारत में तो अवश्य हिन्दी गद्य के प्रारम्भिक रूप की झलक मिलती है। उत्तर भारत में ब्रजभाषा गद्य के ही उदाहरण अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। प्राचीन युग में काव्य-रचना के साथ-साथ गद्य-रचना की दिशा में भी कुछ स्फुट प्रयास लक्षित होते हैं। 'राउलवेल' (चम्पू), 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' और 'वर्णरत्नाकर' इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। कुछ विद्वान 'राउलवेल' को ही राजस्थानी गद्य की प्राचीनतम रचना मानते हैं। 'राउलवेल' एक शिलांकित कृति है, जिसका पाठ मुम्बई के 'प्रिंस ऑफ वेल्स' संग्रहालय से उपलब्ध कर प्रकाशित कराया गया है। विद्वानों ने इसका रचनाकाल दसवीं शताब्दी माना है। इसकी रचना 'राउल' नायिका के नख-शिख वर्णन के प्रसंग में हुई है। आरम्भ में इस कृति के रचयिता 'रोडा' ने राउल के सौन्दर्य का वर्णन पद्य में किया है और फिर गद्य का प्रयोग किया गया है। दूसरी रचना 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' है, जिसकी रचना महाराज गोविन्द चन्द्र के सभा-पण्डित दामोदर शर्मा ने बारहवीं शताब्दी में की थी। इस ग्रन्थ की भाषा का एक उदाहरण इस प्रकार है—"वेद पढ़ब, स्मृति अभ्यासिब, पुराण देखब, धर्म करब।" इससे गद्य और पद्य दोनों शैलियों की हिन्दी भाषा में तत्सम शब्दावली के प्रयोग की बढ़ती हुई प्रवृत्ति का पता चलता है। मैथिली के प्राप्त ग्रन्थों में ज्योतिरीश्वर का वर्णरत्नाकर ग्रन्थ ऐसी तीसरी रचना है। मैथिली हिन्दी में रचित गद्य की यह पुस्तक डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी और पण्डित बबुआ मिश्र के सम्पादन में बंगाल एशियाटिक सोसायटी से प्रकाशित हो चुकी है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार इसकी रचना चौदहवीं शताब्दी में हुई होगी।

इसके उपरान्त तो राजस्थानी गद्य, ब्रजभाषा गद्य और खड़ीबोली का प्रारम्भिक गद्य-साहित्य आदि ही विचारणीय सामग्री है। हिन्दी-परिवार की भाषाओं में गद्य का उन्मेष सर्वप्रथम **राजस्थानी गद्य** में प्राप्त होता है। राजस्थानी में गद्य-परम्परा निश्चित रूप से ईसा की तेरहवीं शताब्दी से प्रारम्भ होती है। राजस्थानी गद्य के प्रारम्भिक विकास में जैन विद्वानों का विशेष योग रहा है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह ब्रजभाषा के गद्य-साहित्य की अपेक्षा अधिक प्राचीन व समृद्ध है। राजस्थानी गद्य दानपत्रों, पट्टे, परवानों,

सनदों, वार्त्ताओं और टीकाओं आदि के रूप में उपलब्ध होता है। उस पर संस्कृत अपभ्रंश की परम्परा का प्रभाव स्वाभाविक रूप से पड़ा है। राजस्थानी की प्रमुख गद्य रचनाएँ हैं—'आराधना', 'बालशिक्षा टीका', 'जगत् सुन्दरी प्रयोगमाला', 'अतिचार', 'नवकार', 'व्याख्यान टीका', 'सबतीर्थ नमस्कार स्तवन', 'तत्त्वविचार प्रकरण', 'पृथिवीचन्द्र चरित्र', 'धनपाल कथा', 'तपोगच्छ गुर्वावली', 'अंजनासुन्दरी कथा' आदि।

**ब्रजभाषा गद्य** का सूत्रपात संवत् 1400 वि0 के आस-पास माना जाता है। ब्रजभाषा गद्य का प्राचीनतम् रूप आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार सन् 1457 ई0 तक का ही उपलब्ध होता है और उन्होंने योगियों के धार्मिक उपदेशों में से कुछ उद्धृत कर उसे संवत् 1400 वि0 के आस-पास का ब्रजभाषा गद्य मान लिया है। किन्तु भाषा-प्रयोग की दृष्टि से ब्रजभाषा गद्य के प्राचीनतम नमूने सन् 1513 ई0 के पूर्व के नहीं हैं। धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों के साथ वैद्यक, ज्योतिष, इतिहास, भूगोल, गणित, धनुर्वेद, शकुन आदि विषयों का प्रतिपादन ब्रजभाषा गद्य में हुआ है। ब्रजभाषा गद्य-साहित्य स्थूलतः चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—मौलिक, टीकात्मक, अनूदित और पद्य-प्रधान रचनाओं में यत्र-तत्र प्रयुक्त टिप्पणीपरक गद्य। मौलिक (स्वतन्त्र) गद्य वल्लभ सम्प्रदाय के वचनामृतों, वार्त्तग्रन्थों, कथा पुस्तकों, दर्शन विषयक ग्रन्थों, वैद्यक, ज्योतिष आदि उपयोगी विषयों, रचनाओं और पत्रों, शिलालेखों तथा कागज-पत्रों के रूप में उपलब्ध होता है। टीका, टिप्पणी, तिलक और भावना शीर्षक से व्याख्यात्मक गद्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार अनुवाद अथवा छायानुवाद रूप में लिखित ग्रन्थ भी प्राप्त हैं। गद्य-प्रधान ग्रन्थों में टिप्पणीपरक गद्य चर्चा, वार्त्ता, तिलक या वचनिका शीर्षक लिखा गया है। सत्रहवीं शताब्दी तक की लिखी हुई जो रचनाएँ उपलब्ध हैं, उनमें गोस्वामी विट्ठलनाथ का 'शृंगार रस-मण्डन', गोकुलनाथ जी की 'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता', नाभादास जी का 'अष्टयाम', बैकुण्ठमणि शुक्ल के 'अगहन महातम' एवं 'वैसाख महातम', ध्रुवदास कृत 'सिद्धान्त विचार' तथा लल्लूलाल कृत 'माधव विलास' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्हीं के साथ टीकाओं की परम्परा भी चलती रही। प्रमुख टीकाएँ भुवनदीपिका टीका, एकादशस्कन्ध टीका, हितसंवर्धिनी टीका, धरनी-धरदास की टीका और लोकनाथ की गद्य-पद्यमयी टीका।

खड़ीबोली गद्य की प्रामाणिक रचनाएँ सत्रहवीं शताब्दी ई0 से प्राप्त होती हैं। इस सन्दर्भ में सन् 1623 में लिखित जटमल कृत 'गोरा बादल की कथा' उल्लेख्य है। आरम्भिक खड़ीबोली गद्य ब्रजभाषा से प्रभावित है। खड़ीबोली नाम पड़ने का कारण सम्भवतः इसका 'खरा' होना है। कुछ लोग मधुर ब्रजभाषा की तुलना में इसके कर्कश होने के कारण इसे 'खड़ीबोली' कहना उपयुक्त समझते हैं। कुछ लोगों की धारणा है कि मेरठ के आसपास की पड़ी बोली को खड़ी बनाकर लश्करों में प्रयोग किया गया, इसलिए इसे 'खड़ीबोली' कहते हैं। ब्रजभाषा के प्रभाव से मुक्त खड़ीबोली गद्य का आरम्भ उन्नीसवीं शताब्दी से माना जा सकता है। 'खड़ीबोली' गद्य का एक रूप 'दक्खिनी गद्य' का है। मुहम्मद तुगलक के समय में अच्छी संख्या में उत्तर के मुसलमान दक्षिण में जाकर बस गये। इसके साथ इनकी भाषा भी दक्षिण पहुँची और वहाँ 'दक्खिनी हिन्दी' का विकास हुआ। दक्खिनी हिन्दी में गद्य और पद्य दोनों ही लिखे गये हैं। दक्खिनी खड़ीबोली गद्य का प्रामाणिक रूप सन् 1580 से प्राप्त है। इनमें प्रायः सूफी धर्म के सिद्धान्त लिखे गये हैं।

## खड़ीबोली गद्य का विकास

खड़ीबोली गद्य के प्रारम्भिक उन्नायकों में विशेष रूप से चार लेखकों का उल्लेख किया जाता है—मुंशी सदासुख लाल (राय), मुंशी इंशा अल्ला खाँ, सदल मिश्र, पंडित लल्लूलाल। इन लेखकों से कुछ पहले पटियाला दरबार के रामप्रसाद निरंजनी और मध्य प्रदेश के पं0 दौलतराम ने साधु और व्यवस्थित खड़ीबोली का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया था। रामप्रसाद निरंजनी के **'भाषा योग वाशिष्ठ'** की भाषा अधिक परिष्कृत है। मुंशी सदासुख लाल (राय) दिल्ली के रहनेवाले थे। इन्होंने विष्णुपुराण का एक अंश लेकर उसे खड़ीबोली गद्य में प्रस्तुत किया। सदा सुखलाल की रचना 'सुखसागर' है। धार्मिक ग्रंथ होने के कारण इसमें पंडिताऊपन अधिक है। वाक्य-रचना पर फारसी शैली का प्रभाव है। मुंशी इंशा अल्ला खाँ ने **'रानी केतकी की कहानी'** लिखी है। इनकी शैली हास्य प्रधान और चटपटी है। तुकान्त वाक्यों का प्रयोग अधिक है। मुंशीजी लखनऊ के नवाब सआदत अली खाँ के दरबार में रहते थे। इसलिए उनकी शैली में तड़क-भड़क, शोखी और रंगीनी अधिक है। सदल मिश्र जिला आरा (बिहार) के निवासी थे। यह कलकत्ता के फोर्ट विलियम कालेज में हिन्दी के शिक्षक के रूप में कार्य करते थे। **'नासिकेतोपाख्यान'** इनकी प्रसिद्ध रचना है। इसमें पूर्वीपन अधिक है और वाक्य-रचना शिथिल है। पं0 लल्लूलाल आगरा में रहनेवाले गुजराती ब्राह्मण थे। यह भी फोर्ट विलियम कालेज में नियुक्त थे। इनकी प्रसिद्ध रचना **'प्रेमसागर'** है। इसका गद्य ब्रजभाषा के प्रभाव से मुक्त नहीं है। कहीं-कहीं तुक-मैत्री

का मोह खटकता है। भाषा परिमार्जित नहीं है। जिस समय ये लेखक हिन्दी खड़ीबोली गद्य में कहानी और आख्यान लिख रहे थे, उसी समय ईसाई मिशनरी भी ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए बाइबिल का हिन्दी खड़ीबोली गद्य में अनुवाद कराकर उसका प्रचार कर रहे थे। जनता के जीवन में घुलमिल कर उसे अपने अनुकूल बनाने के प्रयत्न में इन लोगों ने हिन्दी भाषा की सेवा की और हिन्दी गद्य के विकास में विशेष योग दिया। सामान्यतः ईसाई मिशनरियों की भाषा भी अपरिमार्जित और ऊबड़-खाबड़ है। तात्पर्य यह है कि अठारहवीं शताब्दी ई० के अन्तिम चरण और उन्नीसवीं शताब्दी ई० के प्रथम चरण में खड़ीबोली गद्य के किसी भी लेखक की भाषा पूर्णतः परिमार्जित नहीं है। इन लेखकों का खड़ीबोली गद्य के विकास-क्रम में ऐतिहासिक महत्त्व अवश्य है।

## ➡ भारतीय जागरण

उन्नीसवीं शताब्दी ई० के द्वितीय एवं तृतीय चरण में हमारे देश में सामाजिक और सांस्कृतिक ढाँचे में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। शिक्षा का पश्चिमीकरण हुआ। यातायात के साधनों में वृद्धि हुई। सामन्तवादी शासन-व्यवस्था का अन्त हुआ। अंग्रेजों की नौकरशाही पर आधृत नवीन शासन व्यवस्था ने अराजकता की स्थिति को दूर कर देश में शान्ति स्थापित की। 'प्रेसों' की स्थापना के साथ अनेक प्रकार की पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरम्भ हुआ। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार-प्रसार से नवीन चेतना की लहर दौड़ गयी और अनेक सामाजिक, धार्मिक आन्दोलनों ने देश के जन-मानस को मथकर उसे आधुनिक विचारधाराओं को ग्रहण करने की स्थिति में ला दिया। इस नवीन चेतना के अभ्युदय को भारतीय जागरण (रेनेसाँ) की संज्ञा दी गयी है। इस जागरण को देशव्यापी रूप देने और इसकी गति को तीव्र करने में 'ब्रह्म समाज' (सन् 1828), 'रामकृष्ण मिशन', 'प्रार्थना समाज' (सन् 1867), 'आर्य समाज' (सन् 1867) और 'थियोसॉफिकल सोसाइटी' (सन् 1882) जैसी संस्थाओं का विशेष योगदान माना जाता है। उत्तर भारत में इस नये जागरण का आरम्भ अंग प्रदेश से हुआ। यहीं से समाचार-पत्रों के प्रकाशन की शुरुआत भी हुई। यह प्रदेश ब्रजभाषा केन्द्र से बहुत दूर पड़ता था। इसलिए नवीन चेतना को व्यक्त करने का दायित्व खड़ीबोली गद्य को ही वहन करना पड़ा। यह स्मरणीय है कि इस समय तक उत्तर भारत में पंजाब से लेकर बंग प्रदेश तक खड़ीबोली गद्य का प्रसार हो चुका था।

## ➡ भारतेन्दु-युगीन गद्य

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में हिन्दी साहित्य का आकाश **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** (सन् 1850-1885) के पूर्ण प्रकाश से जगमगा उठा। उससे कुछ वर्ष पूर्व हिन्दी खड़ीबोली गद्य के क्षेत्र में दो महत्त्वपूर्ण व्यक्ति गद्य की दो भिन्न-भिन्न शैलियों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। एक थे राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द (सन् 1823-1895), दूसरे थे राजा लक्ष्मणसिंह (सन् 1826-1896)। राजा शिवप्रसाद ने हिन्दी को पाठशालाओं के पाठ्यक्रम में स्थान दिलाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। वे हिन्दी का प्रचार तो चाहते थे किन्तु उसे अधिक नफ़ीस बनाकर उर्दू जैसा रूप प्रदान करने के पक्ष में थे। दूसरी ओर राजा लक्ष्मणसिंह संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के पक्षपाती थे। भारतेन्दु ने इन दोनों सीमान्तों के बीच का मार्ग ग्रहण किया। उन्होंने हिन्दी गद्य को वह रूप प्रदान किया जो हिन्दी-प्रदेश की जनता की मनोभावना के अनुकूल था। उनका गद्य व्यावहारिक, सजीव और प्रवाहपूर्ण है। उन्होंने यथासंभव लोक-प्रचलित शब्दावली का प्रयोग किया है। उनके वाक्य छोटे-छोटे और व्यंजक हैं। कहावतों, लोकोक्तियों और मुहावरों के यथोचित प्रयोग से उनकी भाषा प्राणवान् और स्वाभाविक बन गयी है। इतना होने पर भी भारतेन्दु का गद्य पूर्ण परिमार्जित नहीं है। उनका गद्य भी ब्रजभाषा के प्रयोगों से प्रभावित है और कहीं-कहीं व्याकरण की त्रुटियाँ खटकती हैं।

# भारतेन्दु के सहयोगी

भारतेन्दुजी का व्यक्तित्त्व अत्यन्त प्रभावशाली था। वे सुलझे हुए व्यक्ति थे। लोक की गति को पहचानते थे। जनता की भावनाओं को समझते थे और देश एवं जाति की उन्नति के लिए सर्वस्व अर्पित करने के लिए तत्पर रहते थे। उनके समकालीन लेखक उन्हें अपना आदर्श मानते थे। बालकृष्ण भट्ट (सन् 1844-1914), पं० प्रतापनारायण मिश्र (सन् 1856-1894), राधाचरण गोस्वामी (सन् 1859-1925), बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' (सन् 1855-1923), ठाकुर जगमोहन सिंह (सन् 1857-1899), राधाकृष्णदास (सन् 1865-1907), किशोरीलाल गोस्वामी (सन् 1865-1932) आदि गद्य लेखक उनसे प्रेरित और प्रभावित थे। इन सभी लेखकों ने हिन्दी गद्य के विकास में पूरा सहयोग दिया। ये सभी गद्य लेखक पत्रकार भी थे। इनका उद्देश्य उद्बोधन, आह्वान, व्याख्या, टिप्पणी

आदि के द्वारा जनता को शिक्षित और प्रबुद्ध करना था। पं0 बालकृष्ण भट्ट इलाहाबाद से 'हिन्दी प्रदीप' नामक मासिक पत्र निकालते थे। इस पत्र में उनके निबंध प्रकाशित होते थे। भट्टजी संस्कृत के पंडित और अंग्रेजी के जानकार थे। उनकी भाषा-नीति उदार थी। आवश्यकतानुसार उन्होंने अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत एवं लोकभाषा सभी से शब्द लिये हैं। उनका व्यक्तित्त्व खरा था। इसलिए उनकी शैली में भी मृदुता के स्थान पर खरापन है। प्रतापनारायण मिश्र कानपुर से 'ब्राह्मण' पत्र निकालते थे। वे मनमौजी व्यक्ति थे। उनकी शैली में उनका फक्कड़पन स्पष्ट है। उनकी भाषा पर बैसवाड़ी बोली का विशेष प्रभाव है। उनकी भाषा में ठेठ ग्रामीण प्रयोग अधिक मिलते हैं। बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' 'आनन्दकादम्बिनी' का सम्पादन करते थे। उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ और शैली काव्यात्मक एवं अलंकृत है। उनके वाक्य लम्बे और समास-बहुल हैं। भारतेन्दु के अन्य सहयोगियों ने भाषा एवं शैली के सम्बन्ध में इन्हीं लेखकों का आदर्श सामने रखा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दी गद्य के विकास की दृष्टि से भारतेन्दु युग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

## ➡ द्विवेदी-युगीन गद्य

सन् 1900 तक भारतेन्दु युग की समाप्ति मानी जाती है। सन् 1900 से 1922 तक अर्थात् शताब्दी के प्रथम चरण को हिन्दी साहित्य में द्विवेदी-युग माना जाता है। इस युग को जागरण-सुधार काल भी कहा गया है। हिन्दी गद्य साहित्य के इतिहास में **पं0 महावीरप्रसाद द्विवेदी** (सन् 1864-1938) का आविर्भाव एक महत्त्वपूर्ण घटना है। द्विवेदीजी रेलवे के एक साधारण कर्मचारी थे। उन्होंने स्वेच्छा से हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, मराठी और बंगला भाषाओं का अध्ययन किया था। सन् 1903 में आपने रेलवे की नौकरी छोड़कर 'सरस्वती' पत्रिका का संपादन आरम्भ किया। 'सरस्वती' के माध्यम से आपने हिन्दी साहित्य की अभूतपूर्व सेवा की। द्विवेदीजी ने व्याकरणनिष्ठ, संयमित, सरल, स्पष्ट और विचारपूर्ण गद्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की, भाषा के प्रयोगों में एकरूपता लाने और उसे व्याकरण के अनुशासन में लाकर व्यवस्थित करने में द्विवेदीजी ने स्तुत्य प्रयास किया। इसी समय बाबू बालमुकुन्द गुप्त उर्दू से हिन्दी में आये। उन्होंने हिन्दी गद्य को मुहावरेदार सजीव और परिष्कृत करने में पूरा-पूरा ध्यान दिया। 'अनस्थिरता' शब्द के प्रयोग को लेकर द्विवेदीजी से उनका विवाद प्रसिद्ध है। इस युग में द्विवेदीजी के अतिरिक्त माधव मिश्र, गोविन्द नारायण मिश्र, पद्मसिंह शर्मा, सरदार पूर्णसिंह, बाबू श्यामसुन्दर दास, मिश्रबन्धु, लाला भगवानदीन, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि लेखकों ने हिन्दी गद्य के विकास में योग दिया। इस युग में गद्य साहित्य के विभिन्न रूपों का विकास हुआ और गंभीर निबंध, विवेचनापूर्ण आलोचनाएँ तथा मौलिक कहानियाँ, उपन्यास और नाटक लिखे गये। इसी युग में काशी में बाबू श्यामसुन्दर दास ने 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की और हिन्दी के उपयोगी एवं गंभीर साहित्य के निर्माण की दिशा में स्तुत्य प्रयास किया। 'सरस्वती' के अतिरिक्त 'इन्दु', 'सुदर्शन', 'समालोचक', 'प्रभा', 'मर्यादा', 'माधुरी' आदि पत्रिकाएँ इसी युग में प्रकाशित हुईं। द्विवेदी युग के उत्तरार्द्ध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और बाबू गुलाब राय ने चिन्तन-प्रधान गद्य के विकास में उल्लेखनीय कार्य किया। द्विवेदी युग में गद्य शैली के अनेक रूप सामने आये। पं0 महावीरप्रसाद द्विवेदी की साफ-सुथरी, संयमित, परिमार्जित प्रसन्न-शैली; बाबू श्यामसुन्दर दास की औदात्यपूर्ण व्यास शैली; गोविन्द नारायण मिश्र की तत्सम प्रधान, समास बहुल, पांडित्यपूर्ण शैली; बालमुकुन्द गुप्त की ओजस्वी, प्रवाहपूर्ण, तीखी, व्यंग्य शैली; मिश्र बन्धुओं की सूचना-प्रधान, तथ्यान्वेषिणी शैली; पद्मसिंह शर्मा की प्रशंसात्मक शैली; सरदार पूर्णसिंह की लाक्षणिक एवं आवेगशील शैली; चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की पांडित्यपूर्ण, व्यंग्यमयी शैली; गणेश शंकर विद्यार्थी की मर्मस्पर्शी, ओजस्विता, मूर्तविधायिनी शैली; पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की सुबोध और रमणीय गद्य-शैली; आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की चिन्तन-प्रधान, आत्मविश्वासमंडित, तत्त्वान्वेषिणी, समास शैली और बाबू गुलाब राय की सहज हास्यपूर्ण तथा विषयानुसार विचार-प्रधान एवं संयमित शैली के वैविध्य-पूर्ण विधान से द्विवेदी-युगीन गद्य-साहित्य अद्भुत गरिमा से मंडित हो गया है।

## ➡ छायावाद-युगीन गद्य

सन् 1919 में पंजाब के जलियाँवाला बाग में आयोजित सभा में निहत्थी तथा असहाय जनता को गोलियों से भून दिया गया। 1920 ई0 में गाँधीजी ने व्यापक असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया, किन्तु लगभग दो वर्ष बाद ही यह आन्दोलन स्थगित कर दिया गया। कुछ वर्ष बाद सन् 1931 में सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी भगतसिंह को फाँसी दी गयी। इन घटनाओं ने

राष्ट्रीय चेतना को और दृढ़ किया। युवकों का कल्पनाशील मानस कुछ कर गुजरने के लिए तड़पने लगा। इस युग में पराधीनता और विवशता की अनुभूति से आकुल होकर यदि कभी वेदना और पीड़ा के गीत गाये गये, तो दूसरे ही क्षण स्वाधीनता के लिए सतत संघर्ष की बलवती प्रेरणा से उत्साहित होकर स्फूर्ति और आत्म-विश्वास की भावना को मुखरित किया गया। द्विवेदी युग सब मिलाकर नैतिक मूल्यों के आग्रह का युग था। इसलिए नवीन भावनाओं से प्रेरित युग-लेखक इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप भाव-तरल, कल्पना-प्रधान एवं स्वच्छन्द चेतना से युक्त साहित्य रचना में प्रवृत्त हुए। यह प्रवृत्ति कविता और गद्य दोनों ही क्षेत्रों में लक्षित होती है। सन् 1919 से 1938 तक के काल-खण्ड को हिन्दी साहित्य के इतिहास में छायावाद-युग नाम दिया गया है। इस युग की सीमा में रचित गद्य अधिक कलात्मक हो गया है। उसकी अभिव्यंजना-शक्ति विकसित हुई है। वह चित्रण-प्रधान, लाक्षणिक, अलंकृत और कवित्वपूर्ण हो गया है। उसमें अनुभूति की सघनता और भावों की तरलता है। उसकी प्रकृति अन्तर्मुखी हो गयी है। रायकृष्णदास, वियोगी हरि, महाराजकुमार डॉ0 रघुवीर सिंह, पं0 माखनलाल चतुर्वेदी, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, 'पंत', 'निराला', नन्ददुलारे वाजपेयी, बेचन शर्मा 'उग्र', शिवपूजन सहाय आदि गद्य-लेखकों ने छायावाद-युगीन गद्य-साहित्य को समृद्ध किया है। द्विवेदी युग के उत्तरार्द्ध में जो लेखक सामने आये थे वे छायावाद-युग में भी लिखते रहे और उनकी प्रौढ़तम रचनाएँ इसी युग में पुस्तकाकार प्रकाशित हुईं। इनमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, बाबू गुलाब राय तथा पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी प्रमुख हैं। इनकी साहित्य चेतना का मूल स्वर द्विवेदी-युगीन ही है, किन्तु छायावाद युग के अतीत प्रेम, सहज रहस्यमयता और लाक्षणिकता के महत्त्व को इन लेखकों ने भी स्वीकार किया है। उपर्युक्त लेखकों में राय कृष्णदास और वियोगी हरि अपने भावपूर्ण प्रतीकात्मक गद्यगीतों के लिए, महाराजकुमार डॉ0 रघुवीर सिंह अपनी अतीतोन्मुखी भावतरल रहस्यात्मक कल्पना के लिए, माखनलाल चतुर्वेदी अपनी प्रखर राष्ट्रीयता एवं स्वच्छन्द आलंकारिक-शैली के लिए, जयशंकर प्रसाद अपने मर्मस्पर्शी कल्पनाचित्र के लिए, 'पंत' अपनी सुकुमार कल्पना और नाद-सौन्दर्य-प्रधान गद्य के लिए, 'निराला' अपनी अद्भुत व्यंग्यात्मकता और सहानुभूतिप्रवण रेखांकन क्षमता के लिए, महादेवी वर्मा अपनी करुण, संवेदना एवं मर्मस्पर्शी चित्र-विधान के लिए, नन्ददुलारे वाजपेयी अपने गंभीर अध्ययन और स्वतंत्र चिन्तन के लिए, बेचन शर्मा 'उग्र' अपनी तीखी प्रतिक्रिया और आवेगपूर्ण नाटकीय शैली के लिए तथा शिवपूजन सहाय अपनी ग्रामीण सरलता के लिए स्मरणीय हैं।

## ➡ छायावादोत्तर-युगीन गद्य

सन् 1936 के बाद देश की स्थिति में तेजी से परिवर्तन आरम्भ हुआ। सन् 1937 में कांग्रेस ने पूरे देश में अपने व्यापक प्रभाव का परिचय देते हुए छह प्रान्तों में अपना मंत्रिमंडल बना लिया। एक बार ऐसा लगा कि हम स्वतंत्रता के द्वार पर खड़े हैं। किन्तु शीघ्र ही निराश होना पड़ा। सन् 1939 में द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हो गया। कांग्रेस ने इंग्लैण्ड को युद्ध में सहायता देना इस शर्त पर स्वीकार किया कि वह शीघ्र भारत में एक स्वतंत्र जनतंत्रवादी सरकार की स्थापना करे। ब्रिटिश सरकार की ओर से कोई संतोषजनक प्रतिक्रिया न होने पर सन् 1939 में कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने त्यागपत्र दे दिया। सन् 1940 में आचार्य विनोबा भावे के नेतृत्व में व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया गया। सन् 1942 में 'क्रिप्स-मिशन' भारत आया और अपने उद्देश्य में असफल रहा। इसी वर्ष कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' का ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया। देश में उग्र आन्दोलन हुआ और ब्रिटिश सरकार ने उसका पूरी शक्ति से दमन किया। सन् 1945 में महायुद्ध समाप्त हुआ। सन् 1947 में भारत में विदेशी सत्ता का अन्त हुआ किन्तु इसके साथ ही देश का विभाजन भी हो गया। विभाजन के परिणामस्वरूप भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए और देश की जनता तबाह हुई। इन घटनाओं ने हिन्दी साहित्य को बहुत दूर तक प्रभावित किया। सन् 1936 के बाद से ही हम कल्पना के लोक से उतर कर ठोस जमीन पर आने की चेष्टा करने लगे थे। मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित लेखकों ने प्रगतिवादी साहित्य-सृजन के प्रति प्रतिबद्धता दिखायी थी।

राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना से प्रेरित लेखकों ने भी क्रमशः यथार्थवादी जीवन-दर्शन को महत्त्व देना आरम्भ किया। छायावादी युग के कई लेखक नयी भूमि पर पदार्पण कर नवीन युग-चेतना के अनुसार साहित्य रचना में प्रवृत्त हुए। फलस्वरूप सन् 1938 के बाद 'छायावाद' का अन्त हुआ। उसके बाद के साहित्य को छायावादोत्तर साहित्य कहा गया है। छायावादोत्तर-युग के साहित्यकार स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पूर्व से लिखते आ रहे थे और उसके बाद भी सक्रिय रहे हैं। इनमें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, शान्तिप्रिय द्विवेदी, रामधारीसिंह 'दिनकर', यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, जैनेन्द्र, 'अज्ञेय', नगेन्द्र, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, वासुदेवशरण अग्रवाल, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', भगवतशरण उपाध्याय आदि गद्य-लेखक हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के गद्य में पांडित्य और चिन्तन के साथ ही सहजता एवं सरसता का अद्भुत समन्वय है। भाषा पर द्विवेदीजी का असाधारण अधिकार है। उन्होंने हिन्दी गद्य में बाणभट्ट की समास-गुंफित ललित पदावली अवतरित कर उसे अद्भुत गरिमा प्रदान की है। शान्तिप्रिय द्विवेदी अपनी प्रभावग्राहिणी प्रज्ञा और भावोच्छ्वसित शैली के लिए प्रसिद्ध हैं। दिनकर के गद्य में विचारशीलता, विषयवैविध्य एवं व्यक्तित्त्व-व्यंजना तीनों का समन्वय है। यशपाल और 'अश्क' का गद्य सामाजिक यथार्थ के विविध स्तरों को व्यक्त करने से समर्थ है। भगवतीचरण वर्मा का गद्य सामाजिक, सहज, व्यावहारिक, प्रवाहपूर्ण एवं व्यंग्यगर्भित है। अमृतलाल नागर के गद्य में लखनवी तर्ज की एक विशेष प्रकार की रवानी है। मूलतः कथाकार होने के नाते इन लेखकों में वर्णनात्मक शैली का विशेष आकर्षण है। जैनेन्द्र का गद्य उनकी दार्शनिक मुद्रा और मनोवैज्ञानिक निगूढ़ता के लिए विख्यात है। 'अज्ञेय' अपनी बौद्धिकता के लिए प्रसिद्ध हैं। उनका गद्य चिन्तन-प्रधान एवं परिष्कृत होने के साथ ही व्यक्तित्व-व्यंजक और व्यंग्यगर्भित भी है। उन्होंने हिन्दी गद्य को आधुनिक परिवेश से जोड़ने का सफल प्रयास किया है। डॉ0 नगेन्द्र का गद्य सामान्यतः तर्क-प्रधान, विश्लेषण-परक और आत्मविश्वास की गरिमा से पूर्ण होता है किन्तु उसमें सन्दर्भ के अनुकूल नाटकीयता, व्यंग्य तथा बिम्ब-विधान भी लक्षित किया जा सकता है। रामवृक्ष बेनीपुरी अपने शब्द-चित्रों के लिए प्रसिद्ध हैं। ग्रामीण जीवन की निश्छल अभिव्यक्ति उनके गद्य को प्राणवान् बना देती है। बनारसीदास चतुर्वेदी की ख्याति उनके संस्मरणों, जीवनियों और रेखाचित्रों के लिए है। उनकी शैली रोचक और भाषा प्रवाहपूर्ण है। उनके छोटे-छोटे वाक्य अनुभव खण्डों को चित्रवत् प्रस्तुत करते चलते हैं। वासुदेवशरण अग्रवाल का गद्य सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक गरिमा से मंडित है। उसमें विद्वत्ता, विचारशीलता और सरसता का अद्भुत समन्वय है। कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' अपने राजनीतिक संस्मरणों और रिपोर्ताजों के लिए प्रसिद्ध हैं। करुणा, व्यंग्य और भावुकता के समावेश से उनका गद्य अत्यन्त आकर्षक हो गया है। भगवतशरण उपाध्याय इतिहास के चिरस्मरणीय घटनाओं को भावपूर्ण नाटकीय शैली में प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। उनका गद्य उनके इतिहास-ज्ञान एवं संस्कृति-बोध का परिचायक है।

## ➥ स्वातन्त्र्योत्तर-युगीन गद्य

इस युग के लेखकों में विद्यानिवास मिश्र, हरिशंकर परसाई, फणीश्वरनाथ 'रेणु', कुबेरनाथ राय, धर्मवीर भारती, शिवप्रसाद सिंह आदि उल्लेखनीय हैं। विद्यानिवास मिश्र अपनी मांगलिक दृष्टि, सांस्कृतिक चेतना, लोक-सम्पृक्ति एवं आधुनिक जीवन-बोध के लिए प्रसिद्ध हैं। उनका गद्य उनके व्यक्तित्त्व को साकार कर देता है। हरिशंकर परसाई ने सामाजिक और राजनीतिक जीवन की विसंगतियों पर तीखा व्यंग्य किया है। उन्होंने हिन्दी गद्य की व्यंग्य क्षमता को निखारा है। 'रेणु' का गद्य ध्वनि-बिम्बों के माध्यम से वातावरण को सजीव बनाने में सक्षम है। कुबेरनाथ राय ने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की गद्य-परम्परा को आगे बढ़ाया है। प्राचीन सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सन्दर्भों को नयी अर्थवत्ता प्रदान करके श्री राय ने हिन्दी गद्य को नयी भाव-भूमि प्रदान की है। धर्मवीर भारती गंभीर एवं विचारपूर्ण गद्य लिखते रहे हैं। यात्रावृत्त, रिपोर्ताज तथा व्यंग्य-विद्रूप लिखकर उन्होंने अपने गद्य को अपेक्षाकृत हल्की मनःस्थितियों से जोड़ने की चेष्टा की है। शिवप्रसाद सिंह लोक-चेतना से सम्पृक्त होते हुए भी व्यापक दृष्टि-सम्पन्न लेखक हैं। उनका गद्य मानव सम्बन्धी चेतना का वाहक है। इन लेखकों ने हिन्दी गद्य को सशक्त बनाया है, उसकी शब्द-सम्पदा में वृद्धि की है। उसे जीवन की बाह्य परिस्थितियों, सामाजिक सम्बन्धों, विसंगतियों, आधुनिक मानव के आंतरिक द्वन्द्वों एवं तनावों को व्यक्त करने में सक्षम बनाया है, अनेक नवीन कलात्मक गद्य-विधाओं का विकास किया है और सब मिला कर उसे राष्ट्रीय गरिमा प्रदान की है। अब हिन्दीतर प्रदेशों के लेखक भी हिन्दी में रुचि लेने लगे हैं। विदेशों में भी हिन्दी का प्रचार बढ़ रहा है। हिन्दी का भविष्य अब उज्ज्वल है और उसके विश्व-स्तर पर प्रतिष्ठित होने की संभावना बढ़ गयी है।

# हिन्दी गद्य की विधाएँ

हिन्दी गद्य की विधाओं को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। एक वर्ग प्रमुख विधाओं का है। इसमें नाटक, एकांकी, उपन्यास, कहानी, निबंध और आलोचना को रखा जा सकता है। दूसरा वर्ग गौण या प्रकीर्ण गद्य-विधाओं का है। इसके अन्तर्गत जीवनी, आत्मकथा, यात्रावृत्त, गद्य-काव्य, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, डायरी, भेंटवार्त्ता, पत्र-साहित्य आदि का उल्लेख किया जा सकता है। प्रमुख विधाओं में 'नाटक', 'उपन्यास', 'कहानी' तथा 'निबंध' और 'आलोचना' का आरम्भ तो भारतेन्दु युग (सन् 1870-1900) में ही हो गया था। किन्तु गौण या प्रकीर्ण गद्य-विधाओं में कुछ का विकास द्विवेदी-युग और शेष का छायावाद और छायावादोत्तर-

युग में हुआ है। द्विवेदी युग में 'जीवनी', 'यात्रावृत्त', 'संस्मरण' और 'पत्र साहित्य' का आरम्भ हो गया था। छायावाद-युग में 'गद्य-काव्य', 'संस्मरण' और 'रेखाचित्र' की विधाएँ विशेष समृद्ध हुईं। छायावादोत्तर-युग में प्रकीर्ण गद्य-विधाओं का अभूतपूर्व विकास हुआ है। 'आत्मकथा', 'रिपोर्ताज', 'भेंटवार्त्ता', 'व्यंग्य-विद्रूप-लेखन', 'डायरी', 'एकालाप' आदि अनेक विधाएँ छायावादोत्तर-युग में विकसित और समृद्ध हुई हैं। यहाँ यह स्मरणीय है कि प्रमुख गद्य विधाएँ अपनी रूप-रचना में एक दूसरे से सर्वथा स्वतंत्र हैं, किन्तु प्रकीर्ण गद्य-विधाओं में से अनेक निबंध विधा से पारिवारिक सम्बन्ध रखती हैं। एक ही परिवार से सम्बद्ध होने के कारण यह एक-दूसरे के पर्याप्त निकट प्रतीत होती हैं।

# (क) प्रमुख विधाएँ

## ➡ नाटक

रंगमंच पर अभिनय द्वारा प्रस्तुत करने की दृष्टि से लिखी गयी तथा पात्रों एवं संवादों पर आधारित एक से अधिक अंकोंवाली दृश्यात्मक साहित्यिक रचना को नाटक कहते हैं। नाटक वस्तुतः रूपक का एक भेद है। रूप का आरोप होने के कारण नाटक को रूपक कहा गया है। अभिनय के समय नट पर दुष्यन्त या राम जैसे ऐतिहासिक पात्र का आरोप किया जाता है, इसीलिए इसे रूपक कहते हैं। नट (अभिनेता) से सम्बद्ध होने के कारण इसे नाटक कहते हैं। नाटक में ऐतिहासिक पात्र-विशेष की शारीरिक एवं मानसिक अवस्था का अनुकरण किया जाता है। आज नाटक शब्द अंग्रेजी 'ड्रामा' या 'प्ले' का पर्याय बन गया है। हिन्दी में मौलिक नाटकों का आरम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। द्विवेदी युग में इसका अधिक विकास नहीं हुआ। छायावाद-युग में जयशंकर प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटकों के विकास में महत्त्वपूर्ण योग दिया। छायावादोत्तर-युग में लक्ष्मी नारायण मिश्र, उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्क, सेठ गोविन्ददास, डॉ0 रामकुमार वर्मा, जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश आदि ने इस विधा को विकसित किया है। नाटकों का एक महत्त्वपूर्ण रूप एकांकी है। 'एकांकी' किसी एक महत्त्वपूर्ण घटना, परिस्थिति या समस्या को आधार बनाकर लिखा जाता है और उसकी समाप्ति एक ही अंक में उस घटना के चरम क्षणों को मूर्त करते हुए कर दी जाती है। हिन्दी में एकांकी नाटकों का विकास छायावाद युग से माना जाता है। सामान्यतः श्रेष्ठ नाटककारों ने ही श्रेष्ठ एकांकियों की भी रचना की है।

## ➡ उपन्यास

हिन्दी में 'उपन्यास' शब्द का आविर्भाव संस्कृत के 'उपन्यस्त' शब्द से हुआ है। उपन्यास शब्द का शाब्दिक अर्थ है—सामने रखना। उपन्यास में 'प्रसादन' अर्थात् प्रसन्न करने का भाव भी निहित है। किसी घटना को इस प्रकार सामने रखना कि उससे दूसरों को प्रसन्नता हो, उपन्यस्त करना कहा जायेगा। किन्तु इस अर्थ में 'उपन्यास' का प्रयोग आजकल नहीं होता। हिन्दी में 'उपन्यास' अंग्रेजी 'नावेल' का पर्याय बन गया है। हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवासदास कृत **'परीक्षा गुरु'** माना जाता है। प्रेमचन्दजी ने हिन्दी उपन्यास को सामयिक-सामाजिक-जीवन से सम्बद्ध करके एक नया मोड़ दिया था। वे 'उपन्यास' को मानव-चरित्र का चित्र समझते थे। उनकी दृष्टि में 'मानव-चरित्र' पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है। वस्तुतः उपन्यास गद्य साहित्य की वह महत्त्वपूर्ण कलात्मक विधा है जो मनुष्य को उसकी समग्रता में व्यक्त करने में समर्थ है। प्रेमचन्द के बाद जैनेन्द्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, नरेश मेहता, फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, राजेन्द्र यादव आदि लेखकों ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को समृद्ध किया है।

## ➡ कहानी

जीवन के किसी मार्मिक तथ्य को नाटकीय प्रभाव के साथ व्यक्त करनेवाली, अपने में पूर्ण कलात्मक गद्य-विधा को कहानी कहा जाता है। हिन्दी में मौलिक कहानियों का आरम्भ 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के बाद हुआ। कहानी या आख्यायिका हमारे देश के लिए नयी चीज नहीं है। पुराणों में शिक्षा, नीति एवं हास्य-प्रधान अनेक आख्यायिकाएँ उपलब्ध होती हैं, किन्तु आधुनिक साहित्यिक कहानियाँ उद्देश्य और शिल्प में उनसे भिन्न हैं। आधुनिक कहानी जीवन के किसी मार्मिक तथ्य को नाटकीय प्रभाव के साथ व्यक्त करनेवाली अपने में पूर्ण एक कलात्मक गद्य-विधा है जो पाठक को अपनी यथार्थपरता और मनोवैज्ञानिकता के कारण निश्चित रूप से प्रभावित करती है। हिन्दी कहानी के विकास में प्रेमचन्द का महत्त्वपूर्ण योगदान है। प्रेमचन्दोत्तर या छायावादोत्तर

युग में जैनेन्द्र, 'अज्ञेय', इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, अमरकान्त, मोहन राकेश, फणीश्वरनाथ 'रेणु', द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण', शिवप्रसाद सिंह, धर्मवीर भारती, मन्नू भण्डारी, शिवानी, निर्मल वर्मा आदि लेखकों ने इस दिशा को अधिक कलात्मक और समृद्ध बनाया है।

## ➡ आलोचना

आलोचना का शाब्दिक अर्थ है—किसी वस्तु को भली प्रकार देखना। भली प्रकार देखने से किसी वस्तु के गुण-दोष प्रकट होते हैं। इसलिए किसी साहित्यिक रचना को भली प्रकार देखकर उसके गुण-दोषों को प्रकट करना उसकी आलोचना करना है। आलोचना के लिए 'समीक्षा' शब्द भी प्रचलित है। इसका भी लगभग यही अर्थ है। हिन्दी में आलोचना अंग्रेजी के 'क्रिटिसिज्म' शब्द का पर्याय बन गया है। भारतीय काव्य-चिन्तन के क्षेत्र में सैद्धान्तिक या शास्त्रीय आलोचना का विशेष महत्त्व रहा है। हमारा यह पक्ष अत्यन्त समृद्ध और पुष्ट है। हिन्दी में आधुनिक पद्धति की आलोचना का आरम्भ भारतेन्दु युग में बालकृष्ण भट्ट और बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' द्वारा लाला श्रीनिवासदास कृत 'संयोगिता स्वयंवर' नाटक की आलोचना से माना जाता है। आगे चलकर द्विवेदी युग में पं0 महावीरप्रसाद द्विवेदी, मिश्र बन्धु, बाबू श्यामसुन्दर दास, पद्मसिंह शर्मा, लाला भगवानदीन आदि ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया। हिन्दी आलोचना का उत्कर्ष आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना कृतियों के प्रकाशन से मान्य है। आचार्य शुक्ल के बाद बाबू गुलाब राय, पं0 नन्ददुलारे वाजपेयी, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ0 नगेन्द्र और डॉ0 रामविलास शर्मा की हिन्दी आलोचना के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

## ➡ निबंध

हिन्दी में निबंध शब्द अंग्रेजी के 'एसे' शब्द के पर्याय के रूप में व्यवहृत होता है। 'एसे' शब्द का अर्थ है—प्रयास। अर्थात् किसी विषय के सम्बन्ध में कुछ कहने का प्रयास ही 'एसे' है। 'प्रयास' होने के कारण 'एसे' या निबंध अपने मूलरूप में प्रौढ़ रचना नहीं मानी गयी है। यह शिथिल मनःस्थिति में लिखित अव्यवस्थित और ढीली-ढाली रचना समझी जाती है। व्यवहार में विचार-प्रधान गंभीर लेखों तथा भाव-प्रधान आत्म-व्यंजक रचनाओं, दोनों के लिए निबंध शब्द का प्रयोग होता है। निबंध को परिभाषित करते हुए बाबू गुलाबराय ने कहा है—"निबंध उस गद्य-रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और सम्बद्धता के साथ किया गया हो।" निबंध मुख्यतः चार प्रकार के माने गये हैं–

1. **वर्णनात्मक**—इसमें किसी वस्तु को स्थिर रूप में देखकर उसका वर्णन किया जाता है।
2. **विवरणात्मक**—इसमें किसी वस्तु को उसके गतिशील रूप में देखकर उसका वर्णन किया जाता है।
3. **विचारात्मक**—इसमें विचार और तर्क की प्रधानता होती है।
4. **भावात्मक**—यह भाव-प्रधान होता है। इसमें आवेगशीलता होती है।

वस्तुतः निबंध-लेखक के व्यक्तित्व के अनुसार निबंध-रचना के अनेक प्रकार हो सकते हैं। यह भेद सुविधा की दृष्टि से निबंधों को मोटे तौर पर वर्गीकृत करने के लिए किये गये हैं।

हिन्दी में निबंध-रचना का आरम्भ भारतेन्दु-युग से ही माना जाता है। भारतेन्दु-युग में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट और बालमुकुन्द गुप्त ने अनेक विषयों से सम्बन्धित सुन्दर निबंध लिखे थे। उसके बाद महावीरप्रसाद द्विवेदी, बाबू श्यामसुन्दर दास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, बाबू गुलाबराय, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी आदि ने इस विधा को विकसित और समृद्ध किया। आचार्य शुक्ल के बाद आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, रामधारीसिंह 'दिनकर', वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ0 नगेन्द्र, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय आदि लेखकों ने हिन्दी निबंध की परम्परा को आगे बढ़ाया।

# (ख) गौण या प्रकीर्ण विधाएँ

गौण विधाओं का एक-दूसरे से निकट का सम्बन्ध है। ये सभी एक प्रकार से निबंध-परिवार में आती हैं। प्रायः सभी का सम्बन्ध लेखक के व्यक्तिगत जीवन और उसके परिवेश से है। लेखक अपने देश-काल और परिवेश के प्रति जितने ही संवेदनशील

होंगे, गौण कही जानेवाली विधाओं का उतना ही विकास होगा। सम्प्रति हिन्दी गद्य में इन विधाओं की रचना प्रचुर परिमाण में हो रही है। इसलिए हिन्दी गद्य के साम्प्रतिक स्वरूप को समझने के लिए इन विधाओं के विकास का ज्ञान आवश्यक है।

## ➡ जीवनी

सफल जीवनी के लिए आवश्यक है कि किसी महान् व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक की घटनाओं को काल-क्रम से इस रूप में प्रस्तुत करना कि उस व्यक्ति का व्यक्तित्व निखर उठे। जीवनी-लेखक तटस्थ रहता है। वह अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त नहीं करता। यों तो हिन्दी में जीवनी लेखन का कार्य भारतेन्दु युग में ही आरम्भ हो गया था, किन्तु आदर्श जीवनियाँ बहुत बाद में लिखी गयीं। द्विवेदी-युग में ऐतिहासिक पुरुषों और धार्मिक नेताओं की जीवनियाँ अधिक लिखी गयीं। इस युग के जीवनी-लेखकों में लक्ष्मीधर वाजपेयी, सम्पूर्णानन्द, नाथूराम प्रेमी, मुकुन्दीलाल वर्मा उल्लेखनीय हैं। छायावाद युग में राष्ट्रीय महापुरुषों—लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, गाँधी, जवाहरलाल नेहरू आदि की जीवनियाँ अधिक लिखी गयीं। इस युग के जीवनी-लेखकों में रामनरेश त्रिपाठी, गणेश शंकर विद्यार्थी, मन्मथनाथ गुप्त, डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद और मुंशी प्रेमचन्द उल्लेखनीय हैं। छायावादोत्तर-युग में लोकप्रिय नेताओं, संत-महात्माओं, विदेशी महापुरुषों, वैज्ञानिकों, खिलाड़ियों और साहित्यकारों की जीवनियाँ लिखी गयीं। इस युग के जीवनी-लेखकों में काका कालेलकर, जैनेन्द्र कुमार, रामनाथ सुमन, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इधर अमृत राय, शान्ति जोशी, रामविलास शर्मा और विष्णु प्रभाकर ने क्रमशः 'कलम का सिपाही', 'सुमित्रानन्दन पंत—जीवनी और साहित्य', 'निराला की साहित्य साधना' तथा 'आवारा मसीहा' लिखकर साहित्यकारों की आदर्श जीवनियाँ प्रस्तुत करने की परम्परा का श्रीगणेश किया है।

## ➡ आत्मकथा

जब लेखक अपने जीवन को स्वयं प्रस्तुत करता है तो वह 'आत्मकथा' लिखता है। स्वयं अपने को निर्मम भाव से प्रस्तुत करना कठिन कार्य है। इसलिए आदर्श आत्मकथा लिखना भी कठिन कार्य है। बीती हुई घटनाओं को क्रमबद्ध रूप में स्मृति के आधार पर प्रस्तुत करना और उनके साथ ही तटस्थ रहकर आत्म-निरीक्षण करना सरल नहीं है, हिन्दी में यों तो स्वयं भारतेन्दु ने 'एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बीती' लिखकर इस दिशा में प्रयोग आरम्भ किया भी, किन्तु यह प्रयोग अधूरा रह गया। हिन्दी की आदर्श आत्मकथाएँ छायावाद और छायावादोत्तर युग में लिखी गयी हैं। इस क्षेत्र में बाबू श्यामसुन्दर दास कृत 'मेरी आत्म कहानी', वियोगी हरि कृत 'मेरा जीवन प्रवाह', राजेन्द्र बाबू कृत 'मेरी आत्मकथा', यशपाल कृत 'सिंहावलोकन', पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' कृत 'अपनी खबर', बाबू गुलाब राय कृत 'मेरी असफलताएँ, वृन्दावनलाल वर्मा कृत 'अपनी कहानी', 'पन्त' कृत 'साठ वर्ष एक रेखांकन' और लोकप्रिय कवि बच्चन कृत 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' तथा 'नीड़ का निर्माण फिर' उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

## ➡ यात्रावृत्त

जब लेखक अपने जीवन की अविस्मरणीय यात्राओं का विवरण आत्म-कथात्मक शैली में प्रस्तुत करता है तो वह 'यात्रा साहित्य' की सृष्टि करता है। आदर्श यात्रावृत्त वह माना जाता है जिसमें यात्रा-क्रम में आये हुए स्थान और बीती हुई घटनाएँ लेखक की स्मृति संवेदना का अंग बनकर चित्रवत् अंकित होती जाती हैं। यात्रावृत्त आत्मकथा का अंश भी हो सकता है और स्वतंत्र रूप से भी लिखा जा सकता है। यात्रावृत्त में 'आत्मकथा', 'संस्मरण' और 'रिपोर्ताज' तीनों के तत्त्व पाये जाते हैं। हिन्दी में 'यात्रावृत्त' लिखने का क्रम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से प्रारम्भ होता है किन्तु कलात्मक यात्रावृत्त छायावाद और छायावादोत्तर-युग में लिखे गये हैं। इस क्षेत्र में राहुल सांकृत्यायन, देवेन्द्र सत्यार्थी, 'अज्ञेय', यशपाल, नगेन्द्र, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा आदि के द्वारा प्रस्तुत यात्रावृत्त उल्लेखनीय हैं।

## ➡ गद्यगीत या गद्यकाव्य

गद्यगीत में भक्ति, प्रेम, करुणा आदि भावनाएँ छोटे-छोटे कल्पना-चित्रों के माध्यम से अन्योक्ति या प्रतीक पद्धति पर व्यक्त की जाती हैं। अनुभूति की सघनता, भावाकुलता, संक्षिप्तता, रहस्यमयता तथा सांकेतिकता श्रेष्ठ गद्यगीत की विशेषताएँ हैं। हिन्दी

में गद्य-गीतों का आरम्भ राय कृष्णदास के 'साधना संग्रह' के प्रकाशन से हुआ। इसके बाद वियोगी हरि का 'तरंगिणी' संग्रह प्रकाशित हुआ। ये दोनों कृतियाँ द्विवेदी-युग की सीमा में आती हैं। इसके बाद छायावाद-युग में गद्य-गीतों की रचना अधिक हुई। राय कृष्णदास और वियोगी हरि के अतिरिक्त चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, 'अज्ञेय' और डॉ0 रामकुमार वर्मा ने भी गद्यगीतों के क्षेत्र में अच्छे प्रयोग किये। छायावादोत्तर-युग में दिनेशनंदिनी डालमिया, डॉ0 रघुवीर सिंह, तेज नारायण काक, रामवृक्ष बेनीपुरी आदि ने सुन्दर गद्य-गीतों की रचना की।

## ➡ संस्मरण

जब लेखक अपने निकट सम्पर्क में आनेवाले महत् विशिष्ट, विचित्र, प्रिय और आकर्षक व्यक्तियों, घटनाओं या दृश्यों को स्मृति के सहारे पुनः कल्पना में मूर्त करता है और उसे शब्दांकित करता है तब वह संस्मरण लिखता है। संस्मरण लिखते समय लेखक पूर्णतः तटस्थ नहीं रह पाता। याद आनेवाले का अंकन करते हुए वह स्वयं भी अंकित हो जाता है। संस्मरण-लेखक के लिए संवेदनशील, प्रभावग्राही और व्यक्ति या वस्तु के वैशिष्ट्य को लक्षित करनेवाला होना चाहिए। हिन्दी में आदर्श संस्मरण छायावादोत्तर-युग में लिखे गये हैं। इस क्षेत्र में श्रीराम शर्मा, महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', देवेन्द्र सत्यार्थी, बनारसीदास चतुर्वेदी आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

## ➡ रेखाचित्र

रेखाचित्र में भी किसी व्यक्ति, वस्तु या सन्दर्भ का चित्रांकन किया जाता है। इसमें सांकेतिकता अधिक होती है। जिस प्रकार रेखा-चित्रकार थोड़ी सी रेखाओं को प्रयोग करके किसी व्यक्ति, वस्तु या सन्दर्भ की मूलभूत विशेषता को उभार देता है उसी प्रकार लेखक कम से कम शब्दों का प्रयोग करके किसी व्यक्ति या वस्तु की मूलभूत विशेषता को उभार देता है। रेखाचित्र में लेखक का पूर्णतः तटस्थ होना आवश्यक है। वस्तुतः संस्मरण और रेखाचित्र एक-दूसरे से मिलती-जुलती विधाएँ हैं। संस्मरण में भी चित्र-शैली का ही प्रयोग किया जाता है किन्तु रेखाचित्र में चित्र अधूरा या खंडित भी हो सकता है, जबकि संस्मरण में चित्र छोटा या लघु भले हो उसे अपने आप में पूर्ण बनाकर प्रस्तुत किया जाता है। संस्मरण अभिधामूलक होता है किन्तु रेखाचित्र सांकेतिक और व्यंजक होता है। वस्तुतः रेखाचित्र संस्मरण का कलात्मक विकास है। हिन्दी में महादेवी वर्मा, प्रकाश चन्द्र गुप्त, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', विनयमोहन शर्मा, विष्णु प्रभाकर और डॉ0 नगेन्द्र के रेखाचित्र उल्लेखनीय हैं।

## ➡ रिपोर्ताज

रिपोर्ट के कलात्मक और साहित्यिक रूप को ही रिपोर्ताज कहते हैं। रिपोर्ताज में समसामयिक घटनाओं को उनके वास्तविक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। रिपोर्ताज लेखक का घटना से प्रत्यक्ष साक्षात्कार आवश्यक है। इसलिए युद्ध की विभीषिका, अकाल की छाया या पूरे मानव समाज को प्रभावित करनेवाली अन्य महत्त्वपूर्ण घटनाओं के घटित होने पर पत्रकार और साहित्यकार उस घटना के अनेक संदर्भों की प्रत्यक्ष जानकारी हासिल करते हैं और उन्हें रिपोर्ताज शैली में प्रस्तुत करके पाठक के मन को झकझोर देते हैं। हिन्दी में रिपोर्ताज लिखने का प्रचलन छायावादोत्तर युग में हुआ है। इस क्षेत्र में रांगेय राघव, बालकृष्ण राव, धर्मवीर भारती, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', 'विष्णुकांत शास्त्री आदि लेखकों के नाम उल्लेखनीय हैं।

## ➡ डायरी

जब लेखक तिथि-विशेष में घटित घटना-चक्र को यथातथ्य रूप में अथवा अपनी संक्षिप्त प्रतिक्रिया या टिप्पणी के साथ लिख लेता है तो यह लेखन डायरी विधा के रूप में स्वीकार किया जाता है। डायरी कुछ महत्त्वपूर्ण तिथियों में घटित घटनाओं को लेकर भी लिखी जा सकती है और क्रमबद्ध रूप में रोजनामचा के रूप में भी लिखी जा सकती है। उसका आकार कुछ पंक्तियों तक ही सीमित हो सकता है और कई पृष्ठों तक विस्तृत भी। वह स्वतंत्र रूप से भी लिखी जा सकती है और कहानी, उपन्यास या यात्रावृत्त के अंग के रूप में भी। डायरी मूलतः लेखक की निजी वस्तु है। इसमें उसे अपने निजी विचार, दृष्टि, उद्भावना और प्रतिक्रिया व्यक्त करने की छूट है। यह दूसरी बात है कि जिस लेखक का सारा जीवन ही सार्वजनिक हो, उसकी डायरी भी सार्वजनिक बातों को लेकर लिखी जाय। कभी-कभी डायरी घटित तथ्य को आधार न बनाकर संभावित और काल्पनिक सत्य को लेकर भी लिखी

जाती है। इसमें शिल्प डायरी का होता है किन्तु तथ्याधार सार्वजनिक होता है। हिन्दी में डायरी विधा का आरम्भ छायावादी-युग से मान्य है। इस सन्दर्भ में धीरेन्द्र वर्मा कृत 'मेरी कालेज डायरी' उल्लेखनीय है। छायावादोत्तर-युग में इलाचन्द्र जोशी, रामधारीसिंह 'दिनकर, शमशेर बहादुर सिंह, मोहन राकेश आदि की डायरियाँ प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी में गद्य की इस कलात्मक विधा का अभी पूर्ण विकास नहीं हुआ है।

## ➡ भेंटवार्त्ता

जब किसी महान् दार्शनिक, राजनीतिज्ञ या साहित्यकार से मिलकर साहित्य, दर्शन या राजनीति के विषय में कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न किये जाते हैं और उनसे प्राप्त उत्तरों को व्यवस्थित ढंग से लिपिबद्ध कर लिया जाता है तो भेंटवार्त्ता की सृष्टि होती है। भेंटवार्त्ता वास्तविक भी होती है और काल्पनिक भी। भेंट-वार्त्ताओं में जिस व्यक्ति से भेंट की जाती है उसके स्वभाव, रुचि, कार्य-कुशलता, बुद्धिमत्ता तथा अपनी उत्सुकता, संभ्रमता आदि का उल्लेख करके लेखक भेंट-वार्त्ताओं को अधिक रुचिकर बना सकता है। हिन्दी में वास्तविक और काल्पनिक दोनों ही प्रकार की भेंट-वार्त्ताएँ लिखी गयी हैं। वास्तविक भेंटवार्त्ता लिखनेवालों में पद्मसिंह शर्मा और रणवीर साँगा के नाम उल्लेखनीय हैं। काल्पनिक भेंट-वार्त्ता लिखनेवालों में राजेन्द्र यादव (चैखव : एक इण्टरव्यू) और श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन (भगवान् महावीर : एक इण्टरव्यू) उल्लेखनीय हैं। भेंट-वार्त्ताएँ छायावादोत्तर-युग में ही लिखी गयी हैं। अभी हिन्दी में इस विधा के विकास की पूरी संभावना है।

## ➡ पत्र-साहित्य

जब लेखक अपने किसी मित्र, परिचित या अल्प परिचित व्यक्ति को अपने सम्बन्ध में या किसी महत्त्वपूर्ण समस्या के सम्बन्ध में उसकी और अपनी सामाजिक स्थिति को ध्यान में रखकर उचित आदर, सम्मान या स्नेह का भाव प्रकट करते हुए निजी तौर पर मात्र सूचना, जिज्ञासा या समाधान लिखकर भेजता है और उत्तर की अपेक्षा रखता है तो वह पत्र-साहित्य का सृजन करता है। पत्र नितांत निजी हो सकते हैं और सार्वजनिक भी। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ भेजे जानेवाले पत्र प्रायः सार्वजनिक प्रश्नों को लेकर लिखे जाते हैं। साहित्यिक दृष्टि से वे पत्र अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं जो प्रकाशनार्थ नहीं लिखे जाते और मात्र दो व्यक्तियों की बीच की वस्तु होते हैं। हिन्दी साहित्य में पत्र-प्रकाशन का आरम्भ द्विवेदी युग में ही हो गया था। महात्मा मुंशीराम ने स्वामी दयानन्द सम्बन्धी पत्रों का संकलन सन् 1904 में प्रकाशित कराया था। छायावाद-युग में रामकृष्ण आश्रम, देहरादून से 'विवेकानन्द पत्रावली' का प्रकाशन किया गया। छायावादोत्तर युग में पत्र-साहित्य के संकलन और प्रकाशन की दिशा में कई महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं। इस क्षेत्र में बैजनाथ सिंह 'विनोद' द्वारा संकलित 'द्विवेदी पत्रावली' (सन् 1954), बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा संकलित 'पद्मसिंह शर्मा के पत्र' (सन् 1956), वियोगी हरि द्वारा संकलित 'बड़ों के प्रेरणादायक कुछ पत्र' (सन् 1960), जानकीवल्लभ शास्त्री द्वारा संकलित 'निराला के पत्र' (सन् 1971), हरिवंश राय बच्चन द्वारा संकलित 'पंत के दो सौ पत्र बच्चन के नाम' (सन् 1971) उल्लेखनीय पत्र संकलन हैं। उक्त विधाओं के अतिरिक्त संप्रति हिन्दी गद्य-साहित्य में 'अभिनन्दन एवं स्मृति ग्रंथ', 'टिप्पणी लेखन', 'लघु कथा', 'एकालाप' आदि अनेक गद्य विधाएँ विकसित हो रही हैं।

आज जीवन की संकुलता और मानवीय सम्बन्धों की जटिलता के कारण अनेक छोटी-छोटी गद्य-विधाओं के विकसित होने की सम्भावना बढ़ गयी है। इसके साथ ही गद्य-शैली में विविधता और उसकी अभिव्यक्ति-भंगिमा में अनेकरूपता आयी है। हिन्दी-गद्य यथार्थोन्मुख हुआ है। उसकी शब्द-सम्पदा में निरन्तर वृद्धि हो रही है। वाक्य-रचना में लचीलापन आया है। आज वह बाह्य-जगत् की विराटता और आन्तरिक जीवन की गहनता, जटिलता और सूक्ष्मता को व्यक्त करने में समर्थ है। यह हिन्दी गद्य के सशक्त और समृद्ध होने का शुभ लक्षण है।

●●

# हिन्दी गद्य के विकास पर आधारित प्रश्न

● **निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनिए–**

1. **'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' के रचयिता हैं–**
   (i) विट्ठलनाथ (ii) गोकुलनाथ (iii) नाभादास (iv) चतुर्भुजदास।
2. **'आनन्द कादम्बिनी' के सम्पादक थे–**
   (i) बालकृष्ण भट्ट (ii) प्रतापनारायण मिश्र
   (iii) राधाचरण गोस्वामी (iv) बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'।
3. **बाबू गुलाबराय की आत्मकथा है–**
   (i) कुछ आपबीती, कुछ जगबीती (ii) मेरा जीवन प्रवाह
   (iii) मेरी असफलताएँ (iv) अपनी खबर।
4. **राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' की रचना है–**
   (i) भाग्यवती (ii) नासिकेतोपाख्यान (iii) राजा भोज का सपना (iv) प्रेमसागर।
5. **'तट की खोज' रचना है–**
   (i) राय कृष्णदास की (ii) सरदार पूर्णसिंह की (iii) हरिशंकर परसाई की (iv) मोहन राकेश की।
6. **खड़ीबोली गद्य की प्रथम रचना है–**
   (i) कृष्णावतार स्वरूप निर्णय (ii) गोरा-बादल की कथा
   (iii) वर्ण रत्नाकर (iv) भाषा योगवाशिष्ठ।
7. **'सौ अजान एक सुजान' के लेखक हैं–**
   (i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) प्रतापनारायण मिश्र
   (iii) अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (iv) बालकृष्ण भट्ट।
8. **'ब्राह्मण' पत्रिका प्रकाशित हुई–**
   (i) द्विवेदी युग में (ii) छायावाद युग में (iii) भारतेन्दु युग में (iv) पूर्व-भारतेन्दु युग में।
9. **'अपनी खबर' पुस्तक की विधा है–**
   (i) संस्मरण (ii) रेखाचित्र (iii) जीवनी (iv) आत्मकथा।
10. **हिन्दी की प्रथम डायरी है–**
    (i) मेरी कालिज-डायरी (ii) डायरी के पन्ने
    (iii) नरदेव शास्त्री की जेल-डायरी (iv) तूफानों के बीच।
11. **'अमेरिका का मस्त योगी वाल्ट ह्विटमैन' निबन्ध है–**
    (i) हरिशंकर परसाई का (ii) राय कृष्णदास का
    (iii) सरदार पूर्णसिंह का (iv) प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी का।
12. **'निस्सहाय हिन्दू' रचना है–**
    (i) राय कृष्णदास (ii) बालकृष्ण भट्ट (iii) श्रीनिवास दास (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।
13. **'चन्द्रावली' के रचयिता हैं–**
    (i) रामचन्द्र शुक्ल (ii) सेठ गोविन्द दास (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।
14. **'साहित्य-सहचर' के लेखक हैं–**
    (i) महावीरप्रसाद द्विवेदी (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) बाबू गुलाबराय (iv) जयशंकर 'प्रसाद'।
15. **'माधुरी' पत्रिका किस युग से सम्बन्धित है?**
    (i) शुक्ल युग से (ii) शुक्लोत्तर युग से (iii) द्विवेदी युग से (iv) भारतेन्दु युग से।

**16. 'एकांकी-सम्राट' कहा जाता है–**
(i) रामकुमार वर्मा को (ii) सेठ गोविन्द दास को (iii) हरिकृष्ण प्रेमी को (iv) मोहन राकेश को।

**17. 'आवारा मसीहा' गद्य-विधा की रचना है–**
(i) उपन्यास (ii) कहानी (iii) नाटक (iv) जीवनी।

**18. 'रानी केतकी की कहानी' के रचनाकार हैं–**
(i) लल्लूलाल (ii) सदल मिश्र
(iii) इंशा अल्ला खाँ (iv) मुंशी सदासुख लाल।

**19. रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखा गया ग्रन्थ है–**
(i) हिन्दी साहित्य का आदिकाल (ii) हिन्दी भाषा का इतिहास
(iii) हिन्दी साहित्य का इतिहास (iv) देवनागरी का इतिहास।

**20. 'नागरी प्रचारिणी सभा' के संस्थापक हैं–**
(i) पुरुषोत्तमदास टंडन (ii) मदनमोहन मालवीय (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) रामचन्द्र शुक्ल।

**21. 'सरस्वती' के प्रथम सम्पादक हैं–**
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी (ii) श्यामसुन्दर दास
(iii) पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी (iv) हरदेव बाहरी।

**22. निम्नलिखित रचनाओं में से कौन-सी रचना कहानी है?**
(i) त्याग-पत्र (ii) भाग्य और पुरुषार्थ (iii) पुरस्कार (iv) आन का मान।

**23. निम्नलिखित में से कौन द्विवेदीकालीन गद्य लेखक/लेखिका हैं?**
(i) महादेवी वर्मा (ii) सरदार पूर्णसिंह (iii) सियारामशरण गुप्त (iv) अज्ञेय।

**24. 'आवारा मसीहा' के रचनाकार कौन हैं?**
(i) रामवृक्ष बेनीपुरी (ii) रांगेय राघव (iii) विष्णु प्रभाकर (iv) राहुल सांकृत्यायन।

**25. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी द्वारा सम्पादित कौन-सी पत्रिका थी?**
(i) हंस (ii) सरस्वती (iii) ब्राह्मण (iv) इन्दु।

**26. 'मेरी असफलताएँ' किस विधा की रचना है?**
(i) जीवनी साहित्य (ii) कहानी (iii) डायरी (iv) आत्मकथा।

**27. 'अम्बपाली' किस विधा की रचना है?**
(i) कहानी (ii) उपन्यास (iii) नाटक (iv) संस्मरण।

**28. निम्नलिखित रचनाओं में से कौन-सी रचना नाटक है?**
(i) नमक का दरोगा (ii) गोदान (iii) आखिरी चट्टान (iv) राजमुकुट।

**29. निम्नलिखित रचनाओं में कौन छायावादी युग का गद्य लेखक है?**
(i) प्रतापनारायण मिश्र (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी
(iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iv) नन्ददुलारे वाजपेयी।

**30. 'बहू की विदा' के रचनाकार हैं–**
(i) सेठ गोविन्ददास (ii) हरिकृष्ण प्रेमी (iii) मोहन राकेश (iv) विनोद रस्तोगी।

**31. बालकृष्ण भट्ट द्वारा सम्पादित पत्रिका है–**
(i) कवि वचन सुधा (ii) हिन्दी प्रदीप (iii) विशाल भारत (iv) साहित्य संदेश।

**32. 'ध्रुवस्वामिनी' किस विधा की रचना है?**
(i) उपन्यास (ii) नाटक (iii) एकांकी (iv) कहानी।

**33. निम्नलिखित में से भारतेन्दुयुगीन गद्य लेखक हैं–**
(i) रघुवीर सिंह (ii) जयशंकर प्रसाद
(iii) भगवत शरण उपाध्याय (iv) प्रतापनारायण मिश्र।

**34. 'साधना' के रचनाकार कौन हैं?**
(i) वृन्दावनलाल वर्मा (ii) मोहन राकेश
(iii) राय कृष्णदास (iv) विनयमोहन शर्मा।

**35. जैनेन्द्र कुमार द्वारा रचित निबंध है–**
(i) पृथिवीपुत्र (ii) पूर्वोदय (iii) कुली (iv) पथ के साथी।

**36. 'रूपक रहस्य' के लेखक कौन हैं? अथवा**
**'रूपक रहस्य' किसकी रचना है?**
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) वियोगी हरि
(iii) रामचन्द्र शुक्ल (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

**37. बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' द्वारा सम्पादित पत्रिका है–**
(i) सरस्वती (ii) आनन्द कादम्बिनी (iii) प्रथा (iv) हिन्दी प्रदीप।

**38. 'अंधेर नगरी' के रचनाकार कौन हैं?**
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) जयशंकर प्रसाद
(iii) हरिकृष्ण प्रेमी (iv) सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।

**39. 'शेखर एक जीवनी' के लेखक कौन हैं?**
(i) जयशंकर प्रसाद (ii) भीष्म साहनी (iii) भगवतीचरण वर्मा (iv) अज्ञेय।

**40. निम्न में से 'ब्राह्मण' पत्रिका के सम्पादक कौन हैं?**
(i) बालकृष्ण भट्ट (ii) महावीरप्रसाद द्विवेदी (iii) प्रतापनारायण मिश्र (iv) श्यामसुन्दर दास।

**41. इनमें से कौन नाटक नहीं है?**
(i) राजमुकुट (ii) गरुड़ध्वज (iii) अपना-अपना भाग्य (iv) आन का मान।

**42. डॉ० सम्पूर्णानन्द द्वारा सम्पादित पत्रिका है–**
(i) सरस्वती (ii) धर्मयुग (iii) मर्यादा (iv) हंस।

**43. निम्नलिखित में से जीवनी है–**
(i) नीड़ का निर्माण फिर (ii) आवारा मसीहा (iii) अतीत के चलचित्र (iv) चिंतामणि।

**44. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा सम्पादित पत्र है–**
(i) हिन्दी प्रदीप (ii) समालोचक (iii) हंस (iv) ब्राह्मण।

**45. 'गोदान' किस विधा की रचना है?**
(i) उपन्यास (ii) नाटक (iii) आत्मकथा (iv) डायरी।

**46. निम्नलिखित में कौन-सी रचना नाटक है?**
(i) जीवन कण (ii) करुणा (iii) सती (iv) स्कन्दगुप्त।

**47. 'परदा' कहानी के लेखक कौन हैं?**
(i) प्रेमचन्द (ii) जयशंकर प्रसाद (iii) अमरकान्त (iv) यशपाल।

**48. जयशंकर प्रसाद किसके लेखक हैं?**
(i) कुटज (ii) ध्रुवस्वामिनी (iii) आत्मनेपद (iv) आषाढ़ का एक दिन।

**49. 'गबन' के लेखक कौन हैं?**
(i) भीष्म साहनी (ii) भगवतीचरण वर्मा (iii) प्रेमचन्द (iv) अज्ञेय।

**50. पं० लल्लूलाल की कौन-सी रचना है?**
(i) प्रेमसागर (ii) सुखसागर (iii) रानी केतकी की कहानी (iv) परीक्षा गुरु।

**51. नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना किस युग में हुई?**
(i) भारतेन्दु युग में (ii) द्विवेदी युग में (iii) छायावाद युग में (iv) छायावादोत्तर युग में।

**52. 'प्रेमसागर' के रचनाकार हैं–**
(i) सदल मिश्र (ii) सूरदास (iii) रामप्रसाद निरंजनी (iv) लल्लूलाल।

**53. 'घुमक्कड़शास्त्र' के रचनाकार कौन हैं?**
(i) राहुल सांकृत्यायन (ii) विद्यानिवास मिश्र (iii) डॉ० नगेन्द्र (iv) वृन्दावनलाल वर्मा।

**54. 'कुटज' के रचयिता कौन हैं?**
(i) अज्ञेय (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iv) यशपाल।

**55. श्यामसुन्दर दास का जन्मकाल है–**
(i) 1850 ई० (ii) 1864 ई० (iii) 1875 ई० (iv) 1881 ई०।

**56. 'अष्टयाम' के रचनाकार हैं–**
(i) गोकुलनाथ (ii) वल्लभाचार्य (iii) नाभादास (iv) तुलसीदास।

**57. डॉ० रामविलास शर्मा की रचना का क्या नाम है?**
(i) निराला की साहित्य साधना (ii) मेरा परिवार (iii) पर्वतों के देश में (iv) चिन्तामणि।

**58. 'मेरी जीवन यात्रा' किस लेखक की आत्मकथा है?**
(i) वियोगी हरि (ii) राहुल सांकृत्यायन (iii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iv) महादेवी वर्मा।

**59. 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका के सम्पादक कौन हैं?**
(i) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (ii) डॉ० श्यामसुन्दर दास (iii) बालकृष्ण भट्ट (iv) बाबू गुलाबराय।

**60. 'द्विवेदी-युग' के साहित्यकार कौन हैं?**
(i) डॉ० श्यामसुन्दर दास (ii) भगवतीचरण वर्मा (iii) यशपाल (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

**61. 'चिन्तामणि' किस विधा की रचना है?**
(i) उपन्यास (ii) कहानी (iii) निबन्ध (iv) नाटक।

**62. 'आधुनिक हिन्दी नाटक' के लेखक कौन हैं?**
(i) बदरीनारायण चौधरी (ii) डॉ० नगेन्द्र (iii) रामचन्द्र शुक्ल (iv) महादेवी वर्मा।

**63. 'पतितों के देश में' किस साहित्यकार की रचना है?**
(i) राहुल सांकृत्यायन (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी
(iii) कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर (iv) डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी।

**64. निम्नलिखित में से कौन 'जीवनी' है?**
(i) अतीत के चलचित्र (ii) चिन्तामणि (iii) आवारा मसीहा (iv) नीड़ का निर्माण फिर।

**65. डॉ० सम्पूर्णानन्द द्वारा सम्पादित पत्रिका का नाम है–**
(i) धर्मयुग (ii) हंस (iii) सरस्वती (iv) मर्यादा।

**66. भारतेन्दु के सहयोगी लेखक हैं–**
(i) शिवपूजन सहाय (ii) बालकृष्ण भट्ट (iii) वियोगी हरि (iv) हजारीप्रसाद द्विवेदी।

**67. 'चिन्तामणि' के रचनाकार हैं–**
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (iii) प्रेमचन्द (iv) गुलाब राय।

**68. 'दीपदान' नामक रचना है–**
(i) नाटक (ii) भेंटवार्त्ता (iii) लघुकथा (iv) एकांकी।

**69. स्वामी दयानन्द सरस्वती की रचना है–**
(i) भूदान यज्ञ (ii) भोर का तारा (iii) सत्यार्थ प्रकाश (iv) भारत-भारती।

**70. हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास है–**
(i) आनन्द मठ (ii) परीक्षागुरु (iii) गबन (iv) तितली।

**71. हिन्दी गद्य ( खड़ीबोली ) के जन्मदाता हैं–**
(i) प्रतापनारायण मिश्र (ii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) जयशंकर प्रसाद।

**72. आलोचना के क्षेत्र में सर्वाधिक उल्लेखनीय है–**
(i) मिश्रबन्धु (ii) गुलाबराय (iii) सुदर्शन (iv) रामचन्द्र शुक्ल।

**73. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की रचना है–**
(i) अशोक के फूल (ii) वनमाला (iii) चिन्तामणि (iv) विद्यासुन्दर।

**74. 'भाग्यवती' उपन्यास के लेखक हैं–**
(i) श्रद्धाराम फुल्लौरी (ii) प्रेमचन्द (iii) अमृतलाल नागर (iv) रामप्रसाद निरंजनी।

**75. महावीरप्रसाद द्विवेदी का जीवन-काल है–**
(i) सन् 1864-1938 (ii) सन् 1862-1935 (iii) सन् 1875-1947 (iv) सन् 1854-1925

**76. 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' में किस विभागाध्यक्ष के बाद रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हुए?**
(i) करुणापति त्रिपाठी (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) विजयपाल सिंह।

**77. काका कालेलकर का नाम किस विधा के लेखक के रूप में प्रसिद्ध है?**
(i) निबन्ध (ii) संस्मरण (iii) आत्मकथा (iv) डायरी।

**78. हजारीप्रसाद द्विवेदी को किस सन् में पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया?**
(i) सन् 1957 (ii) सन् 1959 (iii) सन् 1963 (iv) सन् 1950

**79. निम्नलिखित में से 'जीवनी' है–**
(i) बसेरे से दूर (ii) अनामदास का पोथा (iii) कलम का सिपाही (iv) शाश्वती।

**80. छायावादोत्तर युग का प्रारम्भ माना जाता है–**
(i) 1900 ई० से (ii) 1920 ई० से (iii) 1938 ई० से (iv) 1950 ई० से।

**81. 'अरे यायावर रहेगा याद' के लेखक हैं–**
(i) यशपाल (ii) नगेन्द्र (iii) मुक्तिबोध (iv) अज्ञेय।

**82. कौन-सी रचना हजारीप्रसाद द्विवेदी की नहीं है?**
(i) अशोक के फूल (ii) हिन्दी काव्यधारा
(iii) हिन्दी साहित्य (iv) हिन्दी साहित्य की भूमिका।

**83. आदिकाल की रचना नहीं है–**
(i) उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण (ii) गोरा बादल की कथा (iii) राउलवेल।

**84. हिन्दी कहानी एक नयी दिशा की ओर मुड़ी–**
(i) सन् 1900 में (ii) सन् 1910 में (iii) सन् 1920 में (iv) सन् 1935 में।

**85. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनन्तर समर्थ निबन्धकार हैं–**
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) लाला श्रीनिवास (iii) महावीरप्रसाद द्विवेदी (iv) डॉ० नगेन्द्र।

**86. उपन्यास विधा की रचना है–**
(i) नीड़ का निर्माण फिर (ii) बाणभट्ट की आत्मकथा (iii) कलम का सिपाही (iv) पथ के साथी।

**87. 'राष्ट्र का स्वरूप' के रचनाकार हैं–**
(i) पूर्णसिंह (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) 'अज्ञेय'।

**88. 'कर्मभूमि' रचना है–**
(i) प्रेमचन्द की (ii) यशपाल की
(iii) किशोरीलाल गोस्वामी की (iv) बालकृष्ण भट्ट की।

**89. 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' आत्मकथा है–**
(i) सुमित्रानन्दन पंत की (ii) डॉ० राजेन्द्रप्रसाद की (iii) हरिवंशराय 'बच्चन' की (iv) 'अज्ञेय' की।

**90. पं० लल्लूलाल अध्यापक नियुक्त थे–**
(i) फोर्ट विलियम कालेज में (ii) मेरठ कालेज, मेरठ में
(iii) रुड़की विश्वविद्यालय में (iv) काशी विश्वविद्यालय में।

**91. 'विषस्य विषमौषधम्' निम्नलिखित में से है–**
(i) कहानी (ii) उपन्यास (iii) नाटक (iv) निबन्ध।

**92. 'नासिकेतोपाख्यान' के लेखक (रचनाकार) हैं–**
(i) मुंशी इंशा अल्ला खाँ (ii) लल्लूलाल (iii) सदल मिश्र (iv) मुंशी सदासुखलाल।

**93. 'रूपक रहस्य' के लेखक हैं–**
(i) वियोगी हरि (ii) रामचन्द्र शुक्ल (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

**94. द्विवेदी युग का नामकरण हुआ है–**
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी के नाम पर (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी के नाम पर
(iii) जयशंकर प्रसाद के नाम पर (iv) रामकुमार वर्मा के नाम पर।

**95. 'परीक्षागुरु' की रचना-विधा है–**
(i) कहानी (ii) उपन्यास (iii) नाटक (iv) जीवनी।

**96. निम्न में से नाटककार हैं–**
(i) रामचन्द्र शुक्ल (ii) मोहन राकेश (iii) डॉ० नगेन्द्र (iv) महादेवी वर्मा।

**97. 'गिरती दीवारें' के रचनाकार हैं–**
(i) उपेन्द्रनाथ 'अश्क' (ii) शिवप्रसाद सिंह (iii) 'अज्ञेय' (iv) रामविलास शर्मा।

**98. 'प्रजा हितैषी' समाचार-पत्र का सम्पादन किया–**
(i) हजारीप्रसाद द्विवेदी ने (ii) राजा लक्ष्मण सिंह ने
(iii) 'अज्ञेय' ने (iv) शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' ने।

**99. छायावादोत्तर युग के गद्य लेखक हैं–**
(i) जयशंकर प्रसाद (ii) माखनलाल चतुर्वेदी (iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

**100. सन् 1957 में 'पद्मभूषण' से अलंकृत हुए–**
(i) राय कृष्णदास (ii) विद्यानिवास मिश्र (iii) 'अज्ञेय' (iv) हजारीप्रसाद द्विवेदी।

**101. डॉ० सम्पूर्णानन्द को मंगलाप्रसाद पुरस्कार प्राप्त हुआ–**
(i) गणेश पर (ii) चिद्विलास पर
(iii) समाजवाद पर (iv) 'आर्यों का आदि देश' पर।

**102. 'बेकन विचार-माला' अनूदित ग्रन्थ है–**
(i) राहुल सांकृत्यायन का (ii) महावीरप्रसाद द्विवेदी का
(iii) वासुदेवशरण अग्रवाल का (iv) मोहन राकेश का।

**103. 'कन्यादान' निबन्ध के लेखक हैं–**
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) डॉ० सम्पूर्णानन्द (iv) सरदार पूर्णसिंह।

**104. विधा की दृष्टि से 'बोल्गा से गंगा' है–**
(i) उपन्यास (ii) कहानी-संग्रह (iii) यात्रावृत्तान्त (iv) आत्मकथा।

**105. अज्ञेय का 'सन्नाटा' शीर्षक लेख उनके किस निबन्ध-संग्रह में संकलित है?**
(i) त्रिशंकु (ii) आत्मनेपद
(iii) सब रंग और कुछ राग (iv) लिखि कागद कोरे।

**106. हिन्दी साहित्य में व्यंग्य के आधार-स्तम्भ हैं–**
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'
(iii) हरिशंकर परसाई (iv) रामवृक्ष बेनीपुरी।

**107. खलील जिब्रान के 'दि मैड मैन' कृति का 'पगला' नाम से हिन्दी में अनुवाद किया है–**
(i) राय कृष्णदास (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iii) राहुल सांकृत्यायन (iv) 'अज्ञेय'।

**108. साहित्य का 'श्रेय और प्रेय' निबन्ध-संग्रह है–**
(i) डॉ० सम्पूर्णानन्द (ii) जैनेन्द्र कुमार (iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) श्यामसुन्दर दास।

**109. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की विधा है–**
(i) रेखाचित्र (ii) आत्मकथा (iii) उपन्यास (iv) निबन्ध।

**110. मोहन राकेश का निबन्ध-संग्रह है–**
(i) आलोक पर्व (ii) पूर्वोदय (iii) रसज्ञ रंजन (iv) बकलम खुद।

**111. 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना में योगदान है–**
(i) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (ii) श्यामसुन्दर दास (iii) रामनारायण मिश्र (iv) शिवकुमार सिंह।

**112. अंग्रेजी के 'स्केच' का रूपान्तरण है–**
(i) जीवनी (ii) भेंटवार्त्ता (iii) रेखाचित्र (iv) रिपोर्ताज।

**113. 'आनन्द की खोज और पागल पथिक' का सम्बन्ध किस विधा से है?**
(i) संस्मरण (ii) निबन्ध (iii) गद्य-गीत (iv) आलोचना।

**114. हिन्दी की पहली कहानी माना जाता है–**
(i) नमक का दरोगा (ii) उसने कहा था (iii) कफन (iv) इन्दुमती।

**115. 'तुम चन्दन हम पानी' किस विधा की रचना है?**
(i) नाटक (ii) संस्मरण (iii) आत्मकथा (iv) निबन्ध।

**116. आधुनिक काल के प्रमुख नाटककार माने जाते हैं–**
(i) मोहन राकेश (ii) लक्ष्मीनारायण मिश्र (iii) जयशंकर प्रसाद (iv) डॉ० रामकुमार वर्मा।

**117. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की रचना है–**
(i) वैदिक हिंसा हिंसा न भवति (ii) कलि कौतुक (iii) नूतन ब्रह्मचारी (iv) प्रेम मोहिनी।

**118. 'चिद्विलास' के लेखक हैं–**
(i) रामकुमार वर्मा (ii) डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) डॉ० सम्पूर्णानन्द (iv) मोहन राकेश।

**119. सदल मिश्र की रचना है–**
(i) भारत दुर्दशा (ii) नासिकेतोपाख्यान (iii) बैताल पचीसी (iv) सुख सागर।

**120. 'नीड़ का निर्माण फिर' विधा है–**
(i) कहानी (ii) यात्रावृत्तान्त (iii) उपन्यास (iv) आत्मकथा।

**121. 'द्विवेदी युग' के लेखक हैं–**
(i) अज्ञेय (ii) किशोरीलाल गोस्वामी
(iii) हरिशंकर परसाई (iv) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'।

**122. 'डायरी विधा' के लेखक हैं–**
(i) शमशेर बहादुर सिंह (ii) राहुल सांकृत्यायन (iii) सदल मिश्र (iv) सरदार पूर्णसिंह।

**123. 'मजदूरी और प्रेम' रचना किस विधा से सम्बन्धित है?**
(i) नाटक (ii) कहानी (iii) निबन्ध (iv) उपन्यास।

**124. चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की प्रसिद्ध कहानी है–**
(i) पंचलाइट (ii) उसने कहा था (iii) पुरस्कार (iv) आत्माराम।

**125. द्विवेदी युग के लेखक हैं–**
(i) नन्ददुलारे वाजपेयी (ii) हरिकृष्ण प्रेमी (iii) डॉ० नगेन्द्र (iv) सरदार पूर्णसिंह।

**126. 'अशोक के फूल' निबन्ध के लेखक हैं–**
(i) हजारीप्रसाद द्विवेदी (ii) राजेन्द्र यादव (iii) महादेवी वर्मा (iv) गुलाब राय।

**127. प्रसिद्ध उपन्यास लेखक हैं–**
(i) मोहन राकेश (ii) रामकुमार वर्मा (iii) डॉ० सम्पूर्णानन्द (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

**128. 'सदाचार की तावीज' निबन्ध संग्रह के लेखक हैं–**
(i) मोहन राकेश (ii) हरिशंकर परसाई (iii) जी० सुन्दर रेड्डी (iv) राहुल सांकृत्यायन।

**129. पाठ्य-पुस्तक में संकलित बलिया के मेले के अवसर पर दिया गया भाषण किस शीर्षक से संग्रहीत है?**
(i) भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है? (ii) महाकवि माघ का प्रभात वर्णन
(iii) भारतीय साहित्य की विशेषताएँ (iv) आचरण की सभ्यता।

**130. 'मर्यादा' और 'टुडे' के सम्पादक थे–**
(i) डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल (ii) हरिशंकर परसाई (iii) जैनेन्द्र कुमार (iv) डॉ० सम्पूर्णानन्द।

**131. किसका वास्तविक नाम केदार पाण्डेय था?**
(i) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' (ii) जैनेन्द्र कुमार (iii) राहुल सांकृत्यायन (iv) मोहन राकेश।

**132. राबर्ट नर्सिंग होम किस शहर में स्थित था?**
(i) कानपुर (ii) इन्दौर (iii) नागपुर (iv) नयी दिल्ली।

**133. 'सब रंग और कुछ राग' निबन्ध संग्रह के लेखक हैं–**
(i) अज्ञेय (ii) जैनेन्द्र कुमार (iii) जी० सुन्दर रेड्डी (iv) मोहन राकेश।

**134. मथुरा के पुरातत्त्व संग्रहालय के अध्यक्ष पद पर कार्य करनेवाले निबन्धकार थे–**
(i) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी
(iii) सरदार पूर्णसिंह (iv) वासुदेवशरण अग्रवाल।

**135. निम्नलिखित में से कौन ललित निबन्धकार माना जाता है?**
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) सरदार पूर्णसिंह (iii) कुबेरनाथ राय (iv) रामचन्द्र शुक्ल।

**136. हिन्दी गद्य के उत्कर्ष का सूर्योदयकाल था–**
(i) छायावादी युग (ii) द्विवेदी युग (iii) छायावादोत्तर युग (iv) भारतेन्दु युग।

**137. 'संस्कृत के चार अध्याय' के लेखक हैं–**
(i) कन्हैयालाल मिश्र (ii) भगवतशरण उपाध्याय
(iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) रामधारीसिंह 'दिनकर'।

**138. उपन्यास-सम्राट माने जाते हैं–**
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) जयशंकर प्रसाद (iii) प्रेमचन्द (iv) जैनेन्द्र कुमार।

**139. एकांकी में अंक होते हैं–**
(i) तीन (ii) पाँच (iii) एक (iv) अनेक।

**140. महावीरप्रसाद द्विवेदी की रचना है–**
(i) रूपक रहस्य (ii) पवित्रता (iii) रसज्ञ रंजन (iv) भाषा की शक्ति।

**141. 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक थे–**
(i) बालकृष्ण भट्ट (ii) प्रतापनारायण मिश्र (iii) महावीरप्रसाद द्विवेदी (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

**142. 'भारत दुर्दशा' के लेखक हैं–**
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी (ii) राय कृष्णदास (iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iv) श्यामसुन्दर दास।

**143. फणीश्वरनाथ 'रेणु' की रचना है–**
(i) पुरस्कार (ii) मैला आँचल (iii) गबन (iv) रसज्ञ-रञ्जन।

**144. 'आखिरी चट्टान' किस विधा की रचना है–**
(i) रेखाचित्र (ii) संस्मरण (iii) डायरी (iv) यात्रावृत्तान्त।

**145. 'सुखसागर' के लेखक हैं–**
(i) इंशा अल्ला खाँ (ii) लल्लूलाल (iii) मुंशी सदासुख लाल (iv) सदल मिश्र।

**146. 'यात्रावृत्तान्त' विधा के लेखक हैं–**
(i) रामकुमार वर्मा (ii) राय कृष्णदास (iii) वृन्दावनलाल वर्मा (iv) राहुल सांकृत्यायन।

**147. 'गेहूँ बनाम गुलाब' के लेखक हैं–**
(i) वासुदेवशरण अग्रवाल (ii) हरिशंकर परसाई (iii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iv) जैनेन्द्र कुमार।

**148. हिन्दी गद्य को नयी चाल में ढालने का श्रेय है–**
(i) हिन्दी प्रदीप को (ii) हरिश्चन्द्र चन्द्रिका को (iii) सरस्वती को (iv) चाँद को।

**149. वाराणसी में 'भारत कला भवन' नामक संग्रहालय की स्थापना करने वाले साहित्यकार थे–**
(i) राय कृष्णदास (ii) आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
(iii) डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

**150. 'छायावादोत्तर' गद्य काल की रचना है–**
(i) रत्नावली (ii) रानी नागफनी की कहानी (iii) विचार-विमर्श (iv) रसज्ञ-रञ्जन।

**151. 'वोल्गा से गंगा' रचना की विधा है–**
(i) कहानी (ii) आत्मकथा (iii) यात्रावृत्त (iv) निबन्ध संग्रह।

**152. 'जीवनी' विधा में रचना है–**
(i) नीड़ का निर्माण फिर (ii) आवारा मसीहा (iii) अतीत के चलचित्र (iv) चिन्तामणि।

**153. 'आर्यों का आदि देश' के लेखक हैं–**
(i) जी० सुन्दर रेड्डी (ii) डॉ० सम्पूर्णानन्द
(iii) राय कृष्णदास (iv) वासुदेवशरण अग्रवाल।

**154. भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी किस बोली से बनी है?**
(i) अवधी से (ii) ब्रजभाषा से (iii) खड़ीबोली (iv) बुन्देली से।

# अध्ययन-अध्यापन

प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक का प्रणयन अध्ययन-अध्यापन की नवीन पद्धति को ध्यान में रखते हुए किया गया है। हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त इण्टरमीडिएट स्तर पर छात्र किशोरावस्था में पदार्पण कर चुके होते हैं। किशोर की मानसिक दुनिया बहुरंगी होती है। उसमें आदर्शवादिता एवं कल्पनाशीलता भी प्रचुर मात्रा में होती है। अतः प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में पाठों का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि छात्र की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में विषय-वस्तु सहायक हो। पुस्तक में छात्रों की केवल रुचियों का ही ध्यान नहीं रखा गया है, वरन् उनकी रुचि के परिष्कार का भी लक्ष्य सामने रखा गया है।

प्रस्तुत संकलन में इस बात का प्रयास किया गया है कि गद्य के ऐतिहासिक विकास, उसकी विभिन्न शैलियों तथा उसकी विविध विधाओं से छात्र परिचित हो जायँ। यह कार्य गहन अध्ययन द्वारा संभव है। अतः इस पुस्तक को द्रुत पठन की पुस्तक की भाँति न पढ़ाकर विशद् एवं गहन अध्ययन की पुस्तक की भाँति पढ़ाया जाय, क्योंकि प्रत्येक पंक्ति अर्थ-बोध की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। अर्थ-बोध हमारे पढ़ाने का प्रथम मुख्य लक्ष्य होना चाहिए।

अर्थ-बोध छात्रों के पूर्व ज्ञान, शब्द-भण्डार एवं पढ़ने की गति पर प्रायः आधारित होता है। अर्थ-बोध की योग्यता का विकास करने के लिए कक्षा में छात्रों को जिन बातों का अभ्यास कराना आवश्यक है, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

1. सारांश बताना।
2. अनुच्छेदों का शीर्षक देना।
3. सन्दर्भ द्वारा शब्दों के अर्थ का अनुमान कर लेना।
4. केन्द्रीय भाव ग्रहण कर लेना।
5. पठित सामग्री का मूल्यांकन करना।
6. शैली की विविधता को समझना।
7. वाक्यों में शब्दों के क्रम के महत्त्व को पहचानना।
8. लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ को समझना।
9. सुन्दर वाक्यों को कण्ठस्थ कर लेना।

अर्थ-बोध के अतिरिक्त कक्षा में पढ़ाने का दूसरा उद्देश्य शब्द-भण्डार की वृद्धि है। पढ़ाते समय पर्यायवाची, विलोम, अनेकार्थवाची एवं समानार्थी शब्दों का ज्ञान कराना आवश्यक है। शब्द-रचना से भी छात्रों को परिचित होना चाहिए। शब्द-भण्डार में वृद्धि की दृष्टि से कोश का प्रयोग आवश्यक है। इन क्रियाओं का अभ्यास कक्षा में कराना हितकर होगा।

प्रस्तुत संकलन के पाठों को पढ़ाने का तीसरा प्रमुख उद्देश्य पठन-गति का विकास करना है। इस स्तर पर सस्वर पठन की अपेक्षा मौन पठन का अधिक महत्त्व है, किन्तु दोनों प्रकार के वाचनों में गति के विकास का ध्यान रखना लाभप्रद होगा। यह गति अभ्यास पर निर्भर है, अतः कक्षा में पाठनाभ्यास आवश्यक है।

इण्टरमीडिएट के छात्रों को आलोचनात्मक चिन्तन की ओर भी उन्मुख होना है, अतः छात्रों में आलोचनात्मक दृष्टिकोण का विकास करना अध्यापक का उद्देश्य होना चाहिए। निबंधों में आये हुए तथ्यों की तुलना करके उनकी तर्कसंगतता देखनी

चाहिए। कारण-कार्य सम्बन्धों का विश्लेषण होना चाहिए। छात्रों को इस योग्य होना चाहिए कि वे पाठों को पढ़कर उनकी आलोचना स्वस्थ ढंग से कर सकें।

आलोचनात्मक चिन्तन के साथ-साथ छात्रों में रचनात्मक प्रवृत्ति के विकास का भी ध्यान रखना श्रेयस्कर होगा। छात्र यह देखें कि एक ही बात को विभिन्न शैलियों में किस प्रकार कहा जा सकता है। इस विशेषता को लक्षित करके उन्हें अपने स्वभाव एवं क्षमता के अनुकूल उपयुक्त शैली में भावाभिव्यक्ति का सफल प्रयत्न करना चाहिए, तभी वे आगे चलकर स्वयं भी साहित्य की श्रीवृद्धि करने में समर्थ हो सकेंगे। पढ़ाते समय अध्यापक को मनोविज्ञान के अधुनातन सिद्धान्तों का उपयोग करना चाहिए। अध्यापक को विभिन्न युक्तियों का प्रयोग करते समय यह देखना चाहिए कि वे विभिन्न युक्तियाँ साहित्यिक विधाओं के भी अनुकूल हों और छात्रों की मानसिक योग्यता, अभिरुचि एवं क्षमता के भी।

निबंधों को पढ़ाने में निबंध की विषय-वस्तु, प्रस्तुति एवं प्रयोजन पर दृष्टि रहनी चाहिए। निबंधों के विषय अनेक प्रकार के हैं। इनसे छात्रों का परिचय होना ही है। प्रस्तुतीकरण की शैली भिन्न-भिन्न है। शैली की भिन्नता प्रयोजन तथा विषय की भिन्नता के कारण है। छात्रों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करना है कि लेखक ने अपने आशय या प्रयोजन को व्यक्त करने के लिए किस प्रकार की शैली का चुनाव किया है और इस प्रकार की शैली किस तरह के विषयों के लिए उपयुक्त होती है।

गद्यकार का कौशल उसकी अभिव्यंजना-शैली में देखा जा सकता है। व्यंग्यकार प्रायः उर्दू शब्दावली अथवा तद्भव शब्दावली का प्रयोग करता है, जबकि गंभीर विचारों की अभिव्यक्ति करनेवाला निबंधकार प्रायः तत्सम पदावली की ओर उन्मुख हो जाता है। टकसाली शब्दों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग की ओर झुकाव कुछ गद्यकारों में विशेष रूप से दिखायी पड़ता है। छात्रों को इस योग्य होना चाहिए कि वे शब्दों के परे जाकर व्यंग्यार्थ की अनुभूति कर सकें। संकेतों को अच्छी तरह समझाना और लेखक के आशय को ग्रहण करना कठिन होता है और इसी कठिनाई पर विजय पाने के लिए कक्षा में पठन-पाठन की योजना बनायी जाती है।

गद्य-शिक्षण के समय अध्यापक को पाठ्य-बिन्दुओं का निश्चय पहले से ही कर लेना चाहिए। किन तथ्यों पर अधिक बल देना है और कौन-से स्थल अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, किन वाक्यों की व्याख्या करना है, किन सन्दर्भों को देना है, इसका निश्चय प्रत्येक पाठ के शिक्षण के पूर्व ही कर लेना चाहिए। कक्षा में शिक्षण का आरम्भ चाहे जिस विधि से किया जाय, किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि छात्र प्रारम्भ में ही लेखक से कुछ परिचित हो जायँ और नवीन विषयवस्तु को ग्रहण करने की मानसिक स्थिति में वे आ जायँ। अनुभवों एवं पूर्व अर्जित ज्ञान का भरपूर उपयोग किया जाय। निबंध पाठों के अध्ययन-अध्यापन के समय केवल परीक्षा को ही दृष्टि में रखना गद्य-शिक्षण का उद्देश्य नहीं है। परीक्षा को गौण समझा जाना चाहिए और निबंधों की विशेषताओं से परिचय प्राप्त करके अपनी शैली में परिमार्जन करने को प्रमुखता दी जानी चाहिए।

गद्य-शिक्षण में प्रत्येक पाठ के शिक्षण की विधि एक ही यांत्रिक ढंग से नहीं होनी चाहिए। जिस विधि से समीक्षात्मक पाठ पढ़ाया जायेगा, उसी विधि से भावात्मक निबंध नहीं पढ़ाया जा सकता। रेखाचित्र, संस्मरण एवं रिपोर्ताज के पढ़ाने का ढंग अलग होगा। किसी निबंध को पढ़ाने में तथ्यों एवं घटनाओं की ओर छात्र का ध्यान आकृष्ट किया जायेगा तो किसी अन्य में मनोभावों एवं शैलीगत विशेषताओं को प्रमुखता दी जायेगी। पाठ को पढ़ाने में मौन पाठ का सर्वाधिक महत्त्व होगा तो किसी अन्य में सस्वर पठन का भी उपयोग किया जा सकता है।

वाद-विवाद प्रतियोगिता में भाग लेने के अवसर पर, विद्यालयीय पत्रिका हेतु लेख लिखने अथवा किसी आयोजन पर भाषण देने के अवसर पर किसी गद्यकार की शैली के अनुकरण के लिए छात्रों को प्रेरित किया जा सकता है।

●●

# 1 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—9 सितम्बर, सन् 1850 ई०।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ० प्र०)।
- **पिता**—गोपालचन्द्र 'गिरिधरदास'।
- **माता**—पार्वती देवी।
- **शिक्षा**—अंग्रेजी, बांग्ला, गुजराती आदि का स्वाध्ययन।
- **भाषा**—ब्रजभाषा, खड़ीबोली।
- **शैली**—मुक्तक।
- भारतेन्दु युग के प्रवर्तक।
- **संपादन**—कवि-वचन-सुधा, हरिश्चन्द्र मैगजीन, हरिश्चन्द्र चंद्रिका।
- **लेखन-विधा**—कविता, नाटक, एकांकी, निबन्ध, उपन्यास, पत्रकारिता।
- **प्रमुख रचनाएँ**—नीलदेवी, प्रेम-जोगिनी, भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी, कर्पूर मंजरी, सुलोचना।
- **मृत्यु**—6 जनवरी, सन् 1885 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—हिन्दी-साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका भारतेन्दु युग में।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इतिहास-प्रसिद्ध सेठ अमीचन्द के प्रपौत्र गोपालचन्द्र 'गिरिधरदास' के ज्येष्ठ पुत्र थे। इनका जन्म 9 सितम्बर, सन् 1850 ई0 को काशी में हुआ था। मात्र पाँच वर्ष की अवस्था में माता पार्वती देवी तथा दस वर्ष की अवस्था में पिता गोपालचन्द्र के सुख से यह वंचित हो गये। विमाता मोहन बीबी का इन पर विशेष प्रेम न होने के कारण इनके पालन-पोषण का भार कालीकदमा दाई और तिलकधारी नौकर पर था। पिता की असामयिक मृत्यु के बाद क्वीन्स कालेज, वाराणसी में तीन-चार वर्ष तक अध्ययन किया। उस समय काशी के रईसों में केवल राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' ही अंग्रेजी पढ़े-लिखे थे। इसलिए भारतेन्दु जी अंग्रेजी पढ़ने के लिए उनके पास जाया करते थे और उन्हें गुरु-तुल्य मानते थे। कालेज छोड़ने के बाद इन्होंने स्वाध्याय द्वारा हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी के अतिरिक्त मराठी, गुजराती, बंगला, मारवाड़ी, उर्दू, पंजाबी आदि भारतीय भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। तेरह वर्ष की अल्पावस्था में इनका विवाह काशी के रईस लाला गुलाब राय की पुत्री मन्ना देवी से हुआ। इनके दो पुत्र और एक पुत्री थी। पुत्रों की बाल्यावस्था में ही मृत्यु हो गयी थी, जबकि पुत्री विद्यावती सुशिक्षिता थी। भारतेन्दु जी ने अनेक स्थानों की यात्राएँ कीं। ऋण लेने की आदत भी इन पर पड़ गयी। ऋणग्रस्तता, कौटुम्बिक तथा अन्य सांसारिक चिन्ताओं सहित क्षय रोग से पीड़ित भारतेन्दु जी का निधन 6 जनवरी, 1885 ई0 को चौंतीस वर्ष चार महीने की अवस्था में हो गया।

भारतेन्दु जी ने हिन्दी-साहित्य की जो समृद्धि की वह सामान्य व्यक्ति के लिए असंभव है। ये कवि, नाटककार, निबंध-लेखक, सम्पादक, समाज-सुधारक सभी कुछ थे। हिन्दी गद्य के तो ये जन्मदाता समझे जाते हैं। काव्य-रचना भी ये बाल्यावस्था

से ही करने लगे थे। इनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर सन् 1880 ई0 में पण्डित रघुनाथ, पं0 सुधाकर द्विवेदी, पं0 रामेश्वरदत्त व्यास आदि के प्रस्तावानुसार हरिश्चन्द्र को 'भारतेन्दु' की पदवी से विभूषित किया गया और तभी से इनके नाम के साथ भारतेन्दु शब्द जुड़ गया। इन्होंने हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन को गति देने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन एवं सम्पादन किया। इन्होंने सन् 1868 ई0 में 'कवि वचन सुधा' और सन् 1873 ई0 में 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का सम्पादन किया था। 8 अंकों के बाद 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का नाम 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' हो गया। हिन्दी-गद्य को नयी चाल में ढालने का श्रेय 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' को ही है।

भारतेन्दु जी की कृतियाँ अनेक विधाओं में उल्लेखनीय हैं। नाटक के क्षेत्र में इनकी देन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

भारतेन्दु ने इतिहास, पुराण, धर्म, भाषा, संगीत आदि अनेक विषयों पर निबंध लिखे हैं। इन्होंने जीवनियाँ और यात्रा-वृत्तान्त भी लिखे हैं। भारतेन्दु जी की प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं—

**नाटक**–भारतेन्दु जी ने मौलिक तथा अनूदित दोनों प्रकार के नाटकों की रचना की है, जिनका विवरण इस प्रकार है—

**( क ) मौलिक नाटक :** 'नील देवी', 'सत्य हरिश्चन्द्र', 'श्री चन्द्रावली', 'भारत-दुर्दशा', 'अंधेरनगरी', 'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति', 'विषस्य विषमौषधम्', 'सती-प्रताप', 'प्रेम जोगिनी'।

**( ख ) अनूदित नाटक :** 'रत्नावली', 'मुद्राराक्षस', 'भारत-जननी', 'विद्या सुंदर', 'पाखण्ड-विडम्बन', 'दुर्लभ-बन्धु', 'कर्पूरमंजरी', 'धनंजय-विजय'।

**निबन्ध-संग्रह :** 'परिहास-वंचक', 'सुलोचना', 'मदालसा', 'लीलावती', 'दिल्ली-दरबार-दर्पण'।

**इतिहास :** 'महाराष्ट्र देश का इतिहास', 'अग्रवालों की उत्पत्ति', 'कश्मीर-कुसुम'।

**यात्रा-वृत्तान्त :** 'लखनऊ की यात्रा', 'सरयू पार की यात्रा'।

**जीवनियाँ :** 'जयदेव', 'सूरदास की जीवनी', 'महात्मा मुहम्मद'।

शैली की दृष्टि से भारतेन्दु ने वर्णनात्मक, विचारात्मक, विवरणात्मक और भावात्मक सभी शैलियों में निबंध-रचना की है। इनके द्वारा लिखित 'दिल्ली दरबार दर्पण' वर्णनात्मक शैली का श्रेष्ठ निबन्ध है। इनके यात्रा-वृत्तान्त (सरयूपार की यात्रा, लखनऊ की यात्रा आदि) विवरणात्मक शैली में लिखे गये हैं। 'वैष्णवता और भारतवर्ष' तथा 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?' जैसे निबंध विचारात्मक हैं। भारतेन्दु की भावात्मक शैली का रूप इनके द्वारा लिखित जीवनियाँ (सूरदास, जयदेव, महात्मा मुहम्मद आदि) तथा ऐतिहासिक निबंधों में बीच-बीच में मिलता है। इसके अतिरिक्त इनके निबंधों में शोध-शैली, भाषण-शैली, स्तोत्र-शैली, प्रदर्शन-शैली, कथा-शैली आदि के रूप भी मिलते हैं। इनकी भाषा व्यावहारिक, बोलचाल के निकट, प्रवाहमयी और जीवंत हैं। इन्होंने काव्य में ब्रजभाषा का प्रयोग किया, परन्तु गद्य के लिए खड़ीबोली को अपनाया। भाषा को सजीव बनाने के लिए इन्होंने लोकोक्ति और मुहावरों का सटीक प्रयोग किया।

पाठ्य-पुस्तक में संकलित **'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?'** निबंध दिसम्बर सन् 1884 ई0 में बलिया के ददरी मेले के अवसर पर आर्य देशोपकारणी सभा में भाषण देने के लिए लिखा गया था। इसमें लेखक ने कुरीतियों और अंधविश्वासों को त्यागकर अच्छी-से-अच्छी शिक्षा प्राप्त करने, उद्योग-धंधों को विकसित करने, सहयोग एवं एकता पर बल देने तथा सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा दी है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। साहित्य के क्षेत्र में इनके योगदान के कारण ही इन्हें 'आधुनिक हिन्दी-गद्य साहित्य का जनक', 'युग निर्माता साहित्यकार' अथवा 'आधुनिक हिन्दी-साहित्य का युग प्रवर्तक' कहा जाता है। भारतीय साहित्य में इन्हें युगद्रष्टा, युगस्रष्टा, युग जागरण के दूत और एक युग-पुरुष के रूप में जाना जाता है। इनके हिन्दी साहित्य में बहुमूल्य योगदान के कारण ही भारतीय साहित्यकारों ने इन्हें 'भारतेन्दु' की उपाधि से विभूषित किया है। हिन्दी साहित्य में इनके योगदान के फलस्वरूप 1864 ई॰ से 1900 ई॰ तक की अवधि को 'भारतेन्दु युग' के नाम से जाना जाता है।

●●●

# भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?

आज बड़े आनन्द का दिन है कि छोटे से नगर बलिया में हम इतने मनुष्यों को एक बड़े उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाय वही बहुत है। हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेण्ड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साधि रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल कौन याद दिलावे। या हिन्दुस्तानी राजेमहाराजे, नवाब, रईस या हाकिम। राजे-महाराजों को अपनी पूजा, भोजन, झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सरकारी काम घेरे रहता है, कुछ बाल घुड़दौड़ थियेटर में समय लगा। कुछ समय बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गन्दे काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवें। बस वही मसल रही। "तुम्हें गैरों से कब फ़ुरसत हम अपने गम से कब खाली। चलो बस हो चुका मिलना न हम खाली न तुम खाली।"

पहले भी जब आर्य लोग हिन्दुस्तान में आकर बसे थे राजा और ब्राह्मणों के जिम्मे यह काम था कि देश में नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावें और अब भी ये लोग चाहें तो हिन्दुस्तान प्रतिदिन क्या प्रतिछिन बढ़े। पर इन्हीं लोगों को निकम्मेपन ने घेर रखा है।

हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि इनके पुरखों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नालियों से जो ताराग्रह आदि बेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीन बनी है उनसे उन ग्रहों को बेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंगरेजी विद्या के और जनता की उन्नति से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन अंगरेज फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमी पहले छू लें। उस समय हिन्दू काठियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको औरों को जाने दीजिए जापानी टट्टुओं को हाँफते हुए दौड़ते देख करके भी लाज नहीं आती। यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जायेगा फिर कोटि उपाय किये भी आगे न बढ़ सकेगा। इस लूट में इस बरसात में भी जिसके सिर पर कम्बख्ती का छाता और आँखों में मूर्खता की पट्टी बँधी रहे उन पर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

मुझको मेरे मित्रों ने कहा था कि तुम इस विषय पर कुछ कहो कि हिन्दुस्तान की कैसे उन्नति हो सकती है।

भला इस विषय पर मैं और क्या कहूँ? भागवत में एक श्लोक है, *'नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारं मयाऽनुकूलेन नभः स्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा।"* भगवान् कहते हैं कि पहले तो मनुष्य-जन्म ही बड़ा दुर्लभ है सो मिला और उस पर गुरु की कृपा और उस पर मेरी अनुकूलता इतना सामान पाकर भी जो मनुष्य इस संसार सागर के पार न जाय उसको आत्महत्यारा कहना चाहिए। वही दशा इस समय हिन्दुस्तान की है।

बहुत लोग यह कहेंगे कि हमको पेट के धंधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती है बाबा हम क्या उन्नति करें। तुम्हारा पेट भरा है तुमको दून की सूझती है। यह कहना उनकी बहुत भूल है। इंग्लैण्ड का पेट भी कभी यों ही खाली था। उसने एक हाथ से अपना पेट भरा दूसरे हाथ से उन्नति के काँटों को साफ किया, क्या इंग्लैण्ड में किसान खेतवाले, गाड़ीवाले, गाड़ीवान, मजदूर,

कोचवान आदि नहीं हैं? किसी देश में भी सभी पेट भरे हुए नहीं होते। किन्तु वे लोग जहाँ खेत जोते-बोते हैं वहीं उसके साथ यह भी सोचते हैं कि ऐसी कौन नयी कल या मसाला बनावें जिसमें इस खेत में आगे से दून अन्न उपजे। विलायत में गाड़ी के कोचवान भी अखबार पढ़ते हैं। जब मालिक उतरकर किसी दोस्त के यहाँ गया उसी समय कोचवान ने गद्दी के नीचे से अखबार निकाला। यहाँ उतनी देर कोचवान हुक्का पियेगा व गप्प करेगा। सो गप्प भी निकम्मी। 'वहाँ के लोग गप्प में ही देश के प्रबन्ध छाँटते हैं।' सिद्धान्त यह कि वहाँ के लोगों का यह सिद्धान्त है कि एक छिन भी व्यर्थ न जाये। उसके बदले यहाँ के लोगों को जितना निकम्मापन हो उतना ही वह बड़ा अमीर समझा जाता है, आलस यहाँ इतनी बढ़ गयी है कि मलूकदास ने दोहा ही बना डाला—"अजगर करे न चाकरी पंछी करै न काम। दास मलूका कहि गये सबके दाता राम।" चारों ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारों ओर बढ़ती है, रोजगार कहीं कुछ भी नहीं। चारों ओर दरिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि दरिद्र कुटुम्बी इस तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाये जाती है। वही दशा हिन्दुस्तान की है। मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट देखने से स्पष्ट होता है कि मनुष्य दिन-दिन यहाँ बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन-दिन कमती होता जाता है। सो अब बिना ऐसा उपाय किये काम नहीं चलेगा कि रुपया भी बढ़े। और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ेगा। भाइयों राजा-महाराजों का मुँह मत देखो, मत यह आशा रखो कि पंडित जी कथा में ऐसा उपाय बतलावेंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़े। तुम आप कमर कसो, आलस छोड़ो, कब तक अपने को जंगली हूस मूर्ख बोदे डरपोकने पुकरवाओगे। दौड़ो इस घुड़दौड़ में जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं। 'फिर कब राम जनक-पुर ऐहैं' अबकी पीछे पड़े तो फिर रसातल ही पहुँचोगे।

अब भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्हीं रहो। और वह सुधारना ऐसा भी होना चाहिए कि सब बात में उन्नति हो। धर्म में, घर के काम में, बाहर के काम में, रोजगार में, शिष्टाचार में, चालचलन में, शरीर में, बल में, समाज में, युवा में, वृद्ध में, स्त्री में, पुरुष में, अमीर में, गरीब में, भारतवर्ष की सब अवस्था, सब जाति, सब देश में उन्नति करो। सब ऐसी बातों को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के कंटक हों। चाहे तुम्हें लोग निकम्मा कहें या नंगा कहें, कृस्तान कहें या भ्रष्ट कहें, तुम केवल अपने देश की दीन दशा को देखो और उनकी बात मत सुनो। *"अपमानं पुरस्कृत्य मानं कृत्वा तु पृष्ठतः स्वकार्यं साधयेत् धीमान् कार्यध्वंसो हि मूर्खता।"* जो लोग अपने को देश हितैषी लगाते हों वह अपने सुख को होम करके अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कसके उठो। देखा-देखी थोड़े दिन में सब हो जायेगा। अपनी खराबियों के मूल कारणों को खोजो। कोई धर्म की आड़ में, कोई देश की चाल की आड़ में, कोई सुख की आड़ में छिपे हैं। उन चोरों को वहाँ से पकड़कर लाओ। उनको बांधकर कैद करो। इस समय जो जो बातें तुम्हारी उन्नति पथ की काँटा हों उनकी जड़ खोदकर फेंक दो।

अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिड़िया का नाम है? किसको अच्छा समझें? क्या लें क्या छोड़ें? तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता से मेरे ध्यान में आती हैं उनको मैं कहता हूँ, सुनो—

सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबसे पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो अंगरेजों की धर्मनीति राजनीति परस्पर मिली हैं इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो। तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति समाज-गठन वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यहीं तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्थान क्यों बनाया गया है। जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते दस-दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख-सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलतीं यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है? जिसमें महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हैं तो पहले पानी सिर पर चढ़ाकर तब पैर पर डालने का विधान क्यों है? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़ाकर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इस हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाये। होली इसी हेतु है कि वसंत की बिगड़ी हवा स्थान-स्थान पर अग्नि जलने से स्वच्छ हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है। ऐसे सब पर्व सब तीर्थव्रत आदि में कोई हिकमत है। उन लोगों ने धर्मनीति और समाजनीति को दूध पानी की भाँति मिला दिया है। खराबी जो बीच में भई है वह यह है कि उन लोगों ने यह धर्म क्यों मान लिए थे इसका लोगों ने मतलब नहीं समझा और इन बातों को वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयों, वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के चरण कमल का भजन है।

ये सब तो समाज धर्म हैं। जो देश काल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई है कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नये-नये धर्म बनाकर शास्त्रों

में धर दिये। बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गये। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनायी और उनमें जो देश और काल के अनुकूल और उपकारी हों उनको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज विरुद्ध मानी जाती हैं किन्तु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान है उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर विधवा विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन में ही ब्याह करके उनका बल, बीरज, आयुष्य सब मत घटाइए। आप उनके माँ बाप हैं या शत्रु हैं। वीर्य उनके शरीर में पुष्ट होने दीजिए। नोन तेल लकड़ी की फिक्र करने की बुद्धि सीख लेने दीजिए। तब उनका पैर काठ में डालिए। कुलीन प्रथा बहु विवाह आदि को दूर कीजिए। लड़कियों को भी पढ़ाइये किन्तु इस चाल से नहीं जैसे आजकल पढ़ायी जाती हैं, जिससे उपकार के बदले बुराई होती है। ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुल धर्म सीखें, पति की भक्ति करें और लड़कों को सहज में शिक्षा दें। नाना प्रकार के मत के लोग आपस में बैर छोड़ दें, यह समय इन झगड़ों का नहीं, हिन्दू, जैन, मुसलमान सब आपस में मिलिए, जाति में कोई चाहे ऊँचा हो, चाहे नीचा हो सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो उसे वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगों का तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपस में मिलिए।

अपने लड़कों को अच्छी से अच्छी तालीम दो। पिनशिन और वजीफा या नौकरी का भरोसा छोड़ो। लड़कों को रोजगार सिखलाओ। विलायत भेजो। छोटेपन से मेहनत करने की आदत दिलाओ। बंगाली, मरट्ठा, पंजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, ब्राह्मण, मुसलमान सब एक का हाथ एक पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुम्हारे यहाँ बढ़े तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश में रहे वह करो। देखो जैसे हजार धारा होकर गंगा समुद्र में मिली है वैसे ही तुम्हारी लक्ष्मी हजार तरह से इंग्लैण्ड, फरासीस, जर्मनी, अमेरिका को जाती है। दियासलाई ऐसी तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती है। जरा अपने ही को देखो। तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बनी है। जिस लंकलाट का तुम्हारा अंगा है वह इंग्लैण्ड का है। फरासीस की बनी कंघी से तुम सिर झारते हो। और जर्मनी की बनी चरखी की बत्ती तुम्हारे सामने जल रही है। यह तो वही मसल हुई एक बेफिकरे मंगनी का कपड़ा पहनकर किसी महफिल में गये। कपड़े को पहचान कर एक ने कहा अजी अंगा तो फलाने का है। दूसरा बोला अजी टोपी भी फलाने की है तो उन्होंने हँसकर जवाब दिया कि घर की तो मूंछें ही मूंछ हैं। हाय, अफसोस, तुम ऐसे हो गये कि अपने निज की काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार से उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

**—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए–

**(क)** हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेण्ड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साधि रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल कौन याद दिलावे।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक ने हिन्दुस्तानियों को किसके सदृश बताया है?

(iv) 'का चुप साधि रहा बलवाना' इस कथन से लेखक का क्या आशय है?
(v) लेखक ने हनुमान जी को किसका प्रतीक बताया है?

**(ख)** हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि इनके पुरखों के पास कोई भी सामान नहीं था, तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नालियों से जो ताराग्रह आदि बेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीन बनी है उनसे उन ग्रहों को वेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंगरेजी विद्या के और जनता की उन्नति से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की नाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन अंगरेज फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमी पहले छू लें। उस समय हिन्दू काठियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक के अनुसार प्रतिस्पर्द्धा में भारतवासियों की असफलता का क्या कारण है?
(iv) प्राचीन काल में साधन के अभाव में भारतीयों ने किसकी खोज की?
(v) आधुनिक समय में अपनी उन्नति के लिए कौन प्रयासरत है?

**(ग)** सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबसे पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो अंगरेजों की धर्मनीति राजनीति परस्पर मिली हैं इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो। तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति समाज-गठन, वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यहीं तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्थान क्यों बनाया गया है। जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते दस-दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख-सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलतीं यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है? जिसमें महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हैं तो पहले पानी सिर पर चढ़ाकर तब पैर पर डालने का विधान क्यों है? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़कर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इस हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाये। होली इसी हेतु है कि वसंत की बिगड़ी हवा स्थान-स्थान पर अग्नि जलने से स्वच्छ हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने सभी उन्नतियों का मूल किसे बताया है?
(iv) लेखक ने अंग्रेजों की उन्नति का क्या कारण बताया है?
(v) 'यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है' इस पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

**(घ)** ये सब तो समाज धर्म हैं। जो देश काल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई है कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नये-नये धर्म बनाकर शास्त्रों में धर दिये। बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गये। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनायी और उनमें जो देश और काल के अनुकूल और उपकारी हों उनको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज विरुद्ध मानी जाती हैं किन्तु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान है उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर, विधवा विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन में ही ब्याह करके उनका बल, बीरज, आयुष्य सब मत घटाइए।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) 'सामाजिक धर्म' किसे कहा गया है?
(iv) लेखक किस बात को ग्रहण करने को कहता है?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में किन सामाजिक कुरीतियों को दूर करने को कहा गया है?

(ङ) हाय, अफसोस, तुम ऐसे हो गये कि अपने निज की काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार से उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने किस बात पर अफसोस प्रकट किया है?
(iv) लेखक ने अपने देशवासियों को किसकी उन्नति पर बल दिया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने किसका भरोसा न करने को कहा है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जीवन-परिचय बताते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का साहित्यिक परिचय दीजिए।
3. निम्नलिखित शीर्षकों के आधार पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का परिचय दीजिए–
   (i) जीवन-परिचय (ii) प्रमुख रचनाएँ।
4. 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
5. निम्नलिखित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) उन्नति की घुड़दौड़ हो रही है।
   (ख) सब उन्नतियों का मूल धर्म है।
   (ग) उसने एक हाथ से अपना पेट भरा दूसरे हाथ से उन्नति के काँटों को साफ किया।
   (घ) हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं।
   (ङ) परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत करो।
   (च) अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।
   (छ) हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं।
   (ज) यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है।
   (झ) दरिद्र कुटुम्बी इस तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाये जाती है।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. देश की आत्मनिर्भरता के लिए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने क्या उपाय बताये हैं?
2. भारतेन्दु को हिन्दी के आधुनिक काल का जनक क्यों कहा जाता है?
3. "यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है।" भारतेन्दु के इस कथन का क्या अभिप्राय है?
4. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के निबन्ध 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?' पर प्रकाश डालिए।
5. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भारतवर्ष की उन्नति में किन-किन बातों को बाधक माना है?
6. भारतेन्दु ने भारतीयों को राष्ट्रोन्नति के लिए क्या-क्या सुझाव दिये?
7. भारतेन्दु की दृष्टि में इंग्लैण्ड की उन्नति का मूल कारण क्या है? संक्षेप में लिखिए।

●●●

# 2 आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

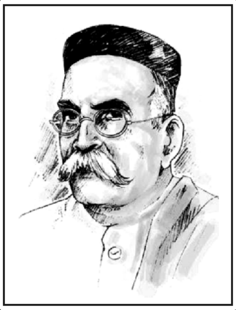

हिन्दी गद्य साहित्य के युग-विधायक महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म 5 मई, सन् 1864 ई० में रायबरेली जिले के दौलतपुर गाँव में हुआ था। कहा जाता है कि इनके पिता रामसहाय द्विवेदी को महावीर का इष्ट था, इसीलिए इन्होंने पुत्र का नाम महावीरसहाय रखा। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई। पाठशाला के प्रधानाध्यापक ने भूलवश इनका नाम महावीरप्रसाद लिख दिया था। यह भूल हिन्दी साहित्य में स्थायी बन गयी। तेरह वर्ष की अवस्था में अंग्रेजी पढ़ने के लिए इन्होंने रायबरेली के जिला स्कूल में प्रवेश लिया। यहाँ संस्कृत के अभाव में इनको वैकल्पिक विषय फारसी लेना पड़ा। यहाँ एक वर्ष व्यतीत करने के बाद कुछ दिनों तक उन्नाव जिले के रंजीत पुरवा स्कूल में और कुछ दिनों तक फतेहपुर में पढ़ने के पश्चात् ये पिता के पास बम्बई (मुम्बई) चले गये। वहाँ इन्होंने संस्कृत, गुजराती, मराठी और अंग्रेजी का अभ्यास किया। इनकी उत्कट ज्ञान-पिपासा कभी तृप्त न हुई, किन्तु जीविका के लिए इन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। रेलवे में विभिन्न पदों पर कार्य करने के बाद झाँसी में डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट के कार्यालय में मुख्य लिपिक हो गये। पाँच वर्ष बाद उच्चाधिकारी से खिन्न होकर इन्होंने नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। इनकी साहित्य साधना का क्रम सरकारी नौकरी के नीरस वातावरण में भी चल रहा था और इस अवधि में इनके संस्कृत ग्रन्थों के कई अनुवाद और कुछ आलोचनाएँ प्रकाश में आ चुकी थीं। सन् 1903 ई० में द्विवेदीजी ने 'सरस्वती' पत्रिका का सम्पादन स्वीकार किया। 1920 ई० तक यह गुरुतर दायित्व इन्होंने निष्ठापूर्वक निभाया। 'सरस्वती' से अलग होने पर इनके जीवन के अन्तिम अठारह वर्ष गाँव के नीरस वातावरण में बड़ी कठिनाई से व्यतीत हुए। 21 दिसम्बर सन् 1938 ई० को रायबरेली में हिन्दी के इस यशस्वी साहित्यकार का स्वर्गवास हो गया।

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—5 मई, सन् 1864 ई०।
- **जन्म-स्थान**—दौलतपुर (रायबरेली), उ० प्र०।
- **पिता**—रामसहाय द्विवेदी।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—घर पर संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, बांग्ला भाषाओं का स्वाध्याय।
- **लेखन विधा**—निबन्ध, नाटक, काव्य।
- **भाषा**—अत्यन्त प्रभावशाली, संस्कृतमयी और साहित्यिक हिन्दी।
- **शैली**—विविध शैलियों का प्रयोग, प्रमुख रूप से भावात्मक और विचारात्मक शैली का उपयोग।
- **प्रमुख रचनाएँ**—हिन्दी–नवरत्न, मेघदूत, शिक्षा, सरस्वती, कुमारसंभव, रघुवंश, हिन्दी महाभारत आदि।
- **उपाधि**—काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य' की उपाधि से इन्हें सम्मानित किया।
- **सम्पादन**—'सरस्वती' पत्रिका।
- **मृत्यु**—21 दिसम्बर, सन् 1938 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—द्विवेदी युग के प्रवर्तक तथा समालोचना के सूत्रधार।

हिन्दी साहित्य में द्विवेदीजी का मूल्यांकन तत्कालीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में किया जा सकता है। वह समय हिन्दी के कलात्मक विकास का नहीं, हिन्दी के अभावों की पूर्ति का था। द्विवेदी जी ने ज्ञान के विविध क्षेत्रों, इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान, पुरातत्त्व, चिकित्सा, राजनीति, जीवनी आदि से सामग्री लेकर हिन्दी के अभावों की पूर्ति की। हिन्दी गद्य को माँजने-सँवारने और परिष्कृत करने में आजीवन संलग्न रहे। इन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 'साहित्य वाचस्पति' एवं नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य' की उपाधि से सम्मानित किया था। उस समय टीका-टिप्पणी करके सही मार्ग का निर्देशन देनेवाला कोई न था। इन्होंने इस अभाव को दूर किया तथा भाषा के स्वरूप-संगठन, वाक्य-विन्यास, विराम-चिह्नों के प्रयोग तथा व्याकरण की शुद्धता पर विशेष बल दिया। लेखकों की अशुद्धियों को रेखांकित किया। स्वयं लिखकर तथा दूसरों से लिखवाकर इन्होंने हिन्दी गद्य को पुष्ट और परिमार्जित किया। हिन्दी गद्य के विकास में इनका ऐतिहासिक महत्त्व है।

द्विवेदीजी ने 50 से अधिक ग्रन्थों तथा सैकड़ों निबन्धों की रचना की थी। ये उच्चकोटि के अनुवादक भी थे। इन्होंने संस्कृत और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में अनुवाद किया है। द्विवेदी जी की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं–

**निबन्ध**–इनके सर्वाधिक निबन्ध 'सरस्वती' में तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं एवं निबन्ध संग्रहों के रूप में प्रकाशित हुए हैं।

**काव्य संग्रह**–'काव्य-मंजूषा'।

**आलोचना**–'हिन्दी नवरत्न', 'नाट्यशास्त्र', 'रसज्ञ-रंजन', 'साहित्य-सीकर', 'विचार-विमर्श', 'वाग्विलास', 'साहित्य-संदर्भ', 'कालिदास और उनकी कविता', 'कालिदास की निरंकुशता' आदि।

**अनूदित**–'हिन्दी महाभारत', 'किरातार्जुनीय', 'रघुवंश', 'विनय-विनोद', 'गंगा लहरी', 'कुमारसंभव', 'विचार-रत्नावली', 'स्वाधीनता', 'शिक्षा', 'बेकन-विचारमाला', 'मेघदूत' आदि।

**संपादन**–'सरस्वती' मासिक पत्रिका।

**अन्य रचनाएँ**–'अद्भुत आलाप', 'संकलन', 'हिन्दी भाषा की उत्पत्ति', 'अतीत-स्मृति' आदि।

**विविध रचनाएँ**–'जल-चिकित्सा', 'सम्पत्तिशास्त्र', 'वक्तृत्व-कला' आदि।

द्विवेदीजी की भाषा अत्यन्त परिष्कृत, परिमार्जित एवं व्याकरण-सम्मत है। उसमें पर्याप्त गति तथा प्रवाह है। इन्होंने हिन्दी के शब्द-भण्डार की श्रीवृद्धि में अप्रतिम सहयोग दिया। इनकी भाषा में कहावतों, मुहावरों, सूक्तियों आदि का प्रयोग भी मिलता है। इन्होंने अपने निबंधों में परिचयात्मक शैली, आलोचनात्मक शैली, गवेषणात्मक शैली तथा आत्म-कथात्मक शैली का प्रयोग किया है। कठिन से कठिन विषय को बोधगम्य रूप में प्रस्तुत करना इनकी शैली की सबसे बड़ी विशेषता है। शब्दों के प्रयोग में इनको रूढ़िवादी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि आवश्यकतानुसार तत्सम शब्दों के अतिरिक्त अरबी, फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का भी इन्होंने व्यवहार किया है।

**'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन'** निबंध में संस्कृत के महाकवि माघ के प्रभात-वर्णन सम्बन्धी हृदयस्पर्शी स्थलों को निबंधकार ने हमारे सामने रखा है। उसने बहुत ही कलात्मक ढंग से यह दिखलाया है कि किस तरह सूर्य और चन्द्रमा, नक्षत्र एवं दिग्वधुएँ अपनी-अपनी क्रीड़ाओं में तल्लीन हैं। सूर्य की रश्मियाँ अन्धकार को नष्ट कर जीवन और जगत् को प्रकाश से परिपूर्ण कर देती हैं। रसिक चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से रजनीगंधा को प्रमुदित कर देता है। सूर्य और चन्द्रमा समय-समय पर दिग्वधुओं से कैसे प्रणय-विवेदन करते हुए एक दूसरे के प्रति प्रतिद्वन्द्विता के भाव से भर उठते हैं, कैसे प्रवासी सूर्य का स्थान चन्द्रमा लेकर दिग्वधुओं से हास-परिहास करते हुए सूर्य के कोप का भाजन बन उसके द्वारा परास्त किया जाता है—इन सबका बड़ा मनोहारी चित्रण इस निबंध में किया गया है।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी-साहित्य के युगप्रवर्तक साहित्यकारों में शामिल हैं। इन्हें शुद्ध साहित्यिक खड़ीबोली का वास्तविक सर्जक माना जाता है। इसीलिए 1900 ई० से 1922 ई० तक के समय को हिन्दी-साहित्य के इतिहास में 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है।

●●●

# महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन

रात अब बहुत ही थोड़ी रह गयी है। सुबह होने में कुछ ही कसर है। जरा सप्तर्षि नाम के तारों को तो देखिए। वे आसमान में लंबे पड़े हुए हैं। उनका पिछला भाग तो नीचे को झुका-सा है और अगला ऊपर को। वहीं, उनके अधोभाग में, छोटा-सा ध्रुवतारा कुछ-कुछ चमक रहा है। सप्तर्षियों का आकार गाड़ी के सदृश है—ऐसी गाड़ी के सदृश जिसका जुवाँ ऊपर को उठ गया हो; इसी से उनके और ध्रुवतारा के दृश्य को देखकर श्रीकृष्ण के बालपन की एक घटना याद आ जाती है। शिशु श्रीकृष्ण को मारने के लिए एक बार गाड़ी का रूप बनाकर शकटासुर नाम का एक दानव उनके पास आया। श्रीकृष्ण ने पालने में पड़े-ही-पड़े, खेलते-खेलते, उसे एक लात मार दी। उसके आघात से उसका अग्रभाग ऊपर को उठ गया और पश्चाद्‌भाग खड़ा ही रह गया। श्रीकृष्ण उसके तले आ गये। वही दृश्य इस समय सप्तर्षियों की अवस्थिति का है। वे तो कुछ उठे हुए-से लंबे पड़े हैं, छोटा-सा ध्रुव उनके नीचे चमक रहा है।

पूर्व-दिशारूपिणी स्त्री की प्रभा इस समय बहुत ही भली मालूम होती है। वह हँस-सी रही है। वह यह सोचती-सी है कि इस चन्द्रमा ने जब तक मेरा साथ दिया—जब तक यह मेरी संगति में रहा—तब तक उदित ही नहीं रहा, इसकी दीप्ति भी खूब बढ़ी, परन्तु, देखो, वही अब पश्चिम-दिशारूपिणी स्त्री की तरफ जाते ही (हीन-दीप्ति होकर) पतित हो रहा है। इसी से पूर्व दिशा, चन्द्रमा को देख-देख प्रभा के बहाने, ईर्ष्या से मुसका-सी रही है। परन्तु चन्द्रमा को उसके हँसी-मजाक की कुछ भी परवाह नहीं। वह अपने ही रंग में मस्त मालूम होता है। अस्त समय होने के कारण उसका बिंब तो लाल है, पर किरणें उसकी पुराने कमल की नाल के कटे हुए टुकड़ों के समान सफेद हैं। स्वयं सफेद होकर भी, बिंब की अरुणता के कारण, वे कुछ-कुछ लाल भी हैं। कुंकुम-मिश्रित सफेद चन्दन के सदृश उन्हीं लालिमा मिली हुई सफेद किरणों से चन्द्रमा पश्चिम दिग्वधू का शृंगार-सा कर रहा है—उसे प्रसन्न करने के लिए उसके मुख पर चन्दन का लेप-सा समा रहा है। पूर्व दिग्वधू के द्वारा किये गये उपहास की तरफ उसका ध्यान ही नहीं।

जब कमल शोभित होते हैं, तब कुमुद नहीं और जब कुमुद शोभित होते हैं तब कमल नहीं। दोनों की दशा बहुधा एक-सी नहीं रहती। परन्तु, इस समय, प्रातःकाल, दोनों में तुल्यता देखी जाती है। कुमुद बन्द होने को हैं; पर अभी पूरे बंद नहीं हुए। उधर कमल खिलने को हैं; पर अभी पूरे खिले नहीं। एक की शोभा आधी ही रह गयी है और दूसरे को आधी ही प्राप्त हुई है। रहे भ्रमर, सो अभी दोनों ही पर मँडरा रहे हैं और गुंजा-रव के बहाने दोनों ही के प्रशंसा के गीत-से गा रहे हैं। इसी से इस समय कुमुद और कमल, दोनों ही समता को प्राप्त हो रहे हैं।

सायंकाल जिस समय चन्द्रमा का उदय हुआ था, उस समय वह बहुत ही लावण्यमय था। क्रम-क्रम से उसकी दीप्ति, उसकी सुन्दरता—और भी बढ़ गयी। वह ठहरा रसिक। उसने सोचा, यह इतनी बड़ी रात यों ही कैसे कटेगी; लाओ खिली हुई नवीन कुमुदियों (कोकाबेलियों) के साथ हँसी-मजाक ही करें। अतएव वह उनकी शोभा के साथ हास-परिहास करके उनका विकास करने लगा। इस तरह खेलते-कूदते सारी रात बीत गयी। वह थक भी गया; शरीर पीला पड़ गया, कर (किरण-जाल) स्रस्त अर्थात् शिथिल हो गये। इससे वह दूसरी दिगंगना (पश्चिम दिशा) की गोद में जा गिरा। यह शायद उसने इसलिए किया कि रात भर के जगे हैं, लाओ, अब उसकी गोद में आराम से सो जायँ।

अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखायी भी नहीं दिये। तथापि उसके सारथि अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न

देकर वे खुद ही उसके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अन्धकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गयी। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली। रह गयी दिन और रात की संधि अर्थात् प्रातःकालीन संध्या। सो अरुण कमलों ही को आप इस अल्पवयस्क सुता-सदृश संध्या के लाल-लाल और अतिशय कोमल हाथ-पैर समझिए। मधुप-मालाओं से छाये हुए नील कमलों ही को काजल लगी हुई उसकी आँखें जानिए। पक्षियों के कल-कल शब्द ही को उसकी तोतली बोली अनुमान कीजिए। ऐसे संध्या ने जब देखा कि रात इस लोक से जा रही है, तब पक्षियों के कोलाहल के बहाने यह कहती हुई कि 'अम्मा, मैं भी आती हूँ', वह भी उसी के पीछे दौड़ गयी।

अंधकार गया, रात गयी, प्रातःकालीन संध्या भी गयी। विपक्षी दल के एकदम ही पैर उखड़ गये। तब, रास्ता साफ देख, वासर-विधाता भगवान् भास्कर ने निकल आने की तैयारी की। कुलिश-पाणि इन्द्र की पूर्व दिशा में, नये सोने के समान, उनकी पीली-पीली किरणों का समूह छा गया। उनके इस प्रकार आविर्भाव से एक अजीब ही दृश्य दिखायी दिया। आपने बड़वानल का नाम सुना ही होगा। वह एक प्रकार की आग है, जो समुद्र के जल को जलाया करती है। सूर्य के उस लाल-पीले किरण समूह को देखकर ऐसा मालूम होने लगा जैसे वही बड़वाग्नि समुद्र की जल-राशि को जलाकर, त्रिभुवन को भस्म कर डालने के इरादे से, समुद्र के ऊपर उठ आयी हो। धीरे-धीरे दिननाथ का बिंब क्षितिज के ऊपर आ गया। तब एक और ही प्रकार के दृश्य के दर्शन हुए। ऐसा मालूम हुआ, जैसे सूर्य का वह बिंब एक बहुत बड़ा घड़ा है और दिग्वधुएँ जोर लगाकर समुद्र के भीतर से उसे खींच रही हैं। सूर्य की किरणों ही को आप लंबी-लंबी मोटी रस्सियाँ समझिए। उन्हीं से उन्होंने बिंब को बाँध-सा दिया है और खींचते वक्त, पक्षियों के कलरव के बहाने, वे यह कह-कहकर शोर मचा रही हैं कि खींच लिया है; कुछ ही बाकी है, ऊपर आना ही चाहता है; जरा और जोर लगाना।

दिगंगनाओं के द्वारा खींच खाँचकर किसी तरह सागर की सलिल-राशि से बाहर निकाले जाने पर सूर्यबिंब चमचमाता हुआ लाल-लाल दिखायी दिया। अच्छा, बताइए तो सही, यह इस तरह का क्यों है? हमारी समझ में तो यह आता है कि सारी रात पयोनिधि के पानी के भीतर जब यह पड़ा था, तब बड़वाग्नि की ज्वाला ने इसे तपाकर खूब दहकाया होगा। तभी तो खैर (खदिर) के जले हुए कुंदे के अंगार के सदृश लालिमा लिए हुए यह इतना शुभ्र दिखायी दे रहा है। अन्यथा, आप ही कहिए, इसके इतने अंगार गौर होने का और क्या कारण हो सकता है?

सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गयी—पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नये किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं, प्रत्युत सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों-पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को ही आप्यायित करते हैं।

उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुन्दर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी—आ जा, आ जा; आ बेटा, आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणें) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर वह आकाश में आ गया।

आकाश में सूर्य के दिखायी देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच से बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकाररूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो, उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो। कहिए, यह सूझ कैसी है? बहुत दूर की तो नहीं।

तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना—हटाना ही—चाहिए। परन्तु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने

ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों का भी विनाश करना पड़ा—उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है—शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

सूर्योदय होते ही अंधकार भयभीत होकर भागा। भागकर वह कहीं गुहाओं के भीतर और कहीं घरों के कोनों और कोठरियों के भीतर जा छिपा। मगर वहाँ भी उसका गुजारा न हुआ। सूर्य यद्यपि बहुत दूर आकाश में था, तथापि उसके प्रबल तेज-प्रताप ने छिपे हुए अंधकार को उन जगहों से भी निकाल बाहर किया। निकाला ही नहीं, अपितु उसका सर्वथा नाश भी कर दिया। बात यह है कि तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि एक निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर-स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा, ये दोनों ही आकाश की दो आँखों के समान हैं। उनमें से सहस्रकिरणात्मक-मूर्तिधारी सूर्य ने ऊपर उठकर जब अशेष लोकों का अंधकार दूर कर दिया, तब वह खूब ही चमक उठा। उधर बेचारा चन्द्रमा किरण-हीन हो जाने से बहुत ही धूमिल हो गया। इस तरह आकाश की एक आँख तो खूब तेजस्क और दूसरी तेजोहीन हो गयी। अतएव ऐसा मालूम हुआ, जैसे एक आँख, प्रकाशवती और दूसरी अंधी वाला आकाश काना हो गया हो।

कुमुदिनियों का समूह शोभाहीन हो गया और सरोरुहों का समूह शोभा-सम्पन्न। उलूकों को तो शोक ने आ घेरा और चक्रवाकों को अत्यानन्द ने। इसी तरह सूर्य तो उदय हो गया और चन्द्रमा अस्त। कैसा आश्चर्यजनक विरोधी दृश्य है। दुष्ट दैव की चेष्टाओं का परिपाक कहते नहीं बनता। वह बड़ा ही विचित्र है। किसी को तो वह हँसाता है, किसी को रुलाता है।

सूर्य को आप दिग्वधुओं का पति समझ लीजिए और यह भी समझ लीजिए कि पिछली रात वह कहीं और किसी जगह, अर्थात् विदेश, चला गया था। मौका पाकर, इसी बीच उसकी जगह पर चन्द्रमा आ विराजा। पर ज्योंही सूर्य अपना प्रवास समाप्त करके सबेरे, पूर्व दिशा में फिर आ धमका, त्योंही उसे देख चन्द्रमा के होश उड़ गये। अब क्या हो? और कोई उपाय न देख, अपने किरण-समूह को कपड़े-लत्ते के सदृश छोड़ उपपति के समान गर्दन झुकाकर वह पश्चिम-दिशारूपी खिड़की के रास्ते निकल भागा।

महामहिम भगवान मधुसूदन जिस समय कल्पांत में समस्त लोकों का प्रलय, बात की बात में कर देते हैं, उस समय अपनी समधिक अनुरागवती श्री (लक्ष्मी) को धारण करके—उन्हें साथ लेकर—क्षीर-सागर में अकेले ही जा विराजते हैं। दिन चढ़ आने पर महिमामय भगवान भास्कर भी, उसी तरह एक क्षण में, सारे तारा-लोक का संहार करके, अपनी अतिशायिनी श्री (शोभा) के सहित, क्षीर-सागर ही के समान आकाश में, देखिए, अब यह अकेले ही मौज कर रहे हैं।

**–आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी**

# अभ्यास प्रश्न

## गद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

**(क)** अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखायी भी नहीं दिये। तथापि उसके सारथि अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न देकर वे खुद ही उनके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अन्धकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गयी। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक के नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भगवान सूर्यदेव का सारथि कौन है?
(iv) अंधकार का शत्रु किसे बताया गया है?
(v) अंधकार का समूल नाश किसने कर दिया?

**(ख)** सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गयी–पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नये किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं, प्रत्युत सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सूर्यदेव के स्वभाव के विषय में लेखक के क्या विचार हैं?
(iv) पर्वतों के शिखरों पर पड़ती प्रातःकालीन सूर्य की किरणों के विषय में क्या कहा गया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में सूर्यदेव की उदारता के आधार पर किसके संदर्भ में और क्या कहा गया है?

**(ग)** उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुन्दर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी– आ जा, आ जा; आ बेटा, आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणें) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर में वह आकाश में आ गया।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सूर्योदय होने के समय कमल और कमलनियों पर क्या प्रभाव पड़ा?
(iv) उदित होते समय सूर्य किस प्रकार दिखाई पड़ता है?
(v) किसे देखकर कमलनियाँ आनन्दित हुईं?

**(घ)** आकाश में सूर्य के दिखायी देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच से बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकाररूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो, उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रातःकालीन सूर्य की किरणें पड़ने पर नदियों का जल किस प्रकार प्रतीत होने लगा?
(iv) प्रस्तुत गद्यांश में अंधकार की तुलना किससे की गई है?
(v) सूर्य की किरण-बाण ने किसे नष्ट किया?

**(ङ)** तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना–हटाना ही–चाहिए। परन्तु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों

का भी विनाश करना पड़ा– उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है– शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) तारों का समूह देखने में कैसा प्रतीत होता है?

(iv) गद्यांश के अनुसार राजनीति क्या कहती है?

(v) सूर्योदय का प्रमुख प्रयोजन क्या होता है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की जीवनी बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. महावीरप्रसाद द्विवेदी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. महावीरप्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
4. महावीरप्रसाद द्विवेदी की कृतियों का उल्लेख करते हुए उनके साहित्यिक परिचय पर प्रकाश डालिए।
5. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
6. प्रकृति के मानवीकरण की दृष्टि से 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' निबन्ध पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
7. 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' नामक निबंध का सार लिखिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—

(क) उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।

(ख) जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते।

(ग) सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है।

(घ) तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि एक निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "समास-बहुल, संस्कृत-शब्दावली के कारण निबंध के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होता है।" इस मत से आप कहाँ तक सहमत हैं?
2. लेखक की दृष्टि से सूर्य-बिम्ब के रक्तिम वर्ण होने का क्या कारण है?
3. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सूर्योदय का किन-किन रूपों में वर्णन किया है?
4. निम्नलिखित शब्दों में विग्रह सहित समास लिखिए–
   सुता-सदृश, मधुप-मालाओं, जानु-पाणि, किरण-हीन।
5. प्रस्तुत निबंध की शैलीगत विशेषताएँ बताइए।
6. प्रस्तुत निबंध में प्रकृति का कैसा मानवीकरण किया गया है?
7. सूर्योदय के विकास-क्रम के साथ विभिन्न रसों की निष्पत्ति का वर्णन कीजिए।
8. 'महाकवि माघ का प्रभात वर्णन' नामक निबन्ध की विशेषताएँ बताइए।

●●●

# 3 श्यामसुन्दरदास

द्विवेदी युग के महान् साहित्यकार बाबू श्यामसुन्दरदास का जन्म काशी के प्रसिद्ध खत्री परिवार में सन् 1875 ई० में हुआ था। इनका बाल्यकाल बड़े सुख और आनन्द से बीता। सर्वप्रथम इन्हें संस्कृत की शिक्षा दी गयी, तत्पश्चात् परीक्षाएँ उत्तीर्ण करते हुए सन् 1897 ई० में बी० ए० पास किया। बाद में आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण चन्द्रप्रभा प्रेस में 40 रु० मासिक वेतन पर नौकरी की। इसके बाद काशी के हिन्दू स्कूल में सन् 1899 ई० में कुछ दिनों तक अध्यापन कार्य किया। इसके बाद लखनऊ के कालीचरण हाईस्कूल में प्रधानाध्यापक हो गये। इस पद पर नौ वर्ष तक कार्य किया। इन्होंने 16 जुलाई, सन् 1893 ई० को विद्यार्थी-काल में ही अपने दो सहयोगियों रामनारायण मिश्र और ठाकुर शिवकुमार सिंह की सहायता से 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की। अन्त में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गये और अवकाश ग्रहण करने तक इसी पद पर बने रहे। निरन्तर कार्य करते रहने के कारण इनका स्वास्थ्य गिर गया और सन् 1945 ई० में इनकी मृत्यु हो गयी।

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1875 ई०।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ० प्र०)।
- **पिता**—देवीदास।
- **माता**—देवकी देवी।
- 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के संस्थापक।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—काशी।
- **संपादन**—नागरी प्रचारिणी पत्रिका।
- **भाषा**—शुद्ध साहित्यिक हिन्दी, सरल तथा व्यावहारिक भाषा।
- **शैली**—विवेचनात्मक, समीक्षात्मक, गवेषणात्मक, भावात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—हिन्दी भाषा का विकास, गद्य कुसुमावली, भाषा-विज्ञान, साहित्यालोचक, रूपक रहस्य आदि।
- **साहित्य में स्थान**—मातृभाषा का प्रचार करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण योगदान।
- **मृत्यु**—सन् 1945 ई०।
- **साहित्य में पहचान**—आलोचक, निबन्धकार, संपादक आदि। द्विवदी युग के महान् गद्यकार।
- **उपाधि**—अंग्रेजी सरकार से रायबहादुर की उपाधि, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयागराज द्वारा 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा 'डी॰ लिट्' की मानद उपाधि प्रदान की गयी।

श्यामसुन्दरदास जी अपने जीवन के पचास वर्षों में अनवरत रूप से हिन्दी की सेवा करते हुए उसे कोश, इतिहास, काव्यशास्त्र, भाषा-विज्ञान, शोधकार्य, उपयोगी साहित्य, पाठ्य-पुस्तक और सम्पादित ग्रन्थ आदि से समृद्ध किया, उसके महत्त्व की प्रतिष्ठा की, उसकी आवाज को जन-जन तक पहुँचाया, उसे खण्डहरों से उठाकर विश्वविद्यालयों के भव्य-भवनों में प्रतिष्ठित किया। वह अन्य भाषाओं के समकक्ष बैठने की अधिकारिणी हुई। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने इन्हें 'साहित्य

वाचस्पति' और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने 'डी0 लिट्0' की उपाधि देकर इनकी साहित्यिक सेवाओं की महत्ता को स्वीकार किया।

श्यामसुन्दरदास की प्रमुख कृतियों का विवरण इस प्रकार है—

**निबन्ध**—'गद्य-कुसुमावली' के अतिरिक्त 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' में भी इनके लेख प्रकाशित हुए।

**आलोचना ग्रंथ**—'साहित्यालोचन', 'गोस्वामी तुलसीदास', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र', 'रूपक-रहस्य'।

**भाषा-विज्ञान**—'भाषा-विज्ञान', 'हिन्दी भाषा का विकास', 'हिन्दी भाषा और साहित्य'।

**संपादित रचनाएँ**—'हिन्दी-शब्द-सागर', 'वैज्ञानिक कोश', 'हिन्दी-कोविदमाला', 'मनोरंजन पुस्तकमाला', 'पृथ्वीराजरासो', 'नासिकेतोपाख्यान', 'छत्र प्रकाश', 'वनिता विनोद', 'इन्द्रावती', 'हम्मीर रासो', 'शाकुन्तल नाटक', 'श्रीरामचरितमानस', 'दीनदयाल गिरि की ग्रंथावली', 'मेघदूत', 'परमाल रासो'। आपने 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का भी दीर्घकाल तक संपादन किया।

**अन्य रचनाएँ**—'भाषा रहस्य', 'मेरी आत्मकहानी', 'हिन्दी-साहित्य-निर्माता', 'साहित्यिक लेख'।

बाबू श्यामसुन्दरदास की भाषा सिद्धान्त निरूपण करनेवाली सीधी, ठोस, भावुकता-विहीन और निरलंकृत होती है। विषय-प्रतिपादन की दृष्टि से ये संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं और जहाँ तक बन पड़ा है, विदेशी शब्दों के प्रयोग से बचते रहे हैं। कहीं-कहीं पर इनकी भाषा दुरूह और अस्पष्ट भी हो जाती है। उसमें लोकोक्तियों का प्रयोग भी बहुत ही कम है। वास्तव में इनकी भाषा का महत्त्व उपयोगिता की दृष्टि से है और उसमें एक विशिष्ट प्रकार की साहित्यिक गुरुता है। इनकी प्रारम्भिक कृतियों में भाषा-शैथिल्य दिखायी देता है किन्तु धीरे-धीरे वह प्रौढ़, स्वच्छ, परिमार्जित और संयत होती गयी है।

बाबू साहब ने अत्यन्त गंभीर विषयों को बोधगम्य शैली में प्रस्तुत किया है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ तद्भव शब्दों का भी यथेष्ट प्रयोग करके इन्होंने शैली को दुरूह बनने से बचाया है। इनकी शैली में सुबोधता, सरलता और विषय-प्रतिपादन की निपुणता है, इनके वाक्य-विन्यास जटिल और दुर्बोध नहीं हैं। इनकी भाषा में उर्दू-फारसी के शब्दों तथा मुहावरों का प्रायः अभाव है। व्यंग्य, वक्रोक्ति तथा हास-परिहास से इनके निबंध प्रायः शून्य हैं। विषय-प्रतिपादन के अनुरूप इनकी शैली में वैज्ञानिक पदावली का समीचीन प्रयोग हुआ है। हिन्दी भाषा को सर्वजन सुलभ, वैज्ञानिक और समृद्ध बनाने में इनका योगदान अप्रतिम है। इन्होंने विचारात्मक, गवेषणात्मक तथा व्याख्यात्मक शैलियों का व्यवहार किया है। आलोचना, भाषा-विज्ञान, भाषा का इतिहास, लिपि का विकास आदि विषयों पर इन्होंने वैज्ञानिक एवं सैद्धांतिक विवेचन प्रस्तुत कर हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाया है।

प्रस्तुत निबंध **'भारतीय साहित्य की विशेषताएँ'** में लेखक ने भारतीय साहित्य की अनेक विशेषताओं का वर्णन किया है। पहली विशेषता समन्वय की है। भारतीय दर्शन में परमात्मा तथा जीवात्मा में कोई अन्तर नहीं माना जाता। लेखक के अनुसार इसी दार्शनिक मान्यता के आधार पर कला व साहित्य में समन्वय का आदर्श प्रमुख बना। दूसरी विशेषता धार्मिक भावों की प्रचुरता है। इस दूसरी विशेषता के कारण लौकिक जीवन की अनेकरूपता प्रदर्शित न हो सकी। इन दो मुख्य विशेषताओं के अतिरिक्त देश की जलवायु और भौगोलिक स्थिति का भी साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। जातिगत तथा देशगत विशेषताओं की ओर लेखक ने ध्यान आकृष्ट करते हुए इनका प्रभाव साहित्य के भावपक्ष एवं कलापक्ष पर स्पष्ट किया है। सम्पूर्ण निबंध में लेखक ने आलोचनात्मक दृष्टि अपनायी है।

●●●

# भारतीय साहित्य की विशेषताएँ

समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता, उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यह विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकता है और अपने स्वतंत्र अस्तित्त्व की सार्थकता प्रमाणित कर सकता है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में सामाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनन्द में उनके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखायी देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाये गये हैं, पर सबका अवसान आनन्द में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है। वर्तमान स्थिति से उसका इतना सम्बन्ध नहीं है, जितना भविष्य की संभाव्य उन्नति से है। हमारे यहाँ पाश्चात्य प्रणाली के दुखांत नाटक इसीलिए नहीं दीख पड़ते। यदि आजकल दो-चार नाटक ऐसे दीख भी पड़ने लगे हैं, तो वे भारतीय आदर्श से दूर और पाश्चात्य आदर्श के अनुकरण-मात्र हैं। कविता के क्षेत्र में ही देखिए। यद्यपि विदेशी शासन से पीड़ित तथा अनेक क्लेशों से संतप्त देश निराशा की चरम सीमा तक पहुँच चुका था और उसके सभी अवलम्बों की इतिश्री हो चुकी थी, फिर भी भारतीयता के सच्चे प्रतिनिधि तत्कालीन महाकवि गोस्वामी तुलसीदास अपने विकार-रहित हृदय से समस्त जाति को आश्वासन देते हैं—

**''भरे भाग अनुराग लोग कहैं राम अवध चितवन चितई है,**
**सानन्द सुनि विनती हेरि हँसि करुना वारि भूमि भिजई है।**
**रामराज भयो काज सगुन सुभ राजा राम जगत-विजई है,**
**समरथ बड़ो सुजान सुसाहब सुकृति-सेन हारत जितई है।''**

आनन्द की कितनी महान् भावना है। चित्त किसी अनुभूत आनन्द की कल्पना में मानो नाच उठता है। हिन्दी साहित्य के विकास का समस्त युग विदेशीय तथा विजातीय शासन का युग था; परन्तु फिर भी साहित्यिक समन्वय का भी निरादर नहीं हुआ। आधुनिक युग के हिन्दी कवियों में यद्यपि पाश्चात्य आदर्शों की छाप पड़ने लगी है और लक्षणों को देखते हुए इस छाप के अधिकाधिक गहरी हो जाने की सम्भावना हो रही है, तथापि जातीय साहित्य की धारा अक्षुण्ण रखनेवाले कुछ कवि अब भी वर्तमान हैं।

यदि हम थोड़ा-सा विचार करें तो उपर्युक्त साहित्यिक समन्वयवाद का रहस्य हमारी समझ में आ सकता है। जब हम थोड़ी देर के लिए साहित्य को छोड़कर भारतीय कलाओं का विश्लेषण करते हैं तब उनमें भी साहित्य की भाँति समन्वय की छाप दिखायी पड़ती है। सारनाथ की बुद्ध भगवान् की मूर्ति उस समय की है, जब वे छह महीने की कठिन साधना के उपरान्त अस्थिपंजर-मात्र ही रहे होंगे, पर मूर्ति में कहीं कृशता का पता नहीं; उसके चारों ओर एक स्वर्गीय आभा नृत्य कर रही है।

इस प्रकार साहित्य में भी तथा कला में भी एक प्रकार का आदर्शात्मक साम्य देखकर उसका रहस्य जानने की इच्छा और प्रबल हो उठती है। हमारे दर्शन-शास्त्र हमारी जिज्ञासा का समाधान कर देते हैं। भारतीय दर्शनों के अनुसार परमात्मा तथा जीवात्मा में कुछ भी अन्तर नहीं, दोनों एक ही हैं, दोनों सत्य हैं, चेतन हैं तथा आनन्दस्वरूप हैं। बंधन मायाजन्य है। माया अज्ञान उत्पन्न करनेवाली वस्तु है। जीवात्मा मायाजन्य अज्ञान को दूर कर अपना स्वरूप पहचानता है और आनन्दमय परमात्मा

में लीन होता है। आनन्द में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है। जब हम इस दार्शनिक सिद्धांत का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त समन्वय पर विचार करते हैं, तब सारा रहस्य हमारी समझ में आ जाता है तथा इस विषय में और कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता उसमें धार्मिक भावों की प्रचुरता है। हमारे यहाँ धर्म की बड़ी व्यापक व्यवस्था की गयी है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसको स्थान दिया गया है। धर्म में धारण करने की शक्ति है, अतः केवल अध्यात्म-पक्ष में ही नहीं, लौकिक आचार-विचार तथा राजनीति तक में उसका नियंत्रण स्वीकार किया गया है। मनुष्य के वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को ध्यान में रखते हुए अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मों का निरूपण किया गया है। वेदों के एकेश्वरवाद, उपनिषदों के ब्रह्मवाद तथा पुराणों के अवतारवाद और बहुदेववाद की प्रतिष्ठा जन-समाज में हुई है और तदनुसार हमारा धार्मिक दृष्टिकोण भी अधिकाधिक विस्तृत तथा व्यापक हो गया है। हमारे साहित्य पर धर्म की इस अतिशयता का प्रभाव दो प्रधान रूपों में पड़ा। आध्यात्मिकता की अधिकता होने के कारण हमारे साहित्य में एक ओर तो पवित्र भावनाओं और जीवन-सम्बन्धी गहन तथा गम्भीर विचारों की प्रचुरता हुई और दूसरी ओर साधारण लौकिक भावों तथा विचारों का विस्तार अधिक नहीं हुआ। प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर हिन्दी के वैष्णव-साहित्य तक में हम यही बात पाते हैं। सामवेद की मनोहारिणी तथा मृदु गंभीर ऋचाओं से लेकर सूर तथा मीरा आदि की सरस रचनाओं तक में सर्वत्र परोक्ष भावों की अधिकता तथा लौकिक विचारों की न्यूनता देखने में आती है।

उपर्युक्त मनोवृत्ति का परिणाम यह हुआ कि साहित्य में उच्च विचार तथा पूत भावनाएँ तो प्रचुरता से भरी गयीं, परन्तु उनमें लौकिक जीवन की अनेकरूपता का प्रदर्शन न हो सका। हमारी कल्पना अध्यात्म-पक्ष में तो निस्सीम तक पहुँच गयी; परन्तु ऐहिक जीवन का चित्र उपस्थित करने में वह कुछ कुंठित-सी हो गयी है। हिन्दी की चरम उन्नति का काल भक्ति-काव्य का काल है, जिसमें उसके साहित्य के साथ हमारे जातीय साहित्य के लक्षणों का सामंजस्य स्थापित हो जाता है।

धार्मिकता के भाव से प्रेरित होकर जिस सरल तथा सुन्दर साहित्य की सृष्टि हुई, वह वास्तव में हमारे गौरव की वस्तु है; परन्तु समाज में जिस प्रकार धर्म के नाम पर अनेक दोष घुस जाते हैं तथा गुरुडम की प्रथा चल पड़ती है, उसी प्रकार साहित्य में भी धर्म के नाम पर पर्याप्त अनर्थ होता है, हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में हम यह अनर्थ दो मुख्य रूपों में देखते हैं, एक तो साम्प्रदायिक कविता तथा नीरस उपदेशों के रूप में और दूसरा कृष्ण का आधार लेकर की गयी हिन्दी की शृंगारी कविताओं के रूप में। हिन्दी में साम्प्रदायिक कविता का एक युग ही हो गया है और 'नीति के दोहों' की तो अब तक भरमार है। अन्य दृष्टियों से नहीं तो कम-से-कम शुद्ध साहित्यिक समीक्षा की दृष्टि से ही सही, साम्प्रदायिक तथा उपदेशात्मक साहित्य का अत्यन्त निम्न स्थान है; क्योंकि नीरस पदावली के कोरे उपदेशों में कवित्व की मात्रा बहुत थोड़ी होती है। राधाकृष्ण को लेकर हमारे शृंगारी कवियों ने अपने कलुषित तथा वासनामय उद्गारों को व्यक्त करने का जो ढंग निकाला वह समाज के लिए हितकर नहीं हुआ, यद्यपि आदर्श की कल्पना करनेवाले कुछ साहित्यिक समीक्षक इस शृंगारी कविता में भी उच्च आदर्शों की उद्भावना कर लेते हैं, पर फिर भी हम वस्तुस्थिति की किसी प्रकार अवहेलना नहीं कर सकते। सब प्रकार की शृंगारिक कविता ऐसी नहीं है कि उसमें शुद्ध प्रेम का अभाव तथा कलुषित वासनाओं का ही अस्तित्त्व हो, पर यह स्पष्ट है कि पवित्र भक्ति का उच्च आदर्श, आगे चलकर लौकिक शरीर-जन्य तथा वासना-मूलक प्रेम में परिणत हो गया।

भारतीय साहित्य की इन दो प्रधान विशेषताओं का उपर्युक्त विवेचन करके अब हम उसकी दो-एक देशगत विशेषताओं का वर्णन करेंगे। प्रत्येक देश की जलवायु अथवा भौगोलिक स्थिति का प्रभाव उस देश के साहित्य पर अवश्य पड़ता है और यह प्रभाव बहुत-कुछ स्थायी भी होता है। संसार के सब देश एक ही प्रकार के नहीं होते। जलवायु तथा गर्मी-सर्दी के साधारण विभेदों के अतिरिक्त उनके प्राकृतिक दृश्यों तथा उर्वरता आदि में भी अंतर होता है। यदि पृथिवी पर अरब तथा सहारा जैसी दीर्घकाय मरुभूमियाँ हैं तो साइबेरिया तथा रूस के विस्तृत मैदान भी हैं। यदि यहाँ इंग्लैण्ड तथा आयरलैण्ड जैसे जलावृत द्वीप हैं तो चीन जैसा विस्तृत भूखण्ड भी है। इन विभिन्न भौगोलिक स्थितियों का उन देशों के साहित्यों से जो सम्बन्ध होता है; उसी को इस साहित्य की देशगत विशेषताएँ कहते हैं।

भारत की शस्यश्यामला भूमि में जो निसर्ग-सिद्ध सुषमा है, उस पर भारतीय कवियों का चिरकाल से अनुराग रहा है। यों तो प्रकृति की साधारण वस्तुएँ भी मनुष्यमात्र के लिए आकर्षक होती हैं, परन्तु उसकी सुन्दरतम विभूतियों में मानव वृत्तियाँ विशेष प्रकार से रमती हैं। अरब के कवि मरुस्थल में बहते हुए किसी साधारण से झरने अथवा ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों में ही

सौन्दर्य का अनुभव कर लेते हैं तथा ऊँटों की चाल में ही सुन्दरता की कल्पना कर लेते हैं; परन्तु जिन्होंने भारत की हिमाच्छादित शैलमाला पर संध्या की सुनहली किरणों की सुषमा देखी है; अथवा जिन्हें घनी अमराइयों की छाया में कल-कल ध्वनि से बहती हुई निर्झरिणी तथा उसकी समीपवर्तिनी लताओं की वसन्तश्री देखने का अवसर मिला है, साथ ही जो यहाँ के विशालकाय हाथियों की मतवाली चाल देख चुके हैं, उन्हें अरब की उपर्युक्त वस्तुओं में सौन्दर्य तो क्या, उलटे नीरसता, शुष्कता और भद्दापन ही मिलेगा। भारतीय कवियों को प्रकृति की सुन्दर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य प्राप्त है। वे हरे-हरे उपवनों तथा सुन्दर जलाशयों के तटों पर विचरण करते तथा प्रकृति के नाना मनोहारी रूपों से परिचित होते हैं। यही कारण है कि भारतीय कवि प्रकृति के संश्लिष्ट तथा सजीव चित्र जितनी मार्मिकता, उत्तमता तथा अधिकता से अंकित कर सकते हैं तथा उपमा-उत्प्रेक्षाओं के लिए जैसी सुन्दर वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं; वैसा रूखे-सूखे देश के निवासी कवि नहीं कर सकते। यह भारत-भूमि की ही विशेषता है कि यहाँ के कवियों का प्राकृतिक-वर्णन तथा तत्संभव सौन्दर्य-ज्ञान उच्च कोटि का होता है।

प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति होती है उसका उपयोग कविगण कभी-कभी रहस्यमयी भावनाओं के संचार में भी करते हैं। यह अखंड भूमण्डल तथा असंख्य ग्रह, उपग्रह, रवि-शशि अथवा जल, वायु, अग्नि, आकाश कितने रहस्यमय तथा अज्ञेय हैं? इनके सृष्टि-संचालन आदि के सम्बन्ध में दार्शनिकों अथवा वैज्ञानिकों ने जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, वे ज्ञानगम्य अथवा बुद्धिगम्य होने के कारण नीरस तथा शुष्क हैं। काव्य-जगत् में इतनी शुष्कता तथा नीरसता से काम नहीं चल सकता, अतः कविगण बुद्धिवाद के चक्कर में न पड़कर व्यक्त प्रकृति के नाना रूपों में एक अव्यक्त किन्तु सजीव सत्ता का साक्षात्कार करते तथा उसमें भावमग्न होते हैं। इसे हम प्रकृति-सम्बन्धी रहस्यवाद का एक अंग मान सकते हैं। प्रकृति के विविध रूपों में विविध भावनाओं के उद्रेक की क्षमता होती है, परन्तु रहस्यवादी कवियों को अधिकतर उसके मधुर स्वरूप से प्रयोजन होता है, क्योंकि भावावेश के लिए प्रकृति के मनोहर रूपों की जितनी उपयोगिता है, उतनी दूसरे रूपों की नहीं होती। यद्यपि इस देश की उत्तरकालीन विचारधारा के कारण हिन्दी में बहुत थोड़े रहस्यवादी कवि हुए हैं, परन्तु कुछ प्रेम-प्रधान कवियों ने भारतीय मनोहर दृश्यों की सहायता से अपनी रहस्यमयी उक्तियों को अत्यधिक सरस तथा हृदयग्राही बना दिया है। यह भी हमारे साहित्य की एक देशगत विशेषता है।

ये जातिगत तथा देशगत विशेषताएँ तो हमारे साहित्य के भावपक्ष की हैं। इनके अतिरिक्त उसके कलापक्ष में भी कुछ स्थायी जातीय मनोवृत्तियों का प्रतिबिम्ब अवश्य दिखायी देता है। कलापक्ष से हमारा अभिप्राय केवल शब्द-संगठन अथवा छन्द-रचना तथा विविध आलंकारिक प्रयोगों से नहीं है, प्रत्युत उसमें भावों को व्यक्त करने की शैली भी सम्मिलित है। यद्यपि प्रत्येक कविता के मूल में कवि का व्यक्तित्त्व निहित रहता है और आवश्यकता पड़ने पर उस कविता के विश्लेषण द्वारा हम कवि के आदर्श तथा उसके व्यक्तित्त्व से परिचित हो सकते हैं। परन्तु साधारणतः हम देखते हैं कि कुछ कवियों में प्रथम पुरुष एकवचन के प्रयोग की प्रवृत्ति अधिक होती है तथा कुछ कवि अन्य पुरुष में अपने भाव प्रकट करते हैं।

अंग्रेजी में इस विभिन्नता के आधार पर कविता के व्यक्तिगत तथा अव्यक्तिगत नामक भेद हुए हैं, परन्तु ये विभेद वास्तव में कविता के नहीं उसकी शैली के हैं। दोनों प्रकार की कविताओं में कवि के आदर्शों का अभिव्यंजन होता है, केवल इस अभिव्यंजन के ढंग में अन्तर रहता है। एक में वे आदर्श आत्मकथन अथवा आत्मनिवेदन के रूप में व्यक्त किये जाते हैं, दूसरी में उन्हें व्यंजित करने के लिए वर्णनात्मक प्रणाली का आधार ग्रहण किया जाता है। भारतीय कवियों में दूसरी (वर्णनात्मक) शैली की अधिकता तथा पहली की कमी पायी जाती है। यही कारण है कि यहाँ वर्णनात्मक काव्य अधिक है तथा कुछ भक्त कवियों की रचनाओं के अतिरिक्त उस प्रकार की कविता का अभाव है जिसे गीति-काव्य कहते हैं और जो विशेषकर पदों के रूप में लिखी जाती है।

साहित्य के कलापक्ष की अन्य महत्त्वपूर्ण जातीय विशेषताओं से परिचित होने के लिए हमें उसके शब्द-समुदाय पर ध्यान देना पड़ेगा। साथ ही भारतीय संगीत-शास्त्र की कुछ साधारण बातें भी जान लेनी होंगी। वाक्य रचना के विविध भेदों, शब्दगत तथा अर्थगत अलंकारों और अक्षर, मात्रिक अथवा लघु मात्रिक आदि छन्द-समुदायों का विवेचन भी उपयोगी हो सकता है, परन्तु एक तो ये विषय इतने विस्तृत हैं कि इन पर यहाँ विचार करना सम्भव नहीं। दूसरे इनका सम्बन्ध साहित्य के इतिहास से उतना अधिक नहीं है जितना व्याकरण, अलंकार और पिंगल से है। तीसरी बात यह भी है कि इनमें जातीय विशेषताओं की कोई स्पष्ट छाप भी नहीं दीख पड़ती, क्योंकि ये सब बातें थोड़े बहुत अन्तर से प्रत्येक देश के साहित्य में पायी जाती हैं।

**—श्यामसुन्दरदास**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

**(क)** समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता, उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यह विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकता है और अपने स्वतंत्र अस्तित्व की सार्थकता प्रमाणित कर सकता है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में समाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनन्द में उनके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखायी देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाये गये हैं, पर सबका अवसान आनन्द में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है। वर्तमान स्थिति से उसका इतना सम्बन्ध नहीं है, जितना भविष्य की संभाव्य उन्नति से है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भारतीय साहित्य की सबसे प्रमुख विशेषता क्या है?
(iv) साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है?
(v) सभी भारतीय नाटक सुखान्त क्यों होते हैं?

**(ख)** इस प्रकार साहित्य में भी तथा कला में भी एक प्रकार का आदर्शात्मक साम्य देखकर उसका रहस्य जानने की इच्छा और प्रबल हो उठती है। हमारे दर्शन-शास्त्र हमारी जिज्ञासा का समाधान कर देते हैं। भारतीय दर्शनों के अनुसार परमात्मा तथा जीवात्मा में कुछ भी अन्तर नहीं, दोनों एक ही हैं, दोनों सत्य हैं, चेतन हैं तथा आनन्दस्वरूप हैं। बंधन मायाजन्य है। माया अज्ञान उत्पन्न करनेवाली वस्तु है। जीवात्मा मायाजन्य अज्ञान को दूर कर अपना स्वरूप पहचानता है और आनन्दमय परमात्मा में लीन होता है। आनन्द में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है। जब हम इस दार्शनिक सिद्धांत का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त समन्वय पर विचार करते हैं, तब सारा रहस्य हमारी समझ में आ जाता है तथा इस विषय में और कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) जीवात्मा और परमात्मा में क्या भेद है?
(iv) जीवात्मा का बंधन कैसे होता है?
(v) मानव-जीवन का परम उद्देश्य क्या है?

**(ग)** भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता उसमें धार्मिक भावों की प्रचुरता है। हमारे यहाँ धर्म की बड़ी व्यापक व्यवस्था की गयी है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसको स्थान दिया गया है। धर्म में धारण करने की शक्ति है, अतः केवल अध्यात्म-पक्ष में ही नहीं, लौकिक आचार-विचार तथा राजनीति तक में उसका नियंत्रण स्वीकार किया गया है। मनुष्य के वैयक्तिक तथा

सामाजिक जीवन को ध्यान में रखते हुए अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मों का निरूपण किया गया है। वेदों के एकेश्वरवाद, उपनिषदों के ब्रह्मवाद तथा पुराणों के अवतारवाद और बहुदेववाद की प्रतिष्ठा जन-समाज में हुई है और तदनुसार हमारा धार्मिक दृष्टिकोण भी अधिकाधिक विस्तृत या व्यापक हो गया है। हमारे साहित्य पर धर्म की इस अतिशयता का प्रभाव दो प्रधान रूपों में पड़ा। आध्यात्मिकता की अधिकता होने के कारण हमारे साहित्य में एक ओर तो पवित्र भावनाओं और जीवन-सम्बन्धी गहन तथा गम्भीर विचारों की प्रचुरता हुई और दूसरी ओर साधारण लौकिक भावों तथा विचारों का विस्तार अधिक नहीं हुआ। प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर हिन्दी के वैष्णव-साहित्य तक में हम यही बात पाते हैं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता क्या बताया है?
(iv) आचार-विचार तथा राजनीति में धर्म का नियन्त्रण क्यों स्वीकार किया गया है?
(v) हमारे साहित्य में धर्म की अतिशयता का क्या प्रभाव पड़ा?

**(घ)** <u>भारत की शस्यश्यामला भूमि में जो निसर्ग-सिद्ध सुषमा है, उस पर भारतीय कवियों का चिरकाल से अनुराग रहा है। यों तो</u> प्रकृति की साधारण वस्तुएँ भी मनुष्यमात्र के लिए आकर्षक होती हैं, परन्तु उसकी सुन्दरतम विभूतियों में मानव वृत्तियाँ विशेष प्रकार से रमती हैं। अरब के कवि मरुस्थल में बहते हुए किसी साधारण से झरने अथवा ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों में ही सौन्दर्य का अनुभव कर लेते हैं तथा ऊँटों की चाल में ही सुन्दरता की कल्पना कर लेते हैं; परन्तु जिन्होंने भारत की हिमाच्छादित शैलमाला पर संध्या की सुनहली किरणों की सुषमा देखी है; अथवा जिन्हें घनी अमराइयों की छाया में कल-कल ध्वनि से बहती हुई निर्झरिणी तथा उसकी समीपवर्तिनी लताओं की वसन्तश्री देखने का अवसर मिला है, साथ ही जो यहाँ के विशालकाय हाथियों की मतवाली चाल देख चुके हैं,उन्हें अरब की उपर्युक्त वस्तुओं में सौन्दर्य तो क्या, उलटे नीरसता, शुष्कता और भद्दापन ही मिलेगा। भारतीय कवियों को प्रकृति की सुन्दर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य प्राप्त है। वे हरे-हरे उपवनों तथा सुन्दर जलाशयों के तटों पर विचरण करते तथा प्रकृति के नाना मनोहारी रूपों से परिचित होते हैं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) विशेष प्रकार की मानव वृत्तियाँ कहाँ रमती हैं?
(iv) अरब देश के कवि किन वस्तुओं को देखकर सुन्दरता की कल्पना कर लेते हैं?
(v) गद्यांश के अनुसार प्रकृति की सुन्दर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य किन्हें प्राप्त है?

**(ङ)** <u>प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति होती है उसका उपयोग कविगण कभी-कभी रहस्यमयी भावनाओं के संचार में भी करते हैं।</u> यह अखंड भूमण्डल तथा असंख्य ग्रह, उपग्रह, रवि-शशि अथवा जल, वायु, अग्नि, आकाश कितने रहस्यमय तथा अज्ञेय हैं? इनके सृष्टि-संचालन आदि के सम्बन्ध में दार्शनिकों अथवा वैज्ञानिकों ने जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, वे ज्ञानगम्य अथवा बुद्धिगम्य होने के कारण नीरस तथा शुष्क हैं। काव्य-जगत् में इतनी शुष्कता तथा नीरसता से काम नहीं चल सकता, अतः कविगण बुद्धिवाद के चक्कर में न पड़कर व्यक्त प्रकृति के नाना रूपों में एक अव्यक्त किन्तु सजीव सत्ता का साक्षात्कार करते तथा उसमें भावमग्न होते हैं। इसे हम प्रकृति-सम्बन्धी रहस्यवाद का एक अंग मान सकते हैं। प्रकृति के विविध रूपों में विविध भावनाओं के उद्रेक की क्षमता होती है, परन्तु रहस्यवादी कवियों को अधिकतर उसके मधुर स्वरूप से प्रयोजन होता है, क्योंकि भावावेश के लिए प्रकृति के मनोहर रूपों की जितनी उपयोगिता है, उतनी दूसरे रूपों की नहीं होती।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) कविगण किसमें भावमग्न होते हैं?
(iv) लेखक के अनुसार रहस्यवाद क्या है?
(v) प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति है, उसका उपयोग कविगण किसमें करते हैं?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. श्यामसुन्दरदास की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. श्यामसुन्दरदास को हिन्दी भाषा के प्रमुख उन्नायकों में क्यों गिना जाता है? तर्कसंगत उत्तर दीजिए।
3. श्यामसुन्दरदास का साहित्यिक परिचय दीजिए।
4. श्यामसुन्दरदास के जीवन-परिचय पर प्रकाश डालिए।
5. श्यामसुन्दरदास की कृतियों का उल्लेख करते हुए उनका साहित्यिक परिचय लिखिए।
6. श्यामसुन्दरदास का जीवन-परिचय व रचनाएँ लिखकर उनकी भाषा-शैली की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
7. 'भारतीय साहित्य की विशेषताएँ' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक पंक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है।
   (ख) आनन्द में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है।
   (ग) धर्म में धारण करने की शक्ति है।
   (घ) कविता के मूल में कवि का व्यक्तित्व निहित रहता है।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

*अथवा* श्यामसुन्दरदास के अनुसार भारतीय साहित्य की दो प्रधान विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

2. साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है?
3. निम्नलिखित शब्दों का आशय स्पष्ट कीजिए—
   जातीय साहित्य, देशगत साहित्य, सामान्य तथा विशेष धर्म।
4. प्रस्तुत निबंध के आधार पर श्यामसुन्दरदास की गद्य-शैली की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
5. निम्नलिखित शब्दों में समास बताइए :
   घात-प्रतिघात, वसन्त-श्री, सृष्टि-संचालक।
6. "भारतीय साहित्य में हित का भाव सर्वोपरि है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
7. भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता क्या है? स्पष्ट कीजिए।
8. साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है?
9. "भारतीय साहित्य में धार्मिक भावनाओं की प्रचुरता है।" इसका आशय स्पष्ट कीजिए।
10. भारतीय साहित्य की वह कौन-सी विशेषता है जो उसे अन्य देशों के साहित्य से भिन्न करती है?
11. भारतीय नाटकों का अवसान आनन्द में ही क्यों किया जाता है?
12. भारतीय साहित्य में प्रकृति का प्रभाव किन-किन रूपों में दृष्टिगत होता है?

●●●

# 4 सरदार पूर्णसिंह

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—17 फरवरी, सन् 1881 ई०।
- **जन्म-स्थान**—एबटाबाद (पाकिस्तान)।
- **कृतियाँ**—सच्ची वीरता, आचरण की सभ्यता, मजदूरी और प्रेम, अमेरिका का मस्त योगी वॉल्ट ह्विटमैन, कन्यादान, पवित्रता।
- द्विवेदी युग के निबन्धकार।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—रावलपिण्डी।
- **शिक्षा**—एफ॰ए॰ (फाइन आर्ट)।
- **लेखन-विधा**—निबन्ध।
- **भाषा**—सौष्ठव, शुद्ध खड़ीबोली।
- **शैली**—भावात्मक, विचारात्मक, वर्णनात्मक।
- **आजीविका**—देहरादून के इंपीरियल फॉरेस्ट इंस्टीट्यूट में अध्यापक।
- **मृत्यु**—31 मार्च, सन् 1931 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—हिन्दी निबन्धकारों में इनका प्रमुख स्थान है।

द्विवेदी-युग के श्रेष्ठ निबंधकार सरदार पूर्णसिंह का जन्म सीमा प्रान्त (जो अब पाकिस्तान में है) के एबटाबाद जिले के एक गाँव में सन् 1881 ई0 में हुआ था। इनकी आरंभिक शिक्षा रावलपिंडी में हुई थी। हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद ये लाहौर चले गये। लाहौर के एक कालेज से इन्होंने एफ0 ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद एक विशेष छात्रवृत्ति प्राप्त कर सन् 1900 ई0 में रसायनशास्त्र के विशेष अध्ययन के लिए ये जापान गये और वहाँ इम्पीरियल यूनिवर्सिटी में अध्ययन करने लगे। जब जापान में होनेवाली 'विश्व धर्म सभा' में भाग लेने के लिए स्वामी रामतीर्थ वहाँ पहुँचे तो उन्होंने वहाँ अध्ययन कर रहे भारतीय विद्यार्थियों से भी भेंट की। इसी क्रम में सरदार पूर्णसिंह से स्वामी रामतीर्थ की भेंट हुई। स्वामी रामतीर्थ से प्रभावित होकर इन्होंने वहीं संन्यास ले लिया और स्वामी जी के साथ ही भारत लौट आये। स्वामी जी की मृत्यु के बाद इनके विचारों में परिवर्तन हुआ और इन्होंने विवाह करके गृहस्थ जीवन व्यतीत करना आरम्भ किया। इनको देहरादून के इम्पीरियल फारेस्ट इंस्टीट्यूट में 700 रुपये महीने की एक अच्छी अध्यापक की नौकरी मिल गयी। यहीं से इनके नाम के साथ अध्यापक शब्द जुड़ गया। ये स्वतंत्र प्रवृत्ति के व्यक्ति थे, इसलिए इस नौकरी को निभा नहीं सके और त्यागपत्र दे दिया। इसके बाद ये ग्वालियर गये। वहाँ इन्होंने सिखों के दस गुरुओं और स्वामी रामतीर्थ की जीवनियाँ अंग्रेजी में लिखीं। ग्वालियर में भी इनका मन नहीं लगा। तब ये पंजाब के जड़ाँवाला स्थान में जाकर खेती करने लगे। खेती में हानि हुई और ये अर्थ-संकट में पड़कर नौकरी की तलाश में इधर-उधर भटकने लगे। इनका सम्बन्ध क्रान्तिकारियों से भी था। 'देहली षड्यंत्र' के मुकदमे में मास्टर अमीरचंद के साथ इनको भी पूछताछ के लिए बुलाया गया था किन्तु इन्होंने मास्टर अमीरचंद से अपना किसी प्रकार का सम्बन्ध होना स्वीकार

नहीं किया। प्रमाण के अभाव में इनको छोड़ दिया गया। वस्तुतः मास्टर अमीरचंद स्वामी रामतीर्थ के परम भक्त और गुरुभाई थे। प्राणों की रक्षा के लिए इन्होंने न्यायालय में झूठा बयान दिया था। इस घटना का इनके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। भीतर- ही-भीतर ये पश्चाताप की अग्नि में जलते रहते थे। इस कारण भी ये व्यवस्थित जीवन व्यतीत नहीं कर सके और हिन्दी साहित्य की एक बड़ी प्रतिभा पूरी शक्ति से हिन्दी की सेवा नहीं कर सकी। 31 मार्च, 1931 में इनकी मृत्यु हो गयी। सरदार पूर्णसिंह के हिन्दी में कुल छह निबंध उपलब्ध हैं—

**1. सच्ची वीरता, 2. आचरण की सभ्यता, 3. मजदूरी और प्रेम, 4. अमेरिका का मस्त योगी वॉल्ट ह्विटमैन, 5. कन्यादान और 6. पवित्रता।** इन्हीं निबंधों के बल पर इन्होंने हिन्दी गद्य-साहित्य के क्षेत्र में अपना स्थायी स्थान बना लिया है। इन्होंने निबंध रचना के लिए मुख्य रूप से नैतिक विषयों को ही चुना।

सरदार पूर्णसिंह के निबंध विचारात्मक होते हुए भावात्मक कोटि में आते हैं। उनमें भावावेग के साथ ही विचारों के सूत्र भी लक्षित होते हैं जिन्हें प्रयत्नपूर्वक जोड़ा जा सकता है। ये प्रायः मूल विषय से हटकर उससे सम्बन्धित अन्य विषयों की चर्चा करते हुए दूर तक भटक जाते हैं और फिर स्वयं सफाई देते हुए मूल विषय पर लौट आते हैं। उद्धरण-बहुलता और प्रसंग-गर्भत्व इनकी निबंध-शैली की विशेषता है।

सरदार पूर्णसिंह की भाषा शुद्ध खड़ीबोली है, किन्तु उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ-साथ फारसी और अंग्रेजी के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। इनकी निबंध-शैली अनेक दृष्टियों से निजी-शैली है। इनके विचार भावुकता की लपेट में लिपटे हुए होते हैं। भावात्मकता, विचारात्मकता, वर्णनात्मकता, सूत्रात्मकता, व्यंग्यात्मकता इनकी शैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं। विचारों और भावनाओं के क्षेत्र में ये किसी सम्प्रदाय से बँधकर नहीं चलते। इसी प्रकार शब्द-चयन में भी ये अपने स्वच्छन्द स्वभाव को प्रकट करते हैं। इनका एक ही धर्म है मानववाद और एक ही भाषा है हृदय की भाषा। सच्चे मानव की खोज और सच्चे हृदय की भाषा की तलाश ही इनके साहित्य का लक्ष्य है।

प्रस्तुत निबंध '**आचरण की सभ्यता**' में लेखक ने आचरण की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। लेखक की दृष्टि में लम्बी-चौड़ी बातें करना, बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखना और दूसरों को उपदेश देना तो आसान है, किन्तु ऊँचे आदर्शों को आचरण में उतारना अत्यन्त कठिन है। जिस प्रकार हिमालय की सुन्दर चोटियों की रचना में प्रकृति को लाखों वर्ष लगाने पड़े हैं, उसी प्रकार समाज में सभ्य आचरण को विकसित करने में मनुष्य को लाखों वर्षों की साधना करनी पड़ी है। जनसाधारण पर सबसे अधिक प्रभाव सभ्य आचरण का ही पड़ता है। इसलिए यदि हमें पूर्ण मनुष्य बनना है तो अपने आचरण को श्रेष्ठ और सुन्दर बनाना होगा। आचरण की सभ्यता न तो बड़े-बड़े ग्रन्थों से सीखी जा सकती है और न ही मन्दिरों, मस्जिदों और गिरजाघरों से। उसका खुला खजाना तो हमें प्रकृति के विराट् प्रांगण में मिलता है। आचरण की सभ्यता का पैमाना है परिश्रम, प्रेम और सरल व्यवहार। इसलिए हमें प्रायः श्रमिकों और सामान्य दीखनेवाले लोगों में उच्चतम आचरण के दर्शन प्राप्त हो जाते हैं।

●●●

# आचरण की सभ्यता

विद्या, कला, कविता, साहित्य, धन और राजस्व से भी आचरण की सभ्यता अधिक ज्योतिष्मती है। आचरण की सभ्यता को प्राप्त करके एक कंगाल आदमी राजाओं के दिलों पर भी अपना प्रभुत्व जमा सकता है। इस सभ्यता के दर्शन से कला, साहित्य और संगीत को अद्‌भुत सिद्धि प्राप्त होती है। राग अधिक मृदु हो जाता है; विद्या का तीसरा शिव-नेत्र खुल जाता है, चित्र-कला का मौन राग अलापने लग जाता है; वक्ता चुप हो जाता है; लेखक की लेखनी थम जाती है; मूर्ति बनानेवाले के सामने नये कपोल, नये नयन और नयी छवि का दृश्य उपस्थित हो जाता है।

आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है। इस भाषा का निघण्टु शुद्ध श्वेत पत्रों वाला है। इसमें नाममात्र के लिए भी शब्द नहीं। यह सभ्याचरण नाद करता हुआ भी मौन है, व्याख्यान देता हुआ भी व्याख्यान के पीछे छिपा है, राग गाता हुआ भी राग के सुर के भीतर पड़ा है। मृदु वचनों की मिठास में आचरण की सभ्यता मौन रूप से खुली हुई है। नम्रता, दया, प्रेम और उदारता सब के सब सभ्याचरण की भाषा के मौन व्याख्यान हैं। मनुष्य के जीवन पर मौन व्याख्यान का प्रभाव चिरस्थायी होता है और उसकी आत्मा का एक अंग हो जाता है।

न काला, न नीला, न पीला, न सफेद, न पूर्वी, न पश्चिमी, न उत्तरी, न दक्षिणी, बे-नाम, बे-निशान, बे-मकान—विशाल आत्मा के आचरण से मौनरूपिणी सुगंधि सदा प्रसारित हुआ करती है। इसके मौन से प्रसूत प्रेम और पवित्रता-धर्म सारे जगत् का कल्याण करके विस्तृत होते हैं। इसकी उपस्थिति से मन और हृदय की ऋतु बदल जाते हैं। तीक्ष्ण गरमी से जले-भुने व्यक्ति आचरण के काले बादलों की बूँदाबाँदी से शीतल हो जाते हैं। मानसोत्पन्न शरद् ऋतु में क्लेशातुर हुए पुरुष इनकी सुगंधमय अटल वसंत ऋतु के आनन्द का पान करते हैं। आचरण के नेत्र के एक अश्रु से जगत् भर के नेत्र भीग जाते हैं। आचरण के आनन्द-नृत्य से उन्मदिष्णु होकर वृक्षों और पर्वतों तक के हृदय नृत्य करने लगते हैं। आचरण के मौन व्याख्यान से मनुष्य को एक नया जीवन प्राप्त होता है। नये-नये विचार स्वयं ही प्रकट होने लगते हैं। सूखे काष्ठ सचमुच ही हरे हो जाते हैं। सूखे कूपों में जल भर आता है। नये नेत्र मिलते हैं। कुल पदार्थों के साथ एक नया मैत्री-भाव फूट पड़ता है। सूर्य, जल, वायु, पुष्प, पत्थर, घास, पात, नर-नारी और बालक तक में एक अश्रुतपूर्व सुन्दर मूर्ति के दर्शन होने लगते हैं।

मौनरूपी व्याख्यान की महत्ता इतनी बलवती, इतनी अर्थवती और इतनी प्रभावती होती है कि उसके सामने क्या मातृभाषा, क्या साहित्यभाषा और क्या अन्य देश की भाषा सब की सब तुच्छ प्रतीत होती हैं। अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है। विचार करके देखो, मौन व्याख्यान किस तरह आपके हृदय की नाड़ी-नाड़ी में सुन्दरता को पिरो देता है। वह व्याख्यान ही क्या, जिसने हृदय की धुन को—मन के लक्ष्य को —ही न बदल दिया। चन्द्रमा की मंद-मंद हँसी का तारागण के कटाक्षपूर्ण प्राकृतिक मौन व्याख्यान का प्रभाव किसी कवि के दिल में घुसकर देखो। सूर्यास्त होने के पश्चात् श्रीकेशवचन्द्र सेन और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने सारी रात एक क्षण की तरह गुजार दी; यह तो कल की बात है। कमल और नरगिस में नयन देखनेवाले नेत्रों से पूछो कि मौन व्याख्यान की प्रभुता कितनी दिव्य है।

प्रेम की भाषा शब्द-रहित है। नेत्रों की, कपोलों की, मस्तक की भाषा भी शब्द-रहित है। जीवन का तत्त्व भी शब्द से परे है। सच्चा आचरण—प्रभाव, शील, अचल-स्थित संयुक्त आचरण—न तो साहित्य के लंबे व्याख्यानों से गठा जा सकता है; न वेद की श्रुतियों के मीठे उपदेश से; न अंजील से; न कुरान से; न धर्मचर्चा से; न केवल सत्संग से। जीवन के अरण्य में धँसे हुए पुरुष के हृदय पर प्रकृति और मनुष्य के जीवन के मौन व्याख्यानों के यत्न से सुनार के छोटे हथौड़े की मंद-मंद चोटों की तरह आचरण का रूप प्रत्यक्ष होता है।

बर्फ का दुपट्टा बाँधे हुए हिमालय इस समय तो अति सुन्दर, अति ऊँचा और अति गौरवान्वित मालूम होता है, परन्तु प्रकृति ने अगणित शताब्दियों के परिश्रम से रेत का एक-एक परमाणु समुद्र के जल में डुबो-डुबोकर और उनको अपने विचित्र हथौड़े से सुडौल करके इस हिमालय के दर्शन कराये हैं। आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मन्दिर है। यह वह आम का पेड़ नहीं जिसको मदारी एक क्षण में, तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर, अपनी हथेली पर जमा दे। इसके बनने में अनन्त काल लगा है। पृथिवी बन गयी, सूर्य बन गया, तारागण आकाश में दौड़ने लगे, परन्तु अभी तक आचरण के सुन्दर रूप के पूर्ण दर्शन नहीं हुए। कहीं-कहीं उसकी अत्यल्प छटा अवश्य दिखायी देती है।

पुस्तकों में लिखे हुए नुसखों से तो और भी अधिक बदहजमी हो जाती है। सारे वेद और शास्त्र भी यदि घोलकर पी लिये जायँ तो भी आदर्श आचरण की प्राप्ति नहीं होती। आचरण प्राप्ति की इच्छा रखनेवाले को तर्क-वितर्क से कुछ भी सहायता नहीं मिलती। शब्द और वाणी तो साधारण जीवन के चोचले हैं। ये आचरण की गुप्त गुहा में नहीं प्रवेश कर सकते। वहाँ इनका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वेद इस देश के रहनेवालों के विश्वासानुसार ब्रह्म-वाणी हैं, परन्तु इतना काल व्यतीत हो जाने पर भी आज तक वे समस्त जगत् की भिन्न-भिन्न जातियों को संस्कृत भाषा न बुला सके—न समझा सके—न सिखा सके। यह बात हो कैसे? ईश्वर तो सदा मौन है। ईश्वरीय मौन शब्द और भाषा का विषय नहीं। वह केवल आचरण के कान में गुरु-मंत्र फूँक सकता है। वह केवल ऋषि के दिल में वेद का ज्ञानोदय कर सकता है।

किसी का आचरण वायु के झोंके से हिल जाय तो हिल जाय परन्तु साहित्य और शब्द की गोलन्दाजी और आँधी से उसके सिर के एक बाल तक का बाँका न होना एक साधारण बात है। पुष्प की कोमल पंखुड़ी के स्पर्श से किसी को रोमांच हो जाय; जल की शीतलता से क्रोध और विषय-वासना शांत हो जायँ; बर्फ के दर्शन से पवित्रता आ जाय; सूर्य की ज्योति से नेत्र खुल जायँ—परन्तु अंगरेजी भाषा का व्याख्यान—चाहे वह कारलायल ही का लिखा हुआ क्यों न हो—बनारस में पंडितों के लिए रामरोला ही है। इसी तरह न्याय और व्याकरण की बारीकियों के विषय में पंडितों के द्वारा की गयी चर्चाएँ और शास्त्रार्थ संस्कृत ज्ञान-हीन पुरुषों के लिए स्टीम इंजन के फप्-फप् शब्द से अधिक अर्थ नहीं रखते। यदि आप कहें व्याख्यानों द्वारा, उपदेशों द्वारा, धर्मचर्चा द्वारा कितने पुरुषों और नारियों के हृदय पर जीवन-व्यापी प्रभाव पड़ा है, तो उत्तर यह है कि प्रभाव शब्द का नहीं पड़ता— प्रभाव तो सदा सदाचरण का पड़ता है। साधारण उपदेश तो हर गिरजे, हर मंदिर और हर मस्जिद में होते हैं, परन्तु उनका प्रभाव तभी हम पर पड़ता है जब गिरजे का पादरी स्वयं ईसा होता है—मंदिर का पुजारी स्वयं ब्रह्मर्षि होता है—मस्जिद का मुल्ला स्वयं पैगम्बर और रसूल होता है।

यदि एक ब्राह्मण किसी डूबती कन्या की रक्षा के लिए—चाहे वह कन्या जिस किसी जाति की हो, जिस किसी मनुष्य की हो, जिस किसी देश की हो—अपने-आपको गंगा में फेंक दे—चाहे उसके प्राण यह काम करने में रहें चाहे जायँ—तो इस कार्य में प्रेरक आचरण की मौनमयी भाषा किस देश में, किस जाति में और किस काल में, कौन नहीं समझ सकता? प्रेम का आचरण, दया का आचरण—क्या पशु क्या मनुष्य—जगत् के सभी चराचर आप-ही-आप समझ लेते हैं। जगत् भर के बच्चों की भाषा इस भाष्यहीन भाषा का चिह्न है। बालकों के इस शुद्ध मौन का नाद और हास्य भी सब देशों में एक ही-सा पाया जाता है।

मनुष्य का जीवन इतना विशाल है कि उसके आचरण को रूप देने के लिए नाना प्रकार के ऊँच-नीच और भले-बुरे विचार, अमीरी और गरीबी, उन्नति और अवनति इत्यादि सहायता पहुँचाते हैं। पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता। जो कुछ जगत् में हो रहा है वह केवल आचरण के विकास के अर्थ हो रहा है। अन्तरात्मा वही काम करती है जो बाह्य पदार्थों के संयोग का प्रतिबिम्ब होता है। जिनको हम पवित्रात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन कूपों से निकलकर वे अब उदय को प्राप्त हुए हैं। जिनको हम धर्मात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन अधर्मों को करके वे धर्म-ज्ञान को पा सके हैं। जिनको हम सभ्य कहते हैं और जो अपने जीवन में पवित्रता को ही सब-कुछ समझते हैं, क्या पता है, वे कुछ काल पूर्व बुरी और अधर्म पवित्रता में लिप्त रहे हों? अपने जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों से भरी हुई अन्धकारमय कोठरी से निकलकर ज्योति और स्वच्छ वायु से परिपूर्ण खुले हुए देश में जब तक अपना आचरण अपने नेत्र न खोल चुका हो तब तक धर्म के गूढ़ तत्त्व कैसे समझ में आ सकते हैं। नेत्र-रहित को सूर्य से क्या लाभ? हृदय-रहित को प्रेम से क्या लाभ? बहरे को राग से क्या लाभ? कविता, साहित्य, पीर, पैगम्बर, गुरु, आचार्य, ऋषि आदि के उपदेशों से लाभ उठाने का यदि आत्मा में बल नहीं तो उनसे क्या लाभ? जब तक यह जीवन का बीज पृथिवी के मल-मूत्र के ढेर में पड़ा है अथवा जब तक वह खाद की गरमी से अंकुरित नहीं हुआ और प्रस्फुटित होकर उससे दो नये पत्ते ऊपर नहीं निकल आये, तब तक ज्योति और वायु उसके किस काम के?

वह आचरण जो धर्म-सम्प्रदायों के अनुच्चारित शब्दों को सुनाता है, हम में कहाँ? जब वही नहीं तब फिर क्यों न ये सम्प्रदाय हमारे मानसिक महाभारतों के कुरुक्षेत्र बनें? क्यों न अप्रेम, अपवित्र, हत्या और अत्याचार इन सम्प्रदायों के नाम से

हमारा खून करें। कोई भी सम्प्रदाय आचरण-रहित पुरुषों के लिए कल्याणकारक नहीं हो सकता और आचरणवाले पुरुषों के लिए सभी धर्म-सम्प्रदाय कल्याणकारक हैं। सच्चा साधु धर्म को गौरव देता है, धर्म किसी को गौरवान्वित नहीं करता।

आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है। आचरण के विकास के लिए नाना प्रकार की सामग्रियों का, जो संसार-संभूत शारीरिक, प्राकृतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन में वर्तमान हैं, उन सबकी (सबका?) क्या एक पुरुष और क्या एक जाति के आचरण के विकास के साधनों के सम्बन्ध में विचार करना होगा। आचरण के विकास के लिए जितने कर्म हैं उन सबको आचरण के संगठनकर्त्ता धर्म के अंग मानना पड़ेगा। चाहे कोई कितना ही बड़ा महात्मा क्यों न हो, वह निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि यों ही करो, और किसी तरह नहीं। आचरण की सभ्यता की प्राप्ति के लिए वह सबको एक पथ नहीं बता सकता। आचरणशील महात्मा स्वयं भी किसी अन्य की बनायी हुई सड़क से नहीं आया, उसने अपनी सड़क स्वयं ही बनायी थी। इसी से उसके बनाये हुए रास्ते पर चलकर हम भी अपने आचरण को आदर्श के ढाँचे में नहीं ढाल सकते। हमें अपना रास्ता अपने जीवन की कुदाली की एक-एक चोट से रात-दिन बनाना पड़ेगा और उसी पर चलना भी पड़ेगा। हर किसी को अपने देश-कालानुसार रामप्राप्ति के लिए अपनी नैया आप ही बनानी पड़ेगी और आप ही चलानी भी पड़ेगी।

यदि मुझे ईश्वर का ज्ञान नहीं तो ऐसे ज्ञान ही से क्या प्रयोजन? जब तक मैं अपना हथौड़ा ठीक-ठीक चलाता हूँ और रूपहीन लोहे को तलवार के रूप में गढ़ देता हूँ तब तक मुझे यदि ईश्वर का ज्ञान नहीं तो नहीं होने दो। उस ज्ञान से मुझे प्रयोजन ही क्या? जब तक मैं अपना उद्धार ठीक और शुद्ध रीति से किये जाता हूँ तब तक यदि मुझे आध्यात्मिक पवित्रता का ज्ञान नहीं होता तो न होने दो। उससे सिद्धि ही क्या हो सकती है? जब तक किसी जहाज के कप्तान के हृदय में इतनी वीरता भरी हुई है कि वह महाभयानक समय में अपने जहाज को नहीं छोड़ता तब तक यदि वह मेरी और तेरी दृष्टि में शराबी और स्त्रैण है तो उसे वैसा ही होने दो। उसकी बुरी बातों से हमें प्रयोजन ही क्या? आँधी हो—बरफ हो—बिजली की कड़क हो—समुद्र का तूफान हो—वह दिन रात आँख खोले अपने जहाज की रक्षा के लिए जहाज के पुल पर घूमता हुआ अपने धर्म का पालन करता है। वह अपने जहाज के साथ समुद्र में डूब जाता है, परन्तु अपना जीवन बचाने के लिए कोई उपाय नहीं करता। क्या उसके आचरण का यह अंश मेरे-तेरे बिस्तर और आसन पर बैठे-बिठाये कहे हुए निरर्थक शब्दों के भाव से कम महत्त्व का है?

न मैं किसी गिरजे में जाता हूँ और न किसी मंदिर में, न मैं नमाज पढ़ता हूँ और न रोजा ही रखता हूँ, न संध्या ही करता हूँ और न कोई देव-पूजा ही करता हूँ, न किसी आचार्य के नाम का मुझे पता है और न किसी के आगे मैंने सिर ही झुकाया है। तो इससे प्रयोजन ही क्या और इससे हानि भी क्या? मैं तो अपनी खेती करता हूँ, अपने हल और बैलों को प्रातःकाल उठकर प्रणाम करता हूँ मेरा जीवन जंगल के पेड़ों और पत्तियों की संगति में गुजरता है, आकाश के बादलों को देखते मेरा दिन निकल जाता है। मैं किसी को धोखा नहीं देता; हाँ यदि मुझे कोई धोखा दे तो उससे मेरी कोई हानि नहीं। मेरे खेत में अन्न उग रहा है, मेरा घर अन्न से भरा है, बिस्तर के लिए मुझे एक कमली काफी है, कमर के लिए लँगोटी और सिर के लिए एक टोपी बस है। हाथ-पाँव मेरे बलवान् हैं, शरीर मेरा नीरोग है, भूख खूब लगती है, बाजरा और मकई, छाछ और दही, दूध और मक्खन मुझे और मेरे बच्चों को खाने के लिए मिल जाता है। क्या इस किसान की सादगी और सच्चाई में वह मिठास नहीं जिसकी प्राप्ति के लिए भिन्न-भिन्न धर्म सम्प्रदाय लम्बी-चौड़ी और चिकनी-चुपड़ी बातों द्वारा दीक्षा दिया करते हैं?

जब साहित्य, संगीत और कला की अति ने रोम को घोड़े से उतारकर मखमल के गद्दों पर लिटा दिया—जब आलस्य और विषय-विकार की लम्पटता ने जंगल और पहाड़ की साफ हवा के असभ्य और उद्दण्ड जीवन से रोमवालों का मुख मोड़ दिया तब रोम नरम तकियों और बिस्तरों पर ऐसा सोया कि अब तक न आप जागा और न कोई उसे जगा सका। ऐंग्लो-सैक्सन जाति ने जो उच्च पद प्राप्त किया वह उसने अपने समुद्र, जंगल और पर्वत से सम्बन्ध रखनेवाले जीवन से ही प्राप्त किया। जाति की उन्नति लड़ने-भिड़ने, मरने-मारने, लूटने और लूटे जाने, शिकार करने और शिकार होनेवाले जीवन का ही परिणाम है। लोग कहते हैं, केवल धर्म ही जाति की उन्नति करता है। यह ठीक है, परन्तु यह धर्मांकुर जो जाति को उन्नत करता है, इस असभ्य, कमीने पापमय जीवन की गंदी राख के ढेर के ऊपर नहीं उगता है। मंदिरों और गिरजों की मन्द-मन्द, टिमटिमाती हुई मोमबत्तियों की रोशनी से यूरप इस उच्चावस्था को नहीं पहुँचा। वह कठोर जीवन जिसको देश-देशान्तरों को ढूँढ़ते-फिरते रहने के बिना शान्ति नहीं मिलती; जिसकी अन्तर्ज्वाला दूसरी जातियों को जीतने, लूटने, मारने और उन पर राज करने के बिना मन्द नहीं पड़ती—केवल वही विशाल जीवन समुद्र की छाती पर मूँग दल कर और पहाड़ों को फाँद कर उनको उस महानता की ओर ले गया और ले जा रहा है। रॉबिनहुड की प्रशंसा में जो कवि अपनी सारी शक्ति खर्च कर देते हैं उन्हें तत्त्वदर्शी कहना चाहिए, क्योंकि रॉबिनहुड जैसे भौतिक पदार्थों से ही नेलसन और बेलिंगटन जैसे अंगरेज वीरों की हड्डियाँ तैयार हुई थीं। लड़ाई

के आजकल के सामान—गोला, बारूद, जंगी जहाज और तिजारती बेड़ों आदि को देखकर कहना पड़ता है कि इनसे वर्तमान सभ्यता से भी कहीं अधिक उच्च सभ्यता का जन्म होगा।

धर्म और आध्यात्मिक विद्या के पौधे को ऐसी आरोग्य-वर्धक भूमि देने के लिए, जिसमें वह प्रकाश और वायु में सदा खिलता रहे, सदा फूलता रहे, सदा फलता रहे, यह आवश्यक है कि बहुत-से हाथ एक अनन्त प्रकृति के ढेर को एकत्र करते रहें। धर्म की रक्षा के लिए क्षत्रियों को सदा ही कमर बाँधे हुए सिपाही बने रहने का भी तो यही अर्थ है। यदि कुल समुद्र का जल उड़ा दो तो रेडियम धातु का एक कण कहीं हाथ लगेगा। आचरण का रेडियम—क्या एक पुरुष का और क्या एक जाति का और क्या एक जगत् का—सारी प्रकृति को खाद बनाये बिना, सारी प्रकृति को हवा में उड़ाये बिना भला कब मिलने का है? प्रकृति को मिथ्या करके नहीं उड़ाना; उसे उड़ाकर मिथ्या करना है? समुद्रों में डोरा डालकर अमृत निकालना है। सो भी कितना? जरा-सा! संसार की खाक छानकर आचरण का स्वर्ण हाथ आता है। क्या बैठे बिठाये भी वह मिल सकता है?

हिन्दुओं का सम्बन्ध यदि किसी प्राचीन असभ्य जाति के साथ रहा होता तो उनके वर्तमान वंश में अधिक बलवान् श्रेणी के मनुष्य होते—उनमें भी ऋषि, पराक्रमी, जनरल और धीर-वीर पुरुष उत्पन्न होते। आजकल तो वे उपनिषदों के ऋषियों के पवित्रतामय प्रेम के जीवन को देख-देखकर अहंकार में मग्न हो रहे हैं और दिन-पर-दिन अधोगति की ओर जा रहे हैं। यदि वह किसी जंगली जाति की संतान होते तो उनमें भी ऋषि और बलवान् योद्धा होते। ऋषियों को पैदा करने के योग्य असभ्य पृथिवी का बन जाना तो आसान है, परन्तु ऋषियों को अपनी उन्नति के लिए राख और पृथिवी बनाना कठिन है, क्योंकि ऋषि तो केवल अनन्त प्रकृति पर सजते हैं, हमारी जैसी पुष्प-शय्या पर मुरझा जाते हैं। माना कि प्राचीन काल में, यूरप में सभी असभ्य थे, परन्तु आजकल तो हम असभ्य हैं। उनकी असभ्यता के ऊपर ऋषि-जीवन की उच्च सभ्यता फूल रही है और हमारे ऋषियों के जीवन के फूल की शय्या पर आजकल असभ्यता का रंग चढ़ा हुआ है। सदा ऋषि पैदा करते रहना अर्थात् अपनी ऊँची चोटी के ऊपर इन फूलों को सदा धारण करते रहना ही जीवन के नियमों का पालन करना है।

धर्म के आचरण की प्राप्ति यदि ऊपरी आडम्बरों से होती तो आजकल भारत-निवासी सूर्य के समान शुद्ध आचरणवाले हो जाते। भाई! माला से तो जप नहीं होता। गंगा नहाने से तो तप नहीं होता। पहाड़ों पर चढ़ने से प्राणायाम हुआ करता है, समुद्र में तैरने से नेती धुलती है; आँधी, पानी और साधारण जीवन के ऊँच-नीच, गरमी-सरदी, गरीबी-अमीरी को झेलने से तप हुआ करता है। आध्यात्मिक धर्म के स्वप्नों की शोभा तभी भली लगती है जब आदमी अपने जीवन का धर्म पालन करे। खुले समुद्र में अपने जहाज पर बैठकर ही समुद्र की आध्यात्मिक शोभा का विचार होता है। भूखे को तो चन्द्र और सूर्य भी केवल आटे की बड़ी-बड़ी दो रोटियाँ-से प्रतीत होते हैं। कुटियों में ही बैठकर धूप, आँधी और बर्फ की दिव्य शोभा का आनन्द आ सकता है। प्राकृतिक सभ्यता के आने पर ही मानसिक सभ्यता आती है और तभी वह स्थिर भी रह सकती है। मानसिक सभ्यता के होने पर ही आचरण-सभ्यता की प्राप्ति संभव है और तभी वह स्थिर भी हो सकती है। जब तक निर्धन पुरुष पाप से अपना पेट भरता है तब तक धनवान् पुरुष के शुद्धाचरण की पूरी परीक्षा नहीं। इसी प्रकार जब तक अज्ञानी का आचरण अशुद्ध है, तब तक ज्ञानवान् के आचरण की पूरी परीक्षा नहीं—तब तक जगत् में आचरण की सभ्यता का राज्य नहीं।

आचरण की सभ्यता का देश ही निराला है। उसमें न शारीरिक झगड़े हैं, न मानसिक, न आध्यात्मिक। न उसमें विद्रोह है, न जंग ही का नामोनिशान है और न वहाँ कोई ऊँचा है, न नीचा। न कोई वहाँ धनवान् है और न कोई वहाँ निर्धन। वहाँ प्रकृति का नाम नहीं, वहाँ तो प्रेम और एकता का अखंड राज्य रहता है। जिस समय आचरण की सभ्यता संसार में आती है उस समय नीले आकाश से मनुष्य को वेद-ध्वनि सुनायी देती है, नर-नारी पुष्पवत् खिलते जाते हैं, प्रभात हो जाता है, प्रभात का गजर बज जाता है, नारद की वीणा अलापने लगती है, ध्रुव का शंख गूँज उठता है, प्रह्लाद का नृत्य होता है, शिव का डमरू बजता है, कृष्ण की बाँसुरी की धुन प्रारम्भ हो जाती है। जहाँ ऐसे शब्द होते हैं, जहाँ ऐसे पुरुष रहते हैं, वहाँ ऐसी ज्योति होती है, वही आचरण की सभ्यता का सुनहरा देश है। वही देश मनुष्य का स्वदेश है। जब तक घर न पहुँच जाय, सोना अच्छा नहीं, चाहे वेदों में, चाहे इंजील में, चाहे कुरान में, चाहे त्रिपीठक (त्रिपिटक) में, चाहे इस स्थान में, चाहे उस स्थान में, कहीं भी सोना अच्छा नहीं। आलस्य मृत्यु है। लेख तो पेड़ों के चित्र सदृश होते हैं, पेड़ तो होते ही नहीं जो फल लावें। लेखक ने यह चित्र इसलिए भेजा है कि सरस्वती में चित्र को देखकर शायद कोई असली पेड़ को जाकर देखने का यत्न करे।

**—सरदार पूर्णसिंह**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

**(क)** आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है। इस भाषा का निघण्टु शुद्ध श्वेत पत्रों वाला है। इसमें नाममात्र के लिए भी शब्द नहीं। यह सभ्याचरण नाद करता हुआ भी मौन है, व्याख्यान देता हुआ भी व्याख्यान के पीछे छिपा है, राग गाता हुआ भी राग के सुर के भीतर पड़ा है। मृदु वचनों की मिठास में आचरण की सभ्यता मौन रूप से खुली हुई है। नम्रता, दया, प्रेम और उदारता सब के सब सभ्याचरण की भाषा के मौन व्याख्यान हैं। मनुष्य के जीवन पर मौन व्याख्यान का प्रभाव चिरस्थायी होता है और उसकी आत्मा का एक अंग हो जाता है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सभ्याचरण की व्याख्या के मौन आख्यान क्या हैं?
(iv) सभ्याचरण की मुख्य विशेषता क्या है?
(v) आचरण की सभ्यतामय भाषा कैसी है?

**(ख)** मौनरूपी व्याख्यान की महत्ता इतनी बलवती, इतनी अर्थवती और इतनी प्रभावती होती है कि उसके सामने क्या मातृभाषा, क्या साहित्यभाषा और क्या अन्य देश की भाषा सब की सब तुच्छ प्रतीत होती हैं। अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है। विचार करके देखो, मौन व्याख्यान किस तरह आपके हृदय की नाड़ी-नाड़ी में सुन्दरता को पिरो देता है। वह व्याख्यान ही क्या, जिसने हृदय की धुन को– मन के लक्ष्य को– ही न बदल दिया। चन्द्रमा की मंद-मंद हँसी का तारागण के कटाक्षपूर्ण प्राकृतिक मौन व्याख्यान का प्रभाव किसी कवि के दिल में घुसकर देखो। सूर्यास्त होने के पश्चात् श्रीकेशवचन्द्र सेन और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने सारी रात एक क्षण की तरह गुजार दी; यह तो कल की बात है। कमल और नरगिस में नयन देखनेवाले नेत्रों से पूछो कि मौन व्याख्यान की प्रभुता कितनी दिव्य है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) मौनरूपी व्याख्यान का क्या महत्त्व है?
(iv) आचरण की मौन भाषा का सम्बन्ध किससे है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का निहित भाव क्या है?

**(ग)** प्रेम की भाषा शब्द-रहित है। नेत्रों की, कपोलों की, मस्तक की भाषा भी शब्द-रहित है। जीवन का तत्त्व भी शब्द से परे है। सच्चा आचरण–प्रभाव, शील, अवल-स्थित संयुक्त आचरण- न तो साहित्य के लंबे व्याख्यानों से गठा जा सकता है; न वेद की श्रुतियों के मीठे उपदेश से; न अंजील से; न कुरान से; न धर्मचर्चा से; न केवल सत्संग से। जीवन के अरण्य में धँसे हुए पुरुष के हृदय पर प्रकृति और मनुष्य के जीवन के मौन व्याख्यानों के यत्न से सुनार के छोटे हथौड़े की मंद-मंद चोटों की तरह आचरण का रूप प्रत्यक्ष होता है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रेम की भाषा कैसी होती है?
(iv) मानव का सदाचार किसके माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता है?
(v) प्रेम की भाषा के द्वारा हमारे हृदय के भावों को किस प्रकार प्रकट किया जाता है?

**(घ)** आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मन्दिर है। यह वह आम का पेड़ नहीं जिसको मदारी एक क्षण में, तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर, अपनी हथेली पर जमा दे। इसके बनने में अनन्त काल लगा है। पृथिवी बन गयी, सूर्य बन गया, तारागण आकाश में दौड़ने लगे, परन्तु अभी तक आचरण के सुन्दर रूप के पूर्ण दर्शन नहीं हुए। कहीं-कहीं उसकी अत्यल्प छटा अवश्य दिखायी देती है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ और लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) श्रेष्ठ आचरण बनने में कितना समय लग सकता है?
(iv) प्रस्तुत अवतरण में मदारी के क्रिया-कलाप का वर्णन किस प्रसंग में हुआ है?
(v) आचरण महिमामय और दिव्य कैसे होता है?

**(ङ)** मनुष्य का जीवन इतना विशाल है कि उसके आचरण को रूप देने के लिए नाना प्रकार के ऊँच-नीच और भले-बुरे विचार, अमीरी और गरीबी, उन्नति और अवनति इत्यादि सहायता पहुँचाते हैं। पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता। जो कुछ जगत् में हो रहा है वह केवल आचरण के विकास के अर्थ हो रहा है। अन्तरात्मा वही काम करती है जो बाह्य पदार्थों के संयोग का प्रतिबिम्ब होता है। जिनको हम पवित्रात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन कूपों से निकलकर वे अब उदय को प्राप्त हुए हैं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत गद्यांश का आशय क्या है?
(iv) आचरण की संरचना में क्या-क्या सहायक सिद्ध होते हैं?
(v) व्यक्ति की आत्मा उसे किन कार्यों को करने के लिए प्रेरणा देती है?

**(च)** आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है। आचरण के विकास के लिए नाना प्रकार की सामग्रियों का, जो संसार-संभूत शारीरिक, प्राकृतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन में वर्तमान हैं, उन सबकी (सबका?) क्या एक पुरुष और क्या एक जाति के आचरण के विकास के साधनों के सम्बन्ध में विचार करना होगा। आचरण के विकास के लिए जितने कर्म हैं उन सबको आचरण के संगठनकर्त्ता धर्म के अंग मानना पड़ेगा। चाहे कोई कितना ही बड़ा महात्मा क्यों न हो, वह निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि यों ही करो, और किसी तरह नहीं। आचरण की सभ्यता की प्राप्ति के लिए वह सबको एक पथ नहीं बता सकता। आरचणशील महात्मा स्वयं भी किसी अन्य की बनायी हुई सड़क से नहीं आया, उसने अपनी सड़क स्वयं ही बनायी थी। इसी से उसके बनाये हुए रास्ते पर चलकर हम भी अपने आचरण को आदर्श के ढाँचे में नहीं ढाल सकते। हमें अपना रास्ता अपने जीवन की कुदाली की एक-एक चोट से रात-दिन बनाना पड़ेगा और उसी पर चलना भी पड़ेगा। हर किसी को अपने देश-कालानुसार रामप्राप्ति के लिए अपनी नैया आप ही बनानी पड़ेगी और आप ही चलानी भी पड़ेगी।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) जीवन का परम उद्देश्य क्या है?
(iv) आचरण की सभ्यता के लिए हमें क्या करना चाहिए?
(v) प्रस्तुत अवतरण में लेखक का निहित भाव क्या है?

**(छ)** आचरण की सभ्यता का देश ही निराला है। उसमें न शारीरिक झगड़े हैं, न मानसिक, न आध्यात्मिक। न उसमें विद्रोह है, न जंग ही का नामोनिशान है और न वहाँ कोई ऊँचा है, न नीचा। न कोई वहाँ धनवान् है और न कोई वहाँ निर्धन। वहाँ प्रकृति का नाम नहीं, वहाँ तो प्रेम और एकता का अखंड राज्य रहता है। जिस समय आचरण की सभ्यता संसार में आती है उस समय नीले आकाश से मनुष्य को वेद-ध्वनि सुनायी देती है, नर-नारी पुष्पवत् खिलते जाते हैं, प्रभात हो जाता है, प्रभात का गजर बज जाता है, नारद की वीणा अलापने लगती है, ध्रुव का शंख गूँज उठता है, प्रह्लाद का नृत्य होता है, शिव का डमरू बजता है, कृष्ण की बाँसुरी की धुन प्रारम्भ हो जाती है। जहाँ ऐसे शब्द होते हैं, जहाँ ऐसे पुरुष रहते हैं, वहाँ ऐसी ज्योति

होती है, वही आचरण की सभ्यता का सुनहरा देश है। वही देश मनुष्य का स्वदेश है। जब तक घर न पहुँच जाय, सोना अच्छा नहीं, चाहे वेदों में, चाहे इंजील में, चाहे कुरान में, चाहे त्रिपीठक (त्रिपिटक) में, चाहे इस स्थान में, चाहे उस स्थान में, कहीं भी सोना अच्छा नहीं । आलस्य मृत्यु है। लेख तो पेड़ों के चित्र सदृश होते हैं, पेड़ तो होते ही नहीं जो फल लावें। लेखक ने यह चित्र इसलिए भेजा है कि सरस्वती में चित्र को देखकर शायद कोई असली पेड़ को जाकर देखने का यत्न करे।

**प्रश्न**– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) आचरण की सभ्यता का देश कैसा है?
(iv) प्रस्तुत अवतरण में आलस्य को क्या बताया गया है?
(v) गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सरदार पूर्णसिंह की भाषा-शैली बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. सरदार पूर्णसिंह का साहित्यिक परिचय दीजिए।
3. सरदार पूर्णसिंह का परिचय निम्नलिखित शीर्षकों के आधार पर दीजिए–
   (क) जन्म-तिथि एवं स्थान, शिक्षा-दीक्षा और साहित्यिक योगदान।
   (ख) प्रमुख कृतियाँ।
4. हिन्दी निबन्ध के इतिहास में सरदार पूर्णसिंह का महत्त्व प्रतिपादित कीजिए।
5. 'आचरण की सभ्यता' पाठ का सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
6. सरदार पूर्णसिंह का परिचय, साहित्यिक योगदान एवं प्रमुख रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
7. सरदार पूर्णसिंह का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है।
   (ख) प्रेम की भाषा शब्द-रहित है।
   (ग) आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मंदिर है।
   (घ) पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता।
   (ङ) आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है।
   (च) मानसिक सभ्यता के होने पर ही आचरण की सभ्यता की प्राप्ति सम्भव है।
   (छ) प्रभाव शब्द का नहीं पड़ता–प्रभाव तो सदा आचरण का पड़ता है।
   (ज) अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. बुद्धदेव, ईसा और महाप्रभु चैतन्य कौन थे? आचरण की सभ्यता से इनका क्या सम्बन्ध था?
2. "आचरण का विकास जीवन का परम उद्देश्य है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3. 'आचरण की सभ्यता' में आत्म-व्यंजना का क्या महत्त्व है? संक्षेप में लिखिए।
4. "अध्यापक पूर्णसिंह अपने निबंधों में विदेशी शब्दों को बेझिझक ग्रहण करते हैं, लेकिन उससे निबंध के प्रवाह में अवरोध नहीं उत्पन्न होता।" इस कथन पर आप अपना संक्षिप्त विचार प्रकट कीजिए।
5. 'आचरण की सभ्यता' पाठ का मुख्य संदेश क्या है?
6. 'आचरण की सभ्यता' से लेखक का क्या तात्पर्य है?
7. 'आचरण की सभ्यता' के लेखक ने आचरण के विकास के लिए किन बातों पर बल दिया है?
8. "आचरण का विकास जीवन का परम उद्देश्य है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।

●●●

# 5 डॉ० सम्पूर्णानन्द

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री, कुशल राजनीतिज्ञ एवं मर्मज्ञ साहित्यकार डॉ० सम्पूर्णानन्द का जन्म 1 जनवरी, 1890 ई० को काशी में हुआ था। इन्होंने क्वीन्स कालेज, वाराणसी से बी०एस-सी० की परीक्षा पास करने के बाद ट्रेनिंग कालेज, इलाहाबाद से एल० टी० किया। इन्होंने एक अध्यापक के रूप में जीवन-क्षेत्र में प्रवेश किया और सबसे पहले प्रेम महाविद्यालय, वृन्दावन में अध्यापक हुए। कुछ दिनों बाद इनकी नियुक्ति डूंगर कालेज, बीकानेर में प्रिंसिपल के पद पर हुई। सन् 1921 में महात्मा गाँधी के राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेरित होकर काशी लौट आये और 'ज्ञान मंडल' में काम करने लगे। इन्हीं दिनों इन्होंने 'मर्यादा' (मासिक) और 'टुडे' (अंग्रेजी दैनिक) का सम्पादन किया।

इन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रथम पंक्ति के सेनानी के रूप में कार्य किया और सन् 1936 में प्रथम बार कांग्रेस के टिकट पर विधानसभा के सदस्य चुने गये। सन् 1937 में कांग्रेस मंत्रिमंडल गठित होने पर ये उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री नियुक्त हुए। सन् 1955 में ये उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। सन् 1960 में इन्होंने मुख्यमंत्री पद से त्याग-पत्र दे दिया। सन् 1962 में ये राजस्थान के राज्यपाल नियुक्त हुए। सन् 1967 में राज्यपाल पद से मुक्त होने पर ये काशी लौट आये और मृत्युपर्यन्त काशी विद्यापीठ के कुलपति बने रहे। 10 जनवरी, 1969 ई० को काशी में ही इस साहित्य-तपस्वी का निधन हो गया।

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—1 जनवरी, सन् 1890 ई०।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ० प्र०)।
- **पिता**—विजयानन्द।
- **प्रमुख रचनाएँ**—चिद्विलास, पृथ्वी से सप्तर्षि मण्डल, देशबन्धु चितरंजनदास, महात्मा गाँधी, चीन की राज्यक्रान्ति, समाजवाद, आर्यों का आदि देश।
- **शिक्षा**—बी०एस-सी०, एल०टी०, अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी भाषा पर अधिकार।
- **लेखन विधा**—निबन्ध संग्रह, फुटकर निबन्ध, जीवनी, पत्रिका आदि।
- **भाषा**—शुद्ध साहित्यिक हिन्दी भाषा।
- **शैली**—विचारात्मक, गवेषणात्मक, व्याख्यात्मक, काव्यात्मक, आलंकारिक।
- **आजीविका**—प्रेम महाविद्यालय, वृन्दावन में अध्यापक व डूँगर कॉलेज, बीकानेर में प्रिंसिपल।
  उ०प्र० के शिक्षा मंत्री, गृहमंत्री, मुख्यमंत्री एवं राज्यपाल रहे।
- **सम्पादन**—'मर्यादा', 'टुडे' (अंग्रेजी पत्रिका)।
- **मृत्यु**—10 जनवरी, सन् 1969 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—सम्पूर्णानन्द जी हिन्दी के प्रकाण्ड पण्डित, कुशल राजनीतिज्ञ, मर्मज्ञ साहित्यकार, भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के ज्ञाता, गंभीर विचारक, जागरूक शिक्षाविद् के रूप में जाने जाते हैं।

डॉ० सम्पूर्णानन्द एक उद्भट विद्वान् थे। हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी तीनों भाषाओं पर इनका समान अधिकार था। ये उर्दू और फारसी के भी अच्छे ज्ञाता थे। विज्ञान, दर्शन और योग इनके प्रिय विषय थे। इन्होंने इतिहास, राजनीति और ज्योतिष

का भी अच्छा अध्ययन किया था। राजनीतिक कार्यों में उलझे रहने पर भी इनका अध्ययन-क्रम बराबर बना रहा। सन् 1940 में ये अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति निर्वाचित हुए थे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने इनकी **'समाजवाद'** कृति पर इनको मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया था। इनको सम्मेलन की सर्वोच्च उपाधि साहित्य वाचस्पति भी प्राप्त हुई थी। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के भी ये अध्यक्ष और संरक्षक थे। उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री और मुख्यमंत्री के रूप में इन्होंने शिक्षा, कला और साहित्य की उन्नति के लिए अनेक उपयोगी कार्य किये। वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय इनकी ही देन है।

डॉ० सम्पूर्णानन्द जी ने विविध विषयों पर लगभग 25 ग्रंथों की तथा अनेक फुटकर लेखों की रचना की थी।

डॉ० सम्पूर्णानन्द की प्रसिद्ध कृतियाँ निम्नलिखित हैं :

**निबन्ध-संग्रह**—'पृथ्वी से सप्तर्षि मण्डल', 'चिद्विलास', 'ज्योतिर्विनोद', 'अंतरिक्ष यात्रा'।

**फुटकर निबन्ध**—'जीवन और दर्शन'।

**जीवनी**—'देशबन्धु चितरंजनदास', 'महात्मा गांधी'।

**राजनीति और इतिहास**—'चीन की राज्यक्रान्ति', 'मिस्र की राज्यक्रान्ति', 'समाजवाद', 'आर्यों का आदि देश', 'सम्राट हर्षवर्द्धन', 'भारत के देशी राज्य' आदि।

**धर्म**—'गणेश', 'नासदीय सूक्त की टीका', 'ब्राह्मण सावधान'।

**अन्य रचनाएँ**—'अंतर्राष्ट्रीय विधान', 'पुरुष सूक्त', 'व्रात्यकाण्ड', 'भारतीय सृष्टि क्रम विचार', 'स्फुट विचार', 'हिन्दू देव परिवार का विकास', 'वेदार्थ प्रवेशिका', 'अधूरी क्रान्ति', 'भाषा की शक्ति तथा अन्य निबन्ध'।

इनकी शैली शुद्ध, परिष्कृत एवं साहित्यिक है। इन्होंने विषयों का विवेचन तर्कपूर्ण शैली में किया है। विषय प्रतिपादन की दृष्टि से इनकी शैली के तीन रूप (1) विचारात्मक, (2) व्याख्यात्मक तथा (3) ओजपूर्ण लक्षित होते हैं।

**विचारात्मक शैली**–इस शैली के अन्तर्गत इनके स्वतंत्र एवं मौलिक विचारों की अभिव्यक्ति हुई है। भाषा विषयानुकूल एवं प्रवाहपूर्ण है। वाक्यों का विधान लघु है, परन्तु प्रवाह तथा ओज सर्वत्र विद्यमान है।

**व्याख्यात्मक शैली**–दार्शनिक विषयों के प्रतिपादन के लिए इस शैली का प्रयोग किया गया है। भाषा सरल एवं संयत है। उदाहरणों के प्रयोग द्वारा विषय को अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

**ओजपूर्ण शैली**–इस शैली में इन्होंने मौलिक निबंध लिखे हैं। ओज की प्रधानता है। वाक्यों का गठन सुन्दर है। भाषा व्यावहारिक है।

इनकी भाषा सबल, सजीव, साहित्यिक, प्रौढ़ एवं प्राञ्जल है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग किया गया है। गंभीर विषयों के विवेचन में भाषा विषयानुकूल गंभीर हो गयी है। कहावतों और मुहावरों का प्रयोग प्रायः नहीं किया गया है। शब्दों का चुनाव भावों और विचारों के अनुरूप किया गया है। भाषा में सर्वत्र प्रवाह, सौष्ठव और प्राञ्जलता विद्यमान है।

प्रस्तुत **'शिक्षा का उद्देश्य'** शीर्षक निबंध सम्पूर्णानन्द जी के **'भाषा की शक्ति'** नामक संग्रह से संकलित है। इस पाठ में लेखक ने 'शिक्षा के उद्देश्य' पर मौलिक ढंग से अपना विचार व्यक्त किया और प्राचीन आदर्शों को ही सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया है। लेखक ने इस पाठ में अध्यापकों का कर्त्तव्य बताते हुए स्पष्ट किया है कि अध्यापक का सर्वप्रथम कर्त्तव्य छात्रों में चरित्र का विकास करना और उनमें लोक-कल्याण की भावना जाग्रत करना है।

●●

# शिक्षा का उद्देश्य

अध्यापक और समाज के सामने सबसे बड़ा प्रश्न है शिक्षा किसलिए दी जाय? शिक्षा का जैसा उद्देश्य होगा, तदनुसार ही पाठ्य विषयों का चुनाव होगा। पर शिक्षा का उद्देश्य स्वतंत्र नहीं है। वह इस बात पर निर्भर है कि मनुष्य-जीवन का उद्देश्य—मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ—क्या है। मनुष्य को उस पुरुषार्थ की सिद्धि के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है।

पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है, पर दर्शन का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वह थोड़े से विद्यार्थियों का पाठ्य विषय मात्र नहीं है। प्रत्येक समाज को एक दार्शनिक मत स्वीकार करना होगा। उसी के आधार पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक और कौटुम्बिक व्यवस्था का व्यूह खड़ा होगा। जो समाज अपने वैयक्तिक और सामूहिक जीवन को केवल प्रतीयमान उपयोगिता के आधार पर चलाना चाहेगा उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। एक विभाग के आदर्श दूसरे विभाग के आदर्श से टकरायेंगे। जो बात एक क्षेत्र में ठीक जँचेगी वही दूसरे क्षेत्र में अनुचित कहलायेगी और मनुष्य के लिए अपना कर्त्तव्य स्थिर करना कठिन हो जायेगा। इसका तमाशा आज दीख पड़ रहा है। चोरी करना बुरा है पर पराये देश का शोषण करना बुरा नहीं। झूठ बोलना बुरा है पर राजनीतिक क्षेत्र में सच बोलने पर अड़े रहना मूर्खता है। घरवालों के साथ, देशवासियों के साथ और परदेशियों के साथ बर्ताव करने के लिए अलग-अलग आचारावलियाँ बन गयी हैं। इससे विवेकशील मनुष्य को कष्ट होता है। पग-पग पर धर्म-संकट में पड़ जाता है कि क्या करूँ। कल्याण इसी में है कि खूब सोच-विचारकर एक व्यापक दार्शनिक मत अंगीकार किया जाय और फिर सारे व्यवहार की नींव बनाया जाय। यह असंभव प्रयत्न नहीं है। प्राचीन भारत ने वर्णाश्रम धर्म इसी प्रकार स्थापित किया था। वर्तमान काल में रूस ने मार्क्सवाद को अपने राष्ट्रीय जीवन की सभी चेष्टाओं का केन्द्र बनाया है। ऐसा करने से सभी उद्योग एकसूत्र में बँध जाते हैं और आदर्शों और कर्त्तव्यों के टकराने की संभावना बहुत ही कम हो जाती है।

इस निबंध में दार्शनिक शास्त्रार्थ के लिए स्थान नहीं है। मैं यहाँ इतना कह सकता हूँ कि मेरी समझ में भारतीय संस्कृति ने पुराने काल में अपने लिए आधार ढूँढ़ निकाला था, वह अब भी वैसा ही श्रेयस्कर है क्योंकि उसका सश्रय शाश्वत है।

आत्मा अजर और अमर है। उसमें अनन्त ज्ञान, शक्ति और आनन्द का भण्डार है। अकेले ज्ञान कहना भी पर्याप्त हो सकता है क्योंकि जहाँ ज्ञान होता है वहाँ शक्ति होती है, और जहाँ ज्ञान और शक्ति होते हैं वहाँ आनन्द भी होता है। परन्तु अविद्यावशात् वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। इसी से अपने को अल्पज्ञ पाता है। अल्पज्ञता के साथ-साथ शक्तिमत्ता आती है और इसका परिणाम दुःख होता है। भीतर से ऐसा प्रतीत होता है जैसे कुछ खोया हुआ है; परन्तु यह नहीं समझ में आता कि क्या खो गया है। उसे खोयी हुई वस्तु की, अपने स्वरूप की, निरन्तर खोज रहती है। आत्मा अनजान में भटका करता है, कभी इस विषय की ओर दौड़ता है, कभी उसकी ओर; परन्तु किसी की प्राप्ति से तृप्ति नहीं होती, क्योंकि अपना स्वरूप इन विषयों में नहीं है। जब तक आत्मसाक्षात्कार न होगा, तब तक अपूर्णता की अनुभूति बनी रहेगी और आनन्द की खोज जारी रहेगी। इस खोज में सफलता, आनन्द की प्राप्ति, अपने परम ज्ञानमय स्वरूप में स्थिति यही मनुष्य का पुरुषार्थ, उसके जीवन का चरम लक्ष्य है और उसको इस पुरुषार्थ-साधन के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है। वह राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था सबसे अच्छी है जिससे पुरुषार्थ-सिद्धि में सहायता मिल सके; कम-से-कम बाधाएँ तो न्यूनतम हों।

आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है। योगाभ्यास सिखाने का प्रबंध राज्य नहीं कर सकता, न पाठशाला का अध्यापक ही इसका दायित्व ले सकता है। जो इस विद्या का खोजी होगा वह अपने लिए गुरु ढूँढ़ लेगा। परन्तु इतना किया

जा सकता है—और यही समाज और अध्यापक का कर्त्तव्य है कि व्यक्ति के अधिकारी बनने में सहायता दी जाय, अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जाय।

यहाँ पाठ्य-विषयों की चर्चा करना अनावश्यक है; वह ब्यौरे की बात है। परन्तु चरित्र का विकास ब्यौरे की बात नहीं है। उसका महत्त्व सर्वोपरि है। चरित्र शब्द का भी व्यापक अर्थ लेना होगा। पुरुषार्थ को सामने रखकर ही चरित्र सँवारा जा सकता है। प्रत्येक छात्र की आत्मा अपने को ढूँढ़ रही है, पर उसे इसका पता नहीं। अज्ञानवशात् वह उस आनन्द को, जो उसका अपना स्वरूप है, बाहरी चीजों में ढूँढ़ती है। जब कोई अभिलषित वस्तु मिल जाती है तो थोड़ी देर के लिए सुख का अनुभव होता है; परन्तु थोड़ी ही देर बाद चित्त किसी और वस्तु की ओर जा दौड़ता है; क्योंकि जिसकी खोज है वह कहीं मिलता नहीं। सब इसी खोज में हैं। ऐसी दशा में आपस में संघर्ष होना स्वाभाविक है। यदि दस आदमी अँधेरी कोठरी में टटोलते फिरेंगे तो बिना टकराये रह नहीं सकते। एक ही वस्तु की अभिलाषा जब दो या अधिक मनुष्य करेंगे तो उनमें अवश्य मुठभेड़ होगी। चीज का उपयोग तो कोई एक ही कर सकेगा। इस प्रकार ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध बढ़ते रहते हैं। ज्ञान और शक्ति की कमी से सफलता कम ही मिलती है। इससे अपने ऊपर ग्लानि होती है, दृश्यमान के नीचे एक मूक वेदना टीसती रहती है।

यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास डाले। एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाय और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाय। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना, मैत्री और दुःख देखकर दुःखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों यह भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष की कमी होती है। निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है। ये बातें हँसी-खेल नहीं हैं; परन्तु चित्त को उधर फेरना तो होगा ही, सफलता चाहे बहुत धीरे ही प्राप्त हो। इस प्रकार का प्रयास भी मनुष्य को ऊपर उठाता है। निष्कामिता की कुंजी यह है कि अपना खयाल कम और दूसरों का अधिक किया जाय। आरम्भ से ही परार्थ साधन, लोक-संग्रह और जीव-सेवा के भाव उत्पन्न किये जायँ। जब कभी मनुष्य से थोड़ी देर के लिए सच्ची सेवा बन पड़ती है तो उसे बड़ा आनन्द मिलता है : भूखे को अन्न देते समय, जलते या डूबते को बचाते समय, रोगी की शुश्रूषा करते समय कुछ देर के लिए उसके साथ तन्मयता हो जाती है। 'मैं' 'पर' का भाव तिरोहित हो जाता है। उस समय अपने 'स्व' की एक झलक मिल जाती है। 'मैं' 'तू' के कृत्रिम भेदों के परे जो अपना सर्वात्मक, शुद्ध स्वरूप है, उसका साक्षात्कार हो जाता है। जो जितने ही बड़े क्षेत्र के साथ तन्मयता प्राप्त कर सकेगा, उसको आनन्द और स्वरूप-दर्शन की उतनी ही उपलब्धि होगी। हमारी सुविधा और चरित्र-निर्माण के लिए यह तो नहीं हो सकता कि लोग आये दिन डूबा और जला करें या भूख-प्यास से तड़पा करें, परन्तु सेवा के अवसरों की कमी भी नहीं होती। सेवा करने में भाव यह न होना चाहिए कि मैं इसका उपकार कर रहा हूँ, वरन् यह कि इसकी बड़ी कृपा है जो मेरी तुच्छ सेवा स्वीकार कर रहा है। यह भी याद रहे कि सेवा केवल मनुष्य की नहीं, जीव मात्र की करनी है। पशु-पक्षी, कीट-पतंग के भी स्वत्व होते हैं, उनका भी आदर करना है।

चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है। काव्य, चित्र, संगीत आदि का जिस समय रस मिला करता है उस समय भी शरीर और इन्द्रियों के बन्धन ढीले पड़ गये होते हैं और चित्त आध्यात्मिक जगत् में खिंच जाता है। यही बात प्रकृति के निरीक्षण से भी होती है। प्रकृति का उपयोग निकृष्ट कोटि के काव्य में कामोद्दीपन के लिए किया जाता है, परन्तु वह शान्त रस का भी उद्दीपन करता है। अध्यापक का कर्त्तव्य है कि छात्र में सौन्दर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न करे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सौन्दर्य-प्रेम भी निष्काम होता है। जहाँ तक यह भाव रहता है कि मैं इसका अमुक प्रकार से प्रयोग करूँ, वहाँ तक उसके सौन्दर्य की अनुभूति नहीं होती। सौन्दर्य के प्रत्यक्ष का स्वरूप तो यह है कि द्रष्टा अपने को भूलकर तन्मय हो जाय।

कहने का तात्पर्य यह है कि छात्र के चरित्र को इस प्रकार विकास देना है कि वह 'मैं' 'तू' के ऊपर उठ सके। जहाँ तक उपयोग का भाव रहेगा, वहाँ तक साम्य की आकांक्षा होगी। वह वस्तु मेरी होकर रहे—इसी में संघर्ष और कलह होता है। परन्तु सेवा और सुकृत में संघर्ष नहीं हो सकता। हम, तुम, सौ आदमी सच बोलें—धर्माचरण करें, उपासना करें, लोगों के दुःख निवारण करें, इसमें कोई झगड़ा नहीं है। परन्तु इस वस्तु को मैं लूँ या तुम, यह झगड़े का विषय हो सकता है, क्योंकि एक

वस्तु का उपयोग एक समय में प्रायः एक ही मनुष्य कर सकता है। गाना हो रहा हो, आकाश में तारे खिले हों, फूलों के सुवास से लदी समीर बह रही हो, इनके सुख को युगपत् हजारों व्यक्ति ले सकते हैं। काव्यपाठ से मुझको आनन्द होता है वह आपके आनन्द को कम नहीं करता। इसलिए प्राचीन आचार्यों ने धर्म की दीक्षा दी थी। आज भी अध्यापक को चाहे उसका विषय गणित हो या भूगोल, इतिहास हो या तर्कशास्त्र, अपने शिष्यों में धर्म की प्रवृत्ति उत्पन्न करनी चाहिए। धर्म का तात्पर्य पूजा-पाठ नहीं है। धर्म उन सब कामों की समष्टि का नाम है जो कल्याणकारी है। अपना कल्याण समाज के कल्याण से पृथक् नहीं हो सकता। मनुष्य के बहुत से ऐसे गुण हैं जिनका विकास समाज में ही रहकर होता है और बहुत से ऐसे भोग और सुख हैं जो समाज में प्राप्त हो सकते हैं। इसलिए समाज को ध्यान में रखकर ही धर्म का आदेश होता है, परन्तु हमारे समाज में केवल मनुष्य नहीं हैं। हम जिस समाज के अंग हैं उसमें देव भी हैं, पशु भी हैं, मनुष्य भी। इन सबका हम पर प्रभाव पड़ता है, सबका हमारे ऊपर ऋण है, इसलिए सबके प्रति हमारा कर्त्तव्य है। हमको इस प्रकार रहना है कि हमारे पूर्वज संस्कृति का जो प्रकाश हमारे लिए छोड़ गये हैं उनका लोप न होने पाये—हमारे पीछे आनेवालों तक वह पहुँच जाय। इसलिए हमारे कर्त्तव्यों की डोर पितरों से लेकर वंशजों तक पहुँचती है। इसी विस्तृत कर्त्तव्य-राशि को धर्म कहते हैं। आज सब अपने-अपने अधिकारों के लिए लड़ते हैं। इस झगड़े का अन्त नहीं हो सकता। यदि धर्मबुद्धि जगायी जाय और सब अपने-अपने कर्त्तव्यों में तत्पर हो जायँ तो विवाद की जड़ ही कट जाय और सबको अपने उचित अधिकार स्वतः प्राप्त हो जायँ, और लोग हमारे साथ कैसा व्यवहार करते हैं—इसकी ओर कम और हम खुद औरों के साथ कैसा आचरण करें—इसकी ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

परन्तु इस बुद्धि की जड़ तभी दृढ़ हो सकती है, जब चित्त में सत्य के लिए निर्बाध प्रेम हो। सभी शास्त्र इस प्रेम को उत्पन्न कर सकते हैं, पर शर्त यह है कि ज्ञान औषध की घूँट की भाँति ऊपर से न पिला दिया गया हो। सत्य को धारण करने के लिए अनुसंधान और आलोचना की बुद्धि का उद्‌बोधन होना चाहिए। वह बुद्धि निर्भयता के वातावरण में ही पनप सकती है। अध्यापक को यथाशक्य यह वातावरण उत्पन्न करना है।

इससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि अध्यापक को अपने छात्र में कैसा चरित्र विकसित करने का प्रयत्न करना चाहिए। अच्छे उपाध्याय के निकट पढ़ा हुआ स्नातक सत्य का प्रेमी और खोजी होगा। उसके चित्त में जिज्ञासा-ज्ञान का आदर होगा और हृदय में नम्रता, अनसूया, प्राणिमात्र के लिए सौहार्द। वह तपस्वी, संयमी और परिश्रमी होगा। सौन्दर्य का उपासक होगा और हर प्रकार के अन्याय, अत्याचार और कदाचार का निर्मम विरोधी होगा। धर्म और त्याग उसके जीवन की प्रबल प्रेरक शक्तियाँ होंगी। उसका सदैव यह प्रयत्न होगा कि यह पृथिवी अधिक सभ्य और संस्कृत हो, समाज अधिक उन्नत हो। इसका तात्पर्य यह नहीं कि सब संन्यासी होंगे। गृहस्थ पर धर्म का भार संन्यासी से कम नहीं होता। व्यापार, शासन, कुटुम्ब के क्षेत्रों में भी धर्म का स्थान है। यह भी दावा नहीं किया जा सकता कि इन लोगों में राग-द्वेष का नितान्त अभाव हो जायेगा, कोई दुराचारी होगा ही नहीं। अध्यापक और समाज प्रयत्न-मात्र कर सकते हैं। इस प्रयत्न का इतना परिणाम तो निःसंदेह होगा कि बहुत से लोग ठीक राह पर लग जायेंगे और अपने पुरुषार्थ को पहचानने लगेंगे। पथभ्रष्ट भी होंगे, गिरेंगे भी, पर अपनी भूलों पर आप ही पश्चात्ताप करेंगे और इन गलतियों की सीढ़ी बनाकर आत्मोन्नति करेंगे। भूल करना बुरा नहीं है, भूल को भूल न समझना ही बड़ा दुर्भाग्य है।

यह मानी हुई बात है कि अकेला अध्यापक ऐसा मनोभाव नहीं उत्पन्न कर सकता। उसको सफलता तभी मिल सकती है जब समाज उसकी सहायता करे। जिस प्रदेश में कलह मचा रहता हो, जिस समाज में गरीब-अमीर, ऊँच-नीच की विषमता पुकार-पुकार कर द्वंद्व और प्रतियोगिता को प्रोत्साहन दे रही हो, जिस राष्ट्र की नीति परस्वत्वापहरण और शोषण पर खड़ी हो उसके अध्यापक भला क्या करें। जिन घरों में दाल-रोटी का ठिकाना न हो, पिता मद्यप और माता स्वैरिणी हो, माँ-बाप में मार-पीट, गाली-गलौज मची रहती हो, उसके बच्चों को पालने ही में मानस-विष दे दिया जाता है। तंग गलियों और गंदे घरों में रहनेवाले, जो छोटे वय से अश्लीलता और अभद्रता में ही पले हैं, सौन्दर्य को जल्दी नहीं समझ पाते। ऐसी दशा में अध्यापक को दोष देना अन्याय है। फिर भी अध्यापक परिस्थितियों को दोष देकर बैठा नहीं रह सकता। उसको तो अपना कर्त्तव्य-पालन करना ही है, सफलता कम हो या अधिक।

साधारणतः शिक्षक योगी नहीं होता, पर उसका भाव वही होना चाहिए जो किसी योगी का अपने शिष्य के प्रति होता है—अनेक शरीरों में भ्रमते हुए आज इसने नर देह पायी है और मेरे पास छात्र रूप में आया है। यदि मैं इसको ठीक मार्ग पर लगा सका, इसके चरित्र के यथोचित विकास प्राप्त करने में बल जुटा सका, तो समाज का भला होगा और इसका न केवल ऐहिक वरन् आमुष्मिक कल्याण होगा। यदि इसे आगे शरीर धारण करना भी पड़ा तो वह जन्म इस जन्म से ऊँचे होंगे। इस समय वह बात-बात में परिस्थितियों से अभिभूत हो जाता है। इसकी स्वतन्त्र आत्मा प्रतिक्षण अपने बन्धनों को तोड़ना चाहती है, पर ऐसा कर नहीं पाती। यदि इसकी बुद्धि को शुद्ध किया जाय और क्षुद्र वासनाओं से ऊपर उठाया जाय, तो आत्मा परिस्थितियों पर विजय पाने में समर्थ होने लगेगी और इसको अपने ज्ञान-शक्ति आनन्दमय स्वरूप का आभास मिलने लगेगा। इस प्रकार वह अपने परम पुरुषार्थ को सिद्ध करने का अधिकारी बन सकेगा। इस भावना से जो अध्यापक प्रेरित होगा वह अपने शिष्य के कामों को उसी दृष्टि से देखेगा जिससे बड़ा भाई अपने घुटने के बल चलनेवाले छोटे भाई की चेष्टाओं को देखता है। उसकी भूलों को तो ठीक करना ही होगा परन्तु सहानुभूति और प्रेम के साथ।

यह आदर्श बहुत ऊँचा है, पर अध्यापक का पद भी कम ऊँचा नहीं है। जो वेतन का लोलुप है और वेतन की मात्रा के अनुसार ही काम करना चाहता है उसके लिए इसमें जगह नहीं है। अध्यापक का जो कर्त्तव्य है उसका मूल्य रुपयों में नहीं आँका जा सकता। किसी समय जो शिक्षक होता था, वही धर्म-गुरु और पुरोहित भी होता था और जो बड़ा विद्वान् और तपस्वी होता था, वही इस भार को उठाया करता था। शिष्य को ब्रह्म-विद्या का पात्र और यजमान को दिव्यलोकों का अधिकारी बनाना सबका काम नहीं है। आज न वह धर्म-गुरु रहे न पुरोहित। पर क्या हम शिक्षक भी इसीलिए कर्त्तव्यच्युत हो जायँ? हमको अपने सामने वही आदर्श रखना चाहिए और अपने को उस दायित्व का बोझ उठाने योग्य बनाने का निरन्तर अथक प्रयत्न करना चाहिए।

**—डॉ० सम्पूर्णानन्द**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

**(क)** पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है, पर दर्शन का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वह थोड़े से विद्यार्थियों का पाठ्य विषय मात्र नहीं है। प्रत्येक समाज को एक दार्शनिक मत स्वीकार करना होगा। उसी के आधार पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक और कौटुम्बिक व्यवस्था का व्यूह खड़ा होगा। जो समाज अपने वैयक्तिक और सामूहिक जीवन को केवल प्रतीयमान उपयोगिता के आधार पर चलाना चाहेगा उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। एक विभाग के आदर्श दूसरे विभाग के आदर्श से टकरायेंगे।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पुरुषार्थ किस प्रकार का विषय है?

(iv) पुरुषार्थ और दर्शन का सम्बन्ध किससे है?

(v) प्रत्येक समाज को दार्शनिक मत क्यों स्वीकार करना चाहिए?

**( ख )** आत्मा अजर और अमर है। उसमें अनन्त ज्ञान, शक्ति और आनन्द का भण्डार है। अकेले ज्ञान कहना भी पर्याप्त हो सकता है क्योंकि जहाँ ज्ञान होता है वहाँ शक्ति होती है, और जहाँ ज्ञान और शक्ति होते हैं वहाँ आनन्द भी होता है। परन्तु अविद्यावशात् वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। इसी से अपने को अल्पज्ञ पाता है। अल्पज्ञता के साथ-साथ शक्तिमत्ता आती है और इसका परिणाम दुःख होता है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आत्मा को क्या माना गया है?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश में किसका वर्णन किया गया है?

(v) इस गद्यांश में आनन्द की कुंजी किसे बताया गया है?

**( ग )** आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है। योगाभ्यास सिखाने का प्रबंध राज्य नहीं कर सकता, न पाठशाला का अध्यापक ही इसका दायित्व ले सकता है। जो इस विद्या का खोजी होगा वह अपने लिए गुरु ढूँढ़ लेगा। परन्तु इतना किया जा सकता है– और यही समाज और अध्यापक का कर्त्तव्य है कि व्यक्ति के अधिकारी बनने में सहायता दी जाय, अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जाय।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन क्या है?

(iv) समाज और अध्यापक का क्या कर्त्तव्य है?

(v) उपर्युक्त गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

**( घ )** यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास डाले। एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाय और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाय। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना, मैत्री और दुःख देखकर दुःखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों यह भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष की कमी होती है निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) गद्यांश के अनुसार अध्यापक का प्रमुख कर्त्तव्य क्या है?

(iv) आत्मसाक्षात्कार की कुंजी क्या है?

(v) गद्यांश के अनुसार करुणा क्या है?

**( ङ )** चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है। काव्य, चित्र, संगीत आदि का जिस समय रस मिला करता है उस समय भी शरीर और इन्द्रियों के बन्धन ढीले पड़ गये होते हैं और चित्त आध्यात्मिक जगत् में खिंच जाता है। यही बात प्रकृति के निरीक्षण से भी होती है। प्रकृति का उपयोग निकृष्ट कोटि के काव्य में कामोद्दीपन के लिए किया जाता है, परन्तु वह शान्त रस का भी उद्दीपन करता है। अध्यापक का कर्त्तव्य है कि छात्र में सौन्दर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न करे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सौन्दर्य-प्रेम भी निष्काम होता है। जहाँ तक यह भाव रहता है कि मैं इसका अमुक प्रकार से प्रयोग करूँ, वहाँ तक उसके सौन्दर्य की अनुभूति नहीं होती। सौन्दर्य के प्रत्यक्ष का स्वरूप तो यह है कि द्रष्टा अपने को भूलकर तन्मय हो जाय।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत अवतरण के अनुसार अध्यापक का क्या कर्त्तव्य है?
(iv) गद्यांश के अनुसार कला को किसका साधन बताया गया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में किसके महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है?

## ➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'शिक्षा का उद्देश्य' पाठ का सारांश लिखिए।
2. डॉ० सम्पूर्णानन्द की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. डॉ० सम्पूर्णानन्द की जीवनी बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
4. डॉ० सम्पूर्णानन्द का साहित्यिक परिचय दीजिए।
5. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है।
   (ख) एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है।
   (ग) जहाँ ज्ञान होता है, वहाँ शक्ति होती है।
   (घ) आत्मा अजर-अमर है।
   (ङ) पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है।
   (च) दर्शन का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है।
   (छ) भूल करना बुरा नहीं है, भूल को भूल न समझना ही बड़ा दुर्भाग्य है।
   (ज) निष्कामिता की कुंजी यह है कि अपना ख़्याल कम और दूसरों का अधिक किया जाय।
   (झ) चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है।

## ➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "मनुष्य को पुरुषार्थ की सिद्धि के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है", इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं?
2. लेखक के विचार से मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ क्या है?
3. शिक्षा किस प्रकार चरित्र-निर्माण में सहायक होती है? अध्यापकों को अपने छात्रों में किन-किन गुणों का विकास करना चाहिए?
4. 'धर्म' की व्यापकता को लेखक ने किस प्रकार स्पष्ट किया है?
5. पठित निबन्ध के आधार पर शिक्षा के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
6. हमारी सामाजिक दशा का शिक्षक और विद्यार्थी पर क्या प्रभाव पड़ता है?
7. शिक्षक को किन आदर्शों की सिद्धि के लिए निरन्तर जागरूक रहना चाहिए?
8. 'शिक्षा का उद्देश्य' पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि आदर्श शिक्षक में क्या गुण होने चाहिए?
9. आधुनिक युग में शिक्षा का क्या उद्देश्य है, इस सन्दर्भ में डॉ० सम्पूर्णानन्दजी का दृष्टिकोण स्पष्ट कीजिए।
10. 'शिक्षा का उद्देश्य' नामक पाठ की मुख्य विशेषताएँ बताइए।
11. 'शिक्षा का उद्देश्य' निबन्ध का सार अपने शब्दों में लिखिए।
12. 'शिक्षा का उद्देश्य' नामक निबन्ध में सम्पूर्णानन्द ने किन बिन्दुओं पर अधिक जोर दिया है? संक्षेप में लिखिए।

●●●

# 6 राय कृष्णदास

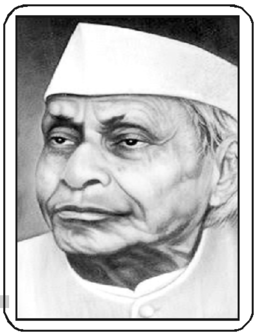

राय कृष्णदास का जन्म काशी के प्रसिद्ध राय परिवार में सन् 1892 ई० में हुआ था। यह परिवार कला, संस्कृति और साहित्य-प्रेम के लिए विख्यात रहा है। भारतेन्दु परिवार से सम्बन्धित होने के कारण राय साहब के पिता राय प्रह्लाददास में अटूट हिन्दी-प्रेम था। इस प्रकार राय साहब को हिन्दी-प्रेम पैतृक-दाय के रूप में प्राप्त हुआ है। राय साहब की स्कूली शिक्षा बहुत स्वल्प हुई, पर इनमें उत्कट ज्ञान-लिप्सा थी। इन्होंने स्वतंत्र रूप से हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी भाषाओं का अध्ययन किया और इनमें अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। सन् 1980 ई० में भारत सरकार ने इन्हें 'पद्म-भूषण' अलंकरण से सम्मानित किया और सन् 1980 ई० में ही इनका निधन हो गया।

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1892 ई०।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ० प्र०)।
- **उपनाम**—नेही।
- **पिता**—राय प्रह्लाददास।
- **रुचि**—चित्रकला, मूर्तिकला एवं पुरातत्त्व।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—घर पर ही।
- **लेखन-विधा**—कविता, कहानी, गद्य काव्य, निबन्ध, कला सम्बन्धी रचनाएँ, अनूदित रचनाएँ।
- **भाषा**—संस्कृत शब्दों के साथ, उर्दू के व्यावहारिक शब्दों का प्रयोग।
- **शैली**—भावात्मक, चित्रात्मक, गवेषणात्मक, आलंकारिक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—भावुक, ब्रजरज, अनाख्या, सुधांशु, साधना, छायापथ।
- **उपाधि**—पद्म भूषण।
- **मृत्यु**—सन् 1980 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—इन्हें गद्यगीत विधा का प्रथम रचनाकार माना जाता है।

राय साहब की साहित्यिक रुचि के विकास में काशी का तत्कालीन वातावरण भी बहुत दूर तक प्रेरक रहा है। साहित्यिक गतिविधियों के कारण बहुत प्रारम्भ में ही इनकी घनिष्ठता जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त, रामचन्द्र शुक्ल आदि प्रमुख कवियों-आलोचकों से हो गयी। कुछ समय बाद ये काशी नागरी प्रचारिणी सभा के कार्यक्रमों में भी प्रमुख रूप से हाथ बँटाने लगे। भारतीय कला-आन्दोलन में भी राय साहब का अप्रतिम स्थान रहा है। इन्होंने 'भारत कला भवन' नामक एक विशाल संग्रहालय की स्थापना की थी जो अब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का एक विभाग है। इस संग्रहालय की गणना संसार के प्रमुख संग्रहालयों में की जाती है। इन्होंने भारतीय कलाओं का प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत किया है। भारत की चित्रकला तथा भारतीय मूर्तिकला इनके प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। प्राचीन भारतीय भूगोल एवं पौराणिक वंशावली पर इन्होंने विद्वत्तापूर्ण शोध निबंध प्रस्तुत किये हैं।

राय साहब ने परम्परागत ब्रजभाषा में कविताएँ लिखी हैं, जो **'ब्रजरज'** में संगृहीत हैं। इनके **'भावुक'** नामक खड़ीबोली काव्य-संग्रह पर छायावाद का स्पष्ट प्रभाव है। राय साहब हिन्दी साहित्य में अपने गद्य-गीतों के लिए प्रसिद्ध हैं। इनके गद्य-गीतों के संग्रह **'साधना'** और **'छायापथ'** के नाम से प्रकाशित हैं। **'संलाप'** और **'प्रवाल'** में इनके संवाद

शैली के निबंध संगृहीत हैं। इनकी कहानियाँ **'अनाख्या', 'सुधांशु'** और **'आँखों की थाह'** नामक संग्रहों में संकलित हैं। इन्होंने खलील जिब्रान के 'दि मैड मैन' का **'पगला'** नाम से हिन्दी में सुन्दर अनुवाद किया है।

राय कृष्णदास जी की प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं–

**कविता-संग्रह**—खड़ीबोली में 'भावुक' तथा ब्रजभाषा में 'ब्रजरज'।

**कहानी-संग्रह**—'अनाख्या', 'सुधांशु', 'आँखों की थाह'।

**कला-सम्बन्धी**—'भारतीय मूर्तिकला', 'भारत की चित्रकला'।

**गद्य-काव्य**—'साधना', 'छायापथ', 'संलाप', 'प्रवाल'।

**अनूदित**—'दि मैड मैन' का 'पगला' नाम से हिन्दी रूपांतर।

कोमल भावनाओं को सजीव शब्द में प्रकट करना राय साहब की गद्य-शैली की प्रमुख विशेषता है। इनकी गद्य-शैली भावात्मक, सांकेतिक और कवित्वपूर्ण है। इन्होंने हिन्दी गद्य को एक नया आयाम प्रदान करके अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। हिन्दी में गद्य-गीत की विधा का प्रवर्तन राय साहब ही ने किया। आधुनिक युग को गद्य का युग कहा जाता है, जिसकी विशेषता यह है कि गद्य ने अपनी शक्ति के द्वारा पद्य को भी आत्मसात् कर लिया है। वास्तव में पद्य व गद्य को पूर्णतः पृथक् नहीं किया जा सकता। इसका प्रमाण हमें इनके गद्य-गीतों में मिलता है। इन गीतों में पद्य की तरह तुक तो नहीं है परन्तु लय और संगीत पूर्णतः विद्यमान है। शब्द-चयन, वाक्य-विन्यास और अलंकारों के प्रयोग ने इन गद्य-गीतों को भव्यता प्रदान कर दी है। आत्मा और प्रकृति के सौन्दर्य का प्रकाश इन गद्य-गीतों में बिखरा हुआ दिखलायी पड़ता है। ये गीत सरल, सुगम और आकार में लघु हैं। काव्य की जटिलता से ये दूर हैं। इन्हें भले ही गाया न जा सके, पर गुनगुनाया जा सकता है।

राय कृष्णदास अपने गद्य-काव्य की मधुर एवं रमणीय शैली द्वारा पर्याप्त कीर्ति अर्जित कर चुके हैं। 'साधना' के निबंधों में जीवन और परमात्मा के बीच की क्रीड़ाओं के रेखांकन में राय साहब को अभूतपूर्व सफलता मिली है। इन निबंधों में मनमोहक ढंग से प्रिय और प्रिया की आँखमिचौनी के सजीव चित्र प्रस्तुत हुए हैं।

राय साहब की भाषा-शैली कवित्वपूर्ण होते हुए भी सहज और सरल है। न तो उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का आग्रह है और न ही बोलचाल के सामान्य शब्दों की उपेक्षा। इसी प्रकार इनके वाक्य-विन्यास में भी कोई जटिलता नहीं है। कोमल भावनाओं को सजीव शब्दों में प्रकट कर देना राय साहब की गद्य-शैली की प्रमुख विशेषता है। इनकी गद्य-शैली भावात्मक, सांकेतिक और कवित्वपूर्ण है। इन्होंने संस्कृत शब्दों के साथ-साथ उर्दू के व्यावहारिक शब्दों का भी प्रयोग किया है। प्रान्तीय और ग्रामीण शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। अलंकरण का प्रयोग सहज रूप में हुआ है, किसी बनावट के साथ नहीं। मीरा के गीतों के समान भावुक हृदय की सहज अनुभूतियाँ इनके गीतों में प्रकट हुई हैं।

प्रस्तुत **'आनन्द की खोज, पागल पथिक'**, गद्य-गीत में यह बताया गया है कि आनन्द का स्रोत अपने अन्दर ही विद्यमान है। प्रायः लोग आनन्द की खोज वस्तुजगत् में करते हैं। उनकी यह खोज पता नहीं कितने जन्मों से चल रही है। लेकिन एक पल के लिए भी मनुष्य यदि अपने भीतर निहार ले तो निश्चित रूप से उसे आनन्द के अक्षय स्रोत का पता लग जायेगा। मनुष्य अशेष सृष्टि के साथ ज्यों ही आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर लेता है, त्यों ही उसे अपने सही स्वरूप का बोध हो जाता है। इस संसार का प्रत्येक व्यक्ति एक भ्रांत पथिक है। वह अशेष सुख और आनन्द की तलाश में है। उसकी तलाश निरंतर जारी है। लेकिन वह पूर्ण सुख और आनन्द की खोज के लिए जिस कल्पना लोक के स्वप्न रचता है, उस रचना का मुख्याधार यही वस्तुजगत् है। हम वस्तुजगत् के आधार पर ही कल्पना करते हैं। हमारी कल्पना समाज एवं बाह्य परिवेश से निरपेक्ष नहीं होती। अतः दूसरे लोक की कल्पना करते समय इस जगत् से कट जाना भ्रांति है। सच्चाई तो यह है कि इस जागृति के भीतर ही हमें पूर्ण सुख और आनन्द की प्राप्ति हो सकती है, लेकिन इसके लिए हमें अपने सही स्वरूप को जानने का प्रयास अवश्य करना पड़ेगा।

राय कृष्णदास भारतीय कला के पारखी और साहित्य के प्रमुख साधक थे। आप गद्य-गीत के लेखक के रूप में विख्यात हैं। इन्हें गद्य गीत विधा का पहला रचनाकार माना जाता है। भारतीय साहित्य में इन्हें हिन्दी के प्रतिनिधि कहानीकार के रूप में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है।

●●●

# आनन्द की खोज पागल पथिक

## ● आनन्द की खोज

आनन्द की खोज में मैं कहाँ-कहाँ न फिरा? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चन्द्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।

मेरे सिर पर कोई हाथ रखनेवाला न था और मैं रह-रहकर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते भी मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत् के बाहर हूँ?

मुझे यह सोचकर अचरज होता कि आनन्द-कन्द-मूलक इस विश्व-वल्लरी में मुझे आनन्द का अणुमात्र भी न मिला। हा! आनन्द के बदले में रुदन और शोच परिपोषित कर रहा था।

अन्त को मुझसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा—आनन्द, आनन्द, कहाँ है आनन्द! हाय! तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने मेरे शब्दों को दुहराया, किन्तु मेरी आन्तरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव मुझे अतीव आश्चर्य हुआ। पर इसी समय ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण सजीव होकर मुझसे पूछ उठा—क्या कभी अपने-आप में भी देखा था? मैं अवाक् था।

सच तो यह है। जब मैंने—उसी विश्व के एक अंश—अपने-आप तक में न खोजा था तब मैंने यह कैसे कहा कि समस्त सृष्टि छान डाली? जो वस्तु मैं ही अपने-आपको न दे सका वह भला दूसरे मुझे क्यों देने लगे?

परन्तु, यहाँ तो जो वस्तु मैं अपने-आपको न दे सका था वह मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से मिली, जो मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से न मिली थी वह अपने-आप में मिली!

## ● पागल पथिक

'पथिक'—मैंने पूछा—"तुम कहाँ से चले हो और कहाँ जा रहे हो? तुम्हारी यात्रा तो लम्बी मालूम पड़ती है क्योंकि तुम्हारा तन सूखकर काँटा हो रहा है और उस पर का फटा वस्त्र तुम्हारे विदीर्ण हृदय की साख भर रहा है। श्रम से हारकर तुम्हारे पैर फूट-फूटकर रक्त के आँसू रो रहे हैं! यह बात क्या है?"

उसने दैन्य से दाँत निकालकर उत्तर दिया—"बन्धु मैं अपना मार्ग भूल गया हूँ। इस संसार के बाहर एक ऐसा स्थान है जहाँ इसके सुख और विलास की समस्त सामग्रियाँ तो अपने पूर्ण सौन्दर्य में मिलती हैं पर दुःख का वहाँ लेश भी नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे उसका ठीक पता बताया था और मैं चला भी था उसी पर। किन्तु मुझसे न जाने कौन-सी भूल हो गयी है कि मैं घूम-फिरकर बार-बार यहीं आ जाता हूँ। जो हो, मैं कभी न कभी वहाँ अवश्य पहुँचूँगा।"

मैंने सखेद कहा, "हाय! तुम भारी भूल में पड़े हो। भला इस विश्व-मण्डल के बाहर तुम जा कैसे सकते हो? तुम जहाँ से चलोगे फिर वहीं पहुँच जाओगे। यह तो घटाकार न है। फिर, तुम उस स्थान की कल्पना तो इसी आदर्श पर करते हो और जब तुम्हें इस मूल ही में सुख नहीं मिलता तब अनुकरण में उसे कैसे पाओगे? मित्र, यहाँ तो सुख के साथ दुःख लगा है और उससे सुख को अलग कर लेने के उद्योग में भी एक सुख है। जब उसे ही नहीं पा सकते तब वहाँ का निरन्तर सुख तो तुम्हें एक अपरिवर्तनशील बोझ, नहीं यातना हो जायेगी। अरे, बिना नव्यता के सुख कहाँ? तुम्हारी यह कल्पना और संकल्प नितान्त मिथ्या और निस्सार है, और इसे छोड़ने ही में तुम्हें इतना सुख मिलेगा कि तुम छक जाओगे।"

परन्तु उसने मेरी एक न सुनी और अपनी राम-पोटरिया उठाकर चलता बना।

**—राय कृष्णदास**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

**(क)** आनन्द की खोज में मैं कहाँ-कहाँ न फिरा? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चन्द्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।
मेरे सिर पर कोई हाथ रखनेवाला न था और मैं रह-रहकर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते भी मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत् के बाहर हूँ?
मुझे यह सोचकर अचरज होता है कि आनन्द-कन्द-मूलक इस विश्व-वल्लरी में मुझे आनन्द का अणुमात्र भी न मिला। हा! आनन्द के बदले में रुदन और शोच परिपोषित कर रहा था।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पथिक ने आनन्द की खोज में कहाँ-कहाँ भ्रमण किया?
(iv) पथिक ने अपनी तुलना किससे की है?
(v) पथिक को आनन्द के बदले क्या प्राप्त हुआ?

**(ख)** अन्त को मुझसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा– आनन्द, आनन्द, कहाँ है आनन्द! हाय! तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने मेरे शब्दों को दुहराया, किन्तु मेरी आन्तरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव मुझे अतीव आश्चर्य हुआ। पर इसी समय ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण सजीव होकर मुझसे पूछ उठा– क्या कभी अपने-आप में भी देखा था? मैं अवाक् था।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक किस बात से अवाक् था?
(iv) लेखक को इस बात का पता कैसे चला कि आनन्द का स्रोत कहाँ है?
(v) किसकी खोज में पथिक ने अपना जीवन व्यर्थ गँवाया?

**(ग)** 'पथिक'– मैंने पूछा– "तुम कहाँ से चले हो और कहाँ जा रहे हो? तुम्हारी यात्रा तो लम्बी मालूम पड़ती है क्योंकि तुम्हारा तन सूखकर काँटा हो रहा है और उस पर का फटा वस्त्र तुम्हारे विदीर्ण हृदय की साख भर रहा है। श्रम से हारकर तुम्हारे पैर फूट-फूटकर रक्त के आँसू रो रहे हैं! यह बात क्या है?"

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पथिक किसका प्रतीक है?
(iv) पथिक का शरीर सूखकर क्यों काँटा हो रहा है?
(v) पथिक की यात्रा का गन्तव्य क्या है?

(घ) उसने दैन्य से दाँत निकालकर उत्तर दिया– "बन्धु मैं अपना मार्ग भूल गया हूँ। इस संसार के बाहर एक ऐसा स्थान है जहाँ इसके सुख और विलास की समस्त सामग्रियाँ तो अपने पूर्ण सौन्दर्य में मिलती हैं पर दुःख का वहाँ लेश भी नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे उसका ठीक पता बताया था और मैं चला भी था उसी पर। किन्तु मुझसे न जाने कौन-सी भूल हो गयी है कि मैं घूम-फिरकर बार-बार यहीं आ जाता हूँ। जो हो, मैं कभी न कभी वहाँ अवश्य पहुँचूँगा।"

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पथिक कौन-सा मार्ग भूल गया है?

(iv) पथिक घूम-फिरकर बार-बार कहाँ आ जाता है?

(v) वह स्थान कौन-सा है जहाँ दुःख का नामोनिशान नहीं है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राय कृष्णदास की जीवनी एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. राय कृष्णदास का साहित्यिक परिचय दीजिए।
3. राय कृष्णदास की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
4. 'आनन्द की खोज, पागल पथिक' नामक पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
5. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) 'आनन्द के बदले रुदन और शोच को परिपोषित कर रहा था।'
   (ख) 'परंतु, यहाँ तो जो वस्तु मैं अपने-आपको न दे सका था, वह मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से मिली, जो मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से न मिली थी वह अपने-आप से मिली!'
   (ग) 'यहाँ तो सुख के साथ दुःख लगा है और उससे सुख को अलग कर लेने के उद्योग में भी एक सुख है।'
   (घ) 'अरे, बिना नव्यता के सुख कहाँ?'
6. गद्य-गीत से आप क्या समझते हैं? एक श्रेष्ठ गद्य-गीत की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लेखक को आनन्द की अनुभूति किस स्थिति में हुई?
2. पागल पथिक का गन्तव्य क्या था? क्या कोई पथिक इस विश्व-मण्डल के बाहर जा सकता है?
3. 'आनन्द की खोज' और 'पागल पथिक' उपशीर्षकों के मूल प्रतिपाद्य पर विचार कीजिए।
4. प्रस्तुत निबंध के आधार पर राय कृष्णदास की भाषा-शैली की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
5. गद्य-गीत और कविता में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

●●●

# 7 राहुल सांकृत्यायन

राहुलजी का जन्म 9 अप्रैल, सन् 1893 ई0 को रविवार के दिन अपने नाना पं0 रामशरण पाठक के यहाँ पन्दहा ग्राम, जिला आजमगढ़ में हुआ था। इनके पिता पं0 गोवर्धन पाण्डे एक कट्टर धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। वे पन्दहा से दस मील दूर कनैला ग्राम में रहते थे। राहुल जी का बचपन का नाम केदारनाथ पाण्डे था। 'सांकृत्य' इनका गोत्र था। इसी के आधार पर सांकृत्यायन कहलाये। बौद्ध धर्म में आस्था होने पर अपना नाम बदल कर महात्मा बुद्ध के पुत्र के नाम पर 'राहुल' रख लिया। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा रानी की सराय और फिर निजामाबाद में हुई, जहाँ से इन्होंने सन् 1907 ई0 में उर्दू में मिडिल पास किया। इसके उपरान्त इन्होंने संस्कृत की उच्च शिक्षा वाराणसी में प्राप्त की। यहीं इनमें पालि-साहित्य के प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ। इनके पिता की इच्छा थी कि आगे भी पढ़ें, पर इनका मन कहीं और था। इन्हें घर का बन्धन अच्छा न लगा। घूमना चाहते थे। इनकी इस प्रवृत्ति के कई कारण थे। इनके नाना पं0 रामशरण पाठक सेना में सिपाही थे और उस जीवन में दक्षिण भारत की खूब यात्रा की थी। इस विगत जीवन की कहानियाँ वे बालक केदार को सुनाया करते थे, जिसने इनके मन में यात्रा-प्रेम को अंकुरित कर दिया। इसके बाद इन्होंने कक्षा 3 की उर्दू पाठ्य-पुस्तक (मौलवी इस्माइल की उर्दू की चौथी किताब) पढ़ी थी, जिसमें एक शेर इस प्रकार था—

*सैर कर दुनिया की गाफ़िल जिन्दगानी फिर कहाँ?*
*जिन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?*

इस शेर के सन्देश ने बालक केदार के मन पर गहरा प्रभाव डाला। इसके द्वारा इनके घुमक्कड़ी जीवन का सूत्रपात हुआ और आगे चलकर इन्होंने बाकायदा घुमक्कड़ों के निर्देशन के लिए 'घुमक्कड़-शास्त्र' ही लिख डाला। राहुल जी के यात्रा-विवरण अत्यन्त रोचक, रोमांचक, शिक्षाप्रद, उत्साहवर्धक और ज्ञान-प्रेरक हैं। इन्होंने पाँच-पाँच बार तिब्बत, लंका और सोवियत भूमि की यात्रा की थी। छह मास यूरोप में रहे थे। एशिया को इन्होंने जैसे छान ही डाला था। कोरिया, मंचूरिया,

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—9 अप्रैल, सन् 1893 ई0।
- **जन्म-स्थान**—पन्दहा (आजमगढ़), उ0 प्र0।
- **वास्तविक नाम**—केदारनाथ पाण्डे।
- **पिता**—गोवर्धन पाण्डे।
- **माता**—कुलवन्ती।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—रानी की सराय तथा निजामाबाद।
- **लेखन-विधा**—कहानी, उपन्यास, यात्रा-साहित्य, आत्मकथा, यात्रा वृत्तान्त, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, कोशग्रन्थ।
- **भाषा**—संस्कृतनिष्ठ हिन्दी भाषा, पारिभाषिक, संयत।
- **शैली**—वर्णनात्मक, विवेचनात्मक, व्यंग्यात्मक, उद्धरण।
- **प्रमुख रचनाएँ**—वोल्गा से गंगा, मेरी लद्दाख यात्रा, मेरी तिब्बत यात्रा, सतमी के बच्चे।
- **मृत्यु**—14 अप्रैल, सन् 1963 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—आधुनिक हिन्दी साहित्य के समर्थ रचनाकारों में इन्हें शामिल किया जाता है।

ईरान, अफगानिस्तान, जापान, नेपाल, केदारनाथ-बदरीनाथ, कुमायूँ-गढ़वाल, केरल-कर्नाटक, कश्मीर-लद्दाख आदि के पर्यटन को इनकी दिग्विजय कहने में कोई अत्युक्ति न होगी। कुल मिलाकर राहुल जी की पाठशाला और विश्वविद्यालय यही घुमक्कड़ी जीवन था। 14 अप्रैल, सन् 1963 ई0 को भारत के इस पर्यटनप्रिय साहित्यकार का निधन हो गया।

हिन्दी के महान् उपासक राहुल जी ने हिन्दी भाषा और साहित्य की बहुमुखी सेवा की है। इनका अध्ययन जितना विशाल था, साहित्य-सृजन भी उतना ही विराट् था। ये छत्तीस एशियाई और यूरोपीय भाषाओं के ज्ञाता थे और लगभग 150 ग्रंथों का प्रणयन करके इन्होंने राष्ट्रभाषा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। अपनी 'जीवन-यात्रा' में राहुल जी ने स्वीकार किया है कि उनका साहित्यिक जीवन सन् 1927 ई0 से प्रारम्भ होता है। वास्तविक बात तो यह है कि इन्होंने किशोरावस्था पार करने के बाद ही लिखना शुरू कर दिया था। इन्होंने धर्म, भाषा, यात्रा, दर्शन, इतिहास, पुराण, राजनीति आदि विषयों पर अधिकार के साथ लिखा है। हिन्दी-भाषा और साहित्य के क्षेत्र में इन्होंने 'अपभ्रंश काव्य साहित्य', 'दक्खिनी हिन्दी साहित्य' आदि श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत की थीं। इनकी रचनाओं में एक ओर प्राचीनता के प्रति मोह और इतिहास के प्रति गौरव का भाव विद्यमान है, तो दूसरी ओर इनकी अनेक रचनाएँ स्थानीय रंग लेकर मनमोहक चित्र उपस्थित करती हैं।

राहुल सांकृत्यायन को सबसे अधिक सफलता यात्रा-साहित्य लिखने में मिली है। जीवन-यात्रा लिखने के प्रयोजन को ये इन शब्दों में प्रकट करते हैं, *''अपनी लेखनी द्वारा मैंने उस जगत् की भिन्न-भिन्न गतियों और विचित्रताओं को अंकित करने की कोशिश की है, जिसका अनुमान हमारी तीसरी पीढ़ी बहुत मुश्किल से करेगी।''* सचमुच जीवन-यात्रा में स्वयं राहुल जी के बारे में कम मगर दूसरों के बारे में, परिवेश के बारे में अधिक जानकारी मिलती है।

राहुल जी की मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

**कहानी**—'वोल्गा से गंगा', 'कनैल की कथा', 'सतमी के बच्चे', 'बहुरंगी मधुपुरी'।

**उपन्यास**—'जय यौधेय', 'जीने के लिए', 'मधुर स्वप्न', 'सिंह सेनापति', 'विस्तृत यात्री', 'सप्त सिन्धु'।

**आत्मकथा**—'मेरी जीवन यात्रा'।

**कोशग्रन्थ**—'शासन शब्दकोश', 'राष्ट्रभाषा', 'तिब्बती-हिन्दी कोश'।

**जीवनी साहित्य**—'नए भारत के नए नेता', 'सरदार पृथ्वी सिंह, 'असहयोग के मेरे साथी', 'वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली'।

**दर्शन**—'दर्शन–दिग्दर्शन', 'बौद्ध-दर्शन' आदि।

**देशदर्शन**—'सोवियत भूमि', 'किन्नरदेश', 'हिमालय प्रदेश', 'जौनसार-देहरादून' आदि।

**यात्रा-साहित्य**—'मेरी तिब्बत यात्रा', 'मेरी लद्दाख यात्रा', 'यात्रा के पन्ने', 'रूस में पच्चीस मास', 'घुमक्कड़-शास्त्र' आदि।

**विज्ञान**—'विश्व की रूपरेखा'।

**साहित्य और इतिहास**—'आदि हिन्दी की कहानियाँ', 'दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा', 'मध्य एशिया का इतिहास', 'इस्लाम धर्म की रूपरेखा' आदि।

राहुल जी की भाषा-शैली में कोई बनावट या साहित्य-रचना का प्रयास नहीं है। सामान्यतः संस्कृतनिष्ठ परन्तु सरल और परिष्कृत भाषा को ही इन्होंने अपनाया है। न तो संस्कृत के क्लिष्ट या समासयुक्त शब्दों को इन्होंने प्रश्रय दिया है और न ही लम्बे-लम्बे वाक्यों को। संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए भी ये जनसाधारण की भाषा लिखने के पक्षपाती थे। इनकी शैली का रूप विषय और परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है। इनकी शैली के वर्णनात्मक, विवेचनात्मक, व्यंग्यात्मक, उद्बोधन एवं उद्धरण आदि रूप देखने को मिलते हैं।

प्रस्तुत लेख '**अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा**' राहुल जी की पुस्तक 'घुमक्कड़-शास्त्र' से लिया गया है। इस लेख में इन्होंने घुमक्कड़ी की सीमा किसी शास्त्र से कम नहीं मानी है और उसका गौरव शास्त्र के समान ही स्थापित किया है। इन्होंने आदिम काल से लेकर आधुनिक काल तक के अनेक महापुरुषों की सफलता का रहस्य घुमक्कड़ी में सिद्ध किया है।

●●●

# अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा

संस्कृत से ग्रंथ को शुरू करने के लिए पाठकों को रोष नहीं होना चाहिए। आखिर हम शास्त्र लिखने जा रहे हैं, फिर शास्त्र की परिपाटी को मानना ही पड़ेगा। शास्त्रों में जिज्ञासा ऐसी चीज के लिए होनी बतलायी गयी है, जो कि श्रेष्ठ तथा व्यक्ति और समाज के लिए परम हितकारी हो। व्यास ने अपने शास्त्र में ब्रह्म को सर्वश्रेष्ठ मानकर उसे जिज्ञासा का विषय बनाया। व्यास-शिष्य जैमिनी ने धर्म को श्रेष्ठ माना। पुराने ऋषियों से मतभेद रखना हमारे लिए पाप की वस्तु नहीं है, आखिर छह शास्त्रों के रचयिता छह आस्तिक ऋषियों में भी आधों ने ब्रह्म को धता बता दी है। मेरी समझ में दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुमक्कड़ी। घुमक्कड़ से बढ़कर व्यक्ति और समाज का कोई हितकारी नहीं हो सकता। कहा जाता है, ब्रह्मा को सृष्टि करने के लिए न प्रत्यक्ष प्रमाण सहायक हो सकता है, न अनुमान ही। हाँ, दुनिया के धारण की बात तो निश्चय ही न ब्रह्म के ऊपर है, न विष्णु और न शंकर ही के ऊपर। दुनिया दुःख में हो चाहे सुख में, सभी समय यदि सहारा पाती है तो घुमक्कड़ों की ही ओर से। प्राकृतिक आदिम मनुष्य परम घुमक्कड़ था। खेती, बागवानी तथा घर-द्वार से मुक्त वह आकाश के पक्षियों की भाँति पृथिवी पर सदा विचरण करता था, जाड़े में यदि इस जगह था तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।

आधुनिक काल में घुमक्कड़ों के काम की बात कहने की आवश्यकता है, क्योंकि लोगों ने घुमक्कड़ों की कृतियों को चुरा के उन्हें गला-फाड़कर अपने नाम से प्रकाशित किया, जिससे दुनिया जानने लगी कि वस्तुतः तेली के कोल्हू के बैल ही दुनिया में सब-कुछ करते हैं। आधुनिक विज्ञान में चार्ल्स डारविन का स्थान बहुत ऊँचा है। उसने प्राणियों की उत्पत्ति और मानव-वंश के विकास पर ही अद्वितीय खोज नहीं की, बल्कि कहना चाहिए कि सभी विज्ञानों को डारविन के प्रकाश में दिशा बदलनी पड़ी। लेकिन, क्या डारविन अपने महान् आविष्कारों को कर सकता था, यदि उसने घुमक्कड़ी का व्रत न लिया होता?

मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदारु के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौन्दर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है। अधिक-से-अधिक यात्रा-पाठकों के लिए यही कहा जा सकता है कि दूसरे धन्धों की अपेक्षा उन्हें थोड़ा आलोक मिल जाता है और साथ ही ऐसी प्रेरणा भी मिल सकती है जो स्थायी नहीं तो कुछ दिनों के लिए तो उन्हें घुमक्कड़ बना ही सकती है। घुमक्कड़ क्यों दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है? इसीलिए कि उसी ने आज की दुनिया को बनाया है। यदि आदिम पुरुष एक जगह नदी या तालाब के किनारे गर्म मुल्क में पड़े रहते तो वह दुनिया को आगे नहीं ले जा सकते थे। आदमी की घुमक्कड़ी ने बहुत बार खून की नदियाँ बहायी हैं, इसमें संदेह नहीं, और घुमक्कड़ों से हम हरगिज नहीं चाहेंगे कि वे खून के रास्ते को पकड़ें, किन्तु घुमक्कड़ों के काफले न आते-जाते, तो सुस्त मानव जातियाँ सो जातीं और पशु से ऊपर नहीं उठ पातीं। आदिम घुमक्कड़ों में से आर्यों, शकों, हूणों ने क्या-क्या किया, अपने खूनी पंजों द्वारा मानवता के पथ को किस तरह प्रशस्त किया, इसे इतिहास में हम उतना स्पष्ट वर्णित नहीं पाते, किन्तु मंगोल घुमक्कड़ों की करामातों को तो हम अच्छी तरह जानते हैं। बारूद, तोप, कागज, छापाखाना, दिग्दर्शक, चश्मा यही चीजें थीं, जिन्होंने पश्चिम में विज्ञान युग का आरम्भ कराया और इन चीजों को वहाँ ले जानेवाले मंगोल घुमक्कड़ थे।

कोलम्बस और वास्कोडिगामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गयी, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतनी अक्ल नहीं आयी कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियाइयों के लिए आस्ट्रेलिया

का द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी। क्यों भारत और चीन, आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गये? इसलिए कि घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

हाँ, मैं इसे भूलना ही कहूँगा, क्योंकि किसी समय भारत और चीन ने बड़े-बड़े नामी घुमक्कड़ पैदा किये। वे भारतीय घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने दक्षिण पूरब में लंका, बर्मा, मलाया, यवनद्वीप, स्याम, कम्बोज, चम्पा, बोर्नियो और सैलीबीज ही नहीं, फिलीपाइन तक धावा मारा था और एक समय तो जान पड़ा कि न्यूजीलैण्ड और आस्ट्रेलिया भी बृहत्तर भारत के अंग बननेवाले हैं। लेकिन कूप-मंडूकता तेरा सत्यानाश हो। इस देश के बुद्धुओं ने उपदेश करना शुरू किया कि समुन्दर के खारे पानी और हिन्दू धर्म में बड़ा बैर है, उसे छूने मात्र से वह नमक की पुतली की तरह गल जायेगा। इतना बतला देने पर क्या कहने की आवश्यकता है कि समाज के कल्याण के लिए घुमक्कड़ धर्म कितनी आवश्यक चीज है? जिस जाति या देश ने इस धर्म को अपनाया, वह चारों फलों का भागी हुआ और जिसने उसे दुराया, उसको नरक में भी ठिकाना नहीं। आखिर घुमक्कड़ धर्म को भूलने के कारण ही हम सात शताब्दियों तक धक्का खाते रहे, ऐरे-गैरे जो भी आये, हमें चार लात लगाते गये।

शायद किसी को संदेह हो मैंने इस शास्त्र में जो युक्तियाँ दी हैं, वे सभी तो लौकिक तथा शास्त्र-अग्राह्य हैं। अच्छा तो धर्म प्रमाण लीजिए। दुनिया के अधिकांश धर्मनायक घुमक्कड़ रहे। धर्माचार्यों में आचार-विचार, बुद्धि और तर्क तथा सहृदयता में सर्वश्रेष्ठ बुद्ध घुमक्कड़-राज थे। यद्यपि वह भारत से बाहर नहीं गये लेकिन वर्ष के तीन मासों को छोड़कर एक जगह रहना वह पाप समझते थे। वह अपने-आप ही घुमक्कड़ नहीं थे, बल्कि आरम्भ में ही अपने शिष्यों से उन्होंने कहा था—'चरथ भिक्खवे, 'चरथ' जिसका अर्थ है—'भिक्षुओं! घुमक्कड़ी करो।' बुद्ध के भिक्षुओं ने अपने गुरु की शिक्षा को कितना माना, क्या इसे बताने की आवश्यकता है? क्या उन्होंने पश्चिम में मकदूनिया तथा मिस्र से पूरब में जापान तक, उत्तर में मंगोलिया से लेकर दक्षिण में बाली और बाँका के द्वीपों तक रौंदकर रख नहीं दिया? जिस बृहत्तर भारत के लिए हरेक भारतीय को उचित अभिमान है, क्या उसका निर्माण इन्हीं घुमक्कड़ों की चरण-धूलि ने नहीं किया? केवल बुद्ध ने ही अपनी घुमक्कड़ी से प्रेरणा नहीं दी, बल्कि घुमक्कड़ों का इतना जोर बुद्ध से एक-दो शताब्दियों पूर्व भी था, जिसके कारण ही बुद्ध जैसे घुमक्कड़-राज इस देश में पैदा हो सके। उस वक्त पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ तक जम्बू-वृक्ष की शाखा ले, अपनी प्रखर प्रतिभा का जौहर दिखातीं, बाद में कूप-मंडूकों को पराजित करती सारे भारत में मुक्त होकर विचरण करती थीं।

कई-कई महिलाएँ पूछती हैं—क्या स्त्रियाँ भी घुमक्कड़ी कर सकती हैं, क्या उनको भी इस महाव्रत की दीक्षा लेनी चाहिए? इसके बारे में तो अलग अध्याय ही लिखा जानेवाला है, किन्तु यहाँ इतना कह देना है कि घुमक्कड़ धर्म ब्राह्मण-धर्म जैसा संकुचित धर्म नहीं है जिसमें स्त्रियों के लिए स्थान न हो। स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं,जितना पुरुष। यदि वे जन्म सफल करके व्यक्ति और समाज के लिए कुछ करना चाहती हैं, तो उन्हें भी दोनों हाथों इस धर्म को स्वीकार करना चाहिए। घुमक्कड़ी धर्म छुड़ाने के लिए ही पुरुष ने बहुत से बंधन नारी के रास्ते लगाये हैं। बुद्ध ने सिर्फ पुरुषों के लिए घुमक्कड़ी करने का आदेश नहीं दिया, बल्कि स्त्रियों के लिए भी उनका यही उपदेश था।

भारत के प्राचीन धर्मों में जैन धर्म भी है। जैन धर्म के प्रतिष्ठापक श्रवण महावीर कौन थे? वह भी घुमक्कड़-राज थे। घुमक्कड़ धर्म के आचरण में छोटी से बड़ी तक सभी बाधाओं और व्याधियों को उन्होंने त्याग दिया था—घर-द्वार और नारी-संतान ही नहीं, वस्त्र का भी वर्जन कर दिया था। 'करतल भिक्षा तरुतल वास' तथा दिग्-अम्बर को उन्होंने इसलिए अपनाया था कि निर्द्वन्द्व विचरण में कोई बाधा न रहे। श्वेताम्बर-बन्धु दिगम्बर कहने के लिए नाराज न हों। वस्तुतः हमारे वैज्ञानिक महान् घुमक्कड़ कुछ बातों में दिगम्बरों की कल्पना के अनुसार थे और कुछ बातों में श्वेताम्बरों के उल्लेख के अनुसार। लेकिन इसमें तो दोनों संप्रदायों और बाहर के मर्मज्ञ भी सहमत हैं कि भगवान् महावीर दूसरी, तीसरी नहीं, प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ थे। वह आजीवन घूमते ही रहे। वैशाली में जन्म लेकर विचरण करते ही पावा में उन्होंने अपना शरीर छोड़ा। बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दम्भी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बँधे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलों से कहलवाते हैं, लेकिन मैं तो कहूँगा, घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बना जाता तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

बुद्ध और महावीर जैसे महापुरुषों की घुमक्कड़ी की बात से यह नहीं मान लेना होगा कि दूसरे लोग ईश्वर के भरोसे गुफा या कोठरी में बैठकर सारी सिद्धियाँ पा गये या पा जाते हैं, यदि ऐसा होता तो शंकराचार्य, जो साक्षात् ब्रह्मस्वरूप थे, क्यों भारत के चारों कोनों की खाक छानते फिरे? शंकर को शंकर किसी ब्रह्मा ने नहीं बनाया उन्हें बड़ा बनानेवाला था यही घुमक्कड़ी धर्म। शंकर बराबर घूमते रहे—आज केरल देश में थे तो कुछ ही महीनों बाद मिथिला में और अगले साल काश्मीर या हिमालय के किसी दूसरे भाग में। शंकर तरुणाई में ही शिवलोक सिधार गये, किन्तु थोड़े से जीवन में उन्होंने सिर्फ तीन भाष्य ही नहीं लिखे बल्कि अपने आचरण से अनुयायियों को वह घुमक्कड़ी का पाठ पढ़ा गये कि आज भी उनके पालन करनेवाले सैकड़ों मिलते हैं। वास्कोडिगामा के भारत पहुँचने से बहुत पहले शंकर के शिष्य मास्को और यूरोप तक पहुँचे थे। उनके साहसी शिष्य सिर्फ भारत के चारों धामों से ही संतुष्ट नहीं थे बल्कि उनमें से कितनों ने जाकर वाकू (रूस) में धूनी रमायी। एक ने पर्यटन करते हुए वोल्गा तट पर निज्जी नोवोग्राद के महामेले को देखा।

रामानुज, मध्वाचार्य और वैष्णवाचार्य के अनुयायी मुझे क्षमा करें, यदि मैं कहूँ कि उन्होंने भारत में कूप-मंडूकता के प्रचार में बड़ी सरगर्मी दिखायी। भला हो रामानन्द और चैतन्य का, जिन्होंने कि पंक के पंकज बनकर आदिकाल से चले आते महान् घुमक्कड़ धर्म की फिर से प्रतिष्ठापना की, जिसके फलस्वरूप प्रथम श्रेणी के तो नहीं, किन्तु द्वितीय श्रेणी के बहुत से घुमक्कड़ उनमें पैदा हुए। ये बेचारे वाकू की बड़ी ज्वालामई तक कैसे जाते, उनके लिए तो मानसरोवर तक पहुँचना भी मुश्किल था। अपने हाथ से खाना बनाना, मांस अंडे से छू जाने पर भी धर्म का चला जाना, हाड़-तोड़ सर्दी के कारण हर लघुशंका के बाद बर्फीले पानी से हाथ धोना और हर महाशंका के बाद स्नान करना तो यमराज को निमंत्रण देना होता, इसीलिए बेचारे फूँक-फूँककर ही घुमक्कड़ी कर सकते थे। इसमें किसे उज्र हो सकता है कि शैव हो या वैष्णव, वेदान्ती हो या सैद्धान्ती, सभी को आगे बढ़ाया केवल घुमक्कड़-धर्म ने।

महान् घुमक्कड़-धर्म बौद्ध धर्म का भारत से लुप्त होना क्या था कि तब कूप-मंडूकता का हमारे देश में बोलबाला हो गया। सात शताब्दियाँ बीत गयीं और इन सातों शताब्दियों में दासता और परतंत्रता हमारे देश में पैर तोड़कर बैठ गयी। यह कोई आकस्मिक बात नहीं थी, समाज के अगुओं ने चाहे कितना ही कूप-मंडूक बनाना चाहा, लेकिन इस देश में ऐसे माई के लाल जब तक पैदा होते रहे, जिन्होंने कर्म-पथ की ओर संकेत किया। हमारे इतिहास में गुरु नानक का समय दूर का नहीं है, लेकिन अपने समय के वह महान् घुमक्कड़ थे। उन्होंने भारत भ्रमण को ही पर्याप्त नहीं समझा, ईरान और अरब तक का धावा मारा। घुमक्कड़ी किसी बड़े योग से कम सिद्धिदायिनी नहीं है और निर्भीक तो वह एक नम्बर का बना देती है।

दूसरी शताब्दियों की बात छोड़िए अभी शताब्दी भी नहीं बीती, इस देश से स्वामी दयानन्द को बिदा हुए। स्वामी दयानन्द को ऋषि दयानन्द किसने बनाया? घुमक्कड़ी धर्म ने। उन्होंने भारत के अधिक भागों का भ्रमण किया, पुस्तक लिखते, शास्त्रार्थ करते वह बराबर भ्रमण करते रहे। शास्त्रों को पढ़कर काशी के बड़े-बड़े पंडित महामंडूक बनने में ही सफल होते रहे, इसलिए दयानन्द को मुक्तबुद्धि और तर्कप्रधान बनाने का कारण शास्त्रों से अलग कहीं ढूँढ़ना होगा, और वह है उनका निरन्तर घुमक्कड़ी धर्म का सेवन। उन्होंने समुद्र-यात्रा करने, द्वीप-द्वीपान्तरों में जाने के विरुद्ध जितनी थोथी दलीलें दी जाती थीं सबको चिंदी-चिंदी करके उड़ा दिया और बताया कि मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं है, वह जंगम प्राणी है। चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होने का अधिकारी नहीं।

बीसवीं शताब्दी के भारतीय घुमक्कड़ों की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं। इतना लिखने से मालूम हो गया होगा कि संसार में यदि अनादि सनातन धर्म है तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित सम्प्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान् है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया।

इतना कहने के बाद कोई संदेह नहीं रह गया कि घुमक्कड़ धर्म से बढ़कर दुनिया में धर्म नहीं है। धर्म भी छोटी बात है, उसे घुमक्कड़ के साथ लगाना 'महिमा घटी समुद्र की रावण बसा पड़ोस' वाली बात होगी। घुमक्कड़ होना आदमी के लिए परम सौभाग्य की बात है। यह पंथ अपने अनुयायी को मरने के बाद किसी काल्पनिक स्वर्ग का प्रलोभन नहीं देता, इसके लिए तो कह सकते हैं "क्या खूब सौदा नकद है इस हाथ ले उस हाथ दे।" घुमक्कड़ी वही कर सकता है, जो निश्चिन्त है। किन साधनों से सम्पन्न होकर आदमी घुमक्कड़ बनने का अधिकारी हो सकता है, यह आगे बतलाया जायेगा, किन्तु घुमक्कड़ी के लिए चिन्ताहीन होना आवश्यक है, और चिन्ताहीन होने के लिए घुमक्कड़ी भी आवश्यक है। दोनों का अन्योन्याश्रय होना दूषण

नहीं भूषण है। घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है, आखिर चिन्ताहीनता तो सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं, लेकिन उसे उसी तरह समझिए, जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगायेगा? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं—उसी तरह जैसे काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है। जाति का भविष्य घुमक्कड़ी पर निर्भर करता है। इसलिए मैं कहूँगा कि हरेक तरुण और तरुणी को घुमक्कड़ी व्रत ग्रहण करना चाहिए, इसके विरुद्ध दिये जानेवाले सारे प्रमाणों को झूठ और व्यर्थ का समझना चाहिए। यदि माता-पिता विरोध करते हैं तो समझना चाहिए कि वह भी प्रह्लाद के माता-पिता के नवीन संस्करण हैं। यदि हितू-बान्धव बाधा उपस्थित करते हैं तो समझना चाहिए कि वे दिवांध हैं। यदि धर्माचार्य कुछ उलटा-सीधा तर्क देते हैं तो समझ लेना चाहिए कि इन्हीं ढोंगियों ने संसार को कभी सरल और सच्चे पथ पर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राजसी नेता अपनी कानूनी रुकावटें डालते हैं तो हजारों बार के तजुर्बा की हुई बात है कि महानदी के वेग की तरह घुमक्कड़ की गति को रोकनेवाला दुनिया में कोई पैदा नहीं हुआ। बड़े-बड़े कठोर पहरेवाली राज्य सीमाओं को घुमक्कड़ों ने आँख में धूल-झोंककर पार कर लिया। मैंने स्वयं एक से अधिक बार किया है। पहली तिब्बत यात्रा में अंग्रेजों, नेपाल राज्य और तिब्बत के सीमा-रक्षकों की आँख में धूल झोंककर जाना पड़ा था।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि यदि कोई तरुणी-तरुण घुमक्कड़ धर्म की दीक्षा लेता है—यह मैं अवश्य कहूँगा कि यह दीक्षा वही ले सकता है जिसमें बहुत भारी मात्रा में हर तरह का साहस है—तो उसे किसी की बात नहीं सुननी चाहिए, न माता के आँसू बहने की परवाह करनी चाहिए, न पिता के भय और उदास होने की, न भूल से विवाह कर लायी अपनी पत्नी के रोने-धोने की और न किसी तरुणी को अभागे पति के कलपने की। बस, शंकराचार्य के शब्दों में यही समझना चाहिए—"निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः" और मेरे गुरु कपोतराज के वचन को अपना पथ प्रदर्शक बनाना चाहिए—

**"सैर कर दुनिया की गाफ़िल, जिन्दगानी फिर कहाँ?**
**जिन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?"**

—इस्माइल मेरठी

दुनिया में मनुष्य जन्म एक ही बार होता है और जवानी भी केवल एक ही बार आती है। साहसी मनस्वी तरुण-तरुणियों को इस अवसर से हाथ नहीं धोना चाहिए। कमर बाँध लो भावी घुमक्कड़ो! संसार तुम्हारे स्वागत के लिए बेकरार है।

**—राहुल सांकृत्यायन**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

**(क)** मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदारु के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौन्दर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) यात्रा सम्बन्धी साहित्य के बारे में राहुल जी के क्या विचार हैं?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

(v) प्रस्तुत अवतरण में राहुल जी ने क्या सिद्ध करने का प्रयास किया है?

**(ख)** कोलम्बस और वास्कोडिगामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गयी, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतनी अक्ल नहीं आयी कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियाइयों के लिए आस्ट्रेलिया का द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी। क्यों भारत और चीन, आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गये? इसलिए कि घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता किसने खोला?

(iv) चीन और भारत अपना झण्डा गाड़ने में कहाँ असफल रहे?

(v) भारत और चीन किस धर्म से विमुख थे?

**(ग)** बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दम्भी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बंधे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलों से कहलवाते हैं, लेकिन मैं तो कहूँगा, घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बना जाता तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) 'तेली के बैल' बनने से क्या आशय है?

(iv) आजकल के साधुओं के सम्बन्ध में लेखक के क्या विचार हैं?

(v) लेखक ने किस बात को अहंकार का सूचक माना है?

**(घ)** संसार में यदि अनादि सनातन धर्म है तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित सम्प्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान् है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) घुमक्कड़ धर्म को किस धर्म की संज्ञा दी गयी है?

(iv) कुछ धर्मों ने यश और महिमा किस कारण से प्राप्त की?

(v) प्रभु ईसा मसीह एवं उनके अनुयायियों के सन्दर्भ में लेखक के क्या विचार हैं?

**(ङ)** घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है, आखिर चिन्ताहीनता तो सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं, लेकिन उसे उसी तरह समझिए, जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगायेगा? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं– उसी तरह जैसी काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक के अनुसार संसार का सबसे बड़ा सुख क्या है?
(iv) सुख का सबसे बड़ा रूप क्या है?
(v) घुमक्कड़ी में किस तरह का कष्ट होता है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राहुल सांकृत्यायन के जीवन-परिचय एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. राहुल सांकृत्यायन का साहित्यिक परिचय लिखिए।
3. राहुल सांकृत्यायन का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
4. 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा' पाठ का सारांश लिखिए।
5. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) पुस्तकें घुमक्कड़ी का पूरा रस प्रदान नहीं कर पातीं।
(ख) समुद्र के खारे पानी और हिन्दू धर्म में बड़ा बैर है।
(ग) व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है।
(घ) महिमा घटी समुद्र की रावण बसा पड़ोस।
(ङ) मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं, वह जंगम प्राणी है।
(च) घुमक्कड़ी किसी बड़े योग से कम सिद्धि-दायिनी नहीं है।
(छ) स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं, जितना पुरुष।
(ज) सैर कर दुनिया की गाफिल जिन्दगानी फिर कहाँ।
(झ) घुमक्कड़ दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है।
(ञ) चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होने का अधिकारी नहीं।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लेखक ने घुमक्कड़ी को 'शास्त्र' मानने के लिए क्या तर्क दिये हैं?
2. लेखक ने घुमक्कड़ को दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति क्यों कहा है?
3. "घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
4. 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा' पाठ के आधार पर घुमक्कड़ी का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
5. कुटिया या आश्रम बनाकर बैठनेवाले महात्माओं को लेखक ने 'तेली का बैल' क्यों कहा है?
6. एशिया के कूप-मंडूकों से लेखक का क्या आशय है? वे अमेरिका और आस्ट्रेलिया पर अपनी झंडी किस प्रकार गाड़ सकते थे?
7. ऋषि दयानन्द ने आधुनिक भारत की उन्नति में किस प्रकार भाग लिया?
8. आजकल आपको घुमक्कड़ी किन-किन रूपों में दिखायी पड़ती है?
9. लेखक ने घुमक्कड़ों में किन गुणों का होना आवश्यक माना है?
10. घुमक्कड़ी के लिए किन-किन साधनों की आवश्यकता होती है? संक्षेप में लिखिए।

●●●

# 8 रामवृक्ष बेनीपुरी

रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म सन् 1902 ई० में बिहार स्थित मुजफ्फरपुर जिले के बेनीपुर गाँव में हुआ था। इनके पिता श्री फूलवन्त सिंह एक साधारण किसान थे। बचपन में ही इनके माता-पिता का देहावसान हो गया और इनका लालन-पालन इनकी मौसी की देखरेख में हुआ। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा बेनीपुर में ही हुई। बाद में इनकी शिक्षा इनके ननिहाल में भी हुई। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के पूर्व ही सन् 1920 में इन्होंने अध्ययन छोड़ दिया और महात्मा गाँधी के नेतृत्व में प्रारम्भ हुए असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े। बाद में हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'विशारद' की परीक्षा उत्तीर्ण की। ये राष्ट्रसेवा के साथ-साथ साहित्य की भी साधना करते रहे। साहित्य की ओर इनकी रुचि 'रामचरितमानस' के अध्ययन से जागृत हुई। पन्द्रह वर्ष की आयु से ही ये पत्र-पत्रिकाओं में लिखने लगे थे। देश-सेवा के परिणामस्वरूप इनको अनेक वर्षों तक जेल की यातनाएँ भी सहनी पड़ीं। सन् 1968 में इनका निधन हो गया।

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1902 ई०।
- **जन्म-स्थान**—बेनीपुर, मुजफ्फरपुर, (बिहार)।
- **पिता**—फूलवन्त सिंह।
- **शिक्षा**—हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज से विशारद।
- **संपादन**—नई धारा, तरुण भारत आदि।
- **भाषा**—व्यावहारिक, लाक्षणिक, व्यंग्यात्मक हिन्दी।
- **शैली**—भावात्मक, शब्दचित्रात्मक, प्रतीकात्मक, वर्णनात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—गेहूँ और गुलाब, माटी की मूरतें, जंजीरें और दीवारें, पैरों में पंख बाँधकर, उड़ते चलें, मील के पत्थर।
- **मृत्यु**—सन् 1968 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में एक प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित।

बेनीपुरी जी के निबंध संस्मरणात्मक और भावात्मक हैं। भावुक हृदय के तीव्र उच्छ्‌वास की छाया इनके प्रायः सभी निबंधों में विद्यमान है। इन्होंने जो कुछ लिखा है वह स्वतंत्र भाव से लिखा है। ये एक राजनीतिक एवं समाजसेवी व्यक्ति थे। विधानसभा, सम्मेलन, किसान सभा, राष्ट्रीय आन्दोलन, विदेश-यात्रा, भाषा-आन्दोलन आदि के बीच में रमे रहते हुए भी इनका साहित्यकार व्यक्तित्व हिन्दी साहित्य को अनेक सुन्दर ग्रंथ दे गया है। इनकी अधिकांश रचनाएँ जेल में लिखी गयी हैं किन्तु इनका राजनीतिक व्यक्तित्व इनके साहित्यकार व्यक्तित्व को दबा नहीं सका। इनकी शैली की विशिष्टताएँ कई हैं जो इनके हर लेखन में मिलती हैं। बेनीपुरी का गद्य हिन्दी की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है, बातचीत के करीब है और कथ्य को सहज भाव से पाठकों की चेतना में उतार देता है।

बेनीपुरी जी ने उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, निबंध, रेखाचित्र आदि सभी गद्य-विधाओं पर अपनी कलम उठायी है। इनके कुछ प्रमुख ग्रंथ निम्नलिखित हैं :

**निबन्ध और रेखाचित्र**—'मशाल', 'गेहूँ और गुलाब', 'वन्दे वाणी विनायकौ', 'माटी की मूरतें', 'लालतारा' आदि।

**संस्मरण**—'मील के पत्थर', 'जंजीरें और दीवारें'।

**नाटक**—'अम्बपाली', 'सीता की माँ', 'रामराज्य'।

**उपन्यास**—'पतितों के देश में'।

**कहानी संग्रह**—'चिता के फूल'।

**जीवनी**—'जयप्रकाश नारायण', 'महाराणा प्रतापसिंह', 'कार्ल मार्क्स'।

**यात्रावृत्तान्त**—'उड़ते चलें', 'पैरों में पंख बाँधकर'।

**आलोचना**—'बिहारी सतसई की सुबोध टीका', 'विद्यापति पदावली'।

**पत्र-पत्रिकाएँ**—'तरुण भारती', 'युवक', 'हिमालय', 'नई धारा', 'कैदी', 'जनता', 'योगी', 'बालक', 'किसान-मित्र', 'चुन्नू-मुन्नू' आदि पत्र-पत्रिकाओं का कुशल संपादन। इनका संपूर्ण साहित्य 'बेनीपुरी ग्रंथावली' नाम से दस खण्डों में प्रकाशित है।

बेनीपुरी जी के सम्पूर्ण साहित्य को बेनीपुरी ग्रंथावली नाम से दस खण्डों में प्रकाशित कराने की योजना थी, जिसके कुछ खण्ड प्रकाशित हो सके। निबंधों और रेखाचित्रों के लिए इनकी ख्याति सर्वाधिक है। माटी की मूरत इनके श्रेष्ठ रेखाचित्रों का संग्रह है जिसमें बिहार के जन-जीवन को पहचानने के लिए अच्छी सामग्री है। कुल 12 रेखाचित्र हैं और सभी एक-से-एक बढ़कर हैं।

बेनीपुरी जी के गद्य-साहित्य में गहन अनुभूतियों एवं उच्च कल्पनाओं की स्पष्ट झाँकी मिलती है। भाषा में ओज है। इनकी खड़ीबोली में कुछ आंचलिक शब्द भी आ जाते हैं, किन्तु इन प्रांतीय शब्दों से भाषा के प्रवाह में कोई विघ्न नहीं उपस्थित होता। भाषा के तो ये 'जादूगर' माने जाते हैं। इनकी भाषा में संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू के प्रचलित शब्दों का प्रयोग हुआ है। भाषा को सजीव, सरल और प्रवाहमयी बनाने के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया है। इनकी रचनाओं में विषय के अनुरूप विविध शैलियों के दर्शन होते हैं। शैली में विविधता है। कहीं चित्रोपम शैली, कहीं डायरी शैली, कहीं नाटकीय शैली। किन्तु सर्वत्र भाषा में प्रवाह एवं ओज विद्यमान है। वाक्य छोटे होते हैं किन्तु भाव पाठकों को विभोर कर देते हैं।

बेनीपुरी जी बहुमुखी प्रतिभावाले लेखक हैं। इन्होंने गद्य की विभिन्न विधाओं को अपनाकर विपुल मात्रा में साहित्य की सृष्टि की। पत्रकारिता से ही इनकी साहित्य-साधना का प्रारम्भ हुआ। साहित्य-साधना और देशभक्ति दोनों ही इनके प्रिय विषय रहे हैं। इनकी रचनाओं में कहानी, उपन्यास, नाटक, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, यात्रावृत्तान्त, ललित लेख आदि के अच्छे उदाहरण मिल जाते हैं।

प्रस्तुत निबंध **'गेहूँ बनाम गुलाब'** इनके गेहूँ और गुलाब नामक ग्रंथ का पहला निबंध है। इसमें लेखक ने गेहूँ को आर्थिक और राजनीतिक प्रगति का द्योतक माना है तथा गुलाब को सांस्कृतिक प्रगति का। इसमें इन्होंने प्रतिपादित किया है कि राजनीतिक एवं आर्थिक प्रगति सदा एकांगी रहेगी और इसे पूर्ण बनाने के लिए सांस्कृतिक प्रगति की आवश्यकता होगी। मानव-संस्कृति के विकास के लिए साहित्यकारों एवं कलाकारों की भूमिका गुलाब की भूमिका है और इसका अपना स्थान है। गेहूँ और गुलाब में प्राचीन काल में समन्वय था, किन्तु आज आवश्यकता इस बात की है कि गेहूँ पर विजय प्राप्त की जाय।

●●●

# गेहूँ बनाम गुलाब

गेहूँ हम खाते हैं, गुलाब सूँघते हैं। एक से शरीर की पुष्टि होती है, दूसरे से हमारा मन तृप्त होता है।

गेहूँ बड़ा या गुलाब? हम क्या चाहते हैं—पुष्ट शरीर या तृप्त मानस? या पुष्ट शरीर पर तृप्त मानस।

जब मानव पृथ्वी पर आया, भूख लेकर। क्षुधा, क्षुधा; पिपासा, पिपासा। क्या खाये क्या पिये? माँ के स्तनों को निचोड़ा, वृक्षों को झकझोरा, कीट-पतंग, पशु-पक्षी—कुछ न छूट पाये उससे!

गेहूँ—उसकी भूख का काफला आज गेहूँ पर टूट पड़ा है। गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ!

मैदान जोते जा रहे हैं, बाग उजाड़े जा रहे हैं—गेहूँ के लिए।

बेचारा गुलाब—भरी जवानी में सिसकियाँ ले रहा है। शरीर की आवश्यकता ने मानसिक वृत्तियों को कहीं कोने में डाल रखा है, दबा रखा है।

किन्तु; चाहे कच्चा चरे, या पकाकर खाये—गेहूँ तक पशु और मानव में क्या अन्तर? मानव को मानव बनाया गुलाब ने! मानव, मानव तब बना, जब उसने शरीर की आवश्यकताओं पर मानसिक वृत्तियों को तरजीह दी।

यही नहीं, जब उसके पेट में भूख खाँव-खाँव कर रही थी, तब भी उसकी आँखें गुलाब पर टँगी थीं, टँकी थीं।

उसका प्रथम संगीत निकला, जब उसकी कामिनियाँ गेहूँ को ऊखल और चक्की में कूट-पीस रही थीं। पशुओं को मारकर, खाकर ही वह तृप्त नहीं हुआ, उनकी खाल का बनाया ढोल और उनकी सींग की बनायी तुरही। मछली मारने के लिए जब वह अपनी नाव में पतवार का पंख लगाकर जल पर उड़ा जा रहा था, तब उसके छप-छप में उसने ताल पाये, तराने छेड़े! बाँस से उसने लाठी ही नहीं बनायी, वंशी भी बजायी।

रात का काला घुप्प पर्दा दूर हुआ, तब वह उच्छ्वसित हुआ सिर्फ इसलिए नहीं कि अब पेट-पूजा की समिधा जुटाने में उसे सहूलियत मिलेगी; बल्कि वह आनन्द-विभोर हुआ ऊषा की लालिमा से, उगते सूरज की शनैः-शनैः प्रस्फुटित होनेवाली सुनहरी किरणों से, पृथिवी पर चमचम करते लक्ष-लक्ष ओस-कणों से! आसमान में जब बादल उमड़े, तब उसमें अपनी कृषि का आरोप करके ही वह प्रसन्न नहीं हुआ; उसके सौंदर्य-बोध ने उसके मनमोर को नाच उठने के लिए लाचार किया—इन्द्रधनुष ने उसके हृदय को भी इन्द्रधनुषी रंगों में रंग दिया।

मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर! पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानान्तर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किन्तु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। प्राचीन काल के उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।

जब तक मानव के जीवन में गेहूँ और गुलाब का संतुलन रहा, वह सुखी रहा, सानन्द रहा।

वह कमाता हुआ गाता था और गाता हुआ कमाता था। उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।

उसका साँवला दिन में गायें चराता था, रास रचाता था।

पृथिवी पर चलता हुआ वह आकाश को नहीं भूला था और जब आकाश पर उसकी नजरें गड़ी थीं, उसे याद था कि उसके पैर मिट्टी पर हैं।

किन्तु धीरे-धीरे यह संतुलन टूटा।

अब गेहूँ प्रतीक बन गया हड्डी तोड़नेवाले, उबालनेवाले, नारकीय यंत्रणाएँ देनेवाले श्रम का—उस श्रम का, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शान्त न कर सके।

और, गुलाब बन गया प्रतीक विलासिता का—भ्रष्टाचार का, गन्दगी और गलीज का! वह विलासिता—जो शरीर को नष्ट करती है और मानस को भी!

अब उसके साँवले ने हाथ में शंख और चक्र लिए। नतीजा—महाभारत और यदुवंशियों का सर्वनाश।

वह परम्परा चली आ रही है! आज चारों ओर महाभारत है, गृह-युद्ध है—सर्वनाश है, महानाश है!

गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में—दोनों अपने-अपने पालनकर्त्ताओं के भाग्य पर, दुर्भाग्य पर—!

चलो, पीछे मुड़ो! गेहूँ और गुलाब में हम फिर एक बार संतुलन स्थापित करें।

किन्तु मानव क्या पीछे मुड़ा है; मुड़ सकता है?

यह महायात्रा! आगे बढ़ता रहा है, आगे बढ़ता रहेगा!

और क्या नवीन संतुलन चिर-स्थायी हो सकेगा? क्या इतिहास फिर दुहरकर नहीं रहेगा?

नहीं, मानव को पीछे मोड़ने की चेष्टा न करो।

अब गुलाब और गेहूँ में फिर संतुलन लाने की चेष्टा में सिर खपाने की आवश्यकता नहीं।

अब गुलाब गेहूँ पर विजय प्राप्त करे।

गेहूँ पर गुलाब की विजय-चिर-विजय! अब नये मानव की यह नयी आकांक्षा हो!

क्या यह संभव है?

बिलकुल सोलह आने संभव है।

विज्ञान ने बता दिया है—यह गेहूँ क्या है? और उसने यह भी जता दिया है कि मानव में यह चिर-बुभुक्षा क्यों है?

गेहूँ का गेहूँत्व क्या है, हम जान गये हैं। यह गेहूँत्व उसमें आता कहाँ से है, हम से यह भी छिपा नहीं है।

पृथिवी और आकाश के कुछ तत्त्व एक विशेष प्रक्रिया से पौधों की बालियों में संगृहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं। उन्हीं तत्त्वों की कमी हमारे शरीर में भूख नाम पाती है!

क्यों पृथिवी की जुताई, कुड़ाई, गुड़ाई! क्यों आकाश की दुहाई! हम पृथिवी और आकाश से उन तत्त्वों को सीधे ग्रहण क्यों न करें?

यह तो अनहोनी बात—उटोपिया, फुटोपिया!

हाँ, यह अनहोनी बात, उटोपिया तब तक बनी रहेगी जब तक विज्ञान संहार-कांड के लिए ही आकाश-पाताल एक करता रहेगा। ज्योंही उसने जीवन की समस्याओं पर ध्यान दिया, एक हस्तामलकवत् सिद्ध होकर रहेगी!

और, विज्ञान को इस ओर आना है, नहीं तो मानव का क्या, सारे ब्रह्माण्ड का संहार निश्चित है!

विज्ञान धीरे-धीरे इस ओर कदम बढ़ा भी रहा है!

कम से कम इतना तो वह तुरंत कर ही देगा कि गेहूँ इतना पैदा हो कि जीवन की अन्य परमावश्यक वस्तुएँ—हवा, पानी की तरह—इफरात हो जायँ। बीज, खाद, सिंचाई-जुताई के ऐसे तरीके निकलते ही जा रहे हैं, जो गेहूँ की समस्या को हल कर दें।

प्रचुरता—शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले साधनों की प्रचुरता—की ओर आज का मानव प्रभावित हो रहा है।

* * * *

प्रचुरता?—एक प्रश्न चिह्न?

क्या प्रचुरता मानव को सुख और शांति दे सकती है?

'हमारा सोने का हिन्दुस्तान'—यह गीत गाइए; किन्तु यह न भूलिए कि यहाँ एक सोने की नगरी थी, जिसमें राक्षसता वास करती थी!

राक्षसता—जो रक्त पीती थी, अभक्ष्य खाती थी, जिसके अकाय शरीर थे, दस सिर थे, जो छह महीने सोती थी; जिसे दूसरे की बहू-बेटियों का उड़ा ले जाने में तनिक भी झिझक नहीं थी।

गेहूँ बड़ा प्रबल है—वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शान्त कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।

तो प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय?

अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज मनोविज्ञान दो उपाय बताता है—इंद्रियों के संयमन और वृत्तियों के उन्नयन का।

संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आये हैं। किन्तु इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने आये हैं—बड़े-बड़े तपस्वियों की लम्बी-लम्बी तपस्याएँ एक रम्भा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुसकान पर स्खलित हो गयीं।

आज भी देखिए, गाँधीजी के तीस वर्ष के उपदेशों और आदेशों पर चलनेवाले हम तपस्वी किस तरह दिन-दिन नीचे गिरते जा रहे हैं।

इसलिए उपाय एकमात्र है—वृत्तियों के उन्नयन का।

कामनाओं को स्थूल वासनाओं के क्षेत्र से ऊपर उठाकर सूक्ष्म भावनाओं की ओर प्रवृत्त कीजिए।

शरीर पर मानस की पूर्ण प्रभुता स्थापित हो—गेहूँ पर गुलाब की!

गेहूँ के बाद गुलाब—बीच में कोई दूसरा टिकाव नहीं, ठहराव नहीं।

* * * *

गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छायी है।

जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही है; राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!

गुलाब की दुनिया—मानस का संसार—सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगत् का नया लोक बसायेंगे।

जब गेहूँ से हमारा पिंड छूट जायगा और हम गुलाब की दुनिया में स्वच्छन्द विहार करेंगे।

गुलाब की दुनिया—रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया!

भौंरे नाच रहे, गूँज रहे, फलसुँघनी फुदक रही, चहक रही!

नृत्य, गीत—आनन्द, उछाह!

कहीं गन्दगी नहीं, कहीं कुरूपता नहीं! आँगन में गुलाब; खेतों में गुलाब! गालों पर गुलाब खिल रहे; आँखों से गुलाब झाँक रहा!

जब सारा मानव-जीवन रंगमय, सुगन्धमय, नृत्यमय, गीतमय बन जायगा? वह दिन कब आयगा?

वह आ रहा है—क्या आप देख नहीं रहे? कैसी आँखें हैं आपकी! शायद उन पर गेहूँ का मोटा पर्दा पड़ा हुआ है। पर्दे को हटाइए और देखिए वहाँ अलौकिक, स्वर्गिक दृश्य इसी लोक में, अपनी इस मिट्टी की पृथिवी पर हो!

'शौके दीदार अगर है, तो नजर पैदा कर।'

**—रामवृक्ष बेनीपुरी**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए—

**(क)** मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर। पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानान्तर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) मानव शरीर और पशु शरीर में क्या अंतर है?
(iv) मानव शरीर के प्रमुख तीन अंग कौन से हैं?
(v) गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

**(ख)** गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किन्तु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। प्राचीन काल के उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक के अनुसार मानव के लिए क्या आवश्यक है?
(iv) प्राचीनकाल से मानव के व्रत, उपवास एवं तपस्या करने का क्या प्रयोजन था?
(v) मनुष्य को गेहूँ की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

**(ग)** गेहूँ बड़ा प्रबल है– वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शान्त कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।
तो प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय?
अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज मनोविज्ञान दो उपाय बताता है– इंद्रियों के संयमन और वृत्तियों के उन्नयन का।
संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आये हैं। किन्तु इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने आये हैं–बड़े-बड़े तपस्वियों की लम्बी-लम्बी तपस्याएँ एक रम्भा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुसकान पर स्खलित हो गयीं।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गेहूँ को प्रबल क्यों कहा गया है?
(iv) अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए मनोविज्ञान ने कौन से उपाय बताये हैं?
(v) गद्यांश के अनुसार संयमन के कौन से दोष परिलक्षित होते हैं?

**(घ)** गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है– वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छायी है। जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही है; राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!
अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!
गुलाब की दुनिया–मानस का संसार–सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगत् का नया लोक बसायेंगे।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) गद्यांश के अनुसार अब कौन-सा युग आने वाला है? इस युग का संसार कैसा होगा?

(iv) लेखक ने गेहूँ और गुलाब को किसका प्रतीक माना है?

(v) किसकी दुनिया खत्म होने जा रही है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. रामवृक्ष बेनीपुरी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. इस पाठ का सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
3. रामवृक्ष बेनीपुरी की जीवनी एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
4. रामवृक्ष बेनीपुरी का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
5. रामवृक्ष बेनीपुरी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
6. निम्नांकित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—

   (क) मानव ने बाँस से लाठी ही नहीं बनायी वंशी भी बजायी।

   (ख) गुलाब की दुनिया–रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया।

   (ग) उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।

   (घ) शौके दीदार अगर है तो नजर पैदा कर!

   (ङ) गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप से हम सब पर छायी है।

   (च) गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में।

   (छ) मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. गेहूँ और गुलाब की आवश्यकता समाज को किस प्रकार से है?
2. 'गेहूँ बनाम गुलाब' नामक निबंध में गेहूँ व गुलाब किसके प्रतीक हैं?
3. 'मानव पशु से किस प्रकार श्रेष्ठ है'– समीक्षा कीजिए।
4. लेखक क्यों कहता है कि 'मानव को मानव बनाया गुलाब ने।'
5. गेहूँ और गुलाब में संतुलन टूटने पर क्या होता है?
6. गेहूँ पर गुलाब की प्रभुता का क्या तात्पर्य है?
7. लेखक के अनुसार गेहूँ पर विजय किस प्रकार पायी जा सकती है?
8. गुलाब को किस प्रकार की भावना का द्योतक बताया गया है?
9. विज्ञान मानव की लक्ष्य-प्राप्ति में किस प्रकार सहायक बन सकता है?
10. 'वृत्तियों के उन्नयन' से लेखक का क्या तात्पर्य है?
11. मानव के भविष्य के कैसे चित्र की कल्पना लेखक ने की है?
12. 'गेहूँ बनाम गुलाब' पाठ का मुख्य संदेश क्या है?
13. गुलाब की दुनिया का वर्णन लेखक ने किस प्रकार किया है? स्पष्ट कीजिए।
14. 'गेहूँ और गुलाब' के मूल भाव पर विचार कीजिए।
15. बेनीपुरी ने पशु और मानव में क्या अन्तर बताया है?

●●●

# 9 सड़क सुरक्षा

विश्व स्वास्थ्य संगठन के वर्ष 2008 के आँकड़ों के अनुसार अस्पतालों में भर्ती होने वाले और उनसे होने वाली मृत्यु का प्रमुख कारण सड़क दुर्घटना है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2011 में विश्व में सबसे अधिक 1,36,834 सड़क दुर्घटनाएँ भारत में हुईं, जिसमें दुपहिया वाहन 22 प्रतिशत, ट्रक 19 प्रतिशत, कार 10 प्रतिशत, टैम्पो/वैन 06 प्रतिशत, बस 09 प्रतिशत, पैदल चलने वाले 09 प्रतिशत तथा अन्य 10 प्रतिशत हैं।

सड़क दुर्घटनाओं को रोकने और सड़क सुरक्षा उपायों के प्रति आम नागरिकों को और अधिक जागरूक किये जाने की आवश्यकता है। विकसित देश न केवल सड़क सुरक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करते हैं वरन् वाहन सुरक्षा और सड़कों की आधारभूत संरचना पर भी ध्यान देते हैं।

वर्तमान में सड़क दुर्घटना से होने वाली चोट और मृत्यु बहुत सामान्य बात हो गई है। सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के वर्ष 2001 के आँकड़ों के अनुसार सड़क दुर्घटना में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो वर्ष 2011 में बढ़कर 24 प्रतिशत हो गयी है। वर्ष 2001 में प्रति 100 व्यक्तियों पर मरने वालों की संख्या 19.6 थी, जो वर्ष 2011 में बढ़कर प्रति 100 व्यक्तियों पर 28.6 हो गई है।

सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली वृद्धि का प्रमुख कारण सड़क सुरक्षा के नियमों की अनदेखी है। गलत दिशा में चलना, तीव्र गति से अथवा नशे का सेवन कर गाड़ी चलाने से होने वाली दुर्घटनाओं के समाचार प्रत्येक दिन सुने जा सकते हैं। सरकार द्वारा सड़क दुर्घटनाओं को कम करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के यातायात नियम बनाये गये हैं। यातायात के नियमों के पालन करने जैसे सही गति से वाहन चलाना, सुरक्षा उपायों यथा हेलमेट और सीट बेल्ट का प्रयोग करना एवं सड़कों पर बने यातायात संकेतों के पालन से दुर्घटनाओं में कमी आ सकती है।

वर्तमान में दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन चलाते समय मोबाइल अथवा दूसरे इलेक्ट्रानिक उपकरणों के प्रयोग करने पर चालक का ध्यान भंग से होने वाली घटनायें बढ़ी हैं। यातायात के नियमों के पालन करने से यातायात अर्थदण्ड एवं ड्राइविंग लाइसेन्स के निरस्तीकरण से बचा जा सकता है।

वाहन चालन के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को किसी मान्यता प्राप्त चालन स्कूल के प्रशिक्षित प्रशिक्षक से चालन कोर्स करना चाहिए। सार्वजनिक स्थलों पर बिना ड्राइविंग लाइसेन्स के वाहन चलाना अपराध की श्रेणी में आता है और मोटरयान अधिनियम–1988 की धारा 181 के तहत इसके लिए ₹ 500 का अर्थदण्ड निर्धारित है। वाहन स्वामियों को अपने वाहनों की समय-समय पर जाँच कराते रहना चाहिए ताकि होने वाली दुर्घटना से बचा जा सके।

किसी भी यात्रा पर जाने के पूर्व वाहन स्वामी को प्राथमिक चिकित्सा बाक्स, टूल बाक्स एवं गैसोलीन आदि की जाँच करा लेनी चाहिए।

वाहन स्वामियों की सुरक्षा हेतु कुछ सुरक्षा नियम निम्नवत् दिये गये हैं–

1. वाहन चालक सड़क पर अपने बायें से चलें और खासकर दूसरी तरफ से आ रहे वाहन को जाने दें।
2. वाहन चालक को गाड़ी मोड़ते समय वाहन गति धीमी रखनी चाहिए।

3. दो पहिया वाहन चालकों को अच्छी गुणवत्ता वाले हेलमेट पहनने चाहिए तथा चार पहिया वाहन चालकों एवं आगे तथा पीछे की सीट पर बैठने वाले व्यक्तियों को सीट बेल्ट अवश्य लगाना चाहिए।
4. वाहन की गति निर्धारित सीमा तक ही रखी जानी चाहिए, विशेष रूप से स्कूल, अस्पताल एवं कॉलोनी आदि क्षेत्रों में।
5. सभी वाहनों को दूसरे वाहनों से एक निश्चित दूरी बनाकर चलना चाहिए।
6. पैदल यात्रियों को भी सड़क पर चलने के नियम से परिचित होकर चलना चाहिए जैसे क्रासवाक एवं जेब्रा क्रासिंग का उपयोग।
7. वाहन चालक द्वारा यातायात नियमों का उल्लंघन करने जैसे–क्रासिंग पर लाल/पीली बत्ती पार करना एवं बिना संकेत दिए गली बदलना अथवा तीन सवारी के साथ दो पहिया वाहन चलाना धारा 199 के साथ मोटर यान अधिनियम–1988 की धारा 177 के तहत दण्डनीय अपराध है। प्रथम बार अपराध करने पर ₹ 100 एवं दूसरी बार या अनुवर्ती अपराध करने पर दण्ड स्वरूप ₹ 300 की धनराशि निर्धारित है।
8. सार्वजनिक स्थान पर सड़क–सुरक्षा, ध्वनि नियंत्रण और वायु प्रदूषण के विहित मानकों का उल्लंघन करने पर मोटरयान अधिनियम–1988 की धारा 190(2) के तहत प्रथम बार अपराध करने पर ₹ 1000 तथा दूसरी बार या अनुवर्ती अपराध करने पर दण्ड स्वरूप ₹ 2,000 की धनराशि निर्धारित है।

अवयस्क व्यक्ति द्वारा दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन चलाना अपराध की श्रेणी में आता है, साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को अपने वाहन का बीमा निर्धारित अवधि के अन्तर्गत अवश्य करा लेना चाहिए। बिना बीमा के वाहन चलाना मोटर अधिनियम–1988 की धारा 146 के साथ-साथ धारा 196 के तहत दण्डनीय अपराध है, जिसके लिये दण्ड स्वरूप ₹ 1,000 की जुर्माने की राशि निर्धारित है।

सड़क पर चलने वाले पैदल यात्रियों के साथ-साथ दो पहिया एवं चार पहिया वाहन चलाने वाले चालकों द्वारा यातायात के नियमों का सही ढंग से पालन करने एवं सुरक्षा उपायों को अपनाने पर वाहन से होने वाली दुर्घटनाओं पर काफी हद तक अंकुश लगाया जा सकता है।

# अभ्यास प्रश्न

## दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

➤ सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

## लघु उत्तरीय प्रश्न

1. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार अस्पतालों में भर्ती होने वाले और उनसे होने वाली मृत्यु का प्रमुख कारण क्या है?
2. सड़क दुर्घटनाओं को रोकने का प्रमुख उपाय क्या है?
3. सड़क दुर्घटनाओं में मरने वाले लोगों पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।
4. वाहन स्वामियों की सुरक्षा हेतु कोई पाँच सुरक्षा नियम बताइए।
5. यातायात के नियमों का पालन करने से क्या लाभ है?
6. यातायात के नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड के क्या प्राविधान हैं?
7. वाहन चालन के पूर्व किन नियमों का पालन करना चाहिए?

●●●

# परिशिष्ट

## ॥ टिप्पणियाँ ॥

### भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?

**महसूल** = किराया। **प्रतिदिन** = प्रतिक्षण। **चुपसाधि** = सुस्त या निष्क्रिय होकर। **उपकारी** = हितैषी। **मसल** = कहावत। **कतवार** = कूड़ा। **ताजी** = अरबी घोड़ा। **मर्दुमशुमारी** = जनगणना। **तिहवार** = त्योहार, पर्व। **फलानी** = फलाँ, अमुक, निर्दिष्ट व्यक्ति या वस्तु। **आयुष्य** = आयु। **लंकलाट** = एक महीन सूती कपड़ा (लांग क्लाथ का बिगड़ा हुआ रूप)। **अंगा** = अंगरखा, कुर्ता। **म्युनिसिपालिटी** = नगर पालिका। **विलायत** = विदेश।

### महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन

**सप्तर्षि** = सात ऋषियों गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप और अत्रि के नाम पर सात तारों का मण्डल। **अंशुमाली** = सूर्य। **अवतीर्ण** = उतरना। **तिमिर** = अंधकार। **पराभव** = पराजित। **अधोभाग** = नीचे का हिस्सा। **जुवाँ** = बैलगाड़ी का वह भाग। **दानव** = राक्षस। **आघात** = प्रहार, चोट। **प्रभा** = कान्ति। **दीप्ति** = प्रकाश। **दिग्वधू** = दिशाओं रूपी वधू। **तुल्यता** = समानता। **लावण्यमय** = सुंदरता-युक्त। **पयोनिधि** = समुद्र। **सुता** = पुत्री। **अल्पवयस्क** = छोटी आयु, किशोर। **मिस** = बहाने। **समधिक** = अत्यधिक। **उच्छेद** = नाश। **दिननाथ** = सूर्य। **आप्यायित** = प्रसन्न। **श्री** = लक्ष्मी, शोभा। **अतिशायिनी** = प्रिया। **भाष्कर** = सूर्य।

### भारतीय साहित्य की विशेषताएँ

**आश्रम चतुष्टय** = ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास। **अन्यान्य कलाओं** = और कलाएँ जैसे वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत, काव्य आदि। **भिजई** = भिगोई। **आदर्शात्मक साम्य** = आदर्शों में समता, लक्ष्यगत समानता। **एकेश्वरवाद** = ईश्वर एक है इस सिद्धान्त को माननेवाला, दार्शनिकवाद। **ब्रह्मवाद** = ब्रह्म की सत्ता स्वीकार करने का सिद्धांत अर्थात् यह मानना कि ब्रह्म के अतिरिक्त सब कुछ मिथ्या है। **ऋचाओं** = ऋग्वेद के मंत्र। **परोक्ष** = अलौकिक या अप्रत्यक्ष (संसार की नहीं प्रत्युत अन्य लोक की)। **ऐहिक** = लौकिक, सांसारिक। **गुरुडम** = आचार्यत्व (इसका प्रयोग अच्छे अर्थ पर नहीं होता)। **वसन्तश्री** = वसंत की शोभा। **संश्लिष्ट** = मिला-जुला। **उद्रेक** = अभिव्यक्ति, जागृति करना। **पिंगल** = छन्द शास्त्र। **मार्मिक** = हृदयस्पर्शी। **पताका** = ध्वजा। **सार्थकता** = महत्त्व। **अवलम्ब** = सहारा। **साम्य** = समता। **बिजई** = विजयी। **मायाजन्य** = माया से उत्पन्न। **तत्सम्भव** = उससे उत्पन्न।

### आचरण की सभ्यता

**ज्योतिष्मती** = ज्योतिर्मयी, प्रकाशयुक्त। **निघण्टु** = वैदिक-शब्द-कोष। **मानसोत्पन्न** = मन से उत्पन्न। **क्लेशातुर** = दुःख से व्याकुल। **उन्मदिष्णु** = उन्मादयुक्त, मतवाला। **अश्रुतपूर्व** = जो पहले न सुना गया हो। **अंजील** = ईसाइयों का धर्मग्रंथ। **रामरोला** = व्यर्थ का शोरगुल। **रसूल** = ईश्वर का दूत। **संभूत** = उत्पन्न। **रेडियम** = एक प्रकाशमय धातु। **नेती** = हठयोग की एक क्रिया, इसमें पेट में कपड़े की पतली पट्‌टी डालकर आँतें साफ करते हैं। **त्रिपीठक** (त्रिपिटक) = बौद्धों का मूल ग्रंथ जो विनय, सुत्त और अभिधम्म तीन पिटकों (भागों) में विभक्त है। **राजत्व** = राज पद जैसी गरिमा। **कङ्गाल** = निर्धन। **मृदु** = मीठा। **अन्न** = अनाज। **दीक्षा** = शिष्यत्व। **अलापना** = शास्त्रीय विधि के अनुसार गीत गुंजन।

## शिक्षा का उद्देश्य

**पुरुषार्थ** = मनुष्य के जीवन का प्रधान उद्देश्य, वह वस्तु या प्रयोजन जिसकी प्रवृत्ति या सिद्धि के लिए मनुष्य को उद्योग करना चाहिए। पुरुषार्थ चार माने गये हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। **प्रतीयमान** = जिससे प्रतीत हो रही हो, जान पड़ता हुआ, जो व्यंजना द्वारा प्रकट हो रहा हो। **वर्णाश्रम** = वर्ण और आश्रम। **मार्क्सवाद** = कार्ल मार्क्स के समाज दर्शन पर आधारित सिद्धांत। **संश्रय** = आधार, आश्रय। **अविद्यावशात्** = अज्ञान के कारण। **आत्मसाक्षात्कार** = आत्मा का अपरोक्ष ज्ञान। **दृश्यमान** = जो देखा जा रहा हो। **मुदिता** = हर्ष, आनन्द, चित्त की वह अवस्था जिसमें दूसरे का सुख देखकर सुख होता है। **निष्कामिता** = मन में वासनाएँ या कामनाएँ न रहने की स्थिति। **परार्थ साधन** = परोपकार। **लोकसंग्रह** = लोक कल्याण या जनता की सेवा। **विरत करना** = हटाना। **युगपत्** = साथ-साथ। **समष्टि** = सम्प्रभुता संपूर्णता, **हमारे कर्त्तव्यों की डोर.......पहुँचती है** = हमें अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह अपने पूर्वजों से लेकर आनेवाली पीढ़ियों तक करना चाहिए अर्थात् पूर्वजों के गुणों को ग्रहण और आनेवाली संतान के लिए कर्त्तव्यों की प्रेरणा देनी चाहिए। **अनुसूया** = दूसरे के गुणों में दोष ढूँढ़ने की वृत्ति का न होना या ईर्ष्या का अभाव। **स्वैरिणी** = स्वेच्छाचारिणी। **ऐहिक** = इस लोक से संबंधित। **आमुष्मिक** = दूसरे लोक से संबंध रखनेवाला। **अभिभूत** = वश में किया हुआ, आक्रांत। **घनिष्ठ** = गहरा। **कौटुम्बिक** = पारिवारिक। **आचारावलियाँ** = आचारों का समूह। **श्रेयस्कर** = उचित। **अभिलषित** = इच्छित, वांछित। **कामोद्दीपन** = काम को बढ़ाना।

## आनन्द की खोज, पागल पथिक

**कलपते हुए** = विलाप करते हुए। **आनन्द-कन्द-मूलक** = आनन्द के भँडार को देनेवाली। **विश्ववल्लरी** = संसाररूपी लता। **स्तब्ध** = गतिहीन। **ब्रह्माण्ड** = संपूर्ण विश्व। **अवाक्** = वाणी रहित, मूक, आश्चर्य से चुप। **विदीर्ण हृदय** = टूटा, शोकग्रस्त। **साख भर रहा है** = गवाही दे रहा है। **सखेद** = दुःख अथवा विवशता के साथ। **घटाकार** = घड़े के आकार का। **नव्यता** = नवीनता। **नितांत** = सर्वथा, पूर्णतः। **राम-पोटरिया** = पोटली के लिए लेखक द्वारा प्रयुक्त विशिष्ट शब्द अर्थात् पथिक का थोड़ा-सा निजी सामान। **सिर पर हाथ रखनेवाला** = ढाँढस बँधाने वाला, सहायता करने वाला।

## अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा

**परिपाटी** = पद्धति। **जिज्ञासा** = जानने की इच्छा। **छः शास्त्रों** (दर्शनों) = मीमांसा, वेदांत, न्याय, वैशेषिक, सांख्य और योग। **छः आस्तिक ऋषि** = छः दर्शनों के रचयिता। **ईश्वरवादी ऋषि** = जैमिनी, बादरायण, गौतम, कणाद, कपिल और पतंजलि। **शकों-हूणों** = भारतवर्ष के इतिहास में प्राचीनकालीन आक्रमणकर्ता। **समुन्दर के खारे पानी और हिंदू धर्म में वैर** = समुद्र यात्रा को हिन्दू धर्म के विरुद्ध मानना। **करतल भिक्षा तरुतल वास** = हाथ में भिक्षा और वृक्ष के नीचे सोना। **दिग-अम्बर** = दिशाएँ (आकाश) ही जिसके वस्त्र हों, अर्थात् नग्न। **मुक्तबुद्धि** = शास्त्रों से स्वतंत्र रहकर सोचनेवाला। **स्थावर** = स्थिर, न चलनेवाला। **जंगम** = चलने-फिरनेवाला। **अन्योन्याश्रय** = एक दूसरे पर निर्भर। **नवीन संस्करण** = आधुनिक रूप। **दिवांध** = दिन में भी अंधे। **निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः** = जो सत-रज-तम (तीनों गुणों) से रहित मार्ग पर विचरण करता है (योगी या घुमक्कड़) उसके लिए न कोई नियम होता है और न कोई रोक। **रोष** = क्रोध; गुस्सा। **जिज्ञासा** = जानने की इच्छा; उत्सुकता। **छहशास्त्र** = मीमांसा, न्याय, वेदान्त, वैशेषिक, साँख्य और योग। **तरूतल** = वृक्ष के नीचे। **वास** = रहना; सोना। **दिगम्बर** = दिशाएं ही जिनके वस्त्र हैं। **दिवांध** = दिन का अन्धा। **काफले** = समूह। **दिग्दर्शक** = दिशा का बोध कराने वाला (मन्त्र)। **श्वेताम्बर** = सफेद वस्त्रों वाला; श्वेत हैं वस्त्र जिसके।

## गेहूँ बनाम गुलाब

**शरीर की आवश्यकता** = भूख, प्यास, कामुकता आदि। **मानसिक वृत्ति** = सुरक्षा, आदर्शवादिता, सौन्दर्यानुभूति, रसात्मकता आदि। **कोने में डालना** = उपेक्षा करना। **तुरही** = फूँक कर बजाने का एक पतले मुँह का बाजा जो दूसरे सिरे की ओर बराबर चौड़ा होता जाता है। **उच्छ्वसित** = प्रफुल्ल, पूरा खिला हुआ। **समिधा** = यज्ञ की लकड़ी। **चिर बुभुक्षा** = सदा रहनेवाली भूख। **उटोपिया** = अप्राप्य विचार, आदर्श का सिद्धांत जो पूर्णता का प्रतीक हो पर हो काल्पनिक। **हस्तामलकवत्** = हाथ पर रखे

आँवले की तरह, बिल्कुल स्पष्ट। **स्खलित हो गयी** = भंग होकर नीचे गिर गयी। **शौके दीदार है, तो नजर पैदा कर** = यदि दर्शन करने का शौक है तो अनुकूल दृष्टि उत्पन्न कीजिए। **मानस** = हृदय; मन। **क्षुधा** = भूख। **पिपासा** = प्यास। **शनैः शनैः** = धीरे-धीरे। **यंत्रणाएँ** = यातनाएँ, दुःख। **सोलह आने** = पूरी तरह। **मेनका** = एक अप्सरा, जिसने विश्वामित्र का तप भंग कर दिया था; शकुन्तला की माता। **उर्वशी** = पुरूरवा की पत्नी; इन्द्रलोक की प्रसिद्ध अप्सरा।

## सड़क सुरक्षा

**विश्व** = संसार। **जागरूक** = सजग, सावधान। **विकसित देश** = जिन देशों का विकास हो चुका है। **तीव्र** = तेज। **भंग** = टूटना, हटना। **अर्थदण्ड** = जुर्माना। **निरस्तीकरण** = रद्द करना। **खासकर** = विशेष रूप से। **गति** = चाल। **परिचित**= अवगत। **तहत** = अन्तर्गत। **हद** = सीमा। **अंकुश** = नियन्त्रण।

●●●

# काव्य

## यह संकलन

साहित्य समाज का दर्पण है। युग और युगधर्म साहित्य में बिम्ब और प्रतिबिम्ब भाव से प्रतिभाषित होता है। कवि और युग एक-दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं। इसीलिए कहा जाता है कि कवि शून्य में रचना नहीं करता है, वह युग की परिस्थितियों से प्रभावित होता है और अपनी कथनी से युग को प्रभावित भी करता है। कवि जाने अथवा अनजाने में अपने वातावरण से प्रभावित भी होता है और यदि कवि सशक्त होता है तो वह स्वयं समाज को भी प्रभावित करता है। कवि भी समाज का ही एक अंग है, अतः वह जो कुछ लिखता है, उस पर समाज का प्रभाव स्वाभाविक है। कवि एक ओर युग को देता है, तो दूसरी ओर लेता भी है; क्योंकि कवि इसी संसार का प्राणी है। अतः किसी कवि का मूल्यांकन करने से पूर्व उस युग का अध्ययन करना आवश्यक है। इसीलिए प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में कवियों की रचनाओं के संकलन के साथ ही उनके युगों से सम्बन्धित सामग्री भी भूमिका के अन्तर्गत दी गयी है।

इस संकलन में कालक्रम से, प्रमुख कवियों की महत्त्वपूर्ण रचनाएँ संकलित करते हुए मध्य युग के कुछ अन्य प्रतिनिधि कवियों–सेनापति, देव और घनानन्द की रचनाओं का समावेश 'विविधा' के अन्तर्गत किया गया है। सेनापति मध्य युग के एकमात्र ऐसे कवि हैं, जिन्होंने प्रकृति को अपनी काव्य-रचना का स्वतन्त्र विषय बनाया है और विभिन्न ऋतुओं के बड़े ही सरस वर्णन उपस्थित किये हैं। देव उन कवियों की श्रेणी में आते हैं जिनमें उच्चकोटि के आचार्यत्व के साथ उसी स्तर की काव्य-प्रतिभा भी विद्यमान है। घनानन्द उत्तर-मध्य युग के विशिष्ट कवि हैं, जिन्होंने किसी आश्रयदाता की रुचि का अनुसरण करते हुए काव्य-रचना नहीं की, वरन् मन की सहज प्रेरणा से कविताएँ लिखी हैं।

हिन्दी कवियों की रचनाओं का चयन करते हुए इस बात का बराबर ध्यान रहा है कि संकलित रचनाएँ छात्रों की मानसिक अवस्था, बौद्धिक क्षमता और ग्रहण-शक्ति के अनुरूप हों। कक्षा-11 के छात्र-छात्राएँ प्रायः पन्द्रह से सत्रह वर्ष की अवस्था के होते हैं। अतः उनकी अवस्था के अनुरूप सहज बोधगम्य रचनाएँ ही एकत्र की गयी हैं। किशोर-मन वयःसन्धि की स्थिति में जो कुछ सोचता-विचारता है, जैसी इच्छाओं, आकांक्षाओं को अपने मन में सँजोता है, जैसे स्वप्न देखता और कल्पनाएँ करता है, उन्हीं के अनुरूप रचनाओं का संकलन यहाँ किया गया है। इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि संकलित रचनाओं द्वारा युवा पीढ़ी के मन का संस्कार हो, उसके चरित्र का निर्माण हो, अपने देश की जीवन्त परम्पराओं से उसका परिचय हो, उसके मन में सौन्दर्य-भावना का विकास हो और वह आधुनिक जीवन-मूल्यों के प्रति सजग हो सके।

प्रत्येक कवि-परिचय के अन्तर्गत उसका जीवन-परिचय, काव्यगत विशेषताएँ, रचनाएँ एवं भाषा-शैली का विवेचन अनुच्छेदवार किया गया है। पाठ के अन्त में प्रश्न-अभ्यास दिया गया है। सम्भावित प्रश्नों और अवतरणों की व्याख्या का अभ्यास कराने से छात्रों की लेखन-शक्ति और रचनात्मक प्रतिभा का विकास होगा। पाठ्यक्रम में निर्धारित रसों, छन्दों और अलङ्कारों का परिचय पुस्तक के अन्त में दिया गया है। इसके बाद टिप्पणियाँ हैं जिनमें विभिन्न रचनाओं के आवश्यक सन्दर्भ दिये गये हैं।

आशा है, हमारा यह प्रयास विद्यार्थियों और अध्यापकों दोनों को रुचिकर होगा तथा हिन्दी कविता के अध्ययन-अध्यापन में भी लाभप्रद सिद्ध होगा।

●●●

# भूमिका

## ➡ काव्य क्या है?

काव्य वह छन्दोबद्ध एवं लयात्मक साहित्यिक रचना है, जो श्रोता या पाठक के मन में भावात्मक आनन्द की सृष्टि करती है। व्यापक अर्थ में काव्य से तात्पर्य सम्पूर्ण गद्य एवं पद्य में रचित भावात्मक सामग्री से है, किन्तु संकुचित अर्थ में इसे 'कविता' का पर्याय समझा जाता है। काव्य के दो पक्ष होते हैं—भाव-पक्ष और कला-पक्ष। भाव-पक्ष में काव्य के समस्त वर्ण्य-विषय आ जाते हैं और कला-पक्ष में वर्णन-शैली के सभी अंग सम्मिलित हैं। ये दोनों पक्ष एक-दूसरे के सहायक और पूरक होते हैं। भाव-पक्ष का सम्बन्ध काव्य की वस्तु से है और कला-पक्ष का सम्बन्ध आकार-शैली से है। वस्तु या आकार एक-दूसरे से पृथक् नहीं हो सकते, कोई वस्तु आकारहीन नहीं हो सकती। वैसे तो व्यापक दृष्टि से भाव-पक्ष और कला-पक्ष दोनों ही रस से सम्बन्धित हैं; क्योंकि कला-पक्ष के अन्तर्गत जो अलङ्कार, लक्षण, व्यञ्जना और रीतियाँ हैं, वे सभी रस की पोषक हैं, तदापि भाव-पक्ष का रस से सीधा सम्बन्ध है। वह उसका प्रधान अंग है, कला-पक्ष के विषय उसके सहायक और पोषक हैं।

काव्य के दो भेद किये जा सकते हैं—श्रव्य काव्य एवं दृश्य काव्य। श्रव्य काव्य में रसानुभूति पढ़कर या सुनकर होती है, जबकि दृश्य काव्य में रसानुभूति अभिनय एवं दृश्यों के द्वारा ही सम्भव है। श्रव्य काव्य के भी दो उपभेद हैं—प्रबन्ध काव्य एवं मुक्तक काव्य। प्रबन्ध काव्य में किसी कथा का आश्रय लेकर रचना की जाती है, जबकि मुक्तक काव्य में स्वतन्त्र पदों के रूप में भावाभिव्यक्ति की जाती है। प्रबन्ध काव्य के भी दो प्रकार हैं—महाकाव्य और खण्डकाव्य।

## ➡ काव्य साहित्य का विकास

प्रत्येक भाषा का साहित्य उस भाषा को बोलनेवाले समाज का सजीव चित्र होता है। साथ ही, वह उस समाज को बदलने और उसको प्रगति की प्रेरणा देने का समर्थ साधन भी होता है। उस समाज को पृष्ठभूमि में रख कर ही उस भाषा के साहित्य के इतिहास का अध्ययन किया जा सकता है। साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियाँ, विभिन्न काव्य-धाराएँ एवं विभिन्न युग एक-दूसरे पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते हुए अविच्छिन्न धारा में प्रवाहित होते हैं। इसी दृष्टि से हम हिन्दी काव्य साहित्य के स्वरूप एवं विकास का संक्षिप्त सर्वेक्षण निम्न पंक्तियों में करेंगे—

हिन्दी साहित्य मूलतः खड़ीबोली के परिनिष्ठित रूप का साहित्य है, पर इसकी परिधि में मैथिली, अवधी, ब्रज, राजस्थानी जैसी साहित्यिक बोलियों का साहित्य भी आ जाता है। इन सभी बोलियों में हमें एक जैसी ही अनुभूति और विचारधारा का साहित्य मिलता है। समय-समय पर साहित्य के विषय बदलते रहे और विभिन्न युगों में हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ प्रधान रहीं। वीरगाथा काल में राजस्थानी, पूर्व-मध्यकाल में अवधी तथा उत्तर-मध्यकाल में ब्रजभाषा की प्रधानता रही। आधुनिक युग मूलतः खड़ीबोली का युग है।

गत दस शताब्दियों में हरियाणा प्रान्त से लेकर मध्य प्रदेश तक तथा राजस्थान से बिहार प्रदेश तक का समाज जो कुछ अनुभव करता रहा है, जो कुछ भी सोचता रहा है, जो उसकी आशा-निराशा और आकांक्षाएँ रही हैं, उन सब की अभिव्यक्ति ही हिन्दी साहित्य है। इस साहित्य में भारत की अखण्ड सामाजिक संस्कृति के साथ ही जनपदीय लोक-संस्कृतियों का प्रतिबिम्ब भी है।

अन्य भाषाओं की तरह हिन्दी का स्वरूप भी परिवर्तित होता रहा है। सातवीं शती के उत्तरार्द्ध से अपभ्रंश से विकसित होती हुई हिन्दी भाषा का साहित्य उपलब्ध होने लगता है। भाषा के स्वरूप में परिवर्तन होने पर हिन्दी के आदिकाल में अपभ्रंश साहित्य की प्रवृत्तियाँ चलती रही हैं। अतः अपभ्रंश साहित्य का सामान्य लेखा-जोखा हिन्दी साहित्य की गतिविधि समझने के लिए आवश्यक है। अपभ्रंश में साहित्य की बहुविध प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं—धर्म, शृंगार, भक्ति, वीर-भावना तथा अनेक प्रकार की रहस्य साधनाएँ इस साहित्य के प्रमुख विषय रहे हैं। एक ओर जैन आचार्यों और कवियों का धर्म एवं नीतिपरक साहित्य मिलता है, तो दूसरी ओर बौद्ध सिद्धों की रहस्यमय एवं गुह्य साधना की वाणी। बौद्ध सिद्धों, नाथों एवं जैन आचार्यों की रहस्य-गुह्य-योग-साधना और धार्मिक सिद्धान्तों की रचनाएँ मूलतः साहित्येतर हैं, पर उस युग के साहित्य को समझने के लिए अपरिहार्य हैं। नाथ साहित्य में भक्ति का पूर्वाभास भी होने लगता है। इस काल में कविता का प्रवाह अवरुद्ध नहीं था। जैन कवियों की रचनाएँ कविता की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। शृंगार रस का अच्छा विरह-काव्य भी इस युग में मिलता है। 'प्रबन्ध चिन्तामणि', 'कुमारपालचरित' जैसी महान् रचनाएँ और पुष्पदन्त, हेमचन्द्र जैसे श्रेष्ठ कवि भी इसी युग में हुए। इस प्रकार मूल हिन्दी साहित्य वस्तुतः अपभ्रंश साहित्य से ही विकसित हुआ है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल-विभाजन सदैव ही समस्यामूलक एवं विवादग्रस्त रहा है। अपभ्रंश के अञ्चल से हिन्दी के उदय के अनन्तर उसमें साहित्य-सृजन का क्रम चलता रहा है। एक सहस्र वर्षों के रचनाकाल को किस आधार से विभाजित किया जाय, निःसन्देह एक समस्या है। डॉ० ग्रियर्सन, मिश्र-बन्धु, डॉ० रामकुमार वर्मा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि विद्वानों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास का अलग-अलग काल-विभाजन किया है, जिसमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के काल-विभाजन को अधिकतर विद्वान् मानते हैं, जो उचित प्रतीत होता है। डॉ० श्यामसुन्दर दास तथा डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी आचार्य शुक्ल के काल-विभाजन को ही स्वीकृति दी है। पण्डित रामचन्द्र शुक्ल ने डॉ० ग्रियर्सन तथा मिश्र-बन्धुओं के काल-विभाजन का समीकरण किया है। उन्होंने अपने काल-विभाजन को काल-क्रम से स्थिर किया है और प्रवृत्तियों के आधार पर उसका नामकरण किया है। शुक्लजी द्वारा निर्धारित काल-विभाजन इस प्रकार है—

1. **आदिकाल (वीरगाथाकाल) — संवत् 1050 वि० से 1375 वि० तक।**
2. **पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) — संवत् 1375 वि० से 1700 वि० तक।**
3. **उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल) — संवत् 1700 वि० से 1900 वि० तक।**
4. **आधुनिककाल (गद्य काल) — संवत् 1900 वि० से अब तक।**

शुक्लजी का उक्त काल-विभाजन प्रामाणिक है। इसमें काव्य-प्रणयन शैली तथा ग्रन्थों की प्रसिद्धि को आधार माना गया है। वीर रस-परक रचनाओं की प्रधानता के कारण आदिकाल को वीरगाथाकाल कहा गया है। भक्ति-काव्य के प्राधान्य के कारण पूर्व-मध्यकाल को भक्तिकाल का नाम दिया गया है। शृङ्गार तथा लक्षण ग्रन्थों के बाहुल्य के कारण उत्तर-मध्यकाल को रीतिकाल और गद्य-रचना की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होने के कारण आधुनिककाल को गद्य-काल नाम दिया गया है।

# आदिकाल

## ➡ नामकरण

हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक और इतिहासकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आदिकाल का समय सन् 993 ई० (संवत् 1050 वि०) से 1318 ई० (संवत् 1375 वि०) तक माना था और उसे वीरगाथा काल की संज्ञा दी थी, क्योंकि वे इस अवधि में वीरगाथाओं की रचना-प्रवृत्ति को प्रधान मान कर चले थे। किन्तु, परवर्ती विद्वान् 769 ई० से 14वीं शताब्दी के मध्य तक की अवधि को हिन्दी साहित्य का आदिकाल ही कहते हैं। आदिकाल ऐसा नाम है, जिसे किसी-न-किसी रूप में सभी इतिहासकारों ने स्वीकार किया है। भाषा की दृष्टि से हम इस काल के साहित्य में हिन्दी के आदि रूप का बोध पा सकते हैं, तो भाव की दृष्टि से हम इसमें भक्तिकाल

**प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ**

- **चन्दबरदायी**—पृथ्वीराज रासो।
- **नरपति नाल्ह**—बीसलदेव रासो।
- **अब्दुल रहमान**—सन्देशरासक।
- **जगनिक**—आल्हखण्ड।
- **दलपति विजय**—खुमाण रासो।
- **नल्ल सिंह**—विजयपाल रासो।

से आधुनिक काल तक की सभी प्रमुख प्रवृत्तियों के प्रारम्भिक बीज खोज सकते हैं। इस काल की आध्यात्मिक, शृङ्गारिक तथा वीरता की प्रवृत्तियों का ही विकसित रूप परवर्ती साहित्य में मिलता है।

अधिकांश विद्वान् हिन्दी का प्रथम कवि **सरहपा** को मानते हैं जिनका रचनाकाल 769 ई० से प्रारम्भ होता है। अतः हिन्दी साहित्य के आरम्भ की सीमा 8वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध मानी जाती है। दूसरी ओर विद्यापति को भी आदिकाल के अन्तर्गत माना जाता है, इनका रचना-काल 1375 ई० से 1418 ई० तक है। इस दृष्टि से आदिकाल की अन्तिम सीमा 1418 ई० निर्धारित की जा सकती है, किन्तु इसमें भी सन्देह नहीं है कि भक्तिकाल में जिन प्रवृत्तियों का विकास हुआ, उनकी भूमिका विद्यापति के पूर्व ही पूर्ण हो चुकी थी, अतः विद्यापति को भक्तिकाल में रखकर 14वीं शताब्दी के मध्य को आदिकाल की अन्तिम सीमा मानना ही समीचीन होगा।

साहित्य मानव-समाज की भावनात्मक स्थिति और गतिशील चेतना की अभिव्यक्ति है। इसलिए आदिकालीन साहित्य के इतिहास को समझने के लिए तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों को जानना अपेक्षित है।

## ➡ राजनीतिक परिस्थिति

हिन्दी साहित्य का आदिकाल वर्धन-साम्राज्य की समाप्ति के समय से प्रारम्भ होता है। अन्तिम वर्धन-सम्राट् हर्षवर्धन के समय से ही सिन्ध प्रान्त पर अरबों के आक्रमण आरम्भ हो गये थे। हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद भारत की संगठित सत्ता खण्ड-खण्ड हो गयी। तदनन्तर राजपूत राजा निरन्तर युद्धों की आग में जल गये और अन्ततः एक विशाल इस्लाम साम्राज्य की स्थापना हो गयी। ईसा की 8वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी तक के भारतीय इतिहास की राजनीतिक परिस्थिति हिन्दू-सत्ता के धीरे-धीरे क्षय होने तथा इस्लाम सत्ता के धीरे-धीरे उदय होने की कहानी है। आदिकाल के इस युद्ध-प्रभावित जीवन में कहीं भी सन्तुलन नहीं था। जनता पर विदेशी आक्रान्ताओं के अत्याचारों के साथ-साथ युद्धकामी देशी राजाओं के अत्याचारों का क्रम भी बढ़ता चला गया। वे परस्पर लड़ने लगे और प्रजा पीड़ित होने लगी। पृथ्वीराज चौहान, जयचन्द आदि की पारस्परिक लड़ाइयाँ अन्तहीन कथा बनती गयीं। विदेशी शक्तियों के आक्रमण का प्रभाव मुख्यतः पश्चिमी भारत और मध्यप्रदेश पर ही पड़ा था। यही वह क्षेत्र था, जहाँ हिन्दी भाषा का विकास हो रहा था। अतः इस काल का समस्त हिन्दी साहित्य आक्रमण और युद्ध के प्रभावों की मनःस्थितियों का प्रतिफलन है।

## ➡ धार्मिक परिस्थिति

ईसा की छठी शताब्दी तक देश का धार्मिक वातावरण शान्त था किन्तु 7वीं शताब्दी के साथ देश की धार्मिक परिस्थितियों में परिवर्तन आरम्भ हुआ। इस समय आलम्बार और नायम्बार सन्त दक्षिण भारत से उत्तर भारत की ओर धार्मिक आन्दोलन लाये। बौद्ध धर्म का पतन प्रारम्भ हो गया था। शैव और जैन मत आगे बढ़ने की होड़ में परस्पर टकराने लगे थे। देशव्यापी धार्मिक अशान्ति के इस काल में बाहरी धर्म इस्लाम का भी प्रवेश हो रहा था। अशिक्षित जनता के सामने अनेक धार्मिक राहें बनती जा रही थीं। बौद्ध संन्यासी यौगिक चमत्कारों का प्रभाव दिखा रहे थे। वैदिक एवं पौराणिक मतों के समर्थक खण्डन-मण्डन की भूल-भुलैयों में पड़े थे। उधर जैन धर्म पौराणिक आख्यानों को नये ढंग से गढ़कर जनता की आस्थाओं पर नया प्रभाव जमा रहा था। आदिकाल की धार्मिक परिस्थितियाँ अत्यन्त विषम तथा असन्तुलित थीं। कवियों ने इसी स्थिति के अनुरूप खण्डन-मण्डन, हठयोग, वीरता एवं शृङ्गार का साहित्य लिखा।

## ➡ सामाजिक परिस्थिति

तत्कालीन राजनीतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों का देश की सामाजिक परिस्थितियों पर भी गहरा प्रभाव पड़ा था। जनता शासन तथा धर्म दोनों ओर से निराश होती जा रही थी। युद्धों के समय उसे बुरी तरह पीसा जाता था। समाज के उच्च वर्ग में विलासिता बढ़ गयी थी। निर्धन वर्ग श्रमिक था। अन्धविश्वास जोरों पर था। साम्प्रदायिक तनाव बढ़ रहा था। योगियों का गृहस्थों पर आतंक छाया हुआ था। जनता दुर्भिक्ष, युद्ध और महामारियों का निरन्तर शिकार हो रही थी। सामाजिक परिस्थिति की इस विषमता में हिन्दी के कवियों को जनता की स्थिति के अनुसार काव्य-रचना की सामग्री जुटानी पड़ी।

## ➡ सांस्कृतिक परिस्थिति

आदिकाल भारतीय और इस्लाम इन दो संस्कृतियों के संक्रमण एवं ह्रास-विकास की गाथा है। इस काल में भारतीय संस्कृति का जो स्वरूप मिलता है वह परम्परागत गौरव से विच्छिन्न तथा मुस्लिम संस्कृति के गहरे प्रभाव से निर्मित है। तत्कालीन जन-जीवन के स्वरूप में इस संस्कृति की व्यापक छाप मिलती है। उत्सव, मेले, वेश-भूषा, आहार, विवाह, मनोरंजन आदि सब में मुस्लिम रंग मिल गया था। संगीत, चित्र, वास्तु एवं मूर्ति-कलाओं की मूल भारतीय परम्परा धीरे-धीरे क्षय होती गयी।

## ➡ साहित्यिक परिस्थिति

इस काल में साहित्य-रचना की तीन धाराएँ थीं। प्रथम धारा संस्कृत साहित्य की थी जिसका विकास परम्पराबद्ध था। दूसरी धारा का साहित्य प्राकृत एवं अपभ्रंश में लिखा जा रहा था। तीसरी धारा हिन्दी भाषा में लिखे जानेवाले साहित्य की थी, जिसमें तत्कालीन परिस्थितियों की प्रतिक्रिया प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में प्रतिबिम्बित हो रही थी।

आदिकाल के साहित्य को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) सिद्ध साहित्य (2) जैन साहित्य (3) नाथ साहित्य (4) रासो साहित्य (5) लौकिक साहित्य। इस युग में काव्य-रचनाएँ प्रबन्ध तथा मुक्तक दोनों रूपों में प्राप्त होती हैं।

### ➡ सिद्ध साहित्य

बौद्ध धर्म के वज्रयान तत्त्व का प्रचार करने के लिए सिद्धों ने जो साहित्य लोक-भाषा में लिखा, वह हिन्दी का सिद्ध साहित्य है। इन सिद्धों में सरहपा, शबरपा, लुइपा, डोम्पिपा, कण्हपा एवं कुक्कुरिपा हिन्दी के मुख्य सिद्ध कवि हैं। सरहपा को हिन्दी का प्रथम कवि माना जाता है। इनकी कविता का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

**नाद न बिन्दु न रवि न शशि मण्डल,**
**चिअराअ सहाबे मूकल।**
**अजुरे उजु छाड़ि मा लेहु रे बंक,**
**निअहि बोहिया जाहुरे लाँक।**
**हाथ रे कांकाण मा लोउ दापण,**
**अपणे अपा बुझतु निअ-मण।**

सरहपा की इस कविता से स्पष्ट है कि उस समय अपभ्रंश से हिन्दी का विकास होना प्रारम्भ हो गया था।

### ➡ जैन साहित्य

जिस प्रकार हिन्दी के पूर्वी क्षेत्र में, हिन्दी कविता के माध्यम से सिद्धों ने बौद्ध धर्म के वज्रयान मत का प्रचार किया, उसी प्रकार पश्चिमी क्षेत्र में जैन साधुओं ने भी अपने मत का प्रचार हिन्दी कविता के माध्यम से किया। जैन साहित्य का सबसे अधिक लोकप्रिय रूप 'रास' ग्रन्थ है। संस्कृत के 'रस' शब्द को जैन साधुओं ने 'रास' रूप देकर रचना की प्रभावशाली शैली बनाया। देवसेन रचित 'श्रावकाचार', मुनिजिनविजय कृत 'भरतेश्वर-बाहुबली रास', जिनधर्मसूरि कृत 'स्थूल भद्र रास', विजयसेन सूरि का 'रेवंत गिरि रास' आदि जैन साहित्य की निधि हैं।

### ➡ नाथ साहित्य

सिद्धों की वाममार्गी योगसाधना की प्रतिक्रिया में नाथपन्थियों की हठयोग-साधना प्रारम्भ हुई। गोरखनाथ, नाथ साहित्य के व्यवस्थापक माने जाते हैं। उन्होंने ईसा की 13वीं शताब्दी के आरम्भ में अपना साहित्य लिखा था। गोरखनाथ से पहले अनेक सम्प्रदाय थे, उन सबका नाथ पन्थ में विलय हो गया था। गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं में गुरु-महिमा, इन्द्रिय-निग्रह, प्राण-साधना, वैराग्य, कुण्डलिनी जागरण, शून्य-समाधि आदि का वर्णन किया है। गोरखनाथ ने लिखा है कि धीर वह है जिसका चित्त विकार-साधन होने पर भी विकृत नहीं होता—

**नौ लख पातरि आगे नाचैं, पीछे सहज अखाड़ा।**
**ऐसे मन लै जोगी खेलैं, तब अंतरि बसै भँडारा॥**

### ➥ रासो साहित्य

हिन्दी साहित्य के आदिकाल में रचित जैन 'रास काव्य' वीरगाथाओं के रूप में लिखित रासो-कव्यों से भिन्न है। दोनों की रचना-शैलियों का अलग-अलग भूमियों पर विकास हुआ है। जैन रास काव्यों में धार्मिक दृष्टि प्रधान है, जबकि रासो परम्परा में रचित काव्य मुख्यतः वीरगाथापरक हैं। दलपति विजय कृत 'खुमाण रासो', नरपति नाल्ह रचित 'बीसलदेव रासो', चन्दबरदायी कृत 'पृथ्वीराज रासो' तथा जगनिक रचित 'परमाल रासो' (आल्हखण्ड), शारंगधर कृत 'हम्मीर रासो' आदि प्रसिद्ध रासो ग्रन्थ हैं। 'पृथ्वीराज रासो' आदिकाल का इस परम्परा का श्रेष्ठ महाकाव्य है। इसके रचयिता दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान के सामन्त तथा राजकवि चन्दबरदायी हैं। इसमें पृथ्वीराज चौहान के चरित्र का वर्णन है। यह महाभारत की तरह विशाल महाकाव्य है। इस काव्य में दो प्रमुख रस हैं— शृङ्गार और वीर। इसकी भाषा में ब्रज और राजस्थानी का मिश्रण है। शब्द-चयन रसानुकूल है। वीर रस के चित्रणों में प्राकृत और अपभ्रंश के शब्द भी यत्र-तत्र मिलते हैं। अलङ्कारों का सहज प्रयोग हुआ है। लगभग ६८ प्रकार के छन्द इसमें प्रयुक्त हुए हैं। एक उदाहरण देखिए—

**बज्जिय घोर निसांन रान चौहान चहूँ दिशि।**
**सफल सूर सामन्त समर बल जंत्र मंत्र तिसि।**
**उट्ठि राज प्रथिराज बाग लग्ग मनहु वीर नट।**
**कढ़त तेग मन वेग लगत मनहु बीजु झट्ट घट्ट॥**

वीर छन्द में विरचित परमाल रासो (आल्हखण्ड) भी बड़ा लोकप्रिय काव्य है।

### ➥ लौकिक साहित्य

आदिकाल में कुछ ऐसे ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं, जो पूर्वोक्त प्रमुख प्रवृत्तियों से भिन्न हैं। ऐसे सभी उपलब्ध काव्यों को लौकिक साहित्य की सीमा में गिना जाता है। ऐसे काव्यों में कुशल रायवाचक कृत 'ढोला-मारू-रा-दूहा' और खुसरो की पहेलियाँ प्रसिद्ध हैं। कुछ मुक्तक छन्द भी मिलते हैं जो हेमचन्द्र के 'प्रबन्ध चिन्तामणि' में संकलित हैं।

## आदिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

1. बौद्ध-सिद्धों की रचनाओं में एक ओर गुह्य साधनाओं की चर्चा है, दूसरी ओर वर्णाश्रम व्यवस्था का तीव्र विरोध है।
2. जैनाचार्यों की रचनाओं में जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के बड़े ही सरस वर्णन हैं, नैतिक आदर्शों का प्रचार-प्रसार है।
3. नाथ सम्प्रदाय के साधकों की रचनाओं में हठयोग की साधना-पद्धति का दर्शन है, तीव्र वैराग्य की भावना जगायी गयी है और वर्ण-जाति के बन्धन से ऊपर उठने का आग्रह है।
4. रासो साहित्य में आश्रयदाताओं के युद्धोत्साह, केलि-क्रीड़ा आदि के बड़े सरस वर्णन हैं। इतिहास के साथ कल्पना का प्रचुर उपयोग किया गया है। वीर और शृङ्गार रस का प्राधान्य है और प्रसंगानुसार कहीं परुष और कहीं कोमलकान्त शब्दावली का प्रयोग है।
5. लौकिक साहित्य में शृङ्गार, वीर और नीतिपरक भावनाओं को अभिव्यक्ति मिली है। खुसरो की पहेलियों में व्यंग-विनोद की अभिव्यञ्जना है।

आदिकाल में हिन्दी भाषा जन-जीवन से रस लेकर आगे बढ़ी है। उसने अपनी अनेक बोलियों को एकरूपता की ओर बढ़ा कर एक-सूत्र में बाँधा है। जीवन के विविध पक्षों का उसके काव्य में चित्रण हुआ है। परवर्ती कालों के लिए उसने अनेक परम्पराएँ डाली हैं, अनेक काव्य-रूप और शैली-शिल्प आदिकालीन साहित्य में प्रकट और पुष्ट हुए हैं, अतः आदिकाल को हिन्दी साहित्य का समृद्ध काल कहा जा सकता है।

# भक्तिकाल

जिस काल में मुख्यतः भागवत धर्म के प्रचार तथा प्रसार के परिणामस्वरूप भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था, हिन्दी-साहित्य के इतिहास में उसे भक्तिकाल कहा जाता है। लोकोन्मुखी प्रवृत्ति के कारण इस काल की भक्ति-भावना लोक-प्रचलित भाषाओं में अभिव्यक्त हुई। इस युग को हिन्दी साहित्य का पूर्व मध्यकाल भी कहते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भक्तिकाल का निर्धारण सन् 1318 ई0 (संवत् 1375 वि0) से 1643 ई0 (संवत् 1700 वि0) तक किया है। भक्ति काव्य की परम्परा परवर्ती काल तक भी प्रवाहित होती रही है। अतः अध्ययन की सुविधा के लिए भक्तिकाल को 14वीं शती के मध्य से 17वीं शती के मध्य तक मानना उचित होगा। विदेशी सत्ता प्रतिष्ठित हो जाने के कारण देश की जनता में गौरव, गर्व और उत्साह का अब अवसर न रह गया था। अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवद्-भक्ति ही एक सहारा था। युगद्रष्टा भक्त कवियों ने देश की जनता को सँभालने के लिए जिस काव्य का गान किया, भक्तिकाल उसी का शुभ परिणाम है।

**प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ**

- **सूरदास**—सूरसागर।
- **गोस्वामी तुलसीदास**—रामचरितमानस।
- **कबीरदास**—बीजक।
- **मलिक मुहम्मद जायसी**—पद्मावत।
- **मंझन**—मधु मालती।
- **उस्मान**—चित्रावली।
- **कुतबन**—मृगावती।

## ➡ राजनीतिक परिस्थिति

भक्तिकाल का आरम्भ दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक (1325-1351) के राज्यकाल में हुआ। शासक वंशों में सत्ता प्राप्त करने के लिए विद्रोह होते रहते थे। शेरशाह ने सैन्य-योजना सुसंगठित की थी, जिसका लाभ अकबर ने भी उठाया था। मुगलों में अकबर का राज्यकाल सभी दृष्टियों से सर्वोपरि रहा। वह हिन्दू-मुसलमान के समन्वय सम्बन्धी प्रयत्नों में शान्ति तथा व्यवस्था की स्थापना में सफल हुआ। जहाँगीर और शाहजहाँ ने भी बहुत कुछ अकबर का ही अनुसरण किया था। इस समय तक देश की सैनिक शक्ति प्रायः क्षीण हो चुकी थी और विजेताओं का राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित हो चुका था। ऐसी अवस्था में वीरों के प्रशस्ति-गीत अपना प्रभाव खो चुके थे।

## ➡ सामाजिक परिस्थिति

भारतीय समाज में वर्णों और जातियों का विशिष्ट स्थान है। विशेषता यह है कि जिस समाज ने पारसी, यवन (यूनानी), शक, हूण आदि अनेक जातियों के साथ समन्वय करके उन्हें आत्मसात कर लिया, उसी का पैगम्बरी धर्म के अनुयायियों के साथ आपसी मेल-मिलाप उसी गति के साथ सम्भव न हो सका। फलस्वरूप दोनों पक्षों के बीच परस्पर सन्देह, जुगुप्सा और भेदभाव का वातावरण प्रबल हो उठा। विदेशी एवं विजातीय शासक हिन्दू जनता के साथ दुर्व्यवहार करते थे। छुआछूत के नियम कठोर और व्यापक थे। समाज में स्त्रियों का स्थान निम्न था। पर्दा-प्रथा जोरों पर थी। समाज में ऊँच-नीच की भावना पारस्परिक कटुता और घृणा की अवस्था तक पहुँच गयी थी। तत्कालीन साधु-समाज पर भी पाखण्ड की काली छाया मँडराने लगी थी। दैनिक-जीवन, रीति-रिवाज, रहन-सहन, पर्व-त्योहार आदि की दृष्टि से तत्कालीन भारतीय समाज सुविधा-सम्पन्न और असुविधा-ग्रस्त इन दो वर्गों में विभक्त था। प्रथम वर्ग राजा-महाराजा, सुल्तान, अमीर, सामन्त और सेठ-साहूकारों का था। दूसरा वर्ग किसान, मजदूर और घरेलू उद्योग-धन्धे में लगी सामान्य जनता का था। दूसरा वर्ग विपन्न और दुःखी था।

गोस्वामी तुलसीदास कृत 'कवितावली' की निम्नलिखित पंक्तियों में तत्कालीन स्थिति का स्पष्ट परिचय मिलता है—

**खेती न किसान को, भिखारी को न भीख बलि,**
**बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।**
**जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,**
**कहैं एक एकन सों कहाँ जाइ, का करी।**

## ➡ धार्मिक परिस्थिति

वैदिक धर्म की आस्था पर सिद्धों और नाथ-पन्थियों की रहस्य-गुह्य-साधना गहरा आघात कर चुकी थी। पूजा-पाठ, धार्मिक-क्रिया-कलाप आदि के प्रति जो आस्था हिन्दू-समाज में थी, उसकी जड़ें प्रायः हिल चुकी थीं। साम्प्रदायिकता तथा अन्ध-विश्वासों का बड़ा विस्तार था। पाखण्ड की पूजा हो रही थी। पण्डित और मौलवी धर्म की मनमानी व्याख्या करके हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म को परस्पर विरोधी बना रहे थे। इस काल में धर्म साधनाओं की बाढ़-सी आ गयी थी। धर्माचार के नाम पर अनाचार और मिथ्याचार पलने लग गया था। ऐसे समय में उसे किसी समन्वयवादी दर्शन और आचार-पद्धति की आकांक्षा थी, जो जीवन की सहज अनुभूति पर आधारित हो। इसी की पूर्ति भक्ति-आन्दोलन में हुई।

## ➡ साहित्यिक परिस्थिति

साहित्य की समृद्धि की दृष्टि से तो भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का 'स्वर्ण युग' कहलाता है। भक्ति की जो पुनीत धारा इस युग में प्रवाहित हुई, उसने अभी तक जन-मानस को आप्लावित कर रखा है। ब्रज तथा अवधी दोनों भाषाओं में काव्य-रचना हुई। सूर, तुलसी, कबीर और जायसी जैसे कवियों को इसी युग ने जन्म दिया।

## ➡ भक्ति-आन्दोलन

हिन्दी के वास्तविक साहित्य का प्रारम्भ भक्त कवियों की रचनाओं से ही होता है। इस भक्ति-भावना को जन-जीवन में व्याप्त करने के लिए ही वस्तुतः हिन्दी परिनिष्ठित अपभ्रंश, प्राकृताभास आदि से अलग हुई थी। उस युग की भक्ति-भावना सम्पूर्ण देश की युग चेतना में परिव्याप्त थी। उत्तर भारत में भक्ति-भावना को प्रवाहित करने का श्रेय स्वामी रामानन्द तथा महाप्रभु वल्लभाचार्य को है। उत्तर भारत की तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक अवस्थाएँ इस भक्ति आन्दोलन के जागरण के लिए उत्तरदायी हैं। मध्यकालीन धर्मों में हिन्दू, जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी, ईसाई, इस्लाम प्रमुख थे; और परस्पर सम्पर्क रखते थे। उन दिनों हिन्दू और इस्लाम प्रधान धर्म थे। वैष्णव धर्म मूलतः भक्ति-प्रधान था। सूफी, इस्लाम धर्म की एक शाखा थी। उसकी उपासना-पद्धति में प्रेम की प्रधानता है। किसी ने भगवान् को निर्गुण समझा, किसी ने सगुण। कोई उसे ज्ञान से प्राप्त करना चाहता था, तो कोई विशुद्ध प्रेम से। इन धर्मों के अनुयायियों द्वारा भक्ति काव्य की उत्कृष्ट रचनाएँ हुईं। इस प्रकार भक्ति साहित्य का विपुल भण्डार समृद्ध हुआ। भक्ति-आन्दोलन का व्यापक प्रभाव तत्कालीन वास्तु-कला, मूर्तिकला और चित्रकला पर भी पड़ा है।

भक्ति एक साथ ही कई धाराओं में बँट कर प्रवाहित हुई जिसे निर्गुण भक्तिधारा और सगुण भक्तिधारा कहते हैं।

### (क) निर्गुण भक्ति

जिस भक्ति में भगवान् के निर्गुण-निराकार रूप की आराधना पर बल दिया गया, वह निर्गुण भक्ति कहलायी। जिन कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच की कटुता को कम करके उन्हें एक-दूसरे के समीप लाने का प्रयास किया, उन्होंने निर्गुण-साधना पर बल दिया। निर्गुण भक्ति की दो शाखाएँ हैं—

**(i) ज्ञानाश्रयी शाखा**—यह उपासना ज्ञान और प्रेम पर आधारित है। भगवान् के स्वरूप का तात्त्विक एवं अपरोक्ष साक्षात्कार तथा उसके प्रति अनन्य एवं सहज प्रेम ही निर्गुण उपासना का मूल स्वरूप है। निर्गुण सम्प्रदाय ने सहज एवं साधनापूर्ण जीवन-पद्धति का निर्देश दिया है। भक्तिकाल से पहले के जीवन में जो एक ओर व्रत आदि की रूढ़िवादिता थी और दूसरी तरफ रहस्य गुह्य साधनाओं की जटिलता थी, उनसे मुक्ति केवल सहज प्रेम, ज्ञान एवं सरल तथा सदाचारी जीवन-दर्शन से ही मिल सकती है। यह कार्य निर्गुण भक्ति ने किया। यही कारण है कि इस युग की सहज अनुभूति की कविता जनमानस की भाषा में अभिव्यक्त हुई। ज्ञानाश्रयी शाखा में भगवान् के अवतारों की कल्पना का निषेध है। केवल निर्गुण और निराकार ब्रह्म की उपासना है। हिन्दी में इस ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रधान कवि कबीर हैं। वे स्वामी रामानन्द के शिष्य थे। उनकी भक्ति-भावना में बाह्याडम्बर, तीर्थ, व्रत, रोजा-नमाज आदि का खण्डन है और भगवान् को अद्वितीय ज्ञान एवं शुद्ध प्रेम से

प्राप्त करने का सन्देश है। भक्ति-भावना की अभिव्यक्ति उनका प्रमुख उद्देश्य है और वह अनुभूति ही काव्य बन गयी है। इस धारा के अन्य सन्त-कवि नानक, दादू, मलूकदास, रैदास आदि हैं।

**(ii) प्रेमाश्रयी शाखा**—इस शाखा के काव्यों का मूल विषय सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त एवं केवल सौन्दर्य वृत्ति से प्रेरित स्वच्छन्द प्रेम तथा प्रगाढ़ प्रणय-भावना है। इसके लिए नायक अनेक संकटों का सामना करने का साहस रखता है। सामाजिक रूढ़ियों में बँधे हुए परम्परागत प्रेम से हटकर स्वच्छन्द प्रेम की पवित्रता की स्थापना भी इन काव्यों का मुख्य प्रयोजन एवं प्रमुख उपलब्धि है। लौकिक प्रेम की सहज अनुभूति में आध्यात्मिकता तथा उसकी प्राप्ति के प्रयास में योग-साधना के दर्शन कराके इन कवियों ने जीवन को एक आस्था दी है जो रहस्य गुह्य साधनाओं तथा कठोर धर्मोपदेश, व्रत, नियम आदि से उखड़-सी गयी थी। ये कार्य प्रेम-कथाओं पर आध्यात्मिकता, रहस्यवाद, दार्शनिकता आदि के आरोप से तथा समासोक्ति या अन्योक्ति शैली को अपनाने से बड़ी ही सरलता से सिद्ध हो गया। इनकी कथावस्तु में लोक-कथाओं, इतिहास तथा कल्पना का मिश्रण है। इन काव्यों में रस, अलङ्कार आदि काव्यांगों का भी प्रौढ़ रूप मिलता है। इस धारा में मुसलमान और हिन्दू दोनों ही धर्मों के कवि आते हैं। अधिकांश तो सूफी हैं, पर कुछ निर्गुण सन्त और कृष्ण भक्त कवि भी हैं। इसमें बहुत से रहस्यवादी कवि भी हैं। रहस्यवाद के दर्शन से इस धारा के अधिकांश कवियों का भक्त कवियों में अन्तर्भाव हो जाता है। शुक्लजी ने प्रेममार्गी भक्तों की रचना-शैली को मसनवी कहा है, पर कुछ आलोचकों ने इन्हें भारतीय परम्परा का कथा-काव्य माना है। इन काव्यों में वातावरण और चरित्र-चित्रण भारतीयता के अनुरूप हुआ है। जायसी, मंझन, कुतबन आदि इस धारा के प्रमुख कवि तथा 'पद्मावत', 'अखरावट', 'मधुमालती' आदि प्रमुख ग्रन्थ हैं। इस शाखा के अधिकांश कवियों की भाषा अवधी है, पर अनेक कवियों ने राजस्थानी, ब्रज और राजस्थानी मिश्रित ब्रज का भी प्रयोग किया है।

## ( ख ) सगुण भक्ति

जीवन में व्यापक आस्था लाने तथा समन्वयवादी जीवन-दर्शन एवं आचार-पद्धति प्रदान करने की भावना से भक्ति आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ था। निर्गुण भक्ति—प्रधानतः निवृत्ति मार्ग, वैराग्य, ज्ञान, निराकार के प्रति प्रेम, योग-साधना आदि के द्वारा अपनी अपेक्षाकृत एकांगी जीवनदृष्टि, अभिव्यञ्जना की शुष्कता एवं व्यंग्यों की तीक्ष्णता के कारण समग्र जीवन में आस्था लाने का कार्य सम्पन्न नहीं कर सकी। उसने बाह्याडम्बर, क्लिष्ट साधनाओं, पारस्परिक विद्वेष तथा कटुता के झाड़-झंखाड़ काट कर फेंक दिये और इस प्रकार एक समतल भूमि तैयार कर दी। प्रेममार्गी कवियों ने प्रेम की सरसता से इस जीवन-भूमि को सिंचित किया और फिर जीवन की आस्था और विश्वास का बगीचा सगुण भक्तिधारा के कवियों ने लगाया। कृष्ण-भक्ति ने जीवन की सामान्य भावनाओं वात्सल्य, सख्य, रति-भाव के सभी रूपों को भक्ति में परिणत कर दिया। सारा जीवन ही साधना बन गया। इससे नित्य का लौकिक जीवन भक्तिमय हो गया। वैदिक धर्म की पुनः प्रतिष्ठा की; जो आकांक्षा हिन्दू जीवन में थी, वह राम-भक्त तुलसीदास जी द्वारा पूर्ण हुई। उन्होंने जीवन की सभी परिस्थितियों के लिए आचार एवं धर्म के मानदण्ड दिये। जीवन को मर्यादा का मार्ग दिखाया तथा उस सब में भक्ति-रस प्रवाहित कर दिया। गृहस्थ और वैरागी, निवृत्तिमार्गी और प्रवृत्तिमार्गी दोनों के लिए धर्म के वास्तविक स्वरूप की प्रतिष्ठा तुलसीदास के द्वारा ही हुई। यही सगुण भक्ति की देन है।

**(i) कृष्णभक्ति शाखा**—भगवान् कृष्ण का लीला पुरुषोत्तम रूप इस शाखा के भक्तों का आराध्य है। राधा-कृष्ण की विभिन्न लीलाएँ कृष्ण-साहित्य के प्रमुख विषय हैं। विद्यापति को इस शाखा का प्रथम कवि कहा जा सकता है। उनके बाद वल्लभ, निम्बार्क, राधा-वल्लभ, हरिदासी और चैतन्य सम्प्रदायों के भक्त कवियों ने कृष्ण-लीला का गान किया। इन भक्तों ने अपने-अपने सम्प्रदायों की भावना के अनुसार कृष्ण की बाल-लीला, किशोर-लीला एवं यौवन-लीला का वर्णन किया है। वल्लभ सम्प्रदाय में कृष्ण के बाल-रूप की ही आराधना है। शेष सम्प्रदायों में कृष्ण की किशोर एवं यौवन-लीला की प्रमुखता है। सूर तथा अष्टछाप के अन्य कवि वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी थे, अत: उनके काव्य में अन्य लीलाओं की अपेक्षा बाल-लीला का वर्णन अधिक है। बाल-वर्णन के क्षेत्र में सूरदास हिन्दी के ही नहीं, विश्व के श्रेष्ठ कवि हैं। कृष्ण-भक्ति के कवियों की भाषा ब्रज है। इन्होंने लीला रस प्रवाहित करनेवाले मुक्तक पद लिखे हैं। 'सूरसागर' सूर का विशाल काव्य है। इस ग्रन्थ का उपजीव्य भागवत है। इसमें कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन का चित्र है, पर कवि का मन कृष्ण की बाल-लीला तथा गोपियों

के साथ की गयी प्रेम-लीला के संयोग एवं वियोग पक्षों के हृदयस्पर्शी वर्णन में अधिक रमा है। इनकी भक्ति पुष्टिमार्गीय कहलाती है। इसमें भगवान् के अनुग्रह से ही सब कुछ प्राप्त हो जाता है, साधनाओं का कोई महत्त्व नहीं है। कृष्ण-भक्ति ने जीवन की सभी इच्छाओं का आलम्बन कृष्ण को बनाकर सारे जीवन को ही भक्तिमय कर दिया।

**(ii) रामभक्ति शाखा**–इस शाखा के कवियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र का वर्णन किया। राम के चरित्र द्वारा ही जीवन के सभी क्षेत्रों के लिए धर्म, सदाचार एवं कर्त्तव्य का सन्देश जनसाधारण को हृदयंगम कराया जा सकता था। राम के चरित्र से भारतीय संस्कृति के समन्वयवादी रूप की पुनः प्रतिष्ठा हो सकी। राम का चरित्र इतना महान् और व्यापक है कि इसमें सम्पूर्ण मानव-मात्र को धर्म और जीवन का सन्देश देने की क्षमता है। यही कारण है कि काव्य के प्रबन्ध, मुक्तक, गीति आदि प्रकारों एवं दोहा, चौपाई, कवित्त, घनाक्षरी आदि शैलियों का आश्रय लेकर रामचरित्र वर्णित हो सका। रामकाव्य में जैसे भक्ति के सर्वांगीण रूप का परिपाक हुआ है, वैसे ही काव्योत्कर्ष भी अपनी चरम सीमाओं का स्पर्श करता है। भाव, अनुभाव, रस, अलङ्कार किसी भी दृष्टि से देखें, राम-काव्य हिन्दी साहित्य की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि है। तुलसी इस धारा के सबसे प्रमुख कवि हैं। जीवन का समन्वयवादी एवं मर्यादावादी दृष्टिकोण ही तुलसी की सबसे बड़ी देन है। जीवन की इसी चेतना का स्पन्दन आज भी भारतीय समाज अनुभव कर रहा है। तुलसी ने अवधी और ब्रज दोनों ही भाषाओं में राम का गुणगान किया है। रामचरितमानस, कवितावली, गीतावली, विनयपत्रिका आदि उनके अनुपम ग्रन्थ हैं। विनयपत्रिका की भक्ति में ज्ञान और भक्ति का पूर्ण सामंजस्य है। रामभक्ति की धारा प्रधानतः प्रबन्ध काव्य के रूप में बही। राम का चरित्र इसके लिए पूर्णतया उपयुक्त भी है, पर गीति और मुक्तक का क्षेत्र भी रामभक्ति से भरा पड़ा है। केशव की रामचन्द्रिका भी इसी धारा का ग्रन्थ है। नाभादास आदि महाकवि भी इसी धारा के हैं।

## भक्तिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

1. निर्गुणोपासना की ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि निराकार ईश्वर के उपासक थे। गुरु के महत्त्व पर उनका विश्वास था और अन्धविश्वास, रूढ़िवाद, मिथ्याडम्बर तथा जाति-पाँति के बन्धनों के वे विरोधी थे। इनके काल की भाषा में अनेक बोलियों का मिश्रण था तथा वह सीधी-सादी होती थी। प्रधान छन्द साखी (दोहा) और पद थे। विश्वबन्धुत्व की भावना जगाना इनका प्रधान उद्देश्य था।
2. निर्गुणोपासना की प्रेमाश्रयी शाखा के कवि भारतीय लोकजीवन में प्रचलित कथाओं एवं इतिहास-प्रसिद्ध प्रेमगाथाओं पर आधारित काव्य लिखते थे। इनमें सूफी उपासना-पद्धति का प्रभाव था। गुरु का महत्त्व था। भाषा अवधी थी तथा दोहा एवं चौपाई प्रमुख छन्द थे।
3. सगुणोपासना में कृष्ण-भक्ति काव्य के आधार कृष्ण और राम-भक्ति काव्य के आधार राम भगवान् के अवतार रूप में उपास्य थे। इनका गुणगान और लीलाओं का वर्णन प्रमुख था। सूर की काव्य-भाषा ब्रज थी। उन्होंने केवल मुक्तक पदों की रचना की, जिन्हें बाद में लीलाक्रम अथवा श्रीमद्भागवत के कथा-क्रम में संकलित कर लिया गया। तुलसी ने अवधी तथा ब्रजभाषा दोनों को काव्य-भाषा बनाया। तुलसी ने दोहा, चौपाई, सोरठा, बरवै, हरिगीतिका, सवैया आदि विविध छन्दों का प्रयोग किया है। विनयपत्रिका में विनय के पद हैं।
4. इस काल की विशिष्ट प्रवृत्ति कवियों का राजाश्रय से स्वतन्त्र होना है।
5. कृष्ण-भक्ति में शृङ्गार तथा वात्सल्य रस और सख्य भाव की प्रमुखता है। राम भक्ति में शान्त रस तथा दास्यभाव की प्रधानता है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति-काल को हिन्दी का स्वर्ण युग कहा जाता है। भक्त कवियों ने चित्त की जिस उदात्त भूमिका में रस कर हृदय-सागर का मन्थन कर मनोरम भावों के नवनीत को प्रदान किया है, वह भारतीय साहित्य की शाश्वत विभूति है। निर्गुणोपासना की ज्ञानाश्रयी शाखा के सन्त कवियों ने समाज-कल्याण के हितकारी उपदेश दिये। उन्होंने ज्ञान और सच्चे गुरु के महत्त्व को प्रतिष्ठा दी। प्रेमाश्रयी शाखा के सूफी सन्त कवियों ने ईश्वर-प्राप्ति का मुख्य साधन प्रेम बताया। सगुणोपासक कवियों ने कृष्ण की मनोरम लीलाओं एवं राम के मर्यादा पुरुषोत्तम चरित्र की बड़ी ही मनोरम झाँकियाँ प्रस्तुत कीं।

सीमित वर्ण्य-विषयों का असीम वर्णन इस काव्य की विशेषता है। इन कवियों की रचनाओं की केवल विषयवस्तु ही नहीं, अपितु काव्यशास्त्रीय पक्ष भी परम समृद्ध है।

# रीतिकाल

हिन्दी साहित्य का उत्तर-मध्य काल, जिसमें सामान्य रूप से शृङ्गार प्रधान लक्षण ग्रन्थों की रचना हुई, रीतिकाल कहा जाता है। 'रीति' शब्द काव्यशास्त्रीय परम्परा का अर्थवाहक है। इस युग में कवियों की प्रवृत्ति रीति सम्बन्धी ग्रन्थ रचने की थी। इस काल के कवियों ने यदि शृङ्गारिक छन्द भी रचे तो वे स्वतन्त्र न होकर शृङ्गार रस की सामग्री के लक्षणों के उदाहरण होने के कारण रीतिबद्ध ही थे। इसीलिए इस काल को रीतिकाल की संज्ञा दी गयी है। शृङ्गार की रचनाओं की प्रमुखता के कारण इसे **शृङ्गार काल** भी कहा जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसका समय सन् 1643 ई0 (संवत् 1700 वि0) से 1843 ई0 (संवत् 1900 वि0) तक निश्चित किया है, परन्तु किसी भी युग की प्रवृत्तियाँ न तो सहसा प्रादुर्भूत ही होती हैं और न सहसा समाप्त हो जाती हैं। अनेक दशाब्दियों तक आगे-पीछे उनके प्रभाव पाये जाते हैं। अतः अध्ययन की सुविधा के लिए रीतिकाल की सीमाएँ हमें सामान्य रूप में 17वीं शती के मध्य से 19वीं शती के मध्य तक मान लेनी चाहिए।

**प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ**

- **बिहारी** – सतसई
- **केशवदास** – रामचन्द्रिका, कविप्रिया, रसिकप्रिया, नखशिख
- **भूषण** – शिवराज भूषण, शिवा बावनी छत्रसाल दशक

## राजनीतिक परिस्थिति

राजनीतिक दृष्टि से यह काल मुगलों के शासन के वैभव के चरमोत्कर्ष और उसके बाद उत्तरोत्तर ह्रास, पतन और विनाश का युग कहा जा सकता है। शाहजहाँ के शासनकाल में मुगल वैभव अपनी चरम सीमा पर रहा। जहाँगीर ने अपने शासनकाल में राज्य का जो विस्तार किया था, शाहजहाँ ने उसकी वृद्धि इतनी की कि उत्तर भारत के अतिरिक्त दक्षिण में अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुण्डा राज्य तथा पश्चिम में सिन्ध के लहरी बन्दरगाह से लेकर पूर्व में आसाम में सिलहट और दूसरी ओर अफगान प्रदेश तक एकच्छत्र साम्राज्य की स्थापना हो गयी थी। राजपूतों ने भी मुगलों के विश्वासपात्र एवं स्वामिभक्त सेवक होकर दिल्ली के शासन की अधीनता स्वीकार कर ली थी। देश में सामान्य रूप से शान्ति थी। राजकोष भरा-पूरा था। औरंगजेब के शासन की बागडोर सँभालते ही उपद्रव प्रारम्भ हो गये थे। उसने उनका दमन किया। उसके पश्चात् उसके पुत्रों में संघर्ष हुआ। 1857 ई0 में देशव्यापी राजक्रान्ति के बाद अंग्रेजों का शासन स्थापित हो गया। अवध, राजस्थान और बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों का भी अन्त मुगल साम्राज्य के समान ही हुआ।

## सामाजिक परिस्थिति

सामाजिक दृष्टि से यह काल घोर अधःपतन का काल था। इस काल में सामन्तवाद का बोलबाला था। सामन्तशाही के जितने भी दोष होने चाहिए, सभी इस काल में थे। सामाजिक व्यवस्था का केन्द्र-बिन्दु बादशाह था। उसके अधीन थे मनसबदार और अमीर-उमराव। समाज में दो वर्ग प्रधान थे– एक था शासक और दूसरा शासित। शासित वर्ग में एक ओर श्रमजीवी और कृषक थे तो दूसरी ओर सेठ-साहूकार और व्यापारी। जनसाधारण की बड़ी ही शोचनीय दशा थी। सेठ-साहूकार भाग्यवादी थे। विलास के उपकरणों की खोज, उनका संग्रह तथा सुरा-सुन्दरी की आराधना अभिजात वर्ग का अधिकार था। मध्यम और निम्न वर्ग के लोग उसका अनुकरण करते थे।

## सांस्कृतिक परिस्थिति

सामाजिक दशा के समान ही देश की सांस्कृतिक स्थिति भी बड़ी शोचनीय थी। सन्तों एवं सूफियों के उपदेशों से प्रभावित होकर अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने हिन्दू और इस्लाम संस्कृतियों को निकट लाने का जो उपक्रम किया था वह औरंगजेब

की कट्टरवादी नीति के कारण समाप्तप्राय था। विलास-वैभव का खुला प्रदर्शन हो रहा था, धार्मिक नियमों का पालन कठिन हो गया था। मन्दिरों में भी ऐश्वर्य एवं विलास की लीला होने लगी थी। विलास के साधनों से हीन वर्ग कर्म एवं आचार के स्थान में अन्धविश्वासी हो चला था। जनता के इस अन्धविश्वास का लाभ धर्माधिकारी उठाते थे।

## ➥ साहित्य एवं कला की परिस्थिति

साहित्य एवं कला की दृष्टि से यह काल पर्याप्त समृद्ध था। इस युग में कवि एवं कलाकार साधारण वर्ग के होते थे, तथापि उनका बड़ा सम्मान होता था। उनके आश्रयदाता मुगल सम्राट् एवं राजा-महाराजा होते थे। कवियों एवं कलाकारों को अपने आश्रयदाताओं की अभिरुचि के अनुसार सृजन करना पड़ता था। इसका परिणाम यह हुआ कि इस युग के कवि एवं कलाकार प्रतिभावान होकर भी अपनी उत्कृष्ट मौलिकता समाज को प्रदान नहीं कर सके। विलासी आश्रयदाताओं के लिए रचा गया इस युग का काव्य स्वभावतः शृङ्गार-प्रधान हो गया। नारी के बाह्य सौन्दर्य के निरूपण में कवियों का श्रम सफल समझा जाता था। भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष का उत्कर्ष हुआ। इस काल का काव्यशास्त्रीय अध्ययन संस्कृत के आचार्यों का स्मरण दिलाता है। काव्य-कला के समान ही चित्रकला की भी इस युग में बड़ी उन्नति हुई। स्थापत्य, संगीत एवं नृत्य कलाओं की उन्नति तो इस काल की अपनी विशेषता है। इस युग में शृङ्गार रस प्रधान था। भूषण जैसे कवि ने वीर रस की रचना की। रीतिमुक्त कवियों में भाव की तन्मयता देखी जा सकती है। दोहा, सवैया, घनाक्षरी, कवित्त जैसे छन्द प्रचलित थे। ब्रजभाषा ही मुख्यतः काव्यभाषा थी।

भक्तिकाल तक हिन्दी काव्य प्रौढ़ता को पहुँच चुका था। भक्त कवियों ने अपने आराध्य के लीला-वर्णन में लौकिक रस का जो क्षीण रूप प्रस्तुत किया था, उत्तर-मध्यकालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अनुकूल परिस्थितियाँ पाकर वह पूर्ण ऐहिकता-परक प्रधानतः शृङ्गार रस के रूप में विकसित हुआ। भक्तिकालीन कवियों में सर्वप्रथम नन्ददास ने नायिकाभेद पर 'रसमंजरी' नाम की पुस्तक की रचना की। संस्कृत की काव्यशास्त्रीय परम्परा पर हिन्दी काव्य में 'रीति' के वास्तविक प्रवर्तक केशवदासजी हैं। इस दृष्टिकोण से रचे गये 'कविप्रिया', 'रसिकप्रिया' इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। इसके बाद हिन्दी रीति ग्रन्थों की परम्परा निरन्तर विकसित होती गयी। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस युग के सम्पूर्ण साहित्य को 'रीतिबद्ध' और 'रीतिमुक्त' दो वर्गों में बाँटा गया है—

**(i) रीतिबद्ध काव्य**—रीतिबद्ध काव्य के अन्तर्गत वे काव्य-ग्रन्थ आते हैं जिनमें काव्य-तत्त्वों के लक्षण देकर उदाहरण रूप में काव्य-रचनाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। इस परम्परा में कतिपय ऐसे आचार्य थे, जिन्होंने काव्यशास्त्र की शिक्षा देने के लिए रीति ग्रन्थों का प्रणयन किया था। समस्त रसों के निरूपक आचार्यों में चिन्तामणि का नाम सर्वप्रथम आता है। 'रस विलास', 'छन्दविचार', 'पिंगल', 'शृङ्गार मंजरी', 'कविकुल कल्पतरु' आदि इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। चिन्तामणि की परम्परा के दूसरे महत्त्वपूर्ण कवि आचार्य कुलपति मिश्र, देव, भिखारीदास, ग्वाल कवि आदि हैं। जिन कवियों के कृतित्व के कारण रीतिकाव्य प्रतिष्ठित हुआ, उनमें देव का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। नव रसों का सफल निरूपण करनेवाले आचार्यों में पद्माकर तथा सैयद गुलाम नबी 'रसलीन' आदि प्रसिद्ध हैं। शृङ्गार-रस-विषयक साँगोपाँग विवेचन करने वाले आचार्यों में मतिराम का नाम सर्वप्रथम है। रीतिबद्ध काव्य-परम्परा के कवियों में कुछ ऐसे भी हैं जिन्होंने रीति ग्रन्थों की रचना न करके काव्य-सिद्धान्तों या लक्षणों के अनुसार काव्य-रचना की है। ऐसे कवियों में सेनापति, बिहारी, वृन्द, नेवाज, कृष्ण आदि की गणना की जाती है। सेनापति का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'कवित्त रत्नाकर' है। बिहारी रीतिकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनकी ख्याति का मूल आधार इनकी श्रेष्ठ कृति 'सतसई' है। दोहा जैसे छोटे से छन्द में एक साथ ही अनेक भावों का समावेश कर सकने की सफलता के कारण इनके काव्य में 'गागर में सागर' भरने की उक्ति चरितार्थ होती है।

**(ii) रीतिमुक्त काव्य**—रीति परम्परा के साहित्यिक बन्धनों एवं रूढ़ियों से मुक्त इस काल की स्वच्छन्द काव्यधारा को रीतिमुक्त काव्य कहा जाता है। आन्तरिक अनुभूति, भावावेग, व्यक्तिपरक अभिव्यञ्जना की सांकेतिक काव्य-रूढ़ियों से मुक्ति, कल्पना की प्रचुरता आदि इसकी विशेषताएँ हैं। इस धारा के प्रमुख कवि **घनानन्द** हैं। इनकी काव्य-शैली बड़ी भावनात्मक तथा

मार्मिक है। इस धारा के कवियों की लगभग सारी विशेषताएँ इनके काव्य में एक-साथ प्राप्त हो जाती हैं। इस धारा के अन्य प्रमुख कवि हैं—आलम, ठाकुर, बोधा और द्विजदेव।

## रीतिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

1. **रीति निरूपण :** इस युग में रीति ग्रन्थों की रचना मुख्यतः तीन दृष्टियों से की गयी है। इनमें प्रथम उन रीति ग्रन्थों का निर्माण है जिनका उद्देश्य काव्यांग विशेष का परिचय कराना है, कवित्व का आग्रह नहीं है। जसवन्त सिंह का 'भाषा-भूषण', याकूब खाँ का 'रस-भूषण', दलपतिराय वंशीधर का 'अलङ्कार-रत्नाकर' आदि रचनाएँ इसी कोटि में आती हैं। द्वितीय दृष्टि में रीति-कर्म और कवि-कर्म का समन्वय मिलता है। इनमें चिन्तामणि, मतिराम, भूषण, देव, पद्माकर, ग्वाल आदि आते हैं। लक्षणों का निर्माण न करके काव्य-परम्परा के अनुसार साहित्य-सृजन करनेवाले कवियों बिहारी, मतिराम आदि को तीसरी कोटि में रखा जाता है।
2. **शृङ्गारिकता :** शृङ्गार की प्रवृत्ति रीतिकाल की कविता में प्रधान है। शृङ्गार के संविधान में नायक-नायिकाओं के भेद, उद्दीपक सामग्री, अनुभावों के विविध रूपों, संचारियों, संयोग के विविध भाव तथा वियोग की विभिन्न कार्यदशाओं का निरूपण इस प्रवृत्ति का प्राण है। इसमें नारी के बाह्य चित्रण की प्रमुखता है।
3. **राज-प्रशस्ति :** यह प्रवृत्ति अलङ्कार और छन्दों के विवेचन करने वाले ग्रन्थों में भी देखने को मिलती है। इसका मुख्य विषय आश्रयदाताओं की दानवीरता अथवा युद्धवीरता की प्रशंसा ही रही है।
4. **भक्ति की प्रवृत्ति :** रीतिग्रन्थों के प्रारम्भ में मङ्गलाचरणों, ग्रन्थों के अन्त में आशीर्वचनों, भक्ति एवं शान्त रसों के उदाहरणों में यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है। राम और कृष्ण को विष्णु के अवतार के रूप में ग्रहण किया गया है। इस काल के कवियों के आकुल मन के लिए भक्ति शरण-भूमि थी। विलासिता के वर्णन से ऊबे हुए कवियों के द्वारा भक्ति की रची गयी फुटकर रचनाएँ बड़ी सुन्दर हैं।
5. **नीति की प्रवृत्ति :** अन्योपदेश तथा अन्योक्तिपरक रचनाओं में नीति की प्रवृत्ति मिलती है। इस प्रकार की रचनाओं में वैयक्तिक अनुभवों का विशेष स्थान है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल का अपना विशिष्ट स्थान है। इस काल में भारतीय काव्यशास्त्र की हिन्दी में अवतारणा हुई। इस काल की कविता का सामाजिक मूल्य भी है। पराभव के उस युग में समाज के अभिशप्त जीवन में सरसता का संचार कर रीति-कालीन कवियों ने अपने ढंग से समाज का उपकार किया था। कला की दृष्टि से भी रीतिकाल के काव्य का महत्त्व असन्दिग्ध है। इसी काल के कवियों ने ब्रजभाषा को पूर्ण विकास तक पहुँचाने का कार्य किया।

## आधुनिक काल

हिन्दी साहित्य में आधुनिकता का सूत्रपात अंग्रेजों की साम्राज्यवादी शासन-प्रणाली के नवीन अनुभव से हुआ था, जिसमें बाहर से बड़ी शान्ति दृष्टिगत होती थी, किन्तु भीतर धन का अविरल प्रवाह विदेश की ओर अग्रसर रहता था। यद्यपि अंग्रेज हमारा आर्थिक शोषण करते रहे और अपने देश के सरकारी और साथ-ही-साथ व्यक्तिगत खजाने भी लगातार भरते रहे, तथापि भारतवर्ष में वैज्ञानिक बोध का प्रसार अंग्रेजों के सम्पर्क के फलस्वरूप ही हुआ। आधुनिक युग, जीवन की यथार्थता के ग्रहण, विश्व के विभिन्न व्यापारों के बुद्धिपरक वैज्ञानिक दृष्टिकोण और साहित्य में सामान्य मानव की प्रतिष्ठा का युग रहा है और यह आधुनिक चेतना हमें अंग्रेजों के सम्पर्क से उपलब्ध हुई। आधुनिक हिन्दी काव्य इसी आधुनिक बोध से ओत-प्रोत आधुनिक चेतना से अनुप्राणित काव्य है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आधुनिक काल का प्रारम्भ सन् 1843 ई० (संवत् 1900 वि०) से माना है। अन्य अनेक विद्वानों की सम्मति में इसका प्रारम्भ 19वीं शती के मध्य होता है। 7-8 वर्ष आगे-पीछे माने जाने से यह तथ्य विवादास्पद नहीं है। अध्ययन की सुविधा के लिए आधुनिक काल का उपविभाजन इस प्रकार किया गया है—

1. पुनर्जागरण काल (भारतेन्दु-युग) — सन् 1857-1900 ई0
2. जागरण-सुधार-काल (द्विवेदी-युग) — सन् 1900-1922 ई0
3. छायावादी युग — सन् 1923-1938 ई0
4. छायावादोत्तर युग—
   (क) प्रगतिवाद, प्रयोगवाद — सन् 1938-1960 ई0
   (ख) नयी कविता युग — सन् 1960 ई0 से.......

## प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

| | | |
|---|---|---|
| **भारतेन्दु युग** | भारतेन्दु हरिश्चन्द्र<br>श्रीधर पाठक | प्रेम-माधुरी<br>कश्मीर-सुषमा |
| **द्विवेदी युग** | मैथिलीशरण गुप्त<br>अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' | साकेत<br>प्रिय-प्रवास |
| **छायावादी युग** | जयशंकर 'प्रसाद'<br>महादेवी वर्मा | कामायनी<br>यामा |
| **प्रगतिवादी युग** | शिवमंगल सिंह 'सुमन'<br>रामधारीसिंह 'दिनकर' | प्रलय-सृजन<br>उर्वशी |
| **प्रयोगवादी युग** | 'अज्ञेय'<br>नागार्जुन | आँगन के पार द्वार<br>प्यासी-पथरायी आँखें |
| **नयी कविता युग** | गिरिजाकुमार माथुर<br>भवानीप्रसाद मिश्र | धूप के धान<br>खुशबू के शिलालेख |

## ➥ भारतेन्दु युग

हिन्दी कविता में आधुनिकता का स्वर सर्वप्रथम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की रचनाओं में सुनने को मिला। हिन्दी काव्यधारा में नवजीवन के संचरण के लिए उन्होंने ही **'कविता-वर्धिनी सभा'** जैसी नवीन साहित्यिक संस्था की स्थापना की थी और उसके मुखपत्र के रूप में **'कविवचन सुधा'** प्रकाशित की थी। भारतेन्दुजी की इस साहित्यिक संस्था की बैठकों की सूचना इसी पत्रिका में छपा करती थी। इसी पत्रिका में उसकी बैठकों में पठित रचनाएँ प्रकाशित हुआ करती थीं और इसी पत्रिका में उन पर मिलने वाले पुरस्कारों की घोषणा होती थी। हिन्दी के आधुनिक काल का कवि अपनी रुचि के विषय को लेकर अपनी रुचि की भाषा और अपनी रुचि के साहित्यिक संविधान में कुछ कहने को स्वच्छन्द था। आधुनिक हिन्दी काव्य आधुनिक कवियों के इसी स्वच्छन्द और समर्थ व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है।

यह मनुष्य की सीमा है कि नवीनता के प्रति अत्यधिक आग्रहशील व्यक्ति भी परम्परा के प्रभाव से अपने को पूर्णतः मुक्त नहीं कर पाता। भारतेन्दु को एक ओर हम देश के आर्थिक शोषण से विक्षुब्ध, स्वदेशानुराग की भावना से ओतप्रोत, मातृभाषा की प्रतिष्ठावृद्धि के लिए कृतसंकल्प, समाज के सुसंस्कार के हित में सहज तत्पर, प्रकृति की दिव्य शोभा के प्रति स्नेह-विह्वल देखते हैं और दूसरी ओर वे वल्लभ सम्प्रदाय से दीक्षा ग्रहण करते हैं, राजाश्रित कवियों की भाँति महारानी विक्टोरिया की प्रशंसा में तल्लीन हैं, रीतिकालीन कवियों के समान काव्य की शृङ्गार-सज्जा में प्रवीण हैं। उनके समकालीन कवियों में भी इसी द्विधा व्यक्तित्व की अभिव्यञ्जना मिलती है। भारतेन्दु स्वयं तो सन् 1885 में दिवंगत हो गये थे, किन्तु उनके समकालीन प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', अम्बिकादत्त व्यास आदि का काव्याभ्यास 19वीं शताब्दी के अन्त तक चलता रहा। उत्तरार्द्ध के कवि श्रीधर पाठक में आधुनिक कविता का स्वच्छन्दतावादी स्वर और अधिक मुखरित हुआ।

## ➥ द्विवेदी युग

सन् 1900 ई० में 'सरस्वती' के प्रकाशन के साथ हिन्दी कविता में आधुनिक प्रवृत्तियाँ बद्धमूल होनी आरम्भ हुईं। भारतेन्दु युग में उस काल की द्विधा वृत्ति के अनुरूप साहित्यिक भाषा के भी दो रूपों का प्रचलन रहा। गद्य रचनाएँ तो खड़ीबोली में लिखी गयीं, किन्तु काव्य-साधना ब्रजभाषा में ही चलती रही। आधुनिकता को हिन्दी साहित्य में पूर्णतः बद्धमूल करने के लिए आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जैसे जागरूक, व्यवस्थित और सशक्त व्यक्तित्व की अपेक्षा थी। सन् 1903 में उन्होंने 'सरस्वती' का सम्पादन-भार ग्रहण किया और अपने महाप्राण व्यक्तित्व की छाया में हिन्दी भाषा और साहित्य का सम्पूर्ण संविधान ही बदल डाला, इसीलिए सन् 1900 से 1922 ई० तक के काल को द्विवेदी युग की संज्ञा दी जाती है।

आचार्य द्विवेदी की विशेष प्रसिद्धि हिन्दी गद्य को परिष्कृत, परिमार्जित और व्याकरणसम्मत बनाने की दृष्टि से है, किन्तु इससे भी अधिक उनका महत्त्व हिन्दी के शब्दभण्डार की अभिवृद्धि, उसकी अभिव्यञ्जना शक्ति के संवर्धन और उसे ज्ञान-विज्ञान की नवीनतम धाराओं की अभिव्यक्ति के योग्य बनाने का रहा है। हिन्दी कवियों को उन्होंने ब्रजभाषा के मध्ययुगीन माध्यम को छोड़कर खड़ीबोली का आधुनिक माध्यम अपनाने की प्रेरणा दी। आचार्य द्विवेदी के काव्यदर्शन में विशेषरूप से उसके जड़ पक्षों के प्रति प्रबल विद्रोह का स्वर है और साथ-ही-साथ नये क्षेत्रों एवं प्रदेशों के पथ पर अग्रसर होने का आह्वान भी है।

आधुनिक काव्य-दृष्टि के अनुरूप उन्होंने कविता को मन के भावावेग का सहज उद्गार बताया। उनकी धारणा थी कि चींटी से लेकर हाथी पर्यन्त पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यन्त मनुष्य, बिन्दु से लेकर समुद्र पर्यन्त जल, अनन्त आकाश, अनन्त पर्वत सभी को लेकर कविता लिखी जा सकती है, सभी से उपदेश मिल सकता है और सभी के वर्णन से मनोरंजन हो सकता है। आचार्य द्विवेदी के इस व्यापक काव्य-दर्शन को लेकर मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', कामताप्रसाद गुरु, लोचनप्रसाद पाण्डेय आदि ने कविताएँ लिखीं। इनकी रचनाओं में भी हमें परम्परा और प्रयोग दोनों के स्वर सुनने को मिलते हैं। आचार्य द्विवेदी सहृदय होते हुए भी मूलतः बुद्धिवादी थे और उनके इसी व्यक्तित्व के अनुरूप उनके युग के साहित्य में इस जगत् के जीवन-प्रवाह का बुद्धिपरक व्याख्यान मिलता है। मैथिलीशरण गुप्त को हम भारतीय इतिहास के लगभग सभी पृष्ठों की बुद्धिपरक व्याख्या उपस्थित करते हुए देखते हैं, जो उनके रसात्मक व्यक्तित्व के कारण सरस भी है। उपाध्यायजी ने पहले कृष्ण और राधा की कथा को आधुनिक बुद्धिवादी दृष्टिकोण के अनुरूप नवीन कलेवर देकर उपस्थित किया और फिर कालान्तर में इसी दृष्टि से वैदेही-बनवास का प्रसंग प्रस्तुत किया। इस काल में अकेले 'रत्नाकर' परम्परा के साथ पूर्णतः आबद्ध होकर मध्ययुगीन विषयों पर मध्ययुगीन काव्यभाषा में मध्ययुगीन कला-सौष्ठव की ही सृष्टि करते रहे।

## ➥ छायावादी युग

प्रसादजी का रचनाकाल, जिनकी प्रारम्भिक रचनाओं में ही स्वानुभूति का स्वर प्रधान है, द्विवेदी युग के मध्य काल सन् 1909 से 'इन्दु' पत्रिका के प्रकाशन के साथ आरम्भ होता है। 'इन्दु' की प्रथम कला की प्रथम किरण में ही हम उन्हें स्वच्छन्दतावाद का उद्घोष करते देखते हैं।

स्वच्छन्दतावाद साहित्य में विद्रोह का स्वर रहा है। सामाजिक जीवन में वह रूढ़ियों और परम्पराओं के प्रति विरोध और व्यक्ति के अपनी रुचि के अनुसार कार्य करने की प्रवृत्ति रूप में प्रकट हुआ है। साहित्य में वह अत्यधिक सामाजिकता के विरोध में, आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति को प्रश्रय देता है। स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार स्वभावतः अनुभूतिशील और भावुक मनोवृत्ति का होता है। वह जीवन को अपनी भावना और कल्पना से अनुरंजित करके उपस्थित करता है। वह मूलतः सौन्दर्य का साधक होता है और उसकी यह सौन्दर्य-साधना कभी मानवीय रूप के लिए होती है, कभी प्रकृति के प्रति उन्मुख तथा कभी किसी दिव्य अनुभूति से संप्रेरित होती है।

स्वच्छन्दतावादी काव्य-रचनाओं का कला-पक्ष भी नवीनता लिये होता है। उसमें मौलिक कल्पना का स्वच्छन्द विलास ही दृष्टिगत होता है। हिन्दी का छायावादी काव्य इन सभी विशेषताओं से समन्वित है, साथ ही उसमें भारतीय जीवनधारा की कुछ परम्परागत और कुछ युगीन प्रवृत्तियाँ भी प्रकट हुई हैं। परम्परागत प्रवृत्तियाँ—आध्यात्मिकता का संस्पर्श और वैष्णव भक्ति-भावना तथा युगीन प्रवृत्तियाँ—राष्ट्रीयता, पीड़ित जनता के प्रति सहानुभूति, दुःखवाद या निराशावाद की हैं। प्रत्येक व्यक्ति की

अनुभूतियों का स्वरूप भी भिन्न होता है, इसीलिए हिन्दी के इन स्वच्छन्दतावादी कवियों का भी अपना अलग-अलग व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में उभरा है। उनकी काव्य-प्रवृत्तियों में इसीलिए पर्याप्त वैभिन्य है।

हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा में आधुनिक काल के आध्यात्मिक महापुरुषों—रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, रामतीर्थ और कालान्तर में अरविन्द का प्रभाव रहा है। रवीन्द्रनाथ की आध्यात्मिक रचनाओं से भी हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने बहुत कुछ ग्रहण किया है। इसीलिए प्रसाद, निराला, पन्त और महादेवी की रचनाओं में अनेक स्थानों पर इस जगत् के विभिन्न स्वरूपों में उस परब्रह्म का छायाभास पाने जैसी प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। इसी आध्यात्मिक छायादर्शन की प्रवृत्ति के कारण इस काव्यधारा को छायावाद काव्यधारा कहा गया, किन्तु छायावादी कवियों का सम्पूर्ण साहित्य इस आध्यात्मिक प्रवृत्ति से ओत-प्रोत नहीं है।

छायावादी कविता के ह्रास का सबसे बड़ा कारण विदेशी शासन के दमन-चक्र के नीचे पिसते हुए भारतीय जनसाधारण की निरन्तर बढ़ती हुई पीड़ा को कहा जा सकता है; उसी के बोध को लेकर प्रसाद, निराला और पन्त अपने मनोलोक की भावना और कल्पना के प्रदेशों से निकल कर कठोर यथार्थ की भूमि पर उतर आये, पीड़ित मानवता के प्रति सहानुभूति प्रकट करने लगे, जनता के दुःख-दर्द को वाणी देने लगे और अपने चारों ओर की कुरूपताओं को मिटाने में तत्पर हो उठे। प्रसाद ने कथा-साहित्य, पन्त ने काव्य-रचनाओं और निराला ने गद्य और पद्य दोनों ही विधानों में अपने चारों ओर के कठोर यथार्थ का चित्रण करनेवाली रचनाएँ उपस्थित कीं। किन्तु जीवन का यह नया यथार्थ अपने समुचित विकास के लिए नये जीवन-दर्शन की अपेक्षा रखता था। यह नया यथार्थ एक तो बाहर का था जिसमें एक ओर पूँजी की वृद्धि होती थी और दूसरी ओर दीनता का प्रसार होता था। मनुष्य के मन के भीतर की घुटन, निराशा, कुण्ठा आदि व्यक्तित्व को खण्डित करने वाली अनेक वृत्तियाँ बड़ी सरगर्मी से चक्कर लगा रही थीं। जीवन के बाह्य यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए कार्ल मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का दर्शन अपनाया गया और मनुष्य के मन के भीतर सिगमण्ड फ्रॉयड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त को उपयोगी समझा गया। साहित्य में प्रथम को प्रगतिवाद और दूसरे को प्रयोगवाद की संज्ञाएँ मिलीं।

## ➥ छायावादोत्तर युग

**(क) प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद**—हिन्दी कविता में प्रगतिवाद की प्रतिष्ठा पश्चिम की मार्क्सवादी विचारधारा को लेकर हुई। किन्तु हमारे देश की भूमि पहले से ही इस नये जीवनदर्शन के लिए परिपक्व थी। यूरोप में पूँजीवादी सभ्यता के पर्याप्त विकसित हो जाने पर उसकी दुर्बलताओं को भली प्रकार पहचान कर उन्हें दूर करके नवीन सभ्यता के आविर्भाव की दृष्टि से साम्यवाद एवं अन्य प्रगतिशील विचारधाराओं का जन्म हुआ था। हमारे देश में भी औद्योगिकीकरण का क्रम बड़ी द्रुतगति के साथ चल रहा था और उसके फलस्वरूप मजदूर-संगठन और उनकी देखा-देखी किसान सभाएँ भी बनने लगी थीं। सन् 1917 में रूस की राज्य-क्रान्ति के अनन्तर सोवियत शासन स्थापित हो जाने पर भारतीय बुद्धिवादी भी सर्वहारा वर्ग को संगठित करके जनक्रान्ति की बात सोचने लगा था। पण्डित जवाहरलाल नेहरू और रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे महापुरुषों ने भी रूसी क्रान्ति और सोवियत शासन का अभिनन्दन किया था। इसी पृष्ठभूमि में सन् 1936 की लखनऊ कांग्रेस के समय **प्रगतिशील लेखक संघ** की स्थापना हुई। गाँधीजी की विचारधारा से पर्याप्त प्रभावित प्रेमचन्दजी इस संस्था के प्रथम अधिवेशन के सभापति हुए। इस प्रकार हिन्दी साहित्य में प्रगतिवादी आन्दोलन चाहे मार्क्सवाद से अधिक अनुप्राणित हो गया हो, किन्तु आरम्भ में गाँधीवादियों और कांग्रेस के वामपन्थी विचारधारा के अनेक व्यक्तियों ने इसका सम्पोषण किया था। नरेन्द्र शर्मा का काव्य-विकास प्रेम और प्रकृति के उपरान्त गाँधीवाद और प्रगतिवाद की भूमिका तक पहुँचा। अब वे दर्शन एवं चिन्तन प्रधान हो गये हैं। सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और सुमित्रानन्दन पन्त की रचनाओं से आधुनिक काव्य में प्रगतिवादी आन्दोलन का आरम्भ हुआ। गजाननमाधव मुक्तिबोध ने अपने सम्बन्ध में, अपने समाज, देश और विदेश के सम्बन्ध में गम्भीरता से सोचने को बाध्य किया और एक चिन्तन दिशा प्रदान की। रामधारीसिंह 'दिनकर' ने इसके क्रान्तिकारी पक्ष को वाणी दी और फिर रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', शिवमंगलसिंह 'सुमन', डॉ० रामविलास शर्मा की रचनाओं में उसका स्वरूप और निखरा।

प्रगतिवाद के साथ-साथ मनुष्य के मन के यथार्थ को अभिव्यक्त करनेवाली प्रयोगवादी काव्यधारा भी सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' के नेतृत्व में प्रवाहित हुई। इस धारा के कवियों पर प्रारम्भ में फ्रॉयड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त का प्रभाव विशेष रूप से था। सन् 1943 में 'अज्ञेय' ने अपनी पीढ़ी के छह कवियों के सहयोग से 'तारसप्तक' का प्रकाशन किया।

इस काव्यधारा को प्रयोगवाद की संज्ञा क्यों दी गयी, इस सम्बन्ध में भी **'अज्ञेय'** का यह वक्तव्य द्रष्टव्य है—

*"प्रयोग सभी कालों के कवियों ने किया है....किसी एक काल में किसी विशेष दिशा में प्रयोग करने की प्रवृत्ति स्वाभाविक ही है। किन्तु कवि क्रमशः अनुभव करता आया है कि जिन क्षेत्रों में प्रयोग हुए हैं उनसे आगे बढ़कर अब उन क्षेत्रों का अन्वेषण होना चाहिए जिन्हें अभी नहीं छुआ गया है या जिनको अभेद्य मान लिया गया है।"*

**(ख) नयी कविता-युग**—सन् 1959 ई0 में तीसरे तारसप्तक के प्रकाशन तथा प्रयोगवाद की समाप्ति के साथ ही सन् 1960 ई0 से नयी कविता का जन्म माना गया। मनुष्य के मन का आलोक अब तक सर्वाधिक अभेद्य रहा था और अज्ञेयजी अथवा प्रयोगवादी कवियों के सौभाग्य से फ्रॉयड ने उसकी अर्गला खोल दी थी। भवानीप्रसाद मिश्र, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती आदि की रचनाओं में आधुनिक मनोविज्ञान के विभिन्न सिद्धान्तों 'सम्बन्धित विचार प्रवाह', 'मुक्त चेतनाधारा', 'मनोविश्लेषण' आदि के अनुरूप मनुष्य के मनोलोक के भावना-प्रवाह, स्वप्न, अवचेतन के भाव-खण्डों आदि के चित्रण देखने को मिलते हैं। हिन्दी कविता इस प्रयोगशीलता की प्रवृत्ति से भी आगे बढ़ गयी है और अब पहले की कविता से अपनी पूर्ण 'पृथकता' घोषित करने के लिए 'नयी कविता' प्रयत्नशील है। सन् 1954 में डॉ0 जगदीश गुप्त और डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी के सम्पादन में 'नयी कविता' काव्य संकलन के प्रकाशन से आधुनिक काव्य के इस नये रूप का शुभारम्भ हुआ था और वह इसी नाम के संकलनों में ही नहीं 'कल्पना', 'ज्ञानोदय' आदि पत्रिकाओं के माध्यम से भी आगे बढ़ती रही है। पन्तजी ने 'कला और बूढ़ा चाँद' तथा दिनकर ने 'चक्रवाल' की कुछ रचनाओं में इसी नवीन काव्य-प्रवृत्ति को अपनाया। नयी कविता की आधारभूत विशेषता है कि वह किसी भी दर्शन के साथ बँधी हुई नहीं है और वर्तमान जीवन के सभी स्तरों के यथार्थ को नयी भाषा, नवीन अभिव्यञ्जना विधान और नूतन कलात्मकता के साथ अभिव्यक्त करने में संलग्न है। हिन्दी का यह नया काव्य कविता के परम्परागत स्वरूप से इतना अलग हो गया है कि कविता न कहकर अकविता कहा जाने लगा है। आधुनिक कवि भावुकता के स्थान पर जीवन को बौद्धिक दृष्टिकोण से देखता है और इसीलिए उसे काल्पनिक आदर्शवाद के स्थान पर कटु यथार्थ अधिक आकृष्ट करता है।

●●●

# काव्य साहित्य के विकास पर आधारित प्रश्न

## अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

**1.** आदिकाल के सिद्ध साहित्य और जैन साहित्य के एक-एक प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।

**2.** 'मधु मालती' और 'साहित्य लहरी' के रचयिताओं के नाम लिखिए।

**3.** 'शृंगार मंजरी' और 'रस मंजरी' के रचयिताओं के नाम लिखिए।

**4.** 'कवितावर्धिनी सभा' के संस्थापक का नाम लिखिए तथा उसके मुख्य पत्र का नाम लिखिए।

**5.** भक्तिकाल की प्रेमाश्रयी शाखा के किसी एक महाकाव्य और उसके रचयिता का नाम लिखिए।

**6.** नरपति नाल्ह और चन्दबरदाई द्वारा रचित ग्रन्थों के नाम लिखिए।

**7.** आधुनिक युग के दो महाकाव्यों के नाम लिखिए।

**8.** आदिकाल के नाथ साहित्य के किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए।

**9.** 'आखिरी कलाम' और 'रामचन्द्रिका' के लेखकों के नाम लिखिए।

**10.** 'कवित्त रत्नाकर' और 'कविकुल कल्पतरु' के रचयिताओं के नाम लिखिए।

**11.** 'आनन्द कादम्बिनी' और 'ब्राह्मण' पत्रिका के सम्पादकों के नाम लिखिए।

**12.** सूफी काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि एवं उनकी किसी एक कृति का नाम लिखिए।

**13.** निर्गुण भक्ति काव्यधारा के दो प्रसिद्ध कवियों के नाम बताइए।

**14.** चन्दबरदाई और नरपति नाल्ह के एक-एक ग्रन्थ का नाम लिखिए।

**15.** भारतेन्दु के समकालीन दो कवियों के नाम बताइए।

**16.** प्रगतिशील लेखक-संघ का प्रथम अधिवेशन किसकी अध्यक्षता में और कब हुआ था?

**17.** गजानन माधव मुक्तिबोध किस सप्तक में संकलित हैं? उनकी एक रचना का नाम लिखिए।

**18.** रासो ग्रन्थों में किन दो भाषाओं का प्रयोग किया गया है?

**19.** रामभक्ति शाखा के तुलसीदास के अतिरिक्त किन्हीं दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।

**20.** 'कविकुल-कल्पतरु' एवं 'रामचन्द्रिका' के लेखकों के नाम लिखिए।

**21.** द्विवेदी युग के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।

**22.** आदिकालीन दो रचनाओं के नाम लिखिए।

**23.** वीरगाथा काल के दो प्रमुख कवि और उनकी रचना का नाम लिखिए।

**24.** ज्ञानाश्रयी-शाखा की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

*अथवा* निर्गुण भक्ति की ज्ञानाश्रयी शाखा की किन्हीं दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

**25.** प्रेममार्गी काव्यधारा के तीन कवियों के नाम लिखिए।

**26.** प्रयोगवादी काव्य की कोई दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ लिखिए।

27. कृष्ण को नायक मानकर रचना करनेवाले दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
28. आदिकाल के लिए प्रयुक्त विभिन्न नामों में से किन्हीं दो नामों का उल्लेख कीजिए।
29. रीतिकालीन कविता की दोनों प्रमुख धाराओं का नाम लिखिए।
30. अष्टछाप के दो कवियों के नाम लिखिए।
31. भक्तिकाल की दो प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।
32. प्रयोगवादी काव्यधारा का नेतृत्व करनेवाले कवि का नामोल्लेख कीजिए और उनकी रचना का नाम लिखिए।
33. प्रयोगवादी काव्यधारा के किन्हीं दो कवियों एवं उनकी एक-एक रचना का उल्लेख कीजिए।
34. रीतिकाल की किन्हीं दो प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।

*अथवा* रीतिकाल काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ लिखिए।

35. आदिकाल (वीरगाथा काल) की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

*अथवा* वीरगाथा काल की किन्हीं चार प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।

36. महाकवि सूरदास की दो रचनाओं के नाम लिखिए।
37. छायावादी (आधुनिककाल) कवियों की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
38. दो छायावादी प्रमुख कवियों एवं उनकी रचनाओं के नाम लिखिए।
39. प्रगतिवाद की दो विशेषताएँ अपने शब्दों में लिखिए।
40. रासो साहित्य से सम्बन्धित किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए।
41. भक्तिकाल के चार प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
42. छायावाद के एक प्रमुख कवि एवं उसकी एक रचना का नाम लिखिए।
43. रीतिकाल की दो प्रमुख काव्य-कृतियों के नाम लिखिए।
44. रीतिबद्ध काव्य के दो कवियों के नाम लिखिए।

*अथवा* रीतिकाल के दो कवियों के नाम बताइए और उनकी एक-एक रचनाएँ भी लिखिए।

45. रामभक्ति शाखा की दो प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
46. प्रेममार्गी शाखा के प्रमुख कवि का नाम बताइए तथा उसकी दो रचना का उल्लेख कीजिए।
47. रीतिकाल के वीर रस के किसी एक कवि और उसके द्वारा रचित एक ग्रन्थ का नाम लिखिए।
48. रीतिमुक्त काव्यधारा के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
49. द्विवेदीकालीन दो महाकाव्यों के नाम लिखिए।
50. ब्रजभाषा तथा अवधी भाषा के मध्यकालीन एक-एक प्रसिद्ध महाकाव्य का नाम लिखिए।
51. 'तारसप्तक' का अभिप्राय क्या है?
52. नयी कविता की आधारभूत विशेषताओं का उल्लेख करते हुए किन्हीं दो रचनाओं के नाम लिखिए।
53. हिन्दी की रीतिबद्ध और रीतिमुक्त कविता का अन्तर स्पष्ट कीजिए।
54. 'तारसप्तक' का सम्पादन किसने और किस समय किया?

*अथवा* 'तारसप्तक' किस सन् में प्रकाशित हुआ था? उसमें संग्रहीत किसी एक कवि का नाम लिखिए।

55. छायावाद के पतन का कारण संक्षेप में लिखिए।
56. पुनर्जागरण काल (भारतेन्दु युग) के काव्य की विशेषताएँ बताइए।
57. भारतेन्दुकालीन कविता के विकास में योगदान देने वाले दो कवियों के नाम निर्देश कीजिए।

**58.** 'तारसप्तक' की कविताएँ किस काव्यधारा से सम्बन्धित हैं?

**59.** अवधी भाषा के किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए।

**60.** भक्तिकालीन विभिन्न काव्यधाराओं में किस धारा का काव्य सर्वश्रेष्ठ है और उसका सर्वश्रेष्ठ कवि कौन है?

**61.** राम-भक्ति शाखा के सबसे प्रमुख कवि का नाम तथा उसकी एक प्रमुख रचना का नाम लिखिए।

**62.** 'साहित्य लहरी', 'चिदम्बरा' और 'कामायनी' में से किन्हीं दो के रचनाकारों के नाम बताइए।

**63.** सुमित्रानन्दन पन्त की एक रचना का नाम लिखिए।

**64.** छायावाद युग के दो महत्त्वपूर्ण कवियों के नाम लिखिए।

**65.** नयी कविता के दो महत्त्वपूर्ण कवियों के नाम लिखिए।

**66.** हिन्दी पद्य साहित्य के इतिहास के विभिन्न कालों के नाम लिखिए।

**67.** प्रेमाश्रयी शाखा की कविताओं की विशेषताएँ लिखिए।

**68.** 'आँसू', 'उर्वशी', 'राम की शक्ति-पूजा', 'उद्धवशतक' में से किन्हीं दो के रचनाकारों के नाम लिखिए।

**69.** सन्त काव्य का अर्थ स्पष्ट कीजिए। इस धारा के प्रमुख कवि का नाम भी लिखिए।

**70.** भक्ति काव्य की दो प्रमुख शाखाओं के नाम लिखिए।

**71.** निम्नलिखित में से किन्हीं दो कवि/कवयित्री की एक-एक प्रसिद्ध रचना का नाम लिखिए–
(i) महादेवी वर्मा, (ii) अज्ञेय, (iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, (iv) दिनकर।

**72.** 'पद्मावत', 'दोहावली', 'गंगावतरण' में से किन्हीं दो के रचनाकारों के नाम लिखिए।

**73.** सगुण भक्तिकाव्य की विशेषताएँ संक्षेप में बताइए।

**74.** आदिकाल के दो रासो काव्य के नाम लिखिए।

**75.** आचार्य केशवदास की दो प्रमुख काव्य-रचनाओं के नाम लिखिए।

**76.** हिन्दी के उस कवि का नाम लिखिए जिसकी रचनाओं में आधुनिकता का स्वर सर्वप्रथम सुनने को मिला। उसकी एक रचना का नाम भी लिखिए।

**77.** महादेवी वर्मा की दो प्रमुख काव्य-रचनाओं के नाम लिखिए।

**78.** 'कीर्तिलता' और 'परमालरासो' नामक काव्यों के रचनाकारों के नाम बताइए।

**79.** निर्गुण भक्ति की प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि तथा उनकी एक रचना का नामोल्लेख कीजिए।

**80.** छायावादोत्तर काल के किसी एक कवि तथा उनकी एक रचना का नाम निर्देश कीजिए।

**81.** तुलसीदास और केशवदास की एक-एक रचना का नाम लिखिए।

**82.** रीतिमुक्त काव्यधारा की किन्हीं दो प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

**83.** 'पद्मावत' और 'रामचन्द्रिका' के रचयिताओं का नामोल्लेख कीजिए।

**84.** 'रामचन्द्रिका', 'प्रियप्रवास', 'आँसू' और 'शिवा बावनी' नामक काव्य-कृतियों के रचनाकारों का नाम लिखिए।

**85.** निम्नलिखित पत्रिकाओं के सम्पादकों का नाम लिखिए–
(i) कविवचन सुधा, (ii) सरस्वती।

**86.** पुनर्जागरण काल किस युग को मानते हैं? उस युग की एक काव्यकृति का उल्लेख कीजिए।

**87.** रीतिकाल का यह नाम क्यों पड़ा? इस काल के एक प्रसिद्ध कवि का नाम लिखिए।

**88.** किन्हीं दो प्रगतिवादी काव्यधारा के कवियों के नाम लिखिए।

**89.** सूफी काव्य के दो कवियों के नाम लिखिए।

90. भारतेन्दु द्वारा सम्पादित दो पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
91. किसी एक प्रगतिवादी कवि का नाम और उसकी किसी एक कृति का नाम लिखिए।
92. हिन्दी के किस कवि को 'कठिन काव्य का प्रेत' कहा गया है? उसकी किसी एक रचना का नाम लिखिए।
93. मलिक मुहम्मद जायसी तथा सूरदास किस भाषा के कवि हैं?
94. 'भक्तन कौं कहा सीकरी सौं काम' यह पद किस भक्त कवि द्वारा रचित है? यह कवि भक्तिकाल की किस शाखा से सम्बन्धित है?
95. रीतिकाल के किसी एक 'रीतिसिद्ध' कवि का नामोल्लेख करते हुए उसकी किसी एक कृति का नाम लिखिए।
96. धर्मवीर भारती किस 'सप्तक' के कवि हैं? यह सप्तक किस सन् में प्रकाशित हुआ था?
97. 'जयमयंक जसचन्द्रिका' तथा 'पाहुड़ दोहा' कृतियों के रचनाकारों का नाम लिखिए।
98. हिन्दी का प्रथम महाकाव्य किसे माना जाता है? उसका रचनाकार कौन है?
99. 'रास पंचाध्यायी' तथा 'कनुप्रिया' कृतियों के रचनाकारों का नामोल्लेख कीजिए।
100. भक्तिकाल की राम भक्ति शाखा के दो कवियों के नाम लिखिए।
101. डॉ० रामविलास शर्मा, अज्ञेय, जगदीश गुप्त और शिवमंगलसिंह 'सुमन' में से दो प्रगतिवादी कवियों के नाम लिखिए।
102. आदिकाल के सिद्ध साहित्य के दो कवियों के नाम लिखिए।
103. केशवदास, कुलपति मिश्र, द्विजदेव और आलम में से रीतिमुक्त काव्यधारा के दो प्रतिनिधि कवि लिखिए।
104. प्रगतिशील लेखक-संघ का स्थापना वर्ष और उसके प्रथम सभापति का नाम बताइए।
105. 'पृथ्वीराज रासो' काव्य की रचना किस काल में हुई और उसके रचयिता कौन हैं?
106. 'रसिकप्रिया' और 'सतसई' नामक काव्य कृतियों के रचनाकारों के नाम लिखिए।
107. ज्ञानाश्रयी शाखा के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
108. सूरदास एवं तुलसीदास किस भक्ति-धारा के कवि हैं?
109. 'प्रियप्रवास' के रचयिता का नाम लिखिए।
110. 'तीसरा सप्तक' का प्रकाशन कब और किसके संपादन में हुआ था?
111. निर्गुण भक्ति की दो शाखाओं के नाम लिखिए।
112. वीरगाथा काल की दो विशेषताएँ लिखिए।
113. छायावाद काल के दो रचनाकारों के नाम लिखिए।
114. मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा प्रणीत दो ग्रन्थों के नाम लिखिए।
115. गीतावली और दोहावली भक्तिकाल के किस कवि की रचनाएँ हैं?
116. महादेवी वर्मा किस काव्यधारा की कवयित्री हैं?
117. मोहिका हँसेसि, कि कोहरहिं कहनेवाले कवि का क्या नाम था?
118. जयशंकर प्रसाद की दो काव्यकृतियों का नामोल्लेख कीजिए।
119. 'सिवा को सराहौं, कै सराहौं छत्रसाल को' उक्ति किसने कही थी?
120. 'अवधी' के दो महाकाव्यों और उनके रचनाकारों के नाम लिखिए।
121. 'साकेत' एवं 'उर्वशी' के रचनाकारों के नाम लिखिए।
122. अज्ञेय का पूरा नाम लिखिए।
123. 'नयी कविता' पत्रिका के सम्पादकों के नाम लिखिए।

**124.** द्वैतवाद के प्रवर्तक का नाम लिखिए।

**125.** जनवादी कविता की वृहद्त्रयी के लेखकों के नाम लिखिए।

**126.** गुसाईं दत्त को कवि के रूप में किस नाम से जाना जाता है?

**127.** सप्तक परम्परा के दो कवियों के नाम लिखिए।

**128.** दूसरा तारसप्तक के सम्पादक का पूरा नाम लिखिए।

**129.** 'कविवचन सुधा' किस युग की साहित्यिक पत्रिका है? इसके सम्पादक का नाम लिखिए।

**130.** हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग किस काल को कहा जाता है?

**131.** प्रगतिवादी युग के किसी एक कवि का नामोल्लेख कीजिए।

**132.** भक्तिकाल की सगुण भक्तिधारा के दो कवियों का नामोल्लेख कीजिए।

**133.** छायावाद युग के प्रमुख कवि का नाम लिखिए।

**134.** तुलसीदास किस काल के कवि हैं? उनकी एक प्रमुख रचना का नाम लिखिए।

**135.** भूषण किस रस के कवि हैं?

**136.** साठेत्तरी कविता के किन्हीं दो कवियों और उनकी रचनाओं का नामोल्लेख कीजिए।

**137.** 'रसवन्ती' के रचनाकार का नाम लिखिए।

**138.** द्विवेदी युग के किसी एक महाकाव्य का वर्णन कीजिए।

## ➡ बहुविकल्पीय प्रश्न

**1. निम्नलिखित में से कौन प्रेमाश्रयी शाखा के कवि नहीं हैं—**

(i) जायसी (ii) सूरदास

(iii) मंझन (iv) कुतबन

**2. निम्नांकित में रामभक्ति शाखा के कौन नहीं हैं—**

(i) तुलसीदास (ii) चतुर्भुजदास

(iii) अग्रदास (iv) नाभादास

**3. निम्नलिखित में से किस कवि को बाल-वर्णन के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है—**

(i) तुलसीदास (ii) बिहारी

(iii) सूरदास (iv) केशवदास

**4. निम्नलिखित कवियों में वल्लभाचार्य का शिष्य कौन था—**

(i) भूषण (ii) भिखारीदास

(iii) रघुराज सिंह (iv) कृष्णदास

**5. निम्नलिखित कवियों में स्वामी रामानन्द का शिष्य कौन था—**

(i) नानक (ii) मलूकदास

(iii) कबीर (iv) रैदास

**6. निम्नलिखित में से कौन सगुणभक्ति शाखा के कवि नहीं हैं—**

(i) सूरदास (ii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

(iii) तुलसी (iv) मीरा

**7. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ सगुणभक्ति धारा का श्रेष्ठ ग्रन्थ है–**

(i) कवितावली (ii) साहित्यलहरी

(iii) श्रीरामचरितमानस (iv) रामलला नहछू

**8. हिन्दी साहित्य के इतिहास में निम्न में से किस काल को 'स्वर्ण युग' कहा जाता है–**

(i) रीतिकाल (ii) आदिकाल

(iii) भक्तिकाल (iv) आधुनिककाल

**9. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ रीतिकालीन काव्य-परम्परा से सम्बन्धित है–**

(i) रामचरितमानस (ii) बिहारी सतसई

(iii) दीपशिखा (iv) रश्मिरथी

**10. रीतिकाल की निम्नलिखित प्रमुख प्रवृत्तियों में से कौन-सी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है–**

(i) राज-प्रशस्ति (ii) शृङ्गारिकता

(iii) रीति-निरूपणता (iv) नीति

**11. निम्नलिखित पत्रिकाओं में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने कौन-सी पत्रिका प्रकाशित की थी–**

(i) कविवचन सुधा (ii) सरस्वती

(iii) कल्पना (iv) ज्ञानोदय

**12. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना द्विवेदी युग में लिखी गयी है–**

(i) कामायनी (ii) तारसप्तक

(iii) प्रियप्रवास (iv) ग्राम्या

**13. निम्नलिखित में से छायावादयुगीन कवि हैं–**

(i) जयशंकर प्रसाद (ii) जगन्नाथदास 'रत्नाकर'

(iii) रामधारीसिंह 'दिनकर' (iv) कबीरदास

**14. ''प्रयोग सभी कालों के कवियों ने किया है.......किसी एक काल में किसी विशेष दिशा में प्रयोग करने की प्रवृत्ति स्वाभाविक ही है।''**

**ऊपर उद्धृत वक्तव्य निम्नलिखित रचनाकारों में से किसका है–**

(i) निराला (ii) अज्ञेय

(iii) प्रसाद (iv) महादेवी वर्मा

**15. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना छायावाद युग में लिखी गयी है–**

(i) प्रेम-माधुरी (ii) उद्धव-शतक

(iii) चित्राधार (iv) सूरसारावली

**16. 'तारसप्तक' का प्रकाशन वर्ष है–**

(i) सन् 1954 ई० (ii) सन् 1943 ई०

(iii) सन् 1938 ई० (iv) सन् 1936 ई०

**17. निम्नलिखित में से प्रयोगवादी कवि कौन हैं–**

(i) भूषण (ii) सुमित्रानन्दन पन्त

(iii) बिहारी (iv) अज्ञेय

**18. 'नयी कविता' काव्य संकलन के सम्पादक थे—**

(i) रामेश्वर शुक्ल और डॉ० रामविलास शर्मा
(ii) डॉ० जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी
(iii) बालकृष्ण शर्मा और रामधारीसिंह 'दिनकर'
(iv) अज्ञेय और शिवमंगलसिंह 'सुमन'

**19. 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना कब हुई—**

(i) सन् 1943 ई० में (ii) सन् 1954 ई० में
(iii) सन् 1938 ई० में (iv) सन् 1936 ई० में

**20. निम्नलिखित में से कौन छायावादी कवि हैं—**

(i) सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (ii) भूषण
(iii) बिहारी (iv) रामधारीसिंह 'दिनकर'

**21. निम्नलिखित में कौन-सा कथन छायावाद से सम्बन्धित है—**

(i) इस काव्य में लौकिक वर्णनों के माध्यम से अलौकिकता की व्यञ्जना की गयी है,
(ii) धार्मिक क्षेत्र में रूढ़िवाद और बाह्याडम्बर का विरोध किया गया है
(iii) इस काव्य में मूलतः सौन्दर्य और प्रेम-भावना मुखरित हुई है
(iv) इस काव्य में भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष की प्रधानता है

**22. निम्नलिखित में से किस पत्रिका का सम्पादन पं० प्रतापनारायण मिश्र ने किया है—**

(i) विश्वामित्र (ii) सरस्वती
(iii) हिन्दी प्रदीप (iv) ब्राह्मण

**23. निम्नांकित में से कौन-सी रचना भारतेन्दु युग में लिखी गयी है—**

(i) प्रेममाधुरी (ii) कामायनी
(iii) निरूपमा (iv) युगवाणी

**24. निम्नलिखित में छायावादोत्तर कवि कौन हैं—**

(i) हरिऔध (ii) मैथिलीशरण गुप्त
(iii) महादेवी वर्मा (iv) अज्ञेय

**25. 'विनय पत्रिका' के कवि का नाम है—**

(i) सूरदास (ii) कबीरदास
(iii) तुलसीदास (iv) जायसी

**26. 'अष्टछाप' के कवियों का सम्बन्ध भक्तिकाल की किस शाखा से है?**

(i) ज्ञानाश्रयी शाखा (ii) प्रेमाश्रयी शाखा
(iii) कृष्णभक्ति शाखा (iv) रामभक्ति शाखा

**27. हिन्दी साहित्य में आधुनिकता का प्रवर्तक साहित्यकार किसे माना जाता है?**

(i) भूषण (ii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
(iii) मतिराम (iv) गंगकवि

**28. निम्नलिखित में छायावादयुगीन कवि नहीं है–**

(i) जयशंकर प्रसाद (ii) सुमित्रानन्दन पन्त
(iii) मैथिलीशरण गुप्त (iv) महादेवी वर्मा

**29. निम्नलिखित में से वीरगाथात्मक रचना नहीं है?**

(i) परमाल रासो (ii) विद्यापति
(iii) पृथ्वीराज रासो (iv) बीसलदेव रासो

**30. वीरगाथा काल की विशेषता है–**

(i) नारी का रूप सौन्दर्य चित्रण (ii) प्रकृति चित्रण
(iii) युद्धों का सजीव चित्रण (iv) मुक्तक काव्य की रचना

**31. निम्नलिखित में से महाकवि भूषण की रचना है–**

(i) रेणुका (ii) चिदम्बरा
(iii) दीपशिखा (iv) छत्रसाल दशक

**32. 'परमालरासो' किस काल की रचना है?**

(i) आदिकाल (ii) भक्तिकाल
(iii) रीतिकाल (iv) आधुनिककाल

**33. निम्नलिखित में से 'पृथ्वीराज रासो' के रचनाकार हैं–**

(i) जायसी (ii) मंझन
(iii) कुतबन (iv) चन्दबरदायी

**34. 'विनय पत्रिका' किस भाषा की कृति है?**

(i) अवधी (ii) ब्रजभाषा
(iii) खड़ीबोली हिन्दी (iv) भोजपुरी

**35. 'कृष्ण काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं–**

(i) मीरा (ii) रसखान
(iii) परमानन्ददास (iv) सूरदास

**36. निम्नलिखित में से श्रृङ्गार और लक्षण ग्रन्थों की रचना किस काल में की गयी?**

(i) आदिकाल (ii) भक्तिकाल
(iii) रीतिकाल (iv) वर्तमानकाल

**37. वीरगाथाकाल के कवि हैं–**

(i) भूषण (ii) बिहारीलाल
(iii) केशव (iv) चन्दबरदायी

**38. रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं?**

(i) घनानन्द (ii) बिहारी
(iii) बोधा (iv) आलम

**39. जायसी का पद्मावत किस भाषा में लिखा गया है?**

(i) ब्रजभाषा (ii) अवधी
(iii) खड़ीबोली (iv) फारसी

**40. आदिकाल का एक अन्य नाम है–**

(i) स्वर्णयुग (ii) सिद्ध-सामन्तकाल

(iii) शृङ्गारकाल (iv) भक्तिकाल

**41. निम्नलिखित में से कौन भक्तिकाल का काव्य नहीं है?**

(i) रामचरितमानस (ii) विनयपत्रिका

(iii) कवितावली (iv) बीसलदेव रासो

**42. 'समन्वय की विराट चेष्टा' तुलसी के किस ग्रन्थ में मिलती है?**

(i) रामचरितमानस (ii) विनय पत्रिका

(iii) कवितावली (iv) दोहावली

**43. रामधारीसिंह 'दिनकर' किस काव्यधारा के कवि हैं?**

(i) छायावाद (ii) प्रगतिवाद

(iii) नयी कविता (iv) राष्ट्रीय काव्यधारा

**44. निम्न में से कौन कवि रीतिमुक्त काव्यधारा का है?**

(i) चिन्तामणि (ii) केशव

(iii) ठाकुर (iv) देव

**45. निम्न में कौन महादेवी की रचना है?**

(i) धूप के धान (ii) चाँद का मुँह टेढ़ा

(iii) सान्ध्यगीत (iv) पल्लव

**46. निम्नलिखित में से कौन प्रयोगवादी कवि नहीं है?**

(i) प्रभाकर माचवे (ii) मुक्तिबोध

(iii) शिवमंगलसिंह 'सुमन' (iv) अज्ञेय

**47. 'खुमाण रासो' किसकी रचना है?**

(i) जगनिक (ii) नरपति नाल्ह

(iii) दलपति विजय (iv) भट्ट केदार

**48. निम्नलिखित में से कौन कवि राष्ट्रीय काव्यधारा का नहीं है?**

(i) दिनकर (ii) मैथिलीशरण गुप्त

(iii) जयशंकर प्रसाद (iv) अज्ञेय

**49. जयशंकर प्रसाद की रचना है–**

(i) युगवाणी (ii) अनामिका

(iii) लहर (iv) साकेत

**50. निम्नलिखित में से कौन प्रगतिवादी कवि नहीं है?**

(i) नागार्जुन (ii) त्रिलोचन

(iii) केदारनाथ अग्रवाल (iv) नेमिचन्द जैन

**51. 'जयचन्द्र प्रकाश' किसकी रचना है?**

(i) चन्दबरदायी (ii) नरपति नाल्ह
(iii) भट्ट केदार (iv) विद्यापति

**52. निम्नलिखित में से भक्तिकालीन कवि कौन हैं?**

(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) कुम्भनदास
(iii) हरिऔध (iv) महादेवी वर्मा

**53. छायावाद की विशेषता है—**

(i) इतिवृत्तात्मकता (ii) शृङ्गारिक भावना
(iii) सौन्दर्य एवं प्रेम (iv) उपदेशात्मक वृत्ति

**54. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ रीतिकाल का है?**

(i) साकेत (ii) उद्धवशतक
(iii) रामचरितमानस (iv) बिहारी-सतसई

**55. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ भक्तिकाल का है?**

(i) पृथ्वीराज रासो (ii) साकेत
(iii) कामायनी (iv) विनयपत्रिका

**56. 'आँसू' की रचना किस कवि ने की?**

(i) बिहारी (ii) नरपति नाल्ह
(iii) जयशंकर प्रसाद (iv) अज्ञेय

**57. निम्नलिखित में से रीतिकालीन कवि कौन-सा है?**

(i) मीराबाई (ii) रसखान
(iii) घनानन्द (iv) मैथिलीशरण गुप्त

**58. प्रयोगवाद के प्रवर्तक हैं—**

(i) निराला (ii) अज्ञेय
(iii) जगन्नाथदास 'रत्नाकर' (iv) मैथिलीशरण गुप्त

**59. मैथिलीशरण गुप्त आधुनिककाल के किस युग से सम्बन्धित हैं?**

(i) शुक्ल युग (ii) द्विवेदी युग
(iii) छायावाद युग (iv) छायावादोत्तर युग

**60. निम्नलिखित में कौन-सा ग्रन्थ रीतिकाल में लिखा गया है?**

(i) साकेत (ii) बिहारी-सतसई
(iii) विनयपत्रिका (iv) पृथ्वीराज रासो

**61. निम्नलिखित में से कौन-सी दो रचनाएँ भक्तिकाल की नहीं हैं?**

(i) सूरसागर (ii) बिहारी-सतसई
(iii) बीजक (iv) आँसू

**62. निम्नलिखित वाक्यों में से भक्तिकाल की दो सही प्रवृत्तियों को लिखिए—**

(i) श्रृंगार रस की प्रधानता (ii) स्वान्तः सुखाय की भावना

(iii) राजप्रशस्ति की अभिव्यक्ति (iv) भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष का समन्वय

**63. निम्नलिखित में से कौन-सी रचनाएँ आधुनिककाल की हैं?**

(i) विनय-पत्रिका (ii) साकेत

(iii) कामायनी (iv) पद्मावत

**64. 'साहित्य सुधानिधि' के सम्पादक हैं—**

(i) जगन्नाथ दास रत्नाकर (ii) महावीरप्रसाद द्विवेदी

(iii) अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

**65. 'हरिऔध' का जन्म-स्थान है—**

(i) एबटाबाद (ii) निजामाबाद

(iii) काशी (iv) फर्रुखाबाद

**66. 'प्रसाद' का काव्य प्रवृत्ति-निवृत्ति मिश्रित है—**

(i) लहर में (ii) आँसू में

(iii) झरना में (iv) कामायनी में

**67. कवि पंत को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला—**

(i) चिदम्बरा पर (ii) वीणा पर

(iii) लोकायतन पर (iv) कला और बूढ़ा चाँद पर

**68. 'नीहार' कृति है—**

(i) जयशंकर प्रसाद की (ii) महादेवी वर्मा की

(iii) सुमित्रानन्दन पंत की (iv) 'निराला' की

**69. निम्नलिखित में से प्रयोगवादी कवि कौन है?**

(i) भूषण (ii) बिहारी

(iii) सुमित्रानन्दन पंत (iv) 'अज्ञेय'

**70. 'अनामिका' के रचयिता हैं—**

(i) महादेवी वर्मा (ii) सुमित्रानन्दन पंत

(iii) 'निराला' (iv) 'अज्ञेय'

**71. कौन-सा कवि अष्टछाप का नहीं है?**

(i) परमानन्द (ii) नन्ददास

(iii) नाभादास (iv) चतुर्भुजदास

**72. रीतिकाल के किस कवि ने वीर रस की रचना लिखी है—**

(i) घनानन्द (ii) भूषण

(iii) बिहारी (iv) सेनापति

**73. तारसप्तक के सम्पादक हैं–**

(i) निराला (ii) महादेवी वर्मा
(iii) अज्ञेय (iv) श्यामनारायण पाण्डेय

**74. 'कामायनी' महाकाव्य के रचयिता हैं–**

(i) सुमित्रानन्दन पंत (ii) निराला
(iii) जयशंकर प्रसाद (iv) धर्मवीर भारती

**75. निम्नलिखित में कौन-सा ग्रन्थ आदिकाल का है?**

(i) रामचरित मानस (ii) पद्मावत
(iii) पृथ्वीराज रासो (iv) कामायनी

**76. ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं–**

(i) तुलसीदास (ii) सूरदास
(iii) नन्ददास (iv) कबीरदास

**77. तुलसीदास ने रामचरित मानस की रचना की है–**

(i) ब्रजभाषा में (ii) भोजपुरी में
(iii) अवधी में (iv) खड़ीबोली में

**78. रीतिकाल का अन्य नाम है–**

(i) स्वर्णकाल (ii) उद्भवकाल
(iii) शृंगारकाल (iv) संक्रान्तिकाल

**79. कविवर बिहारी की रचना है–**

(i) गंगा लहरी (ii) सतसई
(iii) रस मीमांसा (iv) वैदेही वनवास

**80. 'पृथ्वीराज रासो' का रचनाकाल है–**

(i) पूर्वकाल (ii) भक्तिकाल
(iii) आदिकाल (iv) रीतिकाल

**81. तारसप्तक के सम्पादक हैं–**

(i) कुँवर नारायण (ii) अज्ञेय
(iii) श्रीधर पाठक (iv) हरिऔध

**82. रीतिबद्ध काव्य के कवि हैं–**

(i) बिहारी (ii) माखनलाल चतुर्वेदी
(iii) भिखारीदास (iv) ठाकुर

**83. अखरावट के रचनाकार हैं–**

(i) मलिक मुहम्मद जायसी (ii) सन्त कबीर
(iii) जगन्नाथदास 'रत्नाकर' (iv) घनानन्द

**84. भक्तिकाल की रचना है–**

(i) साकेत
(ii) विनय पत्रिका
(iii) लहर
(iv) प्रेम माधुरी

**85. छायावाद के कवि हैं–**

(i) कुँवर नारायण
(ii) जयशंकर प्रसाद
(iii) अज्ञेय
(iv) माखनलाल चतुर्वेदी

**86. मैथिलीशरण गुप्त की रचना है–**

(i) लोकायतन
(ii) परिमल
(iii) भारत-भारती
(iv) परिवर्तन

**87. अष्टछाप के कवि नहीं हैं–**

(i) नंददास
(ii) सूरदास
(iii) छीतस्वामी
(iv) भिखारीदास

**88. प्रयोगवादी कवि हैं–**

(i) महादेवी वर्मा
(ii) सुमित्रानन्दन पंत
(iii) निराला
(iv) गिरिजाकुमार माथुर

●●●

# अध्ययन-अध्यापन

कविता का मुख्य उद्देश्य काव्य-सौन्दर्य की रसानुभूति द्वारा आनन्द प्राप्त कराना है। यह आनन्द मूलतः अर्थ का आनन्द है जो कविता में अन्तर्निहित रहता है। कविता का अध्ययन-अध्यापन इस प्रकार होना चाहिए कि इस उद्देश्य की पूर्ति हो सके। इसके लिए पूरी कविता को एक साथ पढ़ना चाहिए। पढ़ते समय यह ध्यान बराबर रखना चाहिए कि छन्द की लय, गति, यति का अनुसरण भी अर्थ-ग्रहण में सहायक होता है।

कक्षा में कविता का प्रभावशाली मुखर वाचन महत्त्वपूर्ण है। अध्यापक अपने आदर्श वाचन से इसमें सहायता दे सकते हैं। कक्षा में अच्छा पढ़ने वाले छात्र आदर्श प्रस्तुत कर सकते हैं और शेष छात्र उनका अनुकरण कर सकते हैं।

रस-निरूपण, छन्द-विधान और अलङ्कार-योजना का बोध कविता के भाव ग्रहण करने में सहायक होता है। टिप्पणी के अन्तर्गत कठिन शब्दों के अर्थ एवं आवश्यक सन्दर्भ दिये गये हैं। इस सारी सामग्री का अध्ययन भली-भाँति करना चाहिए। इस अध्ययन से रचनाओं के भाव-ग्रहण में सहायता मिलेगी और सौन्दर्यानुभूति के साथ काव्यानन्द की भी उपलब्धि हो सकेगी। बार-बार पढ़ने से ही अच्छी कविता का सौन्दर्य सहज ग्राह्य होता है।

पुस्तक में संकलित कुछ कविताएँ अपेक्षाकृत बड़ी हैं जिनमें आद्यन्त पूर्वापर सम्बन्ध लिये हुए एक ही कथा या भाव का वर्णन है, जैसे मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा रचित 'नागमती वियोग वर्णन' सूर का भ्रमर-गीत एवं तुलसी का 'भरत महिमा' आदि। कुछ रचनाएँ ऐसी हैं जो अलग-अलग अपने अर्थ में पूर्ण और स्वतन्त्र हैं, जैसे कबीर की **साखियाँ** और तुलसी तथा बिहारी के **दोहे** आदि। इस प्रकार की स्वतन्त्र रचनाएँ मुक्तक कहलाती हैं। प्रत्येक दोहा या पद अपने में पूर्ण है, अतः प्रत्येक को पूरी कविता मानकर ही पढ़ना चाहिए और इसी प्रकार उसकी व्याख्या भी करनी चाहिए।

आपको किसी कविता में मुख्यतः नाद-सौन्दर्य मिलेगा तो किसी में भाव या विचार सौन्दर्य। कविता का नाद-सौन्दर्य वर्णों की आवृत्ति, शब्द-योजना, अलङ्कार-योजना, चित्रात्मक भाषा आदि पर निर्भर है। अतः इन विशेषताओं पर ध्यान रखकर कविता का सस्वर पाठ करने से नाद-सौन्दर्य अपने आप परिलक्षित होगा। अधिकतर कविताएँ छन्दोबद्ध हैं। मध्ययुगीन कवियों की कविताएँ छन्दोबद्ध ही मिलेंगी। उस युग के प्रसिद्ध छन्द हैं—दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त आदि। प्रत्येक छन्द की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं, जिन्हें ध्यान में रखकर उन्हें पढ़ना चाहिए। इससे कविता के नाद-सौन्दर्य का बोध तो होगा ही, उसका अर्थ समझने में भी सहायता मिलेगी।

कुछ कविताएँ ऐसी मिलेंगी जिनमें नाद-सौन्दर्य या भाव-सौन्दर्य की अपेक्षा विचार-सौन्दर्य की प्रधानता है, जैसे कबीर की साखियाँ। इनके द्वारा कवि आदर्श जीवन-मूल्यों के प्रति हमें अभिप्रेरित करना चाहता है। ऐसी कविताओं को इसी दृष्टि से पढ़ना चाहिए। कवि सम्मेलनों में और रेडियो पर कवियों के प्रभावशाली वाचन पर ध्यान देना चाहिए। कुछ कवियों की कविताओं के रिकार्ड और टेप भी मिलते हैं जिनका सुविधानुसार उपयोग किया जा सकता है।

वाचन के साथ ही कविता का केन्द्रीय भाव उभर कर सामने आने लगता है। अध्यापक को प्रारम्भ में इस पर कुछ चर्चा करनी चाहिए। इस कविता की मूल प्रेरणा क्या है? कवि इस कविता में क्या कहना चाहता है? किन पंक्तियों में इस कविता का केन्द्रीय भाव छिपा है? आदि ऐसे प्रश्न हैं जिनसे इस चर्चा में सहायता मिल सकती है। यह आवश्यक नहीं है कि इन प्रश्नों का उत्तर एक ही हो। बहुधा एक ही कविता विभिन्न व्यक्तियों के मन पर विभिन्न प्रभाव डालती है, इसलिए इस विषय

में मतभेद स्वाभाविक है। इससे कवि के आशय को पकड़ने में सहायता मिलती है। यदि सहानुभूति से कविता को पढ़ा जाय तो प्रायः वह अपना आशय स्वयं कह देती है। इसके बाद कविता को पंक्तिशः देखा जाना चाहिए। अपरिचित शब्दों के अर्थ, अन्तःकथा और व्याख्या की अपेक्षा रखनेवाले स्थलों पर यहाँ विशेष ध्यान देना वांछनीय होगा। यह विश्लेषण कविता के सौन्दर्य को और अधिक गहराई से अनुभव कराने के लिए होना चाहिए।

कविता को उसके सम्पूर्ण विन्यास में समझने के बाद उसके कला-पक्ष पर ध्यान देना चाहिए। सम्पूर्ण कविता की संयोजना, उसकी भाषा, अर्थगर्भित शब्दों, छन्द विधान, अलङ्कार आदि के प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

इसके बाद एक बार फिर कविता का मुखर वाचन करना अच्छा होगा। कविता के बाद कवि के विषय में चर्चा उपयोगी होगी। कवि के काल और उसकी परिस्थितियों का कवि पर प्रभाव जानना अच्छा रहता है। कवि के समकालीन अन्य कवियों का सामान्य परिचय उपयोगी होगा। कवि की अन्य रचनाओं को सुनने में छात्र रुचि दिखा सकते हैं।

पठित कविता के समान भाव वाली कविता कक्षा में सुनायी जा सकती है। इसमें कविता के भावों को गहराई से समझने में सहायता मिलती है और कवियों तथा कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन करने की योग्यता का भी विकास होता है।

भाव-बोध की कसौटी यह है कि पाठक उस भाव की अभिव्यक्ति कर सके। व्याख्या इसी अभिव्यक्ति का एक रूप है। परीक्षा की दृष्टि से भी व्याख्या करना और उसे विधिवत लिखना उपयोगी होता है। व्याख्या के सन्दर्भ आदि लिखने के पश्चात् पहले मूलभाव लिखा जाय और फिर अर्थ स्पष्ट किया जाय। इस अनुक्रम में सुन्दर स्थलों की कुछ विशेष व्याख्या की जानी चाहिए। यदि कोई अन्तःकथा हो तो उसे भी लिखना चाहिए।

शिक्षण से सम्बन्धित सामान्य बातों का ही यहाँ पर संकेत किया गया है। स्थानीय परिस्थितियों और कार्य की सीमाओं को देखते हुए शिक्षकों को स्वविवेक का सहारा सदैव लेना पड़ेगा।

●●●

# 1 कबीरदास

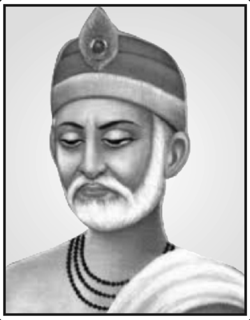

भक्तिकालीन धारा की निर्गुणाश्रयी शाखा के अन्तर्गत ज्ञानमार्ग का प्रतिपादन करने वाले महान् सन्त कबीरदास की जन्मतिथि के सम्बन्ध में कोई निश्चित मत प्रकट नहीं किया जा सकता। प्रामाणिक साक्ष्य उपलब्ध न होने के कारण इनके जन्म के सम्बन्ध में अनेक जनश्रुतियाँ एवं किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। 'कबीर पन्थ' में कबीर का आविर्भावकाल सं० 1455 वि० (1398 ई०) में ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को सोमवार के दिन माना जाता है। कबीर के जन्म के सम्बन्ध में निम्न काव्य-पंक्तियाँ प्रसिद्ध हैं—

**चौदह सौ पचपन साल गये, चन्द्रवार एक ठाट ठये।**
**जेठ सुदी बरसायत को, पूरनमासी प्रगट भये।।**
**घन गरजे दामिन दमके, बूँदें बरसें झर लाग गये।**
**लहर तालाब में कमल खिलिहैं, तहँ कबीर भानु परकास भये।।**

'भक्त परम्परा' में प्रसिद्ध है कि किसी विधवा ब्राह्मणी को स्वामी रामानन्द के आशीर्वाद से पुत्र उत्पन्न होने पर उसने समाज के भय से काशी के समीप लहरतारा (लहर तालाब) के किनारे फेंक दिया था, जहाँ से नीमा और नीरू (नूरी) नामक जुलाहा दम्पति ने उसे ले जाकर पाला और उसका नाम कबीर रखा। कबीर के जन्म-स्थान के सम्बन्ध में तीन प्रकार के मत प्रचलित हैं—काशी, मगहर और आजमगढ़ जिले में बेलहरा गाँव। सर्वाधिक स्वीकार मत काशी का ही है। 'भक्त-परम्परा' एवं 'कबीर पन्थ' के अनुसार स्वामी रामानन्दजी इनके गुरु थे।

## कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत् 1455 वि० (1398 ई०)
- **जन्म-स्थान**—काशी (वाराणसी)।
- **गुरु**—रामानन्द।
- **पत्नी**—लोई।
- **पुत्र**—कमाल। **पुत्री**—कमाली।
- **ब्रह्म का रूप**—निर्गुण।
- **भाषा**—सधुक्कड़ी, पंचमेल खिचड़ी।
- **शैली**—खण्डनात्मक, उपदेशात्मक, अनुभूति व्यंजक।
- **लेखन विधा**—काव्य।
- **प्रमुख रचनाएँ**—साखी, सबद एवं रमैनी।
- **मृत्यु**—संवत् 1575 वि० (1518 ई०)
- **साहित्य में स्थान**—भक्तिकाल की ज्ञानाश्रयी व सन्त काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि के रूप में प्रतिष्ठित।

कबीर अपने युग के सबसे महान् समाज-सुधारक, प्रतिभा-सम्पन्न एवं प्रभावशाली व्यक्ति थे। ये अनेक प्रकार के विरोधी संस्कारों में पले थे और किसी भी बाह्य आडम्बर, कर्मकाण्ड और पूजा-पाठ की अपेक्षा पवित्र, नैतिक और सादे जीवन को अधिक महत्त्व देते थे। सत्य, अहिंसा, दया तथा संयम से युक्त धर्म के सामान्य स्वरूप में ही ये विश्वास करते थे। जो भी सम्प्रदाय इन मूल्यों के विरुद्ध कहता था, उसका ये निर्ममता से खण्डन करते थे। इसी से इन्होंने अपनी रचनाओं में हिन्दू और मुसलमान दोनों के रूढ़िगत विश्वासों एवं धार्मिक कुरीतियों का विरोध किया है।

कबीर की मृत्यु के सम्बन्ध में भी अनेक मत हैं। 'कबीर पन्थ' में कबीर का मृत्युकाल सं0 1575 वि0 माघ शुक्ल पक्ष एकादशी, बुधवार (1518 ई0) को माना गया है, जो कि तर्कसंगत प्रतीत होता है। 'कबीर परचई' के अनुसार बीस वर्ष में कबीर चेतन हुए और सौ वर्ष तक भक्ति करने के बाद मुक्ति पायी अर्थात् इन्होंने 120 वर्ष की आयु पायी थी–

**बालपनौ धोखा मैं गयो, बीस बरिस तैं चेतन भयो।।**
**बरिस सऊ लगि कीन्हीं भगती, ता पीछै सो पायी मुकती।।**

कबीर ने कभी अपनी रचनाओं को एक कवि की भाँति लिखने-लिखाने का प्रयत्न नहीं किया था। गानेवाले के मुख में पड़कर उनका रूप भी एक-सा नहीं रह गया। कबीर ने स्वयं कहा है—**"मसि कागद छुऔ नहीं, कलम गह्यो नहिं हाथ।"** इससे स्पष्ट है कि इन्होंने भक्ति के आवेश में जिन पदों एवं साखियों को गाया, उन्हें इनके शिष्यों ने संग्रहीत कर लिया। उसी संग्रह का नाम **'बीजक'** है। यह संग्रह तीन भागों में विभाजित है—**साखी, सबद** और **रमैनी**। अधिकांश 'साखियाँ' दोहों में लिखी गयी हैं, पर उनमें सोरठे का प्रयोग भी मिलता है। 'सबद' गेय पद हैं और इनमें संगीतात्मकता का भाव विद्यमान है। चौपाई एवं दोहा छन्द में रचित 'रमैनी' में कबीर के रहस्यवादी और दार्शनिक विचारों को प्रकट किया गया है।

कबीर के काव्य में भावात्मक रहस्यवाद की अभिव्यक्ति भी भली प्रकार हुई है। भावात्मक रहस्यवाद माधुर्य भाव से प्रेरित है, इसके अन्तर्गत कविगण परमात्मा को पुरुष और आत्मा को नारी रूप में चित्रित करते हैं। कबीर भी राम की 'बहुरिया' बन जाते हैं। कबीर को छन्दों का ज्ञान नहीं था, पर छन्दों की स्वच्छन्दता ही कबीर-काव्य की सुन्दरता बन गयी है। अलंकारों का चमत्कार दिखाने की प्रवृत्ति कबीर में नहीं है, पर इनका स्वाभाविक प्रयोग हृदय को मुग्ध कर लेता है। इनकी कविता में अत्यन्त सरल और स्वाभाविक भाव एवं विचार-सौन्दर्य के दर्शन होते हैं।

कबीर की भाषा में पंजाबी, राजस्थानी, अवधी आदि अनेक प्रान्तीय भाषाओं के शब्दों की खिचड़ी मिलती है। सहज भावाभिव्यक्ति के लिए ऐसी ही लोकभाषा की आवश्यकता भी थी; इसीलिए इन्होंने साहित्य की अलंकृत भाषा को छोड़कर लोकभाषा को अपनाया। इनकी साखियों की भाषा अत्यन्त सरल और प्रसाद-गुण-सम्पन्न है। कहीं-कहीं सूक्तियों का चमत्कार भी दृष्टिगोचर होता है। हठयोग और रहस्यवाद की विचित्र अनुभूतियों का वर्णन करते समय कबीर की भाषा में लाक्षणिकता आ गयी है। ऐसे स्थलों पर संकेतों और प्रतीकों के माध्यम से बात कही गयी है। कुछ अद्भुत अनुभूतियों को कबीर ने विरोधाभास के माध्यम से उलटवाँसियों की चमत्कारपूर्ण शैली में व्यक्त किया है जिससे कहीं-कहीं दुर्बोधता आ गयी है।

सन्त कबीर एक उच्चकोटि के सन्त तो थे ही, हिन्दी साहित्य में एक श्रेष्ठ एवं प्रतिभावान कवि के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। ये केवल राम जपने वाले जड़ साधक नहीं थे, सत्संगति से इन्हें जो बीज मिला उसे इन्होंने अपने पुरुषार्थ से वृक्ष का रूप दिया। **डॉ0 हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने कहा था—*"हिन्दी साहित्य के हजार वर्षों में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। महिमा में यह व्यक्तित्व केवल एक ही प्रतिद्वन्द्वी जानता है—तुलसीदास।"*

●●●

# साखी

*[अनुभूति से साक्षात्कृत सत्य को प्रकट करनेवाली उक्ति को 'साखी' कहते हैं। वस्तुतः संस्कृत के 'साक्षी' शब्द का विकृत रूप ही 'साखी' है, जो धर्मोपदेश के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। दोहा छन्द में रचित 'साखी' में कबीर की शिक्षा और उनके सिद्धान्तों का निरूपण अधिकांशतः हुआ है। कबीर के आध्यात्मिक अनुभवों पर आधारित होने के कारण उनके दोहों को 'साखी' नाम दिया गया है।]*

बलिहारी गुर आपणैं, द्योहाड़ी कै बार।
जिनि मानिष तैं देवता, करत न लागी बार।।1।।

सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनँत दिखावणहार।।2।।

दीपक दीया तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहुणाँ, बहुरि न आवौं हट्ट।।3।।

बूड़े थे परि ऊबरे, गुर की लहरि चमंकि।
भेरा देख्या जरजरा, ऊतरि पड़े फरंकि।।4।।

चिंता तौ हरि नाँव की, और न चिन्ता दास।
जे कुछ चितवै राम बिन, सोइ काल की पास।।5।।

तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझ मैं रही न हूँ।
बारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तूँ।।6।।

कबीर सूता क्या करै, काहे न देखै जागि।
जाके सँग तैं बीछुड़्या, ताही के सँग लागि।।7।।

केसौ कहि कहि कूकिये, ना सोइयै असरार।
राति दिवस के कूकणैं, कबहूँ लगै पुकार।।8।।

लंबा मारग दूरि घर, विकट पंथ बहु मार।
कहौ संतौ क्यूं पाइये, दुर्लभ हरि दीदार।।9।।

यहु तन जालौं मसि करौं, लिखौं राम का नाऊँ।
लेखणि करूँ करंक की, लिखि-लिखि राम पठाऊँ।।10।।

कै बिरहनि कूँ मींच दे, कै आपा दिखलाइ।
आठ पहर का दाझणा, मोपै सह्या न जाइ।।11।।

कबीर रेख स्यँदूर की, काजल दिया न जाइ।
नैनूँ रमइया रमि रह्या, दूजा कहाँ समाइ।।12।।

सायर नाहीं सीप बिन, स्वाति बूँद भी नाहिं।
कबीर मोती नीपजैं, सुन्नि सिषर गढ़ माँहिं।।13।।

पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोई भया, अब कुछ कहा न जाइ।।14।।

पंखि उड़ाणीं गगन कूँ, प्यंड रह्या परदेस।
पाणी पीया चंच बिन, भूलि गया यहु देस।।15।।

पिंजर प्रेम प्रकासिया, अंतरि भया उजास।
मुखि कस्तूरी महमही, बाणी फूटी बास।।16।।

नैनां अन्तरि आव तूँ, ज्यूँ हौं नैन झँपेउँ।
ना हौं देखौं और कूँ, ना तुझ देखन देउँ।।17।।

कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही न थाकि।
पाका कलस कुम्हार का, बहुरि न चढ़ई चाकि।।18।।

हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ।
बूँद समानी समद मैं, सो कत हेरी जाइ।।19।।

कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै हाथि करि, सो पैठे घर माहिं।।20।।

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माहिं।।21।।

# पदावली

दुलहनीं गावहु मंगलचार,
हम घरि आयो हो राजा राम भरतार।
तन रति करि मै, मन रति करिहूँ पंचतत बराती।।
रामदेव मोरै पांहुनैं आये, मैं जोबन मैमाती।।
सरीर सरोवर बेदी करिहूँ, ब्रह्मा बेद उचार।।
रामदेव संग भाँवरि लैहूँ, धंनि धनि भाग हमार।।
सुर तैतीसूँ कौतिग आये, मुनिवर सहस अठ्यासी।।
कहै कबीर हमै व्याहि चले हैं, पुरिष एक अबिनासी।।1।।

बहुत दिनन थैं मैं प्रीतम पाये,
भाग बड़े घरि बैठे आये।।
मंगलचार माँहि मन राखौं, राम रसाइंण रसना चाषौं।।
मन्दिर माँहिं भया उजियारा, ले सूती अपनाँ पीव पियारा।।
मैं रनिरासी जे निधि पाई, हमहिं कहा यहु तुमहिं बड़ाई।
कहै कबीर मैं कछु न कीन्हाँ, सखी सुहाग राम मोहिं दीन्हाँ।।2।

संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उड़ाणीं, माया रहै न बाँधी रे।
दुचिते की दोइ थूनीं गिरानीं, मोह बलींडा टूटा।
त्रिस्नां छानि परी घर ऊपरि, कुबुधि का भाँडा फूटा।।
जोग जुगति करि संतौं बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।
आँधी पीछैं जो जल बूठा, प्रेम हरी जन भीनाँ।।
कहै कबीर भाँन के प्रगटे, उदित भया तम षीनाँ।।3।।

पंडित बाद बदंते झूठा।
राम कह्याँ दुनियाँ गति पावै, खाँड कह्याँ मुख मीठा।
पावक कह्याँ पाँव जे दाझे, जल कहि त्रिषा बुझाई।
भोजन कह्याँ भूषि जे भाजै, तौ सब कोई तिंरि जाई।।
नर के साथ सूवा हरि बोलै, हरि परताप न जाणै।
जो कबहूँ उड़ि जाइ जँगल मैं, बहुरि न सुरतैं आणै।।
साँची प्रीति विषै माया सूँ, हरि भगतनि सूँ हाँसी।
कहै कबीर प्रेम नहिं उपज्यौ, बाँध्यौ जमपुरि जासी।।4।।

हम न मरैं मरिहै संसारा।
हम कूँ मिल्या जियावनहारा।
अब न मरौं मरनैं मन माना, तेई मूए जिनि राम न जाना।
साकत मरैं संत जन जीवै, भरि भरि राम रसाइन पीवै।।
हरि मरिहैं तौ हमहूँ मरिहैं, हरि न मरैं हम काहे कूँ मरिहैं।
कहै कबीर मन मनहि मिलावा, अमर भये सुख सागर पावा।।5।।

काहे री नलनीं तूँ कुम्हिलानी,
तेरे ही नालि सरोवर पानी।
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनी तोर निबास।।
ना तलि तपति ना ऊपरि आगि, तोर हेतु कहु कासनि लागि।।
कहै कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हमारे जान।।6।।

**('कबीर ग्रन्थावली' से)**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

### साखी

**(क)** दीपक दीया तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहुणाँ, बहुरि न आवौं हट्ट।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गुरु ने भक्त को किस प्रकार का दीपक दिया है?
(iv) सद्गुरु द्वारा दिये गये दीपक में किस प्रकार का तेल भरा है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**(ख)** यहु तन जालौं मसि करौं, लिखौं राम का नाऊँ।
लेखणि करूँ करंक की, लिखि-लिखि राम पठाऊँ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत दोहे में कौन और किसे अपना सन्देश भेजने के लिए व्याकुल है?

(iv) जीवात्मा अपनी हड्डियों के सन्दर्भ में क्या कहना चाहती है?

(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**( ग )** पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोई भया, अब कुछ कहा न जाइ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आत्मा के सन्दर्भ में कबीर के क्या विचार हैं?

(iv) प्रस्तुत दोहे में कबीर किसे एक रूप में मानते हैं?

(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**( घ )** पंखि उड़ाणीं गगन कूँ, प्यंड रह्या परदेस।
पाणी पीया चंच बिन, भूलि गया यहु देस।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) सहस्रार में पहुँचकर जीवरूपी पक्षी ने क्या किया?

(iv) प्रस्तुत दोहे में कबीर ने किसका वर्णन किया है?

(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**( ङ )** कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही न थाकि।
पाका कलंस कुम्हार का, बहुरि न चढ़ई चाकि।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) कुम्हार के घड़े के सम्बन्ध में कबीर के क्या विचार हैं?

(iv) कबीर के मन की सारी तृष्णा क्यों समाप्त हो गयी है?

(v) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

**( च )** हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ।
बूँद समानी समद मैं, सो कत हेरी जाइ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) प्रस्तुत दोहे का भाव स्पष्ट कीजिए।

(iv) प्रस्तुत दोहे में कबीर ने किसका वर्णन किया है?

(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**( छ )** कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै हाथि करि , सो पैठे घर माहिं।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत साखी का भाव स्पष्ट कीजिए।
(iv) ईश्वर का प्रेम पाने के लिए साधक को क्या करना चाहिए?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**(ज)** जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माहिं।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) परमात्मा का दर्शन कब होता है?
(iv) ज्ञानरूपी दीपक प्रज्वलित होने पर क्या हुआ?
(v) प्रस्तुत दोहे में किसके दुष्परिणाम पर प्रकाश डाला गया है?

## पदावली

**(झ)** संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उड़ाणीं माया रहै न बाँधी रे।
दुचिते की दोइ थूनीं गिरानीं, मोह बलींडा टूटा।
त्रिस्नां छानि परी घर ऊपरि, कुबुधि का भाँडा फूटा।।
जोग जुगति करि संतौं बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।
आँधी पीछैं जो जल बूठा, प्रेम हरी जन भीनाँ।।
कहै कबीर भाँन के प्रगटे, उदित भया तम षीनाँ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद में कबीर ने किसके प्रभाव को दर्शाया है?
(iv) शारीरिक अहंकार नष्ट होने का क्या परिणाम हुआ?
(v) कबीर ने ज्ञान के महत्त्व को किस प्रकार प्रतिपादित किया है?

**(ञ)** काहे री नलनीं तूँ कुम्हिलानी,
तेरे ही नालि सरोवर पानी।
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनी तोर निवास।
ना तलि तपति ना ऊपरि आगि, तोर हेतु कहु कासनि लागि।
कहै कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हमारे जान।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) कबीर ने जीवात्मा की तुलना किससे की है?
(iv) कबीर जीवात्मा को क्या कहते हैं?
(v) प्रस्तुत पद में कौन-सा अलंकार है?

## ➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) काहे री नलनीं तू कुम्हिलानी, तेरे ही नालि सरोवर पानी।
   (ख) पूरा किया बिसाहुँणा, बहुरि न आवौं हट्ट।
   (ग) पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
   (घ) हम न मरैं मरिहै संसारा, हम कूँ मिल्या जियावनहारा।
   (ङ) पाका कलस कुम्हार का, बहुरि न चढ़ई चाकि।
   (च) बूँद समानी समद मैं, सो कत हेरी जाइ।
   (छ) कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
   (ज) जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
   (झ) 'नैनू रमइया रमि रह्या, दूजा कहाँ समाइ'।
2. "कबीर को बाह्याडम्बर से चिढ़ थी।" इस कथन की सोदाहरण पुष्टि कीजिए।
3. कबीर का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
4. कबीर का जीवन-परिचय लिखिए।
5. कबीर की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
6. कबीर का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
7. "कबीर एक महान् समाज-सुधारक कवि थे।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

अथवा "कबीर भक्त और कवि बाद में थे, समाज सुधारक पहले" कथन की समीक्षा कीजिए।

8. "कबीर की रचनाओं का महत्त्व उनमें निहित सन्देश से है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
9. रहस्यवाद का क्या अर्थ है? कबीर के रहस्यवाद पर प्रकाश डालिए।
10. "कबीर का काव्य सृजन आज भी प्रासंगिक है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
11. गुरु के स्वरूप और महत्त्व पर कबीरदास के विचार स्पष्ट कीजिए।
12. कबीर का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## ➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. कबीर की भाषा का विवेचन कीजिए।
2. 'हेरत हेरत हे सखी' साखी का भाव स्पष्ट कीजिए।
3. 'हिन्दी साहित्य में कबीरदास का स्थान' विषय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. "कबीर की रचनाओं का महत्त्व उसमें अन्तर्निहित सन्देश के कारण हैं।" सोदाहरण उत्तर दीजिए।
5. कबीर की भक्ति के स्वरूप का निर्धारण कीजिए।

6. साखी से क्या अभिप्राय है? कबीर के दोहों को साखी कहने का क्या औचित्य है?

अथवा 'साखी' का क्या अभिप्राय है? कबीर की साखियों में किन प्रमुख विचारों को प्रतिपादित किया गया है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

7. 'काहे री नलनीं तूँ कुम्हिलानी....' इस पद का भाव स्पष्ट कीजिए।

8. गुरु के स्वरूप और महत्त्व पर कबीर के विचार स्पष्ट कीजिए।

9. 'रहस्यवाद' का क्या अर्थ है? कबीर के रहस्यवाद का एक उदाहरण दीजिए।

## ➥ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों में प्रयुक्त अलंकार एवं उनके लक्षण स्पष्ट कीजिए—

   (क) सतगुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपगार।

   (ख) संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।

2. 'हम न मरैं मरिहैं संसारा' पद में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए।

●●●

# 2 मलिक मुहम्मद जायसी

## कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1492 ई०।
- **जन्म-स्थान**—जायसनगर (उ०प्र०)।
- **पिता का नाम**—शेख ममरेज।
- **प्रमुख काव्य-ग्रन्थ**—पद्मावत अखरावट, आखिरी कलाम।
- **भाषा**—अवधी।
- **शैली**—प्रबन्ध।
- **शिक्षा**—साधु-सन्तों की संगति में वेदान्त, ज्योतिष, दर्शन, रसायन तथा हठयोग का पर्याप्त ज्ञान।
- **उपलब्धि**—हिन्दी सूफी काव्य परंपरा के प्रवर्तक।
- **मृत्यु**—सन् 1542 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—जायसी सूफी काव्य परंपरा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इन्होंने अपने काव्य में प्रबन्ध शैली का प्रयोग किया है।

"भक्तिकालीन धारा की प्रेममार्गी शाखा के अग्रगण्य तथा प्रतिनिधि कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने मुसलमान होकर भी हिन्दुओं की कहानियाँ हिन्दुओं की ही बोली में पूरी सहृदयता से कहकर उनके जीवन में मर्मस्पर्शिनी अवस्थाओं के साथ अपने उदार हृदय का पूर्ण सामञ्जस्य दिखा दिया। कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता का आभास दिया था। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता बनी थी, वह जायसी के द्वारा पूर्ण हुई।"

जायसी के जन्म के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। इनकी रचनाओं से जो मत उभरकर सामने आता है, उसके अनुसार जायसी का जन्म सन् 1492 ई0 के लगभग रायबरेली जिले के 'जायस' नामक स्थान में हुआ था। ये स्वयं कहते हैं—**'जायस नगर मोर अस्थानू।'** जायस के निवासी होने के कारण ही ये जायसी कहलाये। 'मलिक' जायसी को वंश-परम्परा से प्राप्त उपाधि थी और इनका नाम केवल मुहम्मद था। इस प्रकार इनका प्रचलित नाम मलिक मुहम्मद जायसी बना। बाल्यकाल में ही जायसी के माता-पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण शिक्षा का कोई उचित प्रबन्ध न हो सका। सात वर्ष की आयु में ही चेचक से इनका एक कान और एक आँख नष्ट हो गयी थी। ये काले और कुरूप तो थे ही, एक बार बादशाह शेरशाह इन्हें देखकर हँसने लगे। तब जायसी ने कहा—**'मोहिका हँसेसि, कि कोहरहिं?'** इस बार बादशाह बहुत लज्जित हुए। जायसी एक गृहस्थ के रूप में भी रहे। इनका विवाह भी हुआ था तथा पुत्र भी थे। परन्तु पुत्रों की असामयिक मृत्यु से इनके हृदय में वैराग्य का जन्म हुआ। इनके चार घनिष्ठ मित्र थे—यूसुफ मलिक, सालार कादिम, सलोने मियाँ और बड़े शेख। बाद में जायसी अमेठी में रहने लगे थे और वहीं सन् 1542 ई0 में इनकी मृत्यु हुई थी। कहा जाता है कि जायसी के आशीर्वाद से अमेठी नरेश के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ। तबसे

उनका अमेठी के राजवंश में बड़ा सम्मान था। प्रचलित है कि जीवन के अन्तिम दिनों में ये अमेठी से कुछ दूर मँगरा नाम के वन में साधना किया करते थे। वहीं किसी के द्वारा शेर की आवाज के धोखे में इन्हें गोली मार देने से इनका देहान्त हो गया था।

**'पद्मावत', 'अखरावट', 'आखिरी कलाम', 'चित्ररेखा'** आदि जायसी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इनमें 'पद्मावत' सर्वोत्कृष्ट है और वही जायसी की अक्षय कीर्ति का आधार है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार इस ग्रन्थ का प्रारम्भ 1520 ई0 में हुआ था और समाप्ति 1540 ई0 में। जायसी ने **'पद्मावत'** में चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेमकथा का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया है। एक ओर इतिहास और कल्पना के सुन्दर संयोग से यह एक उत्कृष्ट प्रेम-गाथा है और दूसरी ओर इसमें आध्यात्मिक प्रेम की भी अत्यन्त भावमयी अभिव्यंजना है। **अखरावट** में वर्णमाला के एक-एक अक्षर को लेकर दर्शन एवं सिद्धान्त सम्बन्धी बातें चौपाइयों में कही गयी हैं। इसमें ईश्वर, जीव, सृष्टि आदि से सम्बन्धित वर्णन हैं। **आखिरी कलाम** में मृत्यु के बाद प्राणी की दशा का वर्णन है। **चित्ररेखा** में चन्द्रपुर की राजकुमारी चित्ररेखा तथा कन्नौज के राजकुमार प्रीतम कुँवर के प्रेम की गाथा वर्णित है।

जायसी का विरह-वर्णन अत्यन्त विशद एवं मर्मस्पर्शी है। 'षड्ऋतु वर्णन' और 'बारहमासा' जायसी के संयोग एवं विरह वर्णन के अत्यन्त मार्मिक स्थल हैं। जायसी रहस्यवादी कवि हैं और इनके रहस्यवाद की सबसे बड़ी विशेषता उसकी प्रेममूलक भावना है। इन्होंने ईश्वर और जीव के पारस्परिक प्रेम की व्यंजना दाम्पत्य-भाव के रूप में की है। रत्नसेन जीव है तथा पद्मावती परमात्मा। यह सूफी पद्धति है। 'पद्मावत' में पुरुष (रत्नसेन) प्रियतमा (पद्मावती) की खोज में निकलता है। जायसी ने इस प्रेम की अनुभूति की व्यंजना रूपक के आवरण में की है। इन्होंने साधनात्मक रहस्यवाद का चित्रण भी किया है, जिसकी प्रधानता कबीर में दिखायी देती है। जायसी ने सम्पूर्ण प्रकृति में पद्मावती के सौन्दर्य को देखा है तथा प्रकृति की प्रत्येक वस्तु को उस परम सौन्दर्य की प्राप्ति के लिए आतुर और प्रयत्नशील दिखाया है। यह प्रकृति का रहस्यवाद कहलाता है। जायसी की भाँति कबीर में हमें यह भावात्मक प्रकृतिमूलक रहस्यवाद देखने को नहीं मिलता।

जायसी का भाव-पक्ष बहुत समृद्ध है, परन्तु इनका कला-पक्ष और भी अधिक श्रेष्ठ है। कला-पक्ष के अन्तर्गत भाषा, अलङ्कार, छन्द आदि का महत्त्व है। इनकी भाषा अवधी है। उसमें बोलचाल की लोकभाषा का उत्कृष्ट भावाभिव्यंजक रूप देखा जा सकता है। लोकोक्तियों के प्रयोग से उसमें प्राणप्रतिष्ठा हुई है। अलङ्कारों का प्रयोग अत्यन्त स्वाभाविक है। केवल चमत्कारपूर्ण कथन की प्रवृत्ति जायसी में नहीं है। मसनवी शैली में लिखे 'पद्मावत' में प्रबन्ध काव्योचित सौष्ठव विद्यमान है। दोहा और चौपाई जायसी के प्रधान छन्द हैं। 'पद्मावत' की भाषा की प्रशंसा करते हुए **डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल** ने कहा था—*"जायसी की अवधी भाषाशास्त्रियों के लिए स्वर्ग है, जहाँ उनकी रुचि की अपरिमित सामग्री सुरक्षित है। मैथिली के लिए जो स्थान विद्यापति का है। मराठी के लिए जो महत्त्व ज्ञानेश्वरी का है, वही महत्त्व अवधी के लिए जायसी की भाषा का है।"*

●●●

# नागमती-वियोग-वर्णन

*[प्रस्तुत वर्णन 'पद्मावत' से अवतरित है। सिंहल के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती का एक पालित शुक किसी कारणवश महल से निकला और बहेलिए द्वारा पकड़ा जाकर चित्तौड़ के एक ब्राह्मण द्वारा क्रय किया गया। ब्राह्मण ने एक लाख लेकर उसे चित्तौड़ नरेश रत्नसेन के हाथ बेंच दिया। एक दिन उसकी रानी नागमती ने उस वाचाल तोते से अपने रूप के विषय में पूछा, जिस पर उसने पद्मावती की प्रशंसा करते हुए उसकी अपेक्षा रानी का रूप बहुत घट कर बतला दिया। रानी ने तोते को मार डालने का आदेश एक धाय को दिया। राजा के भय से धाय ने तोते को छिपा दिया। राजा लौटने पर तोते को न पाकर अत्यन्त क्रोधित हुए। अन्त में वह हीरामन नाम का तोता उपस्थित किया गया। राजा ने उससे सम्पूर्ण घटना सुनी। पद्मावती का रूपवर्णन सुनते ही राजा सोलह हजार कुँवर जोगियों के साथ पद्मावती को प्राप्त करने के लिए जोगी का वेश बनाकर निकल पड़े। राजा की अनुपस्थिति में रानी नागमती के वियोग-दुःख में संतप्त होने का वर्णन जायसी जी ने निम्न प्रकार से किया है।]*

नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा।।
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।
भयउ नरायन बाबन करा। राज करत राजा बलि छरा।।
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।
मानत भोग गोपिचन्द भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।
लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?

**सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?**
**झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह॥1॥**

पिउ बियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा निति बोलै 'पिउ पीऊ'।।
अधिक काम दाधै सो रामा। हरि लेइ सुवा गएउ पिउ नामा।।
बिरह बान तस लाग न डोली। रकत पसीज, भींजि गइ चोली।।
सूखा हिया, हार भा भारी। हरे हरे प्रान तजहिं सब नारी।।
खन एक आव पेट महँ! साँसा। खनहिं जाइ जिउ, होइ निरासा।।
पवन डोलावहिं, सीचहिं चोला। पहर एक समुझहिं मुख बोला।।
प्रान पयान होत को राखा? को सुनाव पीतम कै भाखा?

**आहि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि।**
**हंस जो रहा सरीर महँ, पाँख जरा, गा भागि॥2।**

पाट महादेइ ! हिये न हारू। समुझि जीउ, चित चेतु सँभारू।।
भौंर कँवल सँग होइ मेरावा। सँवरि नेह मालति पहँ आवा।।
पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास, बाँधु मन थीती।।
धरतिहि जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरषा ऋतु मेहा।।
पुनि बसंत ऋतु आव नवेली। सो रस, सो मधुकर, सो बेली।।
जिन अस जीव करसि तू बारी। यह तरिवर पुनि उठिहि सँवारी।।
दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोइ सरवर, सोई हंसा।।

**मिलहिं जो बिछुरे साजन, अंकम भेंटि गहंत।**
**तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत॥3॥**

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।
धूम साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग पाँति देखाए।।
खड़क बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।।
ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।
दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा?
अद्रा लाग लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई?

**जिन्ह घर कंता ते सुखी, जिन्ह गारौ औ गर्ब।**
**कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब॥4॥**

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी।।
लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा।।
रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चलीं जस बीरबहूटी।।
सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला। हरियरि भूमि कुसुंभी चोला।।
हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह भुलाइ देइ झकझोरा।।
बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर भा, फिरै भँभीरी।।
जग जल बूड़ जहाँ लगि ताकी। मोरि नाव खेवक बिनु थाकी।।

**परबत समुद अगम बिच, बीहड़ घन बनढाँख।**
**किमि कै भेंटों कन्त तुम्ह? ना मोहि पाँव न पाँख॥5॥**

भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भरौं रैनि अँधियारी।।
मन्दिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा।।
रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी।।
चमक बीजु घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा।।

बरसै मघा झकोरि झकोरी। मोर दुइ नैन चुवैं जस ओरी।।
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सीचेन्हि नाहाँ।।
पुरवा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी।।

**थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक।**
**धनि जोबन अवगाह महँ, दे बूड़त, पिउ! टेक।।6।।**

लाग कुवार, नीर जग घटा। अबहुँ आउ, कंत! तन लटा।।
तोहि देखे पिउ! पलुहै कया। उतरा चीतु बहुरि करु मया।।
चित्रा मित्र मीन घर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा।।
उआ अगस्त, हस्ति घन गाजा। तुरय पलानि चढ़े रन राजा।।
स्वाति बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।
सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खँजन देखाए।।
भा परगास, बाँस बन फूले। कंत न फिरे बिदेसहिं भूले।।

**बिरह हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।**
**बेगि आइ, पिउ! बाजहु, गाजहु होइ सदूर।।7।।**

कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी।।
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा।।
तन मन सेज जरै अगिदाहू। सब कहँ चंद, भएउ मोहि राहू।।
चहुँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा।।
अबहूँ, निठुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।।
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी।।
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा।। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा।।

**सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।**
**हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि।।8।।**

अगहन दिवस घटा, निसि बाढ़ी। दूभर रैनि, जाइ किमि गाढ़ी?
अब यहि बिरह दिवस भा राती। जरौं बिरह जस दीपक बाती।।
काँपै हिया जनावै सीऊ। तो पै जाइ होइ सँग पीऊ।।
घर घर चीर रचे सब काहू। मोर रूप रँग लेइगा नाहू।।
पलटि न बहुरा गा जो बिछोई। अबहूँ फिरै, फिरै रँग सोई।।
सियरि अगिनि बिरहिन हिय जारा। सुलुगि सुलुगि दगधै होइ छारा।।
यह दुख दगध न जानै कंतू। जोबन जनम करै भसमंतू।।

**पिउ सौ कहेउ सँदेसड़ा, हे भौंरा! हे काग!**
**सो धनि बिरहै जरि मुई, तेहि क धुवाँ हम्ह लाग।।9।।**

पूस जाड़ थर थर तन काँपा। सुरुजु जाइ लंका दिसि चाँपा।।
बिरह बाढ़, दारुन भा सीऊ। कँपि कँपि मरौं, लेइ हरि जीऊ।।
कंत कहाँ लागौं ओहि हियरे। पथ अपार, सूझ नहिं नियरे।।
सौंर सपेती आवै जूड़ी। जानहु सेज हिवंचल बूड़ी।।
चकई निसि बिछुरै दिन मिला। हौं दिन राति बिरह कोकिला।।
रैनि अकेलि साथ नहिं सखी। कैसे जियै बिछोही पखी।।
बिरह सचान भएउ तन जाड़ा। जियत खाइ औ मुए न छाँड़ा।।

**रकत ढुरा माँसू गरा, हाड़ भएउ सब संख।**
**धनि सारस होइ ररि मुई, पीऊ समेटहि पंख।।10।।**

लागेउ माघ, परै अब पाला। बिरहा काल भएउ जड़काला।।
पहल पहल तन रूई झाँपै। हहरि हहरि अधिकौ हिय काँपै।।
आइ सूर होइ तपु, रे नाहा। तोहि बिनु जाड़ न छूटै माहा।।
एहि माह उपजै रसमूलू। तू सो भौंर, मोर जोबन फूलू।।
नैन चुवहिं जस महवट नीरू। तोहि बिनु अंग लाग सर चीरू।।
टप टप बूँद परहिं जस ओला। बिरह पवन होइ मारै झोला।।
केहि क सिंगार को पहिरु पटोरा। गीउ न हार, रही होइ डोरा।।

**तुम बिनु काँपै धनि हिया, तन तिनउर भा डोल।**
**तेहि पर बिरह जराइ कै, चहै उड़ावा झोल।।11।।**

फागुन पवन झकोरा बहा। चौगुन सीउ जाइ नहिं सहा।।
तन जस पियर पात भा मोरा। तेहि पर बिरह देइ झकझोरा।।
तरिवर झरहिं, झरहिं बन ढाखा। भइ ओनंत फूलि फरि साखा।।
करहिं बनसपति हिये हुलासू। मो कहँ भा जग दून उदासू।।
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी। मोहिं तन लाइ दीन्ह जस होरी।।
जो पै पीउ जरत अस पावा। जरत मरत मोहि रोष न आवा।।
राति दिवस सब यह जिउ मोरे। लगौं निहोर कंत अब तोरे।।

**यह तन जारौं छार कै, कहौं कि 'पवन! उडाव'।**
**मकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरैं जहँ पाव।।12।।**

चैत बसंता होइ धमारी। मोहि लेखे संसार उजारी।।
पंचम बिरह पंच सर मारै। रकत रोइ सगरौं बन ढारैं।।
बूड़ि उठे सब तरिवर पाता। भीजि मजीठ, टेसु बन राता।।
बौरे आम फरै अब लागे। अबहूँ आउ घर, कंत सभागे।।
सहस भाव फूलीं बनसपती। मधुकर घूमहिं सँवरि मालती।।

मो कहँ फूल भए सब काँटे। दिस्टि परत जस लागहिं चाँटे।।
फरि जोबन भए नारँग साखा। सुआ बिरह अब जाइ न राखा।।

**घिरिनि परेवा होइ पिउ! आउ बेगि परु टूटि।**
**नारि पराए हाथ है, तोहि बिनु पाव न छूटि॥13॥**

भा बैसाख तपनि अति लागी। चोआ चीर चँदन भा आगी।।
सूरुज जरत हिवंचल ताका। बिरह बजागि सौंह रथ हाँका।।
जरत बजागिनि करु, पिउ छाहाँ। आइ बुझाउ अंगारन्ह माहाँ।।
तोहि दरसन होइ सीतल नारी। आइ आगि तें करु फलवारी।।
लागिउँ जरै, जरै जस भारू। फिर फिर भूँजेसि, तजेउँ न बारू।।
सरवर हिया घटत निति जाई। टूक टूक होइ कै बिहराई।।
बिहरत हिया करहु, पिउ! टेका। दीठि दवँगरा मेरवहु एका।।

**कँवल जो बिगसा मानसर, बिनु जल गयउ सुखाइ।**
**कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिउ सींचैं आइ॥14॥**

जेठ जरै जग, चलै लुवारा। उठहिं बवंडर परहिं अँगारा।।
बिरह गाजि हनुवँत होई जागा। लंका-दाह करै तनु लागा।।
चारिहु पवन झकौरै आगी। लंका दाहि पलंका लागी।।
दहि भइ साम नदी कालिंदी। बिरह क आगि कठिन अति मंदी।।
उठै आगि और आवै आँधी। नैन न सूझ, मरौ दुख बाँधी।।
अधजर भइउँ, माँसु तनु सूखा। लागेउ बिरह काल होइ भूखा।।
माँसु खाइ सब हाड़न्ह लागै। अबहुँ आउ, आवत सुनि भागै।।

**गिरि, समुद्र, ससि, मेघ, रवि, सहि न सकहिं वह आगि।**
**मुहमद सती सराहिये, जरै जो अस पिउ लागि॥15॥**

तपै लागि अब जेठ असाढ़ी। मोहि पिउ बिनु छाजनि भइ गाढ़ी।।
तन तिनउर भा, झूरौं खरी। भइ बरखा, दुख आगरि जरी।।
बँध नाहिं औ कंध न कोई। बात न आव कहौं का रोई?
साँठि नाठि जग बात को पूछा? बिनु जिउ फिरै मूँज तनु छूँछा।।
भई दुहेली टेक बिहूनी। थाँभ नाहिं उठि सकै न थूनी।।
बरसै मेघ चुवहिं नैनाहा। छपर छपर होइ रहि बिनु नाहा।।
कोरौं कहाँ ठाट नव साजा? तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा।।

**अबहूँ मया दिस्टि करि, नाह निठुर! घर आउ।**
**मँदिर उजार होत है, नव कै आइ बसाउ॥ 16॥**

**('पद्मावत' से)**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए—

(क)
नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा।।
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।
भयउ नरायन बावन करा। राज करत राजा बलि छरा।।
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।
मानत भोग गोपिचन्द भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।
लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?
सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?
झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चौपाई में प्रयुक्त तोते का नाम क्या है?
(iv) विप्र रूप धरि झिलमिल इंदू' के माध्यम से किस पौराणिक आख्यान का वर्णन है?
(v) रानी नागमती किसका रास्ता देख रही है?

(ख)
चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।
धूम साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग पाँति देखाए।।
खड़क बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।।
ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।
दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा?
अद्रा लाग लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई।।
जिन्ह घर कंता ते सुखी, जिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) विरह ने युद्ध के लिए किस प्रकार सेना सजा ली है?
(iv) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में किन-किन नक्षत्रों का प्रयोग हुआ है?
(v) नागमती ने अपना सब सुख क्यों भुला दिया है?

**(ग)** भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भरौं रैनि अँधियारी।।
मन्दिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा।।
रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी।।
चमक बीजु घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा।।
बरसै मघा झकोरि झकोरी। मोर दुइ नैन चुवैं जस ओरी।।
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सीचेन्हि नाहाँ।।
पुरवा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी।।
थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक।
धनि जोबन अवगाह महँ, दे बूड़त पिउ! टेक।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) धरती और आकाश मिलकर एक से क्यों दिखाई दे रहे हैं?
(iv) भादों की रात बिताना नागमती के लिए कष्टकर क्यों है ?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में मदार और जवास का उल्लेख किस परिप्रेक्ष्य में हुआ है?

**(घ)** कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी।।
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा।।
तन मन सेज जरै अगिदाहू। सब कहँ चंद, भएउ मोहि राहू।।
चहुँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा।।
अबहूँ, निठुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।।
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी।।
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा।।
सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चन्द्रमा कितनी कलाओं से प्रकाशित होता है?
(iv) नागमती को कौन-कौन-सा दुःख है?
(v) नागमती की सखियाँ क्या-क्या कर रही हैं?

**(ङ)** भा बैसाख तपनि अति लागी। चोआ चीर चँदन भा आगी।।
सूरुज जरत हिवंचल ताका। बिरह बजागि सौंह रथ हाँका।।
जरत बजागिनि करु, पिउ छाहाँ। आइ बुझाउ अंगारन्ह माहाँ।।
तोहि दरसन होइ सीतल नारी। आइ आगि तें करु फलवारी।।
लागिउँ जरै, जरै जस भारू। फिर फिर भूँजेसि, तजेउँ न बारू।।
सरवर हिया घटत निति जाई। टूक टूक होइ कै बिहराई।।

बिहरत हिया करहु, पिउ! टेका। दीठि दवँगरा मेरवहु एका।।
कँवल जो बिगसा मानसर, बिनु जल गयउ सुखाइ।
कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिउ सींचैं आइ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) बैसाख महीने का चोआ और चन्दन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है?
(iv) पद्यांश के अनुसार बेल हरी-भरी कब होगी?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) जिन्ह घर कंता ते सुखी, तिन्ह गारौ औ गर्ब।
(ख) नागमती चितउर पथ हेरा, पिउ जो गये पुनि कीन्ह न फेरा।
(ग) कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जो पिउ सींचै आइ।
(घ) कन्त पियारा बाहिरै, हम सुख मूला सर्व।
(ङ) तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत।
(च) बिरह क आगि कठिन अति मंदी।
2. मलिक मुहम्मद जायसी की काव्यगत विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।
अथवा जायसी के काव्य-सौष्ठव पर प्रकाश डालिए।
3. जायसी का जीवन-परिचय लिखिए।
4. जायसी के काव्य में रहस्यवादी प्रवृत्तियों का निरूपण कीजिए।
5. "जायसी का विरह-वर्णन अत्यन्त विशद एवं मर्मस्पर्शी है।" उदाहरण देकर समझाइए।
6. मलिक मोहम्मद जायसी के साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जायसी की प्रमुख रचनाओं के नाम लिखिए।
2. "प्रकृति के बदलते हुए स्वरूप के साथ नागमती की विरह-व्यंजना का स्वरूप भी बदलता रहा है।" इस कथन की समीचीन व्याख्या कीजिए।
3. नागमती के विरह-वर्णन की मर्मस्पर्शिता का क्या रहस्य है? स्पष्ट कीजिए।
4. "जायसी ने नागमती की विरह व्यंजना को महारानी की नहीं, सामान्य नारी की विरह व्यंजना के रूप में प्रस्तुत किया है।" इस कथन की उपयुक्तता प्रमाणित कीजिए।
5. नागमती के विरह वर्णन को केन्द्र में रखते हुए उसके चरित्र पर प्रकाश डालिए।
6. किस मास अथवा ऋतु का बिम्ब आपको सबसे अधिक मर्मस्पर्शी लगता है और क्यों?
7. जायसी ने अपनी कृतियों में किस भाषा का प्रयोग किया है?

8. नागमती के विरह-वर्णन की मुख्य विशेषताएँ लिखिए।

अथवा 'नागमती-वियोग-वर्णन' की विशेषताओं का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

9. जायसी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## ➥ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों का काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—

   (क) दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।

   (ख) स्वाति बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।

2. रूपक अलंकार का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक उदाहरण लिखिए।

●●●

# 3 सूरदास

कृष्ण-भक्ति शाखा के कवियों में अष्टछाप के कवि ही प्रधान हैं और उनमें भी श्रेष्ठतम कवि हिन्दी साहित्य के सूर्य सूरदास जी हैं। हिन्दी साहित्य के अन्य कवियों की भाँति सूर की जन्मतिथि भी सन्दिग्ध है। सूर का जीवन-वृत्त अभी तक शोध का कार्य बना हुआ है। अनेक साक्ष्यों के अवलोकन के उपरान्त सूरदास का जन्म सं० 1535 वि० (सन् 1478 ई०) में बैसाख शुक्ल पक्ष पंचमी गुरुवार को मानना उपयुक्त जान पड़ता है। कुछ विद्वान् सूर का जन्म-स्थान सीही मानते हैं, तो बहुतेरे रुनकता। 'आईने अकबरी' के आधार पर इनके पिता का नाम रामदास था। इनके जन्म एवं स्थान आदि को पद्य में एक साथ इस प्रकार समेटा जा सकता है—

**रामदास सुत सूरदास ने, जन्म रुनकता में पाया।**
**गुरु वल्लभ उपदेश ग्रहण कर, कृष्णभक्ति सागर लहराया॥**

कहा जाता है कि सूर जन्मान्ध थे। **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** ने भी इन्हें जन्मान्ध बताया है—*"वह इस असार संसार को न देखने के वास्ते आँखें बन्द किये थे।"* भगवद्-भक्ति की इच्छा से सूर अपने पिता की अनुमति प्राप्त कर यमुना के तट गऊघाट पर रहने लगे। वृन्दावन की तीर्थयात्रा पर जाते हुए इनकी भेंट महाप्रभु वल्लभाचार्य से हुई, जिनसे सूरदास ने दीक्षा ली। महाप्रभु इन्हें अपने साथ ले गये और गोवर्धन पर स्थापित मन्दिर में अपने आराध्य श्रीनाथजी की सेवा में कीर्त्तन करने को नियुक्त किया। सूर नित्य नया पद बनाकर और इकतारे पर गाकर भगवान् की स्तुति करते थे। कहा जाता है कि इन्होंने सवा लाख पद रचे, जिनमें से लगभग दस सहस्र ही अब तक उपलब्ध हो सके हैं, परन्तु यह संख्या भी इन्हें हिन्दी का श्रेष्ठ महाकवि सिद्ध करने में पर्याप्त है। सूरदास जी को अपने अन्तिम समय का आभास हो गया था। एक दिन ये श्रीनाथ जी के मन्दिर में आरती करके पारसौली चले गये और वहीं पर सं० 1640 वि० (सन् 1583 ई०) में इनकी जीवन-लीला समाप्त हो गयी।

## कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत् 1535 वि० (सन् 1478 ई०)।
- **जन्म-स्थान**—रुनकता अथवा सीही।
- **पिता का नाम**—पण्डित रामदास सारस्वत।
- **गुरु**—आचार्य वल्लभाचार्य।
- **भक्ति**—कृष्णभक्ति।
- **ब्रह्म का रूप**—सगुण।
- **निवास स्थान**—श्रीनाथ मंदिर।
- **प्रमुख रस**—शृंगार एवं वात्सल्य।
- **प्रमुख रचनाएँ**—सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य लहरी।
- **मृत्यु**—संवत् 1640 वि० (सन् 1583 ई०)।
- **साहित्य में स्थान**—वात्सल्य रस के सम्राट।

सूरदास के पदों का संग्रह **'सूरसागर'** है। **'साहित्यलहरी'** इनका दूसरा प्रसिद्ध काव्य-ग्रन्थ है। सूरदास द्वारा रचित **'सूर सारावली', 'गोवर्धन लीला', 'नाग लीला', 'पद संग्रह', 'सूर पच्चीसी'** आदि ग्रन्थ भी प्रकाश में आये हैं। परन्तु 'सूरसागर' से ही ये जगत्-विख्यात हुए हैं। 'सूरसागर' के वर्ण्य-विषय का आधार 'श्रीमद्भागवत' है। फिर भी इनके साहित्य में अपनी मौलिक उद्भावनाएँ हैं। सूर ने भागवत के कथा-चित्रों में न केवल सरसता तथा मधुरता का संचार किया है, अपितु अनेक नवीन प्रकरणों का सृजन भी किया है। राधा-कृष्ण के प्रेम को लेकर सूर ने जो रस का समुद्र उमड़ाया है, इसी से इनकी रचना का नाम सूरसागर सार्थक होता है।

शृंगार के ये अप्रतिम कवि हैं। इनके अतिरिक्त किसी अन्य कवि ने शृंगार के दोनों विभागों–संयोग एवं विप्रलम्भ का इतना उत्कृष्ट वर्णन नहीं किया। इनका बाल-वर्णन बाल्यावस्था की चित्ताकर्षक झाँकियाँ प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के पदों में उल्लास, उत्कण्ठा, चिन्ता, ईर्ष्या आदि भावों की जो अभिव्यक्ति हुई है वह बड़ी स्वाभाविक, मनोवैज्ञानिक तथा हृदयग्राही है। भ्रमर-गीत सूरदास की अनूठी-कल्पना है। इसमें इन्होंने ज्ञान और योग के आडम्बर को दूर कर प्रेम और भक्ति के महत्त्व को प्रकाशित किया है।

ब्रजभाषा सूर के हाथों से जिस सौष्ठव के साथ ढली है, वैसा सौन्दर्य उसे बिरले ही कवि दे सके। सूर वात्सल्य रस के सम्राट् माने जाते हैं। जन्म से लेकर किशोरावस्था तक कृष्ण का चरित्र-चित्रण तो 'स्वर्ग को भी ईर्ष्यालु' बनाने की क्षमता रखता है। बाललीलाओं, गोचारण, वन से प्रत्यागमन, माखन-चोरी आदि का अत्यन्त मनोहारी चित्रण सूर के पदों में प्राप्त होता है। विरह-सागर इनके पदों में इस प्रकार उमड़ पड़ा है कि ज्ञान उस अतल में लापता हो गया है। इनके काव्य में उपमा, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, व्यतिरेक, रूपक, दृष्टान्त आदि अलंकारों का प्रचुर प्रयोग हुआ है।

महाप्रभु वल्लभाचार्य के पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ ने चार शिष्य अपने पिता के और चार अपने शिष्यों को मिलाकर आठ बड़े भक्त–कवियों का 'अष्टछाप' बनाया था। सूर उन कवियों में अग्रगण्य हैं। वास्तव में कृष्ण-भक्त कवियों में सूर की रचना श्रीमद्भागवत जैसा सम्मानित स्थान पाती रहेगी। शब्दों द्वारा अपने चरित्र-नायक की माधुर्यमयी मूर्ति को पाठकों के नयनों के सम्मुख उपस्थित करने में सूर की सफलता अद्वितीय है। सूर ने तत्कालीन परिस्थितियों से खिन्न समाज का मन भगवान् की हँसती-खेलती, लोकरंजक मूर्ति दिखाकर बहलाया और इस प्रकार आगे चलकर भगवान् के लोकरक्षक स्वरूप की प्रतिष्ठा हेतु बड़ी ही अच्छी पृष्ठभूमि उपस्थित की। सूर भक्त कवि थे और इनकी भक्ति सखा-भाव की थी। इन्होंने अपने इष्टदेव के परम रमणीय रूप तथा लीला के वर्णन में जो कुछ कहा है उसकी स्वाभाविकता, सरलता, तल्लीनता आदि इतनी बढ़ी-चढ़ी है कि हिन्दी साहित्य में इस विषय में कोई भी कवि इनके समकक्ष नहीं है।

●●●

# विनय

अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान।।1।।

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।।
जैसें उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यौं करील-फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।2।।

# वात्सल्य

हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभा-हरनि।
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि।
रहे बिवरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि डरनि।
मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि।
मनहुँ सुभग सिंगार-सिसु-तरु, फर्‌यौ अद्‌भुत फरनि।
चलत पद-प्रतिबिम्ब मनि आँगन घुटुरुवनि करनि।
जलज-संपुट-सुभग-छबि भरि लेति उर जनु धरनि।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं बिलोकि कै नँद-घरनि।
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि।।3।।

# भ्रमर गीत

*[भ्रमरगीत के गोपी और उद्धव संवाद में वाग्विदग्धता का विकसित रूप दिखायी देता है। ज्ञान-गरिमा में मण्डित उद्धव को श्रीकृष्ण गोकुल इसलिए भेजते हैं कि वे गोपियों को निराकार की ओर उन्मुख कर सकें। प्रस्तुत अंश के अन्तर्गत गोपियों के प्रत्युत्तरों में वाग्विदग्धता कूट-कूट कर भरी है। सच पूछिए तो वाग्विदग्धता का नाम यही है कि सामने वाले व्यक्ति को ऐसा खरा और चुभता हुआ उत्तर दिया जाय कि उसकी बोलती बन्द हो जाय। साधारण रूप में इसे हम व्यंग्य का बड़ा भाई कह सकते हैं, जो असाधारण लोगों को ही प्राप्त होता है।]*

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हँस-सुता की सुन्दर कगरी, अरु कुञ्जनि की छाँहीं।
वै सुरभी वै बच्छ दोहिनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल-बाल मिलि करत कुलाहल, नाचत गहि गहि बाहीं।
यह मथुरा कंचन की नगरी, मनि-मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की, जिय उमगत तन नाहीं।
अनगन भाँति करी बहु लीला, जसुदा नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि-कहि पछिताहीं।।4।।

बिनु गुपाल बैरिनि भईं कुंजैं।
तब वै लता लगतिं तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं।
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल-फूलनि अलि गुंजैं।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भईं भुंजैं।
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भईं छुंजैं।।5।।

हमारैं हरि हारिल की लकरी।
मनक्रम बचन नंद-नंदन उर, यह दृढ़ करि पकरी।
जागत-सोवत स्वप्न दिवस-निसि, कान्ह-कान्ह जकरी।
सुनत जोग लागत है ऐसौ, ज्यौं करुई ककरी।
सु तौ ब्याधि हमकौं लै आए, देखी सुनी न करी।
यह तौ सूर तिनहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी।।6।।

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसैं ध्यान धराहीं।
तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं।
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं।
स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु, ये दुख कौन समाहीं।
चंदन तजि अँग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीं।
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं।।7।।

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसे छूटत?
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अन्तरगति लूटत।।
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह बन तैं आवनि।।
चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं बिष सम लागत।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत।।8।।

कहत कत परदेसी की बात।
मंदिर अरध अवधि बदि हमसौं, हरि अहार चलि जात।
ससि-रिपु बरष, सूर-रिपु जुग बर, हर-रिपु कीन्हौ घात।
मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।
नखत, वेद, ग्रह, जोरि, अर्ध करि, सोइ बनत अब खात।
सूरदास बस भईं बिरह के, कर मींजैं पछितात।।9।।

निसि दिन बरषत नैन हमारे।
सदा रहति बरषा रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे।
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।
आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।
सूरदास प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे।।10।।

ऊधौ भली भई ब्रज आए।
बिधि कुलाल कीन्हे काँचे घट ते तुम आनि पकाए।
रँग दीन्हौं हो कान्ह साँवरैं, अँग-अँग चित्र बनाए।
पातैं गरे न नैन नेह तैं, अवधि अटा पर छाए।

ब्रज करि अँवा जोग ईंधन करि, सुरति आनि सुलगाए।
फूँक उसास बिरह प्रजरनि सँग, ध्यान दरस सियराए।
भरे सँपूरन सकल प्रेम-जल, छुवन न काहू पाए।
राज काज तैं गए सूर प्रभु, नंद नँदन कर लाए।।11।।

अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं।
कैसें रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखीं।
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं।
अब यह जोग संदेसौ सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखीं।
बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिबत पतूखीं।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।।12।।

**('सूरसागर' से)**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

### विनय

**(क)** अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पक्षी क्यों नहीं उड़ पा रहा है?
(iv) पक्षी कहाँ बैठा है?
(v) पक्षी ने ईश्वर से क्या निवेदन किया? अन्त में क्या परिणाम हुआ?

**(ख)** मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।।
जैसें उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।

परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यौं करील-फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद में कामधेनु के सन्दर्भ में सूरदासजी ने क्या कहा है?
(iv) गंगा और कुआँ के सन्दर्भ में सूरदास के क्या विचार हैं?
(v) सूरदासजी किसकी महिमा का गान छोड़कर अन्य देवी-देवताओं की उपासना नहीं करना चाहते?

## भ्रमरगीत

**(ग)** बिनु गुपाल बैरिनि भई कुंजैं।
तब वै लता लगतिं तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं।
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल-फूलनि अलि गुंजैं।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भईं भुंजैं।
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
सूरदास प्रभु तुम्हारे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भईं छुंजैं।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गोपियाँ उद्धव से क्या संदेशा भिजवा रही हैं?
(iv) श्रीकृष्ण की उपस्थिति में लताएँ कैसी लगती थीं और अब वे कैसी प्रतीत हो रही हैं?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा रस प्रयुक्त हुआ है?

**(घ)** ऊधौ जोग जोग हम नाहीं।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसैं ध्यान धराहीं।
तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं।
स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु, ये दुख कौन समाहीं।
चंदन तजि अंग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीं।
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भगवान श्रीकृष्ण के सन्दर्भ में गोपियों की क्या धारणा है?

(iv) योग के विषय में गोपियाँ उद्धव से क्या कहती हैं?

(v) गोपियों के अनुसार शरीर की तपन और अधिक क्यों बढ़ जायेगी?

(ङ) लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसे छूटत?
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अन्तरगति लूटत।।
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह बन तैं आवनि।।
चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं विष सम लागत।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) गोपियों का श्रीकृष्ण से प्रेम कितना पुराना है?

(iv) उद्धव द्वारा गोपियों को दिया गया योग संदेश क्यों व्यर्थ है?

(v) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

(च) कहत कत परदेसी की बात।
मंदिर अरध अवधि बदि हमसौं, हरि अहार चलि जात।
ससि-रिपु बरष, सूर-रिपु जुग बर, हर-रिपु कीन्हौ घात।
मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।
नखत, वेद, ग्रह, जोरि, अर्ध करि, सोइ बनत अब खात।
सूरदास बस भईं बिरह के, कर मींजैं पछितात।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) श्रीकृष्ण गोपियों को क्या वचन देकर गये थे और अब कितना समय बीत गया है?

(iv) गोपियों को किस बात पर पछतावा है?

(v) श्रीकृष्ण के वियोग में गोपियों को रात-दिन कैसे मालूम पड़ रहे हैं?

(छ) निसि दिन बरषत नैन हमारे।
सदा रहति बरषा रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे।
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।
आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।
सूरदास प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) किसके विरह में गोपिकाओं की आँखों में रात-दिन बरसात लगी रहती है?
(iv) गोपिकाओं के हाथ और कपोल क्यों काले हो गये हैं?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?

(ज) अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं।
कैसे रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखीं।
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं।
अब यह जोग संदेसौ सुनि-सुनि अति अकुलानी दूखीं।
बारक वह मुख आनि दिखावहु; दुहि पय पिबत पतूखीं।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) श्रीकृष्ण के वियोग में गोपियों का हृदय कैसा हो गया है?
(iv) गोपियों की आँखें किसके लिए व्याकुल हैं?
(v) गोपियाँ उद्धव से क्या निवेदन कर रही हैं?

## ➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।
(ख) कहत कत परदेसी की बात।
(ग) ऊधौ भली भई ब्रज आए।
(घ) परम गंग को छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
(ङ) लरिकाई को प्रेम कहौ अलि कैसे छूटत।
(च) जिहि मधुकर अम्बुज रस चाख्यो, क्यों करील-फल भावै।
(छ) सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।
(ज) जैसें उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
(झ) हमारैं हरि हारिल की लकरी।
(ञ) मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।
2. सूरदास की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. 'सूर सूर तुलसी ससी' उक्ति से आप कहाँ तक सहमत हैं? तर्कपूर्वक अपना मत प्रस्तुत कीजिए।
4. सूरदास का जीवन-परिचय लिखिए।
5. सूरदास का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
6. सूरदास की भाषा स्पष्ट करते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
7. भ्रमरगीत से क्या तात्पर्य है? उक्त शीर्षक के अन्तर्गत दिये हुए पदों का सार लिखिए।

अथवा सूरदास के भ्रमर-गीत की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

8. सिद्ध कीजिए कि सूर वात्सल्य रस के सम्राट् थे।

अथवा सूर का बाल-लीला वर्णन रेखांकित कीजिए।

अथवा "सूरदास अपने काव्य में वात्सल्य भाव का निरूपण करने में सही अर्थों में 'सूर' थे।" सिद्ध कीजिए।

अथवा सूर के वात्सल्य वर्णन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

9. "सूर की भक्ति में निर्गुण पर सगुण की, निराकार पर साकार की, ज्ञान पर प्रेम की विजय दिखायी गयी है।" स्पष्ट कीजिए।

10. "सूरदास शृंगार रस के महान् कवि हैं।" उदाहरण सहित अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

11. "सूरदास वात्सल्य के कवि हैं।' इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

12. सूरदास का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों एवं साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## ➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सूर की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालिए।
2. कृष्णा-प्रेम में तल्लीन गोपिकाओं के जो शब्द-चित्र सूर ने खींचे हैं, उनका संक्षिप्त वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. सूर-साहित्य के भाव-पक्ष का चित्रण कीजिए।
4. सूर के भ्रमरगीत का कथ्य समझाइए।

## ➥ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. 'बिनु गुपाल बैरिन भईं कुंजैं' पद में कौन-सा रस है? उपस्थित रस का लक्षण भी लिखिए।
2. निम्नलिखित पंक्तियों का काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—

   (क) हमारैं हरि हारिल की लकरी।

   (क) मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।

●●●

# 4 गोस्वामी तुलसीदास

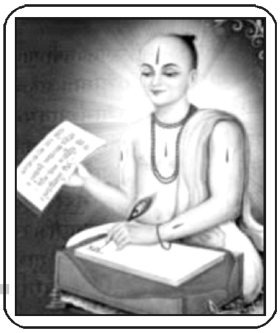

"तुलसी एक ऐसी महत्त्वपूर्ण प्रतिभा थे, जो युगों के बाद एक बार आया करती है तथा ज्ञान-विज्ञान, भाव-विभाव अनेक तत्त्वों का समाहार होती है। इनकी प्रतिभा इतनी विराट् थी कि उसने भारतीय संस्कृति की सारी विराटता को आत्मसात् कर लिया था। ये महान् द्रष्टा थे, परिणामतः स्रष्टा थे। ये विश्व-कवि थे और हिन्दी साहित्य के आकाश थे, सब कुछ इनके घेरे में था।"

## लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत 1554 वि॰ (1532 ई॰)।
- **जन्म-स्थान**—राजापुर (चित्रकूट), उत्तर प्रदेश।
- **बचपन का नाम**—रामबोला।
- **प्रमुख ग्रन्थ**—रामचरितमानस।
- **माता-पिता**—हुलसी एवं आत्माराम दुबे।
- **पत्नी का नाम**—रत्नावली।
- **शिक्षा**—सन्त बाबा नरहरिदास से भक्ति की शिक्षा, वेद-वेदांग, दर्शन, इतिहास, पुराण आदि।
- **भक्ति**—रामभक्ति।
- **उपलब्धि**—लोकमानस कवि।
- **मृत्यु**-संवत 1680 वि॰ (1623 ई॰)।
- **साहित्य में योगदान**—हिन्दी साहित्य में कविता की सर्वतोन्मुखी उन्नति।

गोस्वामी तुलसीदास के जीवन-वृत्त के बारे में अन्तःसाक्ष्य एवं बहिःसाक्ष्य के आधार पर विद्वानों ने विविध मत प्रस्तुत किये हैं। बेनीमाधवदास-प्रणीत 'मूल गोसाईं चरित' तथा महात्मा रघुबरदास-रचित 'तुलसी चरित' में गोस्वामी जी का जन्म-संवत् 1554 दिया हुआ है। बेनीमाधवदास जी की रचना में गोस्वामी जी की जन्मतिथि श्रावण शुक्ला सप्तमी का भी उल्लेख है। इस संवत् के अनुसार इनकी आयु 126-127 वर्ष की ठहरती है। 'शिवसिंह सरोज' में इनका जन्म-संवत् 1583 स्वीकार किया गया है। कुछ विद्वानों ने जनश्रुति के आधार पर इनका जन्म-संवत् 1589 स्वीकार किया है। सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने भी इसी जन्म-संवत् को मान्यता दी है। अन्तःसाक्ष्य के आधार पर भी इनकी जन्मतिथि सं. 1589 (सन् 1532) अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होती है। इसी प्रकार इनके जन्म-स्थान के बारे में भी विद्वानों में भारी मतभेद है। नवप्राप्त आधारों पर सोरों को कुछ लोग इनका जन्म-स्थान प्रमाणित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। तुलसीदास ने रामचरितमानस में यह उल्लेख अवश्य किया है–"मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकरखेत। समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत।।" किन्तु, इससे

इतना ही परिणाम निकलता है कि सूकरखेत में उन्होंने गुरु से बालपन में रामकथा सुनी। तुलसीदास का जन्म संवत 1554 वि० को वर्तमान चित्रकूट जिले के अन्तर्गत राजापुर में मानना उपयुक्त एवं तर्कसंगत प्रतीत होता है। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे तथा माता का नाम हुलसी था। इनका बचपन का नाम 'तुलाराम' था। इनके जन्म के सम्बन्ध में निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

**पन्द्रह सौ चौवन बिसे, कालिन्दी के तीर।**
**श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी धर्‌यो शरीर॥**

इनका जब जन्म हुआ तब ये पाँच वर्ष के बालक मालूम होते थे, दाँत सब मौजूद थे और जन्मते ही इनके मुख से 'राम' का शब्द निकला। इसीलिए इन्हें रामबोला भी कहा जाता है। आश्चर्यचकित होकर, इन्हें राक्षस समझकर माता-पिता द्वारा त्याग दिये जाने के कारण इनका पालन-पोषण एक दासी ने तथा ज्ञान एवं भक्ति की शिक्षा प्रसिद्ध सन्त बाबा नरहरिदास ने प्रदान की। इनका विवाह रत्नावली के साथ हुआ था। ऐसा प्रसिद्ध है कि रत्नावली की फटकार से ही इनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ। कहा जाता है कि एक बार पत्नी द्वारा बिना बताये ही मायके चले जाने पर प्रेमातुर तुलसी अर्द्धरात्रि में आँधी-तूफान का सामना करते हुए अपनी ससुराल जा पहुँचे। पत्नी ने इसके लिए इन्हें फटकारा। फटकार से इन्हें वैराग्य हो गया। इसके बाद काशी के विद्वान् शेष सनातन से तुलसी ने वेद-वेदांग का ज्ञान प्राप्त किया और अनेक तीर्थों का भ्रमण करते हुए राम के पवित्र चरित्र का गान करने लगे। इनका समय काशी, अयोध्या और चित्रकूट में अधिक व्यतीत हुआ। संवत 1680 में श्रावण कृष्ण पक्ष तृतीया शनिवार को असीघाट पर तुलसीदास राम-राम कहते हुए परमात्मा में विलीन हो गये। इनकी मृत्यु के सम्बन्ध में निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

**संवत् सोलह सौ असी, असी गंग के तीर।**
**श्रावण कृष्णा तीज शनि, तुलसी तज्यो शरीर॥**

ये राम के भक्त थे। इनकी भक्ति दास्य-भाव की थी। संवत् 1631 में इन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ **'रामचरितमानस'** की रचना आरम्भ की। इनके इस ग्रन्थ में विस्तार के साथ राम के चरित्र का वर्णन है। तुलसी के राम में शक्ति, शील और सौन्दर्य तीनों गुणों का अपूर्व सामंजस्य है। मानव-जीवन के सभी उच्चादर्शों का समावेश करके इन्होंने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम बना दिया है। अवधी भाषा में रचित रामचरितमानस बड़ा ही लोकप्रिय ग्रन्थ है। विश्व-साहित्य के प्रमुख ग्रन्थों में इसकी गणना की जाती है। 'रामचरितमानस' के अतिरिक्त इन्होंने **'जानकी-मंगल'**, **'पार्वती-मंगल'**, **'रामलला-नहछू'**, **'रामाज्ञा प्रश्न'**, **'बरवै रामायण'**, **'वैराग्य संदीपनी'**, **'कृष्ण गीतावली'**, **'दोहावली'**, **'कवितावली'**, **'गीतावली'** तथा **'विनय-पत्रिका'** आदि ग्रन्थों की रचना की। इनकी रचनाओं में भारतीय सभ्यता और संस्कृति का पूर्ण चित्रण देखने को मिलता है।

अपने समय तक प्रचलित दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया, पद आदि काव्य-शैलियों में तुलसी ने पूर्ण सफलता के साथ काव्य-रचना की है। दोहावली में दोहा पद्धति, रामचरितमानस में दोहा-चौपाई पद्धति, विनयपत्रिका में गीति पद्धति, कवितावली में कवित्त-सवैया पद्धति को इन्होंने अपनाया। इन सभी शैलियों में इन्हें अद्‌भुत सफलता मिली है। जो इनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा तथा काव्यशास्त्र में इनकी गहन अन्तर्दृष्टि की परिचायक है। इनके काव्य में भाव-पक्ष के साथ कला-पक्ष की भी पूर्णता है। उसमें सभी रसों का आनन्द प्राप्त होता है। स्वाभाविक रूप में सभी प्रकार के अलंकारों का प्रयोग करके तुलसी ने अपनी रचनाओं को प्रभावोत्पादक बना दिया है। इनका ब्रज भाषा तथा अवधी भाषा पर समान अधिकार था। कवितावली, गीतावली, विनयपत्रिका आदि रचनाएँ ब्रजभाषा में हैं और रामचरितमानस अवधी में। अवधी को साहित्यिक रूप प्रदान करने के लिए इन्होंने संस्कृत शब्द का भी प्रयोग किया है, पर इससे कहीं भी दुरूहता नहीं आने पायी है।

काव्य के उद्देश्य के सम्बन्ध में तुलसी का दृष्टिकोण सर्वथा सामाजिक था। इनके मत में वही कीर्ति, कविता और सम्पत्ति उत्तम है जो गंगा के समान सबका हित करनेवाली हो—**'कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सबकर हित होई।'** सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन का उच्चतम आदर्श जनमानस के समक्ष रखना ही इनका काव्यादर्श था। जीवन के मार्मिक स्थलों की इनको अद्‌भुत पहचान थी। तुलसीदास ने राम के शक्ति, शील, सौन्दर्य समन्वित रूप की अवतारणा की है। इनका सम्पूर्ण काव्य समन्वयवाद की विराट् चेष्टा है। ज्ञान की अपेक्षा भक्ति का राजपथ ही इन्हें अधिक रुचिकर लगता है।

●●●

# भरत-महिमा

*[गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस से अवतरित प्रस्तुत प्रसंग में भरत की भ्रातृ-भक्ति को उद्‌घाटित किया है। राम को पिता के द्वारा वनवास दिये जाने के बाद भरत उनको वापस बुलाने के लिए पैदल ही वन की ओर चल देते हैं। उनका भ्रातृ-प्रेम आदर्श एवं अनुकरणीय है। तभी तो तुलसीदास ने कहा है—'भरत सम भाई हुवे हैं न होहुँगे।']*

**दो0- चलत पयादें खात फल पिता दीन्ह तजि राजु।**
**जात मनावन रघुबरहिं भरत सरिस को आजु॥1॥**

भायप भगति भरत आचरनू। कहत सुनत दुख दूषन हरनू।।
जो किछु कहब थोर सखि सोई। राम बंधु अस काहे न होई।।
हम सब सानुज भरतहि देखें। भइन्ह धन्य जुबती जन लेखें।।
सुनि गुन देखि दसा पछिताहीं। कैकइ जननि जोगु सुतु नाहीं।।
कोउ कह दूषनु रानिहि नाहिन। बिधि सबु कीन्ह हमहि जो दाहिन।।
कहँ हम लोक बेद विधि हीनी। लघु तिय कुल करतूति मलीनी।।
बसहिं कुदेस कुगाँव कुबामा। कहँ यह दरसु पुन्य परिनामा।।
अस अनंदु अचिरिजु प्रति ग्रामा। जनु मरुभूमि कलपतरु जामा।।

**दो0- तेहि बासर बसि प्रातहीं चले सुमिरि रघुनाथ।**
**राम दरस की लालसा भरत सरिस सब साथ॥2॥**

मंगल सगुन होहिं सब काहू। फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू।।
भरतहिं सहित समाज उछाहू। मिलिहहिं रामु मिटिहि दुख दाहू।।
करत मनोरथ जस जियँ जाके। जाहिं सनेह सुराँ सब छाके।।
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहिं। बिहवल बचन पेम बस बोलहिं।।
रामसखाँ तेहि समय देखावा। सैल सिरोमनि सहज सुहावा।।
जासु समीप सरित पय तीरा। सीय समेत बसहिं दोउ बीरा।।
देखि करहिं सब दंड प्रनामा। कहि जय जानकि जीवन रामा।।
प्रेम मगन अस राजसमाजू। जनु फिरि अवध चले रघुराजू।।

**दो0-भरत प्रेमु तेहि समय जस तस कहि सकइ न सेषु।**
**कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु अह मम मलिन जनेषु॥3॥**

सकल सनेह सिथिल रघुबर कें। गए कोस दुई दिनकर ढरकें।।
जलु थलु देखि बसे निसि बीतें। कीन्ह गवन रघुनाथ पिरीतें।।
उहाँ रामु रजनी अवसेषा। जागे सीयँ सपन अस देखा।।
सहित समाज भरत जनु आए। नाथ वियोग ताप तन ताए।।
सकल मलिन मन दीन दुखारी। देखीं सासु आन अनुहारी।।
सुनि सिय सपन भरे जल लोचन। भए सोचबस सोच बिमोचन।।
लखन सपन यह नीक न होई। कठिन कुचाह सुनाइहि कोई।।
अस कहि बंधु समेत नहाने। पूजि पुरारि साधु सनमाने।।

**छं0- सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत भए।**
**नभ धूरि खग मृग भूरि भागे बिकल प्रभु आश्रम गए।।**
**तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सचकित रहे।**
**सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेहि अवसर कहे।।**

**सो0-सुनत सुमंगल बैन मन प्रमोद तन पुलक भर।**
**सरद सरोरुह नैन तुलसी भरे सनेह जल।।4।।**

X X X

**दो0- भरतहि होइ न राजमदु विधि हरि हर पद पाइ।**
**कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ।।5।।**

तिमिरु तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगनु मगन मकु मेघहिं मिलई।।
गोपद जल बूड़हिं घटजोनी। सहज छमा बरु छाड़ै छोनी।।
मसक फूँक मकु मेरु उड़ाई। होइ न नृपमदु भरतहि भाई।।
लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।।
सगुनु खीरु, अवगुन, जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता।।
भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा।।
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्हि उजियारी।।
कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ। पेम पयोधि मगन रघुराऊ।।

**दो0- सुनि रघुबर बानी बिबुध देखि भरत पर हेतु।**
**सकल सराहत राम सो प्रभु को कृपानिकेतु।।6।।**

जौं न होत जग जनम भरत को। सकल धरम धुर धरनि धरत को।।
कबि कुल अगम भरत गुन गाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा।।
लखन राम सियँ सुनि सुर बानी। अति सुखु लहेउ न जाइ बखानी।।
इहाँ भरतु सब सहित सहाए। मंदाकिनी पुनीत नहाए।।

सरित समीप राखि सब लोगा। मागि मातु गुर सचिव नियोगा।।
चले भरतु जहँ सिय रघुराई। साथ निषादनाथु लघु भाई।।
समुझि मातु करतब सकुचाहीं। करत कुतरक कोटि मन माहीं।।
रामु लखनु सिय सुनि मम नाऊँ। उठि जनि अनत जाहिं तजि ठाऊँ।।

**दो0- मातु मते महुँ मानि मोहि जो कछु करहिं सो थोर।**
**अघ अवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर।।7।।**

जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवकु मानी।।
मोरे सरन रामहि की पनही। राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं।।
जग जस भाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना।।
अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेहँ सिथिल सब गाता।।
फेरति मनहुँ मातु कृत खोरी। चलत भगति बल धीरज धोरी।।
जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ। तब पथ परत उताइल पाऊ।।
भरत दसा तेहि अवसर कैसी। जल प्रवाहँ जल अलि गति जैसी।।
देखि भरत कर सोचु सनेहू। भा निषाद तेहि समयँ बिदेहू।।

**दो0- मिलि सपेम रिपुसूदनहिं केवटु भेंटेउ राम।**
**भूरि भायँ भेंटे भरत लछिमन करत प्रनाम।।8।।**

भेंटेउ लखन ललकि लघु भाई। बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई।।
पुनि मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे। अभिमत आसिष पाइ अनंदे।।
सानुज भरत उमगि अनुरागा। धरि सिर सिय पद पदुम परागा।।
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए। सिर कर कमल परसि बैठाए।।
सीयँ असीस दीन्हि मन माहीं। मगन सनेहँ देह सुधि नाहीं।।
सब बिधि सानुकूल लखि सीता। भे निसोच उर अपडर बीता।।
कोउ किछु कहइ न कोउ किछु पूँछा। प्रेम भरा मन निज गति छूँछा।।
तेहि अवसर केवटु धीरजु धरि। जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि।।

**दो0- नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सकल पुर लोग।**
**सेवक सेनप सचिव सब आए बिकल वियोग।।9।।**

सीलसिंधु सुनि गुर आगवनू। सिय समीप राखे रिपुदवनू।।
चले सबेग रामु तेहि काला। धीर धरम धुर दीनदयाला।।
गुरहि देखि सानुज अनुरागे। दंड प्रनाम करत प्रभु लागे।।
मुनिवर धाइ लिए उर लाई। प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई।।
प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूरि ते दंड प्रनामू।।
रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा।।

रघुपति भगति सुमंगल मूला। नभ सराहि सुर बरिसहिं फूला।।
एहि सम निकट नीच कोउ नाहीं। बड़ बसिष्ठ सम को जग माहीं।।

**दो0- जेहि लखि लखनहु तें अधिक मिले मुदित मुनिराउ।**
**सो सीतापति भजन को प्रगट प्रताप प्रभाउ॥10॥**

**('रामचरितमानस' से)**

# कवितावली

*[प्रस्तुत प्रसंग में हनुमान् जी द्वारा जलाई जा रही लंका और लंकानिवासी राक्षसों की व्याकुलता का अत्यन्त सजीव चित्र खींचा गया है।]*

## लंका-दहन

बालधी विसाल विकराल ज्वाल-जाल मानौं,
लंक लीलिबे को काल रसना पसारी है।
कैधौं ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,
बीररस बीर तरवारि सी उघारी है।।
तुलसी सुरेस चाप, कैधौं दामिनी कलाप,
कैधौं चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है।
देखे जातुधान जातुधानी अकुलानी कहैं,
"कानन उजार्‌यो अब नगर प्रजारी है"।।1।।

हाट, बाट, कोट, ओट, अट्टनि, अगार, पौरि,
खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है।
आरत पुकारत, सँभारत न कोऊ काहू,
ब्याकुल जहाँ सो तहाँ लोग चले भागि हैं।।
बालधी फिरावै बार बार झहरावै, झरैं
बूँदिया सी लंक पघिलाइ पाग पागिहैं।
तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं
"चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहैं"।।2।।

लपट कराल ज्वालजालमाल दहूँ दिसि,
धूम अकुलाने पहिचाने कौन काहि रे?
पानी को ललात, बिललात, जरे गात जात,
परे पाइमाल जात, "भ्रात! तू निबाहि रे।
प्रिया तू पराहि, नाथ तू पराहि, बाप,
बाप! तू पराहि, पूत पूत, तू पराहि रे"।
तुलसी बिलोकि लोग ब्याकुल बिहार कहैं,
"लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे"।।3।।

बीथिका बजार प्रति, अटनि अगार प्रति,
पँवरि पगार प्रति बानर बिलोकिए।
अध ऊर्ध बानर, बिदिसि दिसि बानर हैं,
मानहु रह्यो है भरि बानर तिलोकिए।।
मूँदे आँखि हीय में, उघारे आँखि आगे ठाढ़ो,
धाइ जाइ जहाँ तहाँ और कोऊ को किए?।
"लेहु अब लेहु, तब कोऊ न सिखाओ मानो,
सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिए"।।4।।

# गीतावली

जो पै हौं मातु मते महँ ह्वैहौं।
तौ जननी! जग में या मुख की कहाँ कालिमा ध्वैहौं?
क्यों हौं आजु होत सुचि सपथनि? कौन मानिहै साँची?
महिमा-मृगी कौन सुकृती की खल-बच-बिसिखन बाँची?
गहि न जाति रसना काहू की, कहौ जाहि जोइ सूझै।
दीनबंधु कारुन्य-सिंधु बिनु कौन हिए की बूझै?
तुलसी रामबियोग-बिषम-बिष-बिकल नारिनर भारी।
भरत-स्नेह-सुधा सींचे सब भए तेहि समय सुखारी।।1।।

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
बिपति बँटावन बंधु-बाहु बिनु करौं भरोसो काको?

सुनु सुग्रीव साँचेहूँ मोपर फेर्यो बदन विधाता।।
ऐसे समय समर-संकट हौं तज्यो लखन सो भ्राता।।
गिरि कानन जैहैं साखामृग, हौं पुनि अनुज सँघाती।।
ह्वैहै कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती।।
तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु कपि सकल बिकल हिय हारे।
जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि प्रचारे।।2।।

हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै।
पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै।।
मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै।।
तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धनि न सकत धीरौ धीरै।।
उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यौं दीजै खीरै-नीरै।।3।।

# दोहावली

हरो चरहिं, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ।।1।।

मान राखिबो, माँगिबो, पियसों नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मत लेहु।।2।।

नहिं जाचत नहिं संग्रहीं, सीस नाइ नहिं लेइ।
ऐसे मानी माँगनेहि को बारिद बिन देइ।।3।।

चरन चोंच लोचन रँगौ, चलौ मराली चाल।
छीर-नीर बिबरन समय बक उघरत तेहि काल।।4।।

आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोइ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ।।5।।

ग्रह, भेषज, जल, पवन, पट, पाइ कुजोग सुजोग।
होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग।।6।।

जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागत रहै जु सोइ।
उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होइ।।7।।

बरषत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ।
तुलसी प्रजा-सुभाग तें भूप भानु सो होइ।।8।।

मंत्री, गुरु अरु बैद जो प्रिय बोलहिं भय आस।
राज, धरम, तन तीनि कर होइ बेगिही नास।।9।।

तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन।
अब तौ दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहै कौन?10।

# विनयपत्रिका

*[ब्रजभाषा में रचा गया ग्रन्थ विनय-पत्रिका हिन्दी साहित्य का अति सुन्दर गीतिकाव्य है। यह भक्त तुलसी के ह्रदय का प्रत्यक्ष दर्शन है। आत्मग्लानि, भक्त-ह्रदय का समर्पण, आराध्य के प्रति भक्त का दैन्य ही विनय-पत्रिका के मुख्य विषय हैं।]*

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत सुभाव गहौंगो।।
जथालाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो।।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो।।
परुषबचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत मान,सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो।।
परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरि भक्ति लहौंगो।।1।।

ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की।।
धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की।।
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की।
टूटत अति आतुर अहार बस छति बिसारि आनन की।।

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की।।2।।

हे हरि! कस न हरहु भ्रम भारी?
जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिं कृपा तुम्हारी।।
अर्थ अबिद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गोसाईं।
बिनु बाँधे निज हठ सठ परबस पर्‌यो कीर की नाईं।।
सपने ब्याधि बिबिध बाधा भइ, मृत्यु उपस्थित आई।
बैद अनेक उपाय करहिं, जागे बिनु पीर न जाई।।
स्रुति-गुरु-साधु-सुमृति-संमत यह दृश्य सदा दुखकारी।
तेहि बिन तजे, भजे बिन रघुपति बिपति सकै को टारी?।।
बहु उपाय संसार-तरन कहँ बिमल गिरा स्रुति गावै।
तुलसिदास 'मैं-मोर' गए बिनु जिय सुख कबहुँ न पावै।।3।।

अब लौं नसानी अब न नसैहौं।
राम कृपा भवनिसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं।।
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद-कमल बसैहौं।।4।।

## अभ्यास प्रश्न

### ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

#### भरत-महिमा

**(क)** लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।
सगुनु खीरु, अवगुन, जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता।
भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा।।
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्हि उजियारी।।
कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ। पेम पयोधि मगन रघुराऊ।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में श्रीरामजी ने किसके गुणों का बखान किया है?
(iv) श्रीराम लक्ष्मण और पिताश्री की शपथ लेकर क्या कहते हैं?
(v) श्रीराम जी ने भरत जी की तुलना हंस से क्यों की है?

**(ख)** जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवकु मानी।।
मोरे सरन रामहि की पनही। राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं।।
जग जस भाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना।।
अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेहँ सिथिल सब गाता।।
फेरति मनहुँ मातु कृत खोरी। चलत भगति बल धीरज धोरी।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) रामचन्द्र जी से मिलने के लिए जाते समय भरत जी मन में क्या विचार कर रहे हैं?
(iv) भरत के अनुसार उनकी शरण कौन-सी है?
(v) इस संसार में यश के पात्र कौन हैं और क्यों?

## गीतावली

**(ग)** हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै।
पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै।।
मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै।
तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धनि न सकत धीरौ धीरै।।
उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यौं दीजै खीरै-नीरै।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में लक्ष्मण ने घाव और पीड़ा के सन्दर्भ में क्या कहा?
(iv) राम और लक्ष्मण के प्रेम के सम्बन्ध में तुलसीदास जी ने क्या कहा है?
(v) पद्यांश के अनुसार लक्ष्मण के घाव की पीड़ा को श्रीराम जी किस प्रकार जान सकते हैं?

## दोहावली

**(घ)** मान राखिबो, माँगिबो, पियसों नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मत लेहु।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चातक जल की याचना किससे करता है?
(iv) कवि के अनुसार व्यक्ति का जीवन कैसे सफल हो सकता है?
(v) इस पद्यांश में किसकी विशेषताओं को बताया गया है?

(ङ) नहिं जाचत नहिं संग्रहीं, सीस नाइ नहिं लेइ।
ऐसे मानी माँगनेहि को बारिद बिन देइ।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चातक जल ग्रहण कैसे करता है?
(iv) चातक किस नक्षत्र की जल बूँदें ग्रहण करता है?
(v) स्वाभिमानी चातक की याचना को कौन जानता है?

## विनयपत्रिका

(च) कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत सुभाव गहौंगो।।
जथालाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो।।
परुषबचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत मान, सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो।।
परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरि भक्ति लहौंगो।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) तुलसीदास जी श्रीराम से क्या प्रार्थना कर रहे हैं?
(iv) क्रोध और अपमान के सन्दर्भ में तुलसीदास ने क्या कहा है?
(v) तुलसीदास जी किस नियम का निरन्तर पालन करने के लिए कह रहे हैं?

(छ) ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की।।
धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की।।
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की।।
टूटत अति आतुर अहार बस छति बिसारि आनन की।।

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की।।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में तुलसीदास श्री रामचन्द्र जी से क्या प्रार्थना कर रहे हैं?
(iv) तुलसीदास के अनुसार यह मन किस प्रकार की मूढ़ता कर रहा है?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में पपीहे का उल्लेख किस प्रसंग में आया है?

(ज) अब लौं नसानी अब न नसैहौं।
राम कृपा भवनिसा सिरानी जाये फिर न डसैहौं।।
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।।
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, नि बस ह्वै न हँसैहौं।
मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद-कमल बसैहौं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) तुलसीदास को कौन-सी चिन्तामणि प्राप्त हो गयी है?
(iv) तुलसीदास जी समाज में उपहास का पात्र क्यों नहीं बनेंगे?
(v) तुलसीदास ने किस पर मुक्ति प्राप्त कर ली है और क्यों?

## ➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) अब लौं नसानी अब न नसैहौं।
(ख) अब तौ दादुर बोलिहैं हमैं पूछिहैं कौन?
(ग) बालधी बिसाल विकराल ज्वाल-जाल मानौं, लंक लीलिबो को काल रसना पसारी है।
(घ) छीर-नीर बिबरन समय बक उघरत तेहि काल।
(ङ) गोपद जल बूड़हिं घटजोनी।
(च) होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग।
(छ) तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ।
(ज) भरतहि होइ न राजमदु विधि हरि हर पद पाइ।।
(झ) महिमा मृगी कौन सुकृती की खल-बच बिसिखन बाँची।
(ञ) कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीन सिंधु बिनसाइ।
(ट) तुलसीदास मैं मोर गये बिन, जिय सुख कबहुँ न पावै।
(ठ) तुलसी प्रजा-सुभाग तें भूप भानु सो होई।

(ड) परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।

(ढ) भायप भगति भरत आचरनू। कहत सुनत दुख दूषन हरनू।

2. 'भायप-भक्ति' क्या होती है? 'भरत-महिमा' के आधार पर भरत का चरित्र-चित्रण कीजिए।

3. "सन्त तुलसीदास जी की रचनाओं में लोक-मंगल का स्वर मुखरित हुआ है।" इस कथन की विशद व्याख्या कीजिए।

अथवा 'तुलसीदास लोककवि थे।' स्पष्ट कीजिए।

4. "लंकादहन तुलसीदास जी की वर्णनात्मक और चित्रात्मक शैली का सुन्दर उदाहरण है।" संकलित अंश के आधार पर इसका विवेचन कीजिए।

5. तुलसीदास की काव्यगत विशेषताओं पर एक निबन्ध लिखिए।

6. तुलसीदास की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालिए।

7. तुलसीदास का जीवन-परिचय देते हुए उनके काव्य-परिचय का उल्लेख कीजिए।

8. गोस्वामी तुलसीदास का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।

9. तुलसीदास की काव्य-भाषा बताते हुए उनकी रचनाओं का वर्णन कीजिए।

10. तुलसीदास का जीवन-परिचय लिखिए।

11. तुलसी के समय की साहित्यिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ लिखिए।

12. "'विनय पत्रिका' भक्त तुलसी के हृदय का प्रत्यक्ष दर्शन है।" इस कथन के आधार पर तुलसी की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालिए।

13. तुलसीदास का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "तुलसी ने राम और भरत के प्रेम का अपूर्व चित्रण किया है।" इस कथन पर प्रकाश डालिए।
2. तुलसीदास की 'विनयपत्रिका' के आधार पर उनकी भक्तिभावना का सोदाहरण निरूपण कीजिए।
3. 'तुलसी साहित्य में समन्वय साधना' विषय पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
4. 'तुलसी तुलसी-सम पुनीत हैं' स्पष्ट कीजिए।
5. तुलसीदास के लोकनायकत्व के विषय में उल्लेख कीजिए।
6. तुलसी की मुख्य रचनाओं के नाम लिखिए।
7. कवितावली के आधार पर 'लंका-दहन' का संक्षिप्त वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
8. तुलसी का सर्वाधिक लोकप्रिय महाकाव्य कौन-सा है? उसके प्रमुख पात्रों का नाम लिखिए।

## ➡ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—

   (क) हरो चरहि, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ।

   (ख) बालधी बिसाल बिकराल ज्वाल जाल मानौं।

2. अनुप्रास अलंकार एवं दोहा छन्द का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक-एक उदाहरण लिखिए।

●●●

# 5 केशवदास

## कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत् 1612 वि0 (1555 ई॰)।
- **जाति**—ब्राह्मण।
- **जन्म-स्थान**—ओरछा (बुंदेलखण्ड)।
- **पिता**—काशीनाथ मिश्र।
- **भाषा**—ब्रज भाषा।
- **शैली**—प्रबन्ध, मुक्तक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—रामचंद्रिका, रसिकप्रिया, विज्ञान-गीता, नख-शिख, छन्दमाला, वीरसिंह देव चरित, रतनबावनी, जहाँगीर जस चन्द्रिका।
- **मृत्यु**—संवत् 1674 वि0 (1617 ई॰)।
- **साहित्य में स्थान**—अपनी छन्द वैविध्यता के कारण इन्हें हिन्दी साहित्य में आदरणीय स्थान प्राप्त है। इन्हें हिन्दी साहित्य के प्रथम आचार्य कवि तथा रीतिकाल का प्रवर्तक माना जाता है।

हिन्दी काव्य-जगत् में रीतिवादी परम्परा के संस्थापक, प्रचारक महाकवि केशवदास का जन्म मध्य भारत के ओरछा (बुन्देलखण्ड) राज्य में संवत् 1612 वि0 (सन् 1555 ई0) में हुआ था। ये सनाढ्य-ब्राह्मण कृष्णदत्त के पौत्र तथा काशीनाथ के पुत्र थे। 'विज्ञान गीता' में वंश के मूल पुरुष का नाम वेदव्यास उल्लिखित है। ये भारद्वाज गोत्रीय मार्दनी शाखा के यजुर्वेदी मिश्र उपाधिधारी ब्राह्मण थे। तत्कालीन जिन विशिष्ट जनों से इनका घनिष्ठ परिचय था उनके नाम हैं—अकबर, बीरबल, टोडरमल और उदयपुर के राणा अमरसिंह। तुलसीदास जी से इनका साक्षात्कार महाराज इन्द्रजीत के साथ काशी-यात्रा के समय हुआ था। ओरछाधिपति महाराज इन्द्रजीत सिंह इनके प्रधान आश्रयदाता थे, जिन्होंने 21 गाँव इन्हें भेंट में दिये थे। वीरसिंह देव का आश्रय भी इन्हें प्राप्त था। उच्चकोटि के रसिक होने पर भी ये पूरे आस्तिक थे। व्यवहारकुशल, वाग्विदग्ध, विनोदी, नीति-निपुण, निर्भीक एवं स्पष्टवादी केशव की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। साहित्य और संगीत, धर्मशास्त्र व राजनीति, ज्योतिष और वैद्यक सभी विषयों का इन्होंने गम्भीर अध्ययन किया था। ये संस्कृत के विद्वान् तथा अलंकारशास्त्री थे और इसी कारण हिन्दी काव्यक्षेत्र में अवतीर्ण होने पर स्वभावतः इन्होंने शास्त्रानुमोदित प्रथा पर ही साहित्य का प्रचार करना उचित समझा। हिन्दी साहित्य में ये प्रथम महाकवि हुए हैं जिन्होंने संस्कृत के आचार्यों की परम्परा का हिन्दी में सूत्रपात किया था। संवत् 1674 वि0 (सन् 1617 ई0) के लगभग इनका स्वर्गवास हुआ था।

महाकवि केशवदास का समय भक्ति तथा रीतिकाल का सन्धियुग था। तुलसी तथा सूर ने भक्ति की जिस पावन धारा को प्रवाहित किया था, वह तत्कालीन राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितिवश क्रमशः ह्रासोन्मुख और क्षीण हो रही थी। दूसरी ओर जयदेव तथा विद्यापति ने जिस शृंगारिक कविता की नींव डाली थी, उसके अभ्युदय का आरम्भ हो चुका था। वास्तुकला

तथा ललित कलाओं का उत्कर्ष इस युग की ऐतिहासिक उपलब्धि थी। अब कविता भक्ति या मुक्ति का विषय न होकर वृत्ति का स्थान ले चुकी थी। भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष को प्रधानता मिल रही थी। महाकवि केशव इस काल के न केवल प्रतिनिधि कवि थे, अपितु युग प्रवर्तक भी रहे।

केशवदास लगभग 16 ग्रन्थों के रचयिता माने जाते हैं। उनमें से आठ ग्रन्थ असन्दिग्ध एवं प्रामाणिक हैं। इन आठ प्रामाणिक ग्रन्थों में से '**रामचन्द्रिका**' भक्ति सम्बन्धी ग्रन्थ है, जिसमें केशव ने राम और सीता को अपना इष्टदेव माना है और राम-नाम की महिमा का गुणगान किया है। यह ग्रन्थ पण्डितों के पाण्डित्य को परखने की कसौटी है। छन्द-विधान की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण है। संस्कृत के अनेक छन्दों को भाषा में ढालने में केशव को अपूर्व सफलता मिली है। '**विज्ञानगीता**' में केशव ने ज्ञान की महिमा गाते हुए जीव को माया से छुटकारा पाकर ब्रह्म से मिलने का उपाय बतलाया है। ये दोनों ग्रन्थ धार्मिक प्रबन्ध काव्य हैं। '**वीरसिंहदेव चरित**', '**जहाँगीर जसचन्द्रिका**' और '**रतन बावनी**' ये तीनों ही ग्रन्थ चारणकाल की स्मृति दिलाते हैं। ये ग्रन्थ ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य की कोटि में आते हैं। काव्यशास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थ '**रसिकप्रिया**' में रस विवेचन तथा नायिका भेद; '**कविप्रिया**' में कवि-कर्त्तव्य तथा अलंकार और '**नख-शिख**' में नख-शिख वर्णन किया गया है। इनके द्वारा कवि ने रीति-साहित्य का शिलान्यास किया है।

वीर रस का अपने काव्य में केशव ने अच्छा पुट दिया है। प्राकृतिक सौन्दर्य के वर्णन की इनमें कमी है, तो राजसी वैभव का अच्छा वर्णन किया है। अलंकारवादी आचार्य होने के कारण ये अलंकार के विधान में अत्यधिक कुशल थे। केशव के समय में दो काव्य-भाषाएँ थीं—अवधी और ब्रज। इन्होंने ब्रजभाषा को ही अपनी काव्य-भाषा के रूप में अपनाया। केशव बुन्देलखण्ड के निवासी थे। बुन्देलखण्डी भाषा और ब्रज-भाषा में बहुत कुछ साम्य है, अतः इनकी भाषा को बुन्देलखण्डी मिश्रित ब्रजभाषा कहना अधिक उपयुक्त होगा।

काव्य में अलंकारों के महत्त्व पर तो केशव का मत ही है—

**जदपि सुजाति सुलक्षणी, सुबरन सरस सुवृत्त।**
**भूषण बिनु न बिराजई, कविता बनिता मित्त।**

**–कविप्रिया**

केशव की रचना में इनके तीन रूप दिखायी देते हैं—आचार्य का, महाकवि का और इतिहासकार का। ये परमार्थतः हिन्दी के प्रथम आचार्य थे। आचार्य का आसन ग्रहण करने पर इन्हें संस्कृत की शास्त्रीय पद्धति को हिन्दी में प्रचलित करने की चिन्ता हुई जो जीवन के अन्त तक बनी रही। इनके एक प्रशंसक ने सूर और तुलसी के बाद तीसरे स्थान पर हिन्दी कवियों में केशव को ही माना है—

**सूर-सूर तुलसी ससी, उडुगन केशवदास।**
**अब के कवि खद्योत सम जह-तह करत प्रकाश।।**

●●●

# स्वयंवर-कथा

*[प्रस्तुत अंश केशवदास के सुप्रसिद्ध प्रबन्ध काव्य 'रामचन्द्रिका' के 'स्वयंवर कथा' से अवतरित है। इसमें सीताजी के स्वयंवर की कथा कही गयी है। इन अंशों में मुख्य रूप से श्रीराम का आगमन, विश्वामित्र द्वारा राजा जनक से परिचय, श्रीराम द्वारा शिव धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाकर धनुष भंग का वर्णन किया गया है।]*

खंडपरस को सोभिजै, सभामध्य कोदंड।
मानहुँ शेष अशेष धर, धरनहार बरिबंड।।1।।

**( सवैया )**

सोभित मंचन की अवली गजदंतमयी छवि उज्ज्वल छाई।
ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जोन्हाई।
तामहँ केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई।
देवन स्यों जनु देवसभा सुभ सीयस्वयंवर देखन आई।।2।।

**( घनाक्षरी )**

पावक पवन मणिपन्नग पतंग पितृ,
जेते ज्योतिवंत जग ज्योतिषिन गाये हैं।
असुर प्रसिद्ध सिद्ध तीरथ सहित सिंधु,
केशव चराचर जे वेदन बताये हैं।
अजर अमर अज अंगी औ अनंगी सब,
बरणि सुनावै ऐसे कौन गुण पाए हैं।
सीता के स्वयंवर को रूप अवलोकिबे को,
भूपन को रूप धरि विश्वरूप आये हैं।।3।।

**( सवैया )**

सातहु दीपन के अवनीपति हारि रहे जिय में जब जाने।
बीस बिसे व्रत भंग भयो, सो कहौ, अब, केशव, को धनु ताने?
शोक की आगि लगी परिपूरण आइ गये घनश्याम बिहाने।
जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरुपुण्य पुराने।।4।।

# विश्वामित्र और जनक की भेंट

## (दोधक छन्द)

आइ गये ऋषि राजहिं लीने। मुख्य सतानँद विप्र प्रवीने।
देखि दुवौ भये पाँयनि लीने। आशिष शीरषबासु लै दीनै।।5।।

## (सवैया)

**विश्वामित्र**

केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में जिन कीरतिबेलि बयी है।
दान-कृपान-विधानन सों सिगरी वसुधा जिन हाथ लयी है।
अंग छ सातक आठक सों भव तीनिहु लोक में सिद्धि भयी है।।
वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता शुभ योगमयी है।।6।।

## (सोरठा)

**जनक–** जिन अपनो तन स्वर्ण, मेलि तपोमय अग्नि मैं।
कीन्हों उत्तमवर्ण, तेई विश्वामित्र ये।।7।।

## (मोहन छन्द)

**लक्ष्मण–**जन राजवंत। जग योगवंत।
तिनको उदोत। केहि भाँति होत।।8।।

## (विजय छन्द)

**श्रीराम-**

सब छत्रिन आदि दै काहु हुई न छुए बिजनादिक बात डगै।
न घटै न बढ़ै निशि बासर केशव लोकन को तमतेज भगै।
भवभूषण भूषित होत नहीं मदमत्त गजादि मसी न लगै।
जलहूँ थलहूँ परिपूरण श्री निमि के कुल अद्भुत ज्योति जगै।।9।।

## (तारक छन्द)

**जनक-**यह कीरति और नरेशन सोहै।
सुनि देव अदेवन को मन मोहै।
हम को बपुरा सुनिए ऋषिराई।
सब गाँऊँ छ सातक की ठकुराई।।10।।

## ( विजय छन्द )

**विश्वामित्र-**
आपने आपने ठौरनि तौ भुवपाल सबै भुव पालै सदाई।
केवल नामहिं के भुवपाल कहावत हैं भुवि पालि न जाई।
भूपति की तुमहीं धरि देह बिदेहन में कल कीरति गाई।
केशव भूषन को भवि भूषण भू तन तै तनया उपजाई।।11।।

## ( दोधक छन्द )

**जनक-** ये सुत कौन के सोभहिं साजे?
सुंदर श्यामल गौर विराजे।
जागत हौं जिय सोदर दोऊ।
कै कमला विमला पति कोऊ।।12।।

## ( घनाक्षरी )

**विश्वामित्र-**दानिन के शील, पर दान के प्रहारी दिन,
दानवारि ज्यों निदान देखिए सुभाय के।
दीप दीप हूँ के अवनीपन के अवनीप,
पृथु सम केशोदास दास द्विज गाय के।
आनँद के कंद सुरपालक से बालक ये,
परदारप्रिय साधु मन वच काय के।
देहधर्मधारी पै विदेहराज जू से राज,
राजत कुमार ऐसे दशरथ राय के।।13।।

## ( तारक छन्द )

रघुनाथ शरासन चाहत देख्यो।
अति दुष्कर राजसमाजनि लेख्यो।

**जनक-**ऋषि है वह मंदिर माँझ मँगाऊँ।
गहि ल्यावहि हौं जनयूथ बुलाऊँ।।14।।

## ( दण्डक छन्द )

बज्र तें कठोर है, कैलास ते विशाल, काल-
दंड तें कराल, सब काल काल गावई।

केशव त्रिलोक के विलोक हारे देव सब,
छोड़ चंद्रचूड़ एक और को चढ़ावई?
पन्नग प्रचंड पति प्रभु की पनच पीन,
पर्वतारि-पर्वत-प्रभा न मान पावई।
विनायक एकहू पै आवै न पिनाक ताहि,
कोमल कमलपाणि राम कैसे ल्यावई।।15।।

## ( तोमर )

**विश्वामित्र-** सुनि रामचंद कुमार। धनु आनिए यहि बार।।
पुनि बेगि ताहि चढ़ाव। यश लोक लोक बढ़ाव।।16।।

(दो0) ऋषिहि देखि हरष्यो हियो, राम देखि कुम्हलाइ।
धनुष देखि डरपै महा, चिन्ता चित्त डोलाइ।।17।।

## ( स्वागता छन्द )

रामचंद्र कटिसों पटु बाँध्यो। लीलयैव हर को धनु साँध्यो।।
नेकु ताहि करपल्लव सों छ्वै। फूलमूल जिमि टूक कर्‌यो द्वै।।18।।

## ( सवैया )

उत्तम गाथ सनाथ जबै धनु श्री रघुनाथ जू हाथ कै लीनो।
निर्गुण ते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंतन दीनो।
ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तिच्छ कटाच्छ नराच नवीनो।
राजकुमारि निहारि सनेह सों शंभु को साँचो शरासन कीनो।।19।।

प्रथम टंकोर झुकि झारि संसार मद,
चंड कोदंड रह्यो मंडि नव खंड को।
चालि अचला अचल घालि दिगपाल बल,
पालि ऋषिराज के बचन परचंड को।
सोधु दै ईश को, बोधु जगदीश को,
क्रोधु उपजाइ भृगुनंद बरिवंड को।
वाधि वर स्वर्ग को, साधि अपवर्ग, धनु-
भंग को शब्द गयो भेदि ब्रह्मांड को।।20।।

**( 'रामचन्द्रिका' से )**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए—

### स्वयंवर कथा

(क) सोभित मंचन की अवली गजदंतमयी छवि उज्ज्वल छाई।
ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जोन्हाई।
तामहँ केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई।
देवन स्यों जनु देवसभा सुभ सीयस्वयंवर देखन आई।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सीता के स्वयंवर को देखने के लिए कौन चली आयी है?
(iv) सुन्दर उज्ज्वल छवि वाले मंच किस वस्तु के बने हैं?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?

(ख) सातहु दीपन के अवनीपति हारि रहे जिय में जब जाने।
बीस बिसे व्रत भंग भयो, सो कहौ, अब, केशव, को धनु ताने?
शोक की आगि लगी परिपूरण आइ गये घनश्याम बिहाने।
जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरुपुण्य पुराने।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं कविता का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) स्वयंवर में श्रीरामचन्द्र के आगमन से किसके पूर्व जन्म के पुण्य पुष्पवान हो गये?
(iv) राजा जनक की प्रतिज्ञा भंग होने की दशा में क्यों आ गयी?
(v) भगवान राम किसके साथ जनकपुर पहुँचे?

### विश्वामित्र और जनक की भेंट

(ग) केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में जिन कीरतिबेलि बयी है।
दान-कृपान विधानन सों सिगरी वसुधा जिन हाथ लयी है।।
अंग छ सातक आठक सों भव तीनिहु लोक में सिद्धि भयी है।।
वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता शुभ योगमयी है।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) मिथिलापुरी के राजा कौन हैं?
(iv) किसकी कीर्ति की बेल सम्पूर्ण संसार में फैली हुई है?
(v) "अंग छ सातक आठक सों भव तीनिहु लोक में सिद्धि भयी है।"
पंक्ति में किस विधि द्वारा सिद्धि-प्राप्ति की बात कही गयी है?

**(घ)**

दानिन के शील, पर दान के प्रहारी दिन,
दानवारि ज्यों निदान देखिए सुभाय के।
दीप दीप हूँ के अवनीपन के अवनीप,
पृथु सम केशोदास दास द्विज गाय के।
आनँद के कंद सुरपालक से बालक ये,
परदारप्रिय साधु मन वच काय के।
देहधर्मधारी पै विदेहराज जू से राज,
राजत कुमार ऐसे दशरथ राय के।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्य में विश्वामित्रजी किनका परिचय किससे दे रहे हैं?
(iv) विश्वामित्र जी ने राम और लक्ष्मण जी के किन-किन गुणों पर प्रकाश डाला है?
(v) प्रस्तुत पंक्ति में कौन-सा अलंकार है?

**(ङ)**

बज्र तें कठोर है, कैलास तें विशाल, काल-
दंड तें कराल, सब काल काल गावई।
केशव त्रिलोक के विलोक हारे देव सब,
छोड़ चंद्रचूड़ एक और को चढ़ावई?
पन्नग प्रचंड पति प्रभु की पनच पीन,
पर्वतारि-पर्वत-प्रभा न मान पावई।
विनायक एकहू पै आवै न पिनाक ताहि,
कोमल कमलपाणि राम कैसे ल्यावई।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में वक्ता एवं श्रोता का नाम लिखिए।
(iv) जनकजी ने शिवजी के धनुष की क्या विशेषताएँ बतायी हैं?
(v) प्रस्तुत पद्य में काल का काल किसे कहा गया है?

(च) उत्तम गाथ सनाथ जबै धनु श्री रघुनाथ जू हाथ कै लीनो।
निर्गुण ते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंतन दीनो।
ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तिच्छ कटाच्छ नराच नवीनो।
राजकुमारि निहारि सनेह सों शंभु को साँचो शरासन कीनो।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) शिव का धनुष सनाथ कैसे हो गया?
(iv) राजकुमारी को स्नेहपूर्वक देखने पर शिव के धनुष का नाम शरासन कैसे हो गया?
(v) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

(छ) प्रथम टंकोर झुकि झारि संसार मद,
चंड कोदंड रह्यो मंडि नव खंड को।
चालि अचला अचल घालि दिगपाल बल,
पालि ऋषिराज के बचन परचंड को।
सोधु दै ईश को, बोधु जगदीश को,
क्रोधु उपजाइ भृगुनंद बरिवंड को।
वाधि वर स्वर्ग को, साधि अपवर्ग, धनु-
भंग को शब्द गयो भेदि ब्रह्मांड को।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सम्पूर्ण संसार के अभिमान को किसने नष्ट कर दिया?
(iv) धनुष टूटने की ध्वनि से कौन विचलित हो गये?
(v) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

## ➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए—
(क) जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरुपुण्य पुराने।।
(ख) ऋषिहि देखि हरष्यो हियो, राम देखि कुम्हलाइ।
(ग) आपने आपने ठौरनि तौ भुवपाल सबै भुव पालै सदाई।
2. "आचार्य केशव को हृदयहीन कवि कहा गया है।" अपनी पढ़ी हुई रचनाओं के आधार पर पक्ष या विपक्ष में अपना मत प्रस्तुत कीजिए।
3. "आचार्य केशवदास को विभिन्न रसों के वर्णन में कहाँ तक सफलता मिली है।" समुचित उदाहरणों के साथ स्पष्ट कीजिए।
4. "केशव की रचनाओं में उच्चकोटि का कलात्मक सौष्ठव दृष्टिगत होता है।" उदाहरणों के साथ अपना मत प्रकट कीजिए।

***अथवा***

केशव के काव्य के कला-पक्ष की समीक्षा कीजिए।

5. ''केशव ने प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग किया है।'' सोदाहरण इस कथन की पुष्टि कीजिए।
6. 'केशव को कठिन काव्य का प्रेत' कहना कहाँ तक उचित है। तर्कपूर्ण उत्तर दीजिए।
7. केशवदास का जीवन-परिचय लिखिए।
8. केशव की काव्यगत विशेषताओं को निरूपित कीजिए।
9. ''केशवदास के काव्य में कहीं-कहीं हृदयहीनता देखने को मिलती है।'' सप्रमाण उत्तर दीजिए।

## ➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. केशव की रचनाओं की सूची बनाइए।
2. केशव की भाषा-शैली लिखिए।
3. सीता के स्वयंवर की संक्षिप्त कथा अपने शब्दों में लिखिए।
4. केशव के अलंकार-विधान पर एक अनुच्छेद लिखिए।
5. केशव के पिता एवं पितामह का क्या नाम था?
6. केशव की संवाद-योजना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## ➥ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—
   (क) ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधर मण्डल मंडि जोन्हाई।
   (ख) ये सुत कौन के सोभहि साजे? सुन्दर श्यामल गौर विराजे।
2. अनुप्रास अलंकार का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक उदाहरण लिखिए।

●●●

# 6 कविवर बिहारी

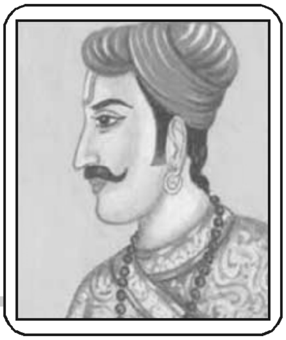

## कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत् 1652 वि॰ (सन् 1595 ई॰)।
- **जन्म-स्थान**—बसुआ गोविन्दपुर गाँव (ग्वालियर), म॰ प्र॰।
- **पिता**—पं॰ केशवराय चौबे।
- **काव्य-गुरु**—केशवदास।
- **शिक्षा**—काव्यशास्त्र की शिक्षा (ओरक्षा में)।
- **आश्रय**—राजा जयसिंह का दरबार।
- **रचना के विषय**—शृंगार, भक्ति, नीतिपरक दोहे।
- **एकमात्र रचना**—बिहारी सतसई।
- **प्रमुख भाषा**—प्रौढ़, प्रांजल, परिष्कृत एवं परिमार्जित व्रज।
- **शैली**—मुक्तक, समास शैली।
- **मृत्यु**—संवत् 1720 वि॰ (सन् 1663 ई॰)।
- **साहित्य में योगदान**—भाव और शिल्प की दृष्टि से इनका काव्य श्रेष्ठ है। अपनी काव्यगत (भावपक्ष व कलापक्ष) विशेषताओं के कारण हिन्दी साहित्य में बिहारी का अद्वितीय स्थान है।

बिहारी हिन्दी रीतिकाल के अन्तर्गत उसकी भावधारा को आत्मसात् करके भी प्रत्यक्षतः आचार्यत्व न स्वीकार करनेवाले मुक्त कवि हैं। इनका जन्म सन् 1595 ई0 के लगभग ग्वालियर के पास बसुआ-गोविन्दपुर ग्राम में हुआ था। कुछ विद्वान इनका जन्म 1603 ई0 में मानते हैं। मध्य युग के अनेक भारतीय कवियों की भाँति इनके भी जन्म-समय के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। इनके पिता का नाम केशवराय था। इनके एक भाई और एक बहन थी। बिहारी का विवाह मथुरा के किसी माथुर ब्राह्मण की कन्या से हुआ था। इनके कोई सन्तान न होने के कारण अपने भतीजे निरंजन को गोद ले लिया था।

कहा जाता है कि केशवराय इनके जन्म के सात-आठ वर्ष बाद ग्वालियर छोड़कर ओरछा चले गये। वहीं बिहारी ने हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि आचार्य केशवदास से काव्य-शिक्षा ग्रहण की। ओरछा में रहकर इन्होंने काव्य-ग्रन्थों के साथ ही संस्कृत और प्राकृत आदि का अध्ययन किया। आगरा जाकर इन्होंने उर्दू-फारसी का अध्ययन किया और अब्दुर्रहीम खानखाना के सम्पर्क में आये। इन्होंने अपनी काव्य-प्रतिभा से जयपुराधीश जयसिंह तथा उनकी पटरानी अनन्तकुमारी को विशेष प्रभावित किया, जिनसे इन्हें पर्याप्त पुरस्कार और ग्राम मिला तथा ये दरबार के राजकवि भी हो गये थे। जयपुर के राजकुमार रामसिंह का विद्यारम्भ संस्कार भी इन्होंने ही कराया था। अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद बिहारी राजदरबार छोड़कर वृन्दावन चले गये और वहीं संवत् 1720 वि0 (सन् 1663 ई0) में इनका निधन हो गया था।

बिहारी ने सात सौ से कुछ अधिक दोहों की रचना की, जिनका संग्रह **'बिहारी सतसई'** के नाम से हुआ है। एक-एक दोहे में अनेक भावों को सफलतापूर्वक भर देना इन्हीं का काम था। इसीलिए कहा जाता है कि बिहारी ने **'गागर**

**में सागर'** भरा है। अलंकार, नायिका-भेद, प्रकृति-वर्णन तथा भाव, विभाव, अनुभाव, संचारीभाव आदि सब कुछ अड़तालिस मात्राओं के एक छोटे से छन्द दोहे में भरकर इन्होंने काव्य-कला का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

प्रसिद्ध है कि जयपुर नरेश महाराजा जयसिंह अपनी नवपरिणीता नवोढ़ा रानी के प्रेम-पाश में आबद्ध हो गये। इस कारण वे दरबार में अनेक दिनों तक नहीं आये। बिहारी की एक शृंगारिक अन्योक्ति ने महाराजा को सचेत कर पुनः कर्त्तव्यपथ पर अग्रसर कर दिया। वह दोहा निम्नलिखित है—

**नहिं परागु नहिं मधुर मधु, नहिं बिकासु इहिं काल।**
**अली, कली ही सौं बँध्यो, आगैं कौन हवाल।।**

महाराज इन्हें प्रत्येक दोहे पर एक स्वर्ण-मुद्रा भेंट करते थे। 719 दोहों की सतसई सं0 1719 में समाप्त हुई। इनके दोहों के विषय में यह उक्ति प्रसिद्ध है—

**सतसैया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर।**
**देखन में छोटे लगैं घाव करैं गम्भीर।।**

यद्यपि 'बिहारी सतसई' शृंगार-प्रधान ग्रन्थ है, पर जीवन और प्रमुख विषयों पर बिहारी ने अपना अनुभव बड़े चमत्कारिक ढंग से प्रदर्शित किया है। इन्होंने नीति, भक्ति, ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, इतिहास आदि सम्बन्धी बड़ी अनूठी उक्तियाँ लिखी हैं, जिनसे इनकी बहुमुखी काव्य-प्रतिभा पर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। हिन्दी जगत् में इनकी सतसई का सम्मान बहुत हुआ। बड़े-बड़े महाकवियों ने इस पर टीका लिखने में गर्व समझा।

कविवर बिहारी अपनी शृंगारिक रचनाओं के लिए विशेष प्रसिद्ध हैं। इन्होंने शृंगार के संयोग एवं विप्रलम्भ दोनों ही पक्षों का सफल चित्रण किया है। संयोग-शृंगार वर्णन में बिहारी के प्रेमी और प्रेमिका में परस्पर इतनी निकटता है जिसके कारण वे अपने द्वैत भाव को भूलकर एकरूप हो जाते हैं। मिलन के प्रकरणों में मनोवैज्ञानिक चित्रण के साथ बिहारी ने सांकेतिक दृश्यों का भी अनुपम मिश्रण किया है। कवि की दृष्टि नायिका के बाह्य रूप-सौन्दर्य के वर्णन, नख-शिख-वर्णन-विवेचन में जितनी रमी है उतनी आन्तरिक रमणीयता के प्रकाशन में नहीं। इनके काव्य में जहाँ पारम्परिक शृंगार का वर्णन है वहाँ मौलिक उद्भावनाएँ भी प्राप्त होती हैं। आलम्बन के विशद वर्णन के साथ उद्दीपन के चित्र भी मिलते हैं।

सतसई की भाषा बड़ी ही प्रौढ़, प्राञ्जल, परिष्कृत और परिमार्जित ब्रज-भाषा है। परन्तु इसमें उस समय के प्रचलित अरबी-फारसी के शब्दों का भी बिहारी ने प्रयोग किया है। भाषा का आलंकारिक गुण देखा जाय तो इन्होंने अनुप्रास की योजना बहुत सावधानी से की है। बिहारी ने मुक्तक भाषा शैली को स्वीकार किया है, जिसमें समासशैली का अनूठा योगदान है। इसीलिए 'दोहा' जैसे छोटे छन्द में भी उन्होंने अनेक भावों को भर दिया है। बिहारी को 'दोहा, छन्द' सर्वाधिक प्रिय हैं। इनका सम्पूर्ण काव्य इसी छन्द में रचा गया है। बिहारी अलंकारों के प्रयोग में निपुण थे। इन्होंने छोटे-छोटे दोहों में अनेक अलंकारों का समायोजन किया है। इनके काव्य में श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अन्योक्ति और अतिशयोक्ति अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है।

बिहारी के समान इतनी कम रचना करके इतना अधिक सम्मान प्राप्त करनेवाला हिन्दी का कोई दूसरा कवि समझ में नहीं आता। इनको जो सम्मान मिला, वह इसलिए नहीं कि ये कविता के उस क्षेत्र में अकेले हैं, बल्कि इसलिए कि इन्होंने रचना के लिए शृंगार का जो क्षेत्र चुना, उसमें उसी ढंग की मुक्तक रचना करनेवाला कवि जनता और काव्य-मर्मज्ञों की दृष्टि में इनसे बढ़कर नहीं है। मुक्तक रचना में जितनी भी विशेषताएँ सम्भाव्य हैं, इनकी रचना में सब पायी जाती हैं और वे अपने चरम उत्कर्ष को पहुँची हुई हैं।

●●●

# भक्ति एवं श्रृंगार

*[प्रस्तुत दोहे कविवर बिहारी द्वारा रचित 'बिहारी सतसई' से अवतरित हैं। बिहारी ने पूर्ववर्ती भक्तिपरक रचनाओं का गम्भीर अध्ययन किया था। ये और इनके पिता हरिदासी सम्प्रदाय के स्वामी नरहरिदास के शिष्य थे। दरबारी विलासिता के वातावरण तथा श्रृंगारी जन-रुचि के कारण ही इन्होंने श्रृंगारपरक रचना की। परन्तु इनमें भक्ति सम्बन्धी संस्कार थे और इनकी आत्मा में भक्त की सच्ची पुकार थी।]*

करौ कुबत जगु, कुटिलता तजौं न, दीनदयाल।
दुखी होहुगे सरल हिय बसत, त्रिभंगी लाल।।1।।

अजौं तर्‌यौना ही रह्यौ श्रुति सेवत इक रंग।
नाक बास बेसरि लह्यौ बसि मुकतनु कैं संग।।2।।

मकराकृति गोपाल कैं सोहत कुंडल कान।
धर्‌यो मनौ हिय घर समरु ड्यौढ़ी लसत निसान।।3।।

बतरस-लालच लाल की, मुरली-धरी लुकाइ।
सौंह करै भौंहनु हँसै, दैन कहैं नटि जाइ।।4।।

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन मैं करत हैं नैननु ही सौं बात।।5।।

कर लै, चूमि, चढ़ाइ सिर, उर लगाइ, भुज भेटि।
लहि पाती पिय की लखति, बाँचति, धरति समेटि।।6।।

अंग-अंग-नग जगमगत दीप सिखा सी देह।
दिया बढ़ाऐं हूँ रहै, बड़ौ उज्यारौ गेह।।7।।

सहज सेत पँचतोरिया पहिरत अति छबि होति।
जल चादर के दीप लौं जगमगाति तन-जोति।।8।।

कंज-नयनि मंजनु किए, बैठी ब्यौरति बार।
कच-अँगुरी-बिच दीठि दै, चितवति नंदकुमार।।9।।

औंधाई सीसी, सु लखि बिरह-बरनि बिललात।
बिच ही सूखि गुलाबु गौ, छीटौ छुई न गात।।10।।

करी बिरह ऐसी, तऊ गैल न छाड़तु नीचु।
दीनैं हूँ चसमा चखनु चाहै लहैं न मीचु।।11।।

पिय कैं ध्यान गही गही रही वही ह्वै नारि।
आपु आपु ही आरसी लखि रीझति रिझवारि।।12।।

जोग-जुगति सिखए सबै मनौ महामुनि मैन।
चाहत पिय-अद्वैतता काननु सेवत नैन।।13।।

मूड़ चढ़ाऐंऊ रहै पर्‍यौ पीठि कच-भारु।
रहै गरैं परि, राखिबौ तऊ हियैं पर हारु।।14।।

रहौ, गुही बेनी, लखे गुहिबे के त्यौनार।
लागे नीर चुचान, जे नीठि सुखाए बार।।15।।

कर-मुँदरी की आरसी प्रतिबिंबित प्यौ पाइ।
पीठ दियैं निधरक लखै, इकटक डीठि लगाइ।।16।।

खेलन सिखए, अलि, भलैं चतुर अहेरी मार।
कानन-चारी नैन-मृग नागर नरनु सिकार।।17।।

ललन, सलोने अरु रहे अति सनेह सौं पागि।
तनक कचाई देत दुख सूरन लौं मुँह लागि।।18।।

अनियारे, दीरघ दृगनु किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरे कछू, जिहिं बस होत सुजान।।19।।

क्यौं बसियै, क्यौ निबहियै, नीति नेह-पुर नाँहि।
लगालगी लोइन करैं, नाहक मन बँधि जाँहि।।20।।

दृग उरझत टूटत कुटुम, जुरत चतुर-चित प्रीति।
परति गाँठि दुरजन हियैं, दई, नई यह रीति।।21।।

**('बिहारी-रत्नाकर' से)**

## अभ्यास प्रश्न

### ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) करौ कुबत जगु, कुटिलता तजौं न, दीनदयाल।
दुखी होहुगे सरल हिय बसत, त्रिभंगी लाल।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) बिहारी अपनी कुटिलता का त्याग क्यों नहीं करना चाहते हैं?
(iv) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?
(v) बिहारी को अपनी कुटिलता छोड़ने पर भगवान श्रीकृष्ण को क्या कष्ट होगा?

**(ख)** बतरस-लालच लाल की, मुरली-धरी लुकाइ।
सौंह करै भौंहनु हँसै, दैन कहैं नटि जाइ।।

**प्रश्न**– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) राधा श्रीकृष्ण की मुरली क्यों छिपा देती हैं?
(iv) राधा ने मुरली के बारे में श्रीकृष्ण से क्या कहा?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा रस है?

**(ग)** कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन मैं करत हैं नैननु ही सौं बात।।

**प्रश्न**– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) नायिका के मना करने की चेष्टा का नायक पर क्या प्रभाव पड़ा?
(iv) नायक-नायिका ने किसके संकेत से एक-दूसरे से मिलने के लिए कहा?
(v) कहत-नटत, रीझत, मिलत-खिलत, लजियात तथा भरे भौन में कौन-सा अलंकार है?

**(घ)** कंज-नयनि मंजनु किए, बैठी ब्यौरति बार।
कच-अँगुरी-बिच दीठि दै, चितवति नंदकुमार।।

**प्रश्न**– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) बाल सुलझाती हुई नायिका बालों के मध्य से किसे देखने का प्रयास कर रही है?
(iv) प्रस्तुत दोहे में नन्द शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**(ङ)** मूड़ चढ़ाऐंऊ रहै पर्यौ पीठि कच-भारु।
रहै गरैं परि, राखिबौ तऊ हियैं पर हारु।।

**प्रश्न**– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) योग्य व्यक्ति के बारे में बिहारी के क्या विचार हैं?
(iv) बाल और हार के सन्दर्भ में बिहारी के क्या विचार हैं?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**(च)** कर-मुँदरी की आरसी प्रतिबिंबित प्यौ पाइ।
पीठ दियैं निधरक लखै, इकटक डीठि लगाइ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) नायिका किस मुद्रा में बैठी हुई है?
(iv) नायिका अँगूठी के दर्पण में क्या देख रही है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

**(छ)** दृग उरझत टूटत कुटुम, जुरत चतुर-चित प्रीति।
परति गाँठि दुरजन हियैं, दई, नई यह रीति।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) नायक-नायिका के प्रेम का दुष्टों पर क्या प्रभाव पड़ता है?
(iv) प्रेमी और प्रेमिका का प्रेम और अधिक गहरा किस स्थिति में हो जाता है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

## ➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए—
   (क) नाक बास बेसरि लह्यौ बसि मुकतनु कैं संग।
   (ख) दीनैं हूँ चसमा चखनु चाहै लहैं न मीचु।
   (ग) भरे भौंन मैं करत हैं; नैननु हीं सौं बात।
   (घ) वह चितवनि औरै कछू, जिहिं बस होत सुजान।
   (ङ) परति गांठि दुरजन हियै दई नई यह रीति।
2. बिहारी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. बिहारी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।

**अथवा** बिहारी का जीवन-परिचय लिखिए।

4. बिहारी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
5. बिहारी को 'रीतिमुक्त कवि' कहना कहाँ तक उचित है? सतर्क उत्तर दीजिए।
6. संकलित दोहों के आधार पर बिहारी की बहुज्ञता को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
7. सिद्ध कीजिए कि बिहारी ने 'गागर में सागर' भर दिया है।
8. "मुक्तक काव्य की सभी विशेषताएँ बिहारी के दोहों में प्राप्त हैं।" उदाहरण देकर समझाइए।
9. बिहारी के स्वपठित दोहों के आधार पर उनकी भक्ति-भावना का निरूपण कीजिए।
10. "बिहारी ने शृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों के बड़े सरस वर्णन प्रस्तुत किये हैं।" समुचित उदाहरणों के साथ स्पष्ट कीजिए।

11. कविवर बिहारी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
12. "बिहारी सतसई श्रृंगार तथा नीति की सुन्दर विवेचना करती है।" विवेचना कीजिए।

## ➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. बिहारी ने सामान्य मनुष्य में किन नैतिक आदर्शों की प्रतिष्ठा की है?
2. बिहारी सतसई की लोकप्रियता के प्रमुख कारण बताइए।
3. बिहारी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
4. बिहारी के संयोग श्रृंगार का वर्णन कीजिए।
5. 'सतसइया के दोहरे ज्यों नावक के तीर' के आधार पर बिहारी के दोहों की विशेषताएँ निरूपित कीजिए।
6. "बिहारी को रीति काल का प्रतिनिधि कवि कहा जाता है।" तर्कसहित इस कथन की पुष्टि कीजिए।

## ➥ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—
   (क) दुखी होहुगे सरल हिय बसत त्रिभंगी लाल।
   (ख) जल चादर के दीप लौं जगमगाति तन-जोति।
2. दोहा एवं सोरठा छन्द का लक्षण लिखते हुए पठित अंश से एक-एक उदाहरण दीजिए।

●●●

# 7 महाकवि भूषण

कविवर भूषण का जन्म कानपुर जिले के तिकवाँपुर ग्राम में सन् 1613 ई० में हुआ था। इनके पिता पण्डित रत्नाकर त्रिपाठी दुर्गाजी के अनन्य भक्त थे। हिन्दी के प्रसिद्ध रससिद्ध कवि चिन्तामणि और मतिरामजी उन्हीं के पुत्र थे। भूषण इनकी कवि उपाधि थी जो इन्हें चित्रकूट के सोलंकी महाराजा रुद्र से प्राप्त हुई थी। इनका वास्तविक नाम 'पतिराम' कहा जाता है। इनके जीवन का प्रारम्भिक चरण अकर्मण्यता से ग्रसित था। प्रसिद्ध है कि भाभी के कटु व्यंग्य से मर्माहत होकर इन्होंने घर छोड़ दिया। बाद में जब घर वापस आये तो इनमें पाण्डित्य एवं कवित्व शक्ति थी। ये आश्रय की खोज में बहुत घूमे, पर यह प्रसन्न हुए शिवाजी तथा छत्रसाल के दरबारों में। इनकी जीवन-लीला का अवसान सन् 1715 ई० के लगभग माना जाता है।

### कवि-परिचय : एक नजर में

- **जन्म**—सन् 1613 ई०।
- **जन्म-स्थान**—तिकवाँपुर (कानपुर)।
- **पिता**—रत्नाकर त्रिपाठी।
- **प्रमुख रचनाएँ**—शिवराज भूषण, शिवा बावनी, छत्रसाल दशक।
- **प्रधान रस**—वीर।
- **भाषा**—ब्रजभाषा।
- **शैली**—ओजपूर्ण वर्णनात्मक शैली।
- **मृत्यु**—सन् 1715 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—इन्हें रीतिकाल के कवियों में एक विशेष स्थान प्राप्त था तथा इन्होंने राष्ट्रीयता की भावना को जाग्रत किया।

विलासिता और परतन्त्रता के युग में स्वतन्त्रता, ओजस्विता, तेजस्विता एवं राष्ट्रीयता का स्वर हम भूषण के मुख से ही सर्वप्रथम सुनते हैं। भूषण ने अपने समकालीन कवियों की तरह विलासी, आश्रयदाताओं के मनोरंजन के लिए शृंगारी काव्य की रचना न कर अपनी वीरोपासक मनोवृत्ति के अनुकूल अन्याय और संघर्ष के दमन में तत्पर, ऐतिहासिक महापुरुष शिवाजी एवं छत्रसाल जैसे वीरनायकों का अपनी ओजस्वी कविता द्वारा लोमहर्षक गुणगान किया। यद्यपि ये अपने युग की लक्षण-ग्रन्थ-परम्परा से तथा युग की प्रवृत्तियों से सर्वथा मुक्त नहीं थे, तथापि जातीय, राष्ट्रीय भावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति इनके काव्य की सबसे बड़ी विशेषता रही है। भारतमाता के अमर पुत्र छत्रपति शिवाजी एवं महाराजा छत्रसाल बुंदेला जैसे लोकोपकारी महापुरुषों के चरितगायन में ही इन्होंने अपने जीवन को सार्थक समझा। इन्हीं महापुरुषों की दानशीलता, युद्धवीरता, दयालुता एवं धर्मपरायणता का महाकवि भूषण द्वारा उदात्त चित्रण किया गया है। इन्हीं चरितनायकों के शौर्य-वर्णन या वीर रसात्मक उद्‌गार सारी भारतीय जनता की सम्पत्ति है। इन्होंने स्वयं कहा है—**'सिवा को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को।'**

भूषण की कविता में प्रधानतया वीर रस का ही परिपाक हुआ है। वीर रस के सहकारी रौद्र और भयानक हैं। अपने प्रिय रस के निरूपण में भूषण ने त्रास या भय के अनेक रूपों की व्यंजना अनेक प्रकार की रसात्मक स्थितियों की कल्पना के साथ की है। इनमें नवीन उद्भावना की क्षमता अच्छी थी। विपक्ष की दीनता, व्याकुलता और खीझ आदि की सहायता से शिवाजी के आतंक की व्यंजना में नूतनोद्भावना के अनेक प्रयोग भूषण की रचना में हैं। वीभत्स की व्यंजना में पारम्परिक वर्णन है। युगीन प्रवृत्तियों के अनुरूप भूषण ने शृंगार रस का भी वर्णन किया है, पर इसमें भी इन्होंने नवीन उद्भावनाएँ की हैं।

भूषण की रचना दृश्य-चित्रण में भी श्रेष्ठ है, यद्यपि इसके लिए मुक्तक में स्थान कम ही होता है। वीर रस की कृति में युद्धस्थल का चित्रण आ सकता है, पर युद्धस्थल में अनेक दृश्यों के त्वरित गति से संघटित होने के कारण चित्रण की विशेष विधि ही काम में आ सकती है। अनेक दृश्यों का सुगुंफित चित्रण मुक्तक में प्रायः नहीं आ पाता। फिर भी भूषण ने '**ताव दै-दै मूँछन कंगूरन पै पाँव दै-दै, घाव दै-दै अरिमुख कूदि परैं कोट में**' जैसे चित्रणों में सफलता प्राप्त की है। युद्धस्थल-वर्णन की अपेक्षा युद्धस्थल प्रस्थान-वर्णन ही भूषण की रचना में अधिक है।

भूषण विरचित तीन ग्रन्थ उपलब्ध हैं—**शिवराज भूषण, शिवा बावनी** और **छत्रसाल दशक**। भूषण को हिन्दी साहित्य का प्रथम राष्ट्रीय कवि माना जाता है, परन्तु भूषण की राष्ट्रीयता की परीक्षा देश की तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर ही करनी चाहिए। यह बहुत ही भ्रान्त धारणा है कि ये मुसलिम सम्प्रदाय के विरोधी थे। इन्होंने केवल औरंगजेब के साम्राज्यवाद और उसके अमानवीय कृत्यों के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त किया है। उदार हृदय मुसलमान तो इनकी प्रशंसा के विषय थे—

**''दौलत दिल्ली की पाय कहाये आलमगीर।**
**बब्बर अकब्बर के बिरद बिसारे तैं।''**

यद्यपि भूषण की कविता ब्रजभाषा में है परन्तु इसमें ब्रजभाषा के माधुर्य की नहीं, ओज की प्रधानता है। इनकी भाषा में स्थानीय पुट भी अनायास आ गया है। इन्होंने अरबी-फारसी के शब्दों का भी निःसंकोच प्रयोग किया है। भूषण अलंकारों के भी मर्मज्ञ थे। 'शिवराज भूषण' एक अलंकार ग्रन्थ है। अलंकारों के लक्षण दोहों में दिये गये हैं। एक छन्द में कई-कई अलंकारों का प्रयोग किया गया है। स्थान-स्थान पर लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से भाषा सजीव एवं सशक्त हो गयी है।

भक्ति और रीतिकाल के वीर काव्यकारों में भूषण का स्थान अद्वितीय है और जब कभी-कभी हिन्दी के पाठकों या विद्वानों में कवि-चर्चा होती है तो वीर रस के कवि के रूप में भूषण का नाम तुरन्त आ पहुँचता है। वास्तव में भूषण की वीर रस की कविता अन्य कवियों से बढ़-चढ़ कर है, जिसमें वीर रस का परिपाक बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है, जिससे वीर भाव की विविध श्रेणियाँ बल, ओज और आतंक के साथ खड़ी दिखायी देती हैं, जिसमें भाषा वीर भावों के पीछे-पीछे चलती हुई दर्शकों को आकृष्ट करती है।

●●●

# शिवा-शौर्य

*[भूषण ने हिन्दी के शृंगार और रीति-काव्य के काल में शिवाजी जैसे वीर पुरुष का यश-गान करके जनता के साहस और प्रसुप्त वीर भावनाओं को जागृत किया था। जो कार्य शिवाजी ने अपनी तलवार से किया, वह कार्य भूषण ने अपनी लेखनी से किया। निम्न छन्दों में महाराज शिवाजी की सेना का युद्ध हेतु प्रस्थान करने का वर्णन है।]*

साजि चतुरंग सैन अंग मैं उमंग धारि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।
भूषन भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत है।
ऐलफैल खैलभैल खलक में गैलगैल,
गजन की ठैलपैल सैल उसलत है।
तारा सो तरनि धूरिधारा में लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है।।1।।

बाने फहराने घहराने घंटा गजन के,
नाहीं ठहराने रावराने देसदेस के।
नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि,
बाजत निसाने सिवराजजू नरेस के।
हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के,
भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के।
दल के दगारन ते कमठ करारे फूटे,
केरा के से पात बिहराने फन सेस के।।2।।

छूटत कमान बान बंदूकरू कोकबान,
मुसकिल होत मुरचानहूँ की ओट में।
ताही समैं सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो,
दावा बाँधि द्वेषिन पै बीरन लै जोट में।
भूषन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौ,
किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट में।

ताव दै दै मूँछन कंगूरन पै पाँव दै दै,
घाव दै दै अरि मुख कूदि परैं कोट में।।3।।
इन्द्र निज हेरत फिरत गजइन्द्र अरु,
इंद्र को अनुज हेरै दुगधनदीस कों।
भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरैं,
बिधि हेरैं हंस को चकोर रजनीस कों।
साहितनै सरजा यौं करनी करी है तैं वै,
होतु हैं अंचभो देव कोटियों तैंतीस कों।
पावत न हेरे तेरे जस में हिराने निज,
गिरि को गिरीस हेरैं गिरिजा गिरीस कों।।4।।

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरि हूँ,
मिलि मिलि आपुस में गावत बधाई है।
भैरों भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से,
जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जोरि आई है।
किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली,
डिम डिम डमरू दिगंबर बजाई है।
सिवा पूछैं सिव सों समाज आजु कहाँ चली,
काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है।।5।

# छत्रसाल-प्रशस्ति

*[भूषण ने महाराज छत्रसाल की प्रशंसा में 'छत्रसाल दशक' की रचना की थी। निम्न कवित्त उसी का अंश है। कवि ने इन पंक्तियों में युद्धरत छत्रसाल की तलवार और बरछी के पराक्रम का वर्णन किया है।]*

निकसत म्यान तें मयूखैं प्रलैभानु कैसी,
फारैं तमतोम से गयंदन के जाल कों।
लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी,
रुद्रहिं रिझावै दै दै मुंडन के माल कों।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,
कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल कों।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों।।

भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी-सी,
खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के।।
बखतर पाखरन बीच धँसि जाति मीन,
पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के।
रैयाराव चंपति के छत्रसाल महाराज,
भूषन सकै करि बखान को बलन के।
पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर,
तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के।।

**('भूषण ग्रन्थावली' से)**

# अभ्यास प्रश्न

## ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए—

### शिवा-शौर्य

**(क)** साजि चतुरंग सैन अंग मैं उमंग धारि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।
भूषन भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत है।
ऐलफैल खैलभैल खलक में गैलगैल,
गजन की ठैलपैल सैल उसलत है।
तारा सो तरनि धूरिधारा में लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्य में किसके शौर्य एवं पराक्रम का वर्णन किया गया है?
(iv) शिवाजी के युद्ध प्रस्थान के समय पहाड़ों की स्थिति क्या हो जाती है?
(v) शिवाजी के युद्ध प्रस्थान के समय किसका मद और किस प्रकार प्रवाहित हो रहा है?

**(ख)** बाने फहराने घहराने घंटा गजन के,
नाहीं ठहराने रावराने देसदेस के।
नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि,
बाजत निसाने सिवराजजू नरेस के।

हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के,
भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के।
दल के दरारन ते कमठ करारे फूटे,
केरा के से पात बिहराने फन सेस के।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) शिवाजी के सैन्य प्रस्थान से कछुए और शेषनाग की क्या दशा हुई?
(iv) उड़ते हुए भौंरे किस प्रकार से प्रतीत हो रहे थे?
(v) शिवाजी के युद्ध प्रस्थान के समय पहाड़ों की क्या दशा हुई?

**(ग)** इन्द्र निज हेरत फिरत गजइन्द्र अरु,
इंद्र को अनुज हेरै दुगधनदीस कों,
भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरैं,
बिधि हेरैं हंस को चकोर रजनीस कों।
साहितनै सरजा यौं करनी करी है तैं वै,
होतु हैं अचंभो देव कोटियों तैंतीस कों।
पावत न हेरे तेरे जस में हिराने निज,
गिरि को गिरीस हेरैं गिरिजा गिरीस कों।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) शिवाजी के युद्ध प्रस्थान के समय इन्द्र और भगवान विष्णु क्या कर रहे थे?
(iv) ब्रह्मा और चकोर क्या कर रहे हैं?
(v) उस समय शंकर जी और पार्वती क्या कर रहे हैं?

## छत्रसाल-प्रशस्ति

**(घ)** निकसत म्यान तें मयूखैं प्रलैभानु कैसी,
फारैं तमतोम से गयंदन के जाल कों।
लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी,
रुद्रहिं रिझावै दै दै मुंडन के माल कों।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,
कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल कों।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) महाराज छत्रसाल के तलवार की तुलना किससे की गयी है?

(iv) छत्रसाल की तलवार किस-किस के समान शत्रुओं का संहार करती है?

(v) छत्रसाल की तलवार शिवाजी को किस प्रकार प्रसन्न करती है?

(ङ) भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी-सी,
खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के।।
बखतर पाखरन बीच धँसि जाति मीन,
पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के।।
रैयाराव चंपति के छत्रसाल महाराज,
भूषन सकै करि बखान को बलन के।।
पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर,
तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) छत्रसाल को किसका पुत्र बताया गया है?

(iv) छत्रसाल की बरछी ने शत्रुओं की शक्ति को किस प्रकार क्षीण कर दिया है?

(v) प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए—
(क) पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर।
तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के।।
(ख) घाव दै दै अरि मुख कूदि परैं कोट में।
(ग) कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों।
2. "भूषण वीर रस के सफल कवि हैं।" सिद्ध कीजिए।
3. भूषण के काव्य के कलात्मक सौष्ठव की समुचित उदाहरणों के साथ विवेचना कीजिए।
4. भूषण का जीवन-परिचय देते हुए उनकी काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
5. भूषण का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
6. सिद्ध कीजिए कि भूषण राष्ट्रीय कवि हैं।

***अथवा*** 'भूषण के काव्य में राष्ट्रीयता का स्वर मुखरित हुआ है।' सोदाहरण सिद्ध कीजिए।

7. भूषण का जीवन-परिचय लिखिए।

***अथवा*** भूषण की शिक्षा-दीक्षा और साहित्यिक योगदान का परिचय दीजिए।

8. "भूषण की कविता की प्रमुख विशेषता उसका ओज है।" सोदाहरण सिद्ध कीजिए।
9. "भूषण ने वीर रसात्मक काव्य लिखकर रीतिकाल में उल्टी गंगा बहाई है।" इस कथन का विवेचन कीजिए।

## ➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. शिवाजी के युद्ध-अभियान का वर्णन अपने शब्दों में लिखिए।
2. छत्रसाल की बरछी की क्या विशेषताएँ हैं? शिवाजी की तलवार से उसकी तुलना कीजिए।
3. कविवर भूषण अपनी किन विशेषताओं के आधार पर अपने युग के कवियों से पूर्णतः पृथक् हो जाते हैं?
4. कवि भूषण का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
5. रीतिकालीन कवियों में भूषण के विशिष्ट स्थान की समीक्षा कीजिए।
6. वीर रस का स्थायी भाव क्या है? संकलित पदों में इसकी अभिव्यक्ति किस प्रकार हुई है? स्पष्ट कीजिए।

## ➥ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों का काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—

   (क) भूषण भनत सुरसरिता को हंस हेरैं,
   बिधि हेरैं हंस को चकोर रजनीस कों।

   (ख) पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर,
   तेरी बरछी ने बर छीने हैं, खलन के।

2. पठित पाठ के आधार पर वीर रस के अनुभाव, विभाव और संचारी भावों के कुछ दृष्टान्त दीजिए।
3. निम्नांकित पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है और क्यों?

   (1) तारा सो तरनि धूरिधारा में लगत जिमि,
   थारा पर पारा पारावार यों हलत है।

   (2) प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
   कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों।

●●●

# 8 विविधा

प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक को अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से दो खण्डों में विभक्त किया गया है—प्रथम खण्ड और द्वितीय खण्ड। प्रथम खण्ड में 'विविधा' के अन्तर्गत सेनापति, देव एवं घनानन्द को चुना गया है। इस संग्रह में अनेक प्रतिष्ठित कवियों को स्थान देने पर भी मध्यकालीन काव्य का सम्यक् परिचय एवं पर्याप्त रसास्वाद कुछ कवियों की कविताओं के अभाव में अधूरा-सा लगा। पर ऐसे सभी महान् कवियों को स्थान देना सम्भव नहीं था, अतः उक्त कवियों का चुनाव उनकी काव्य-प्रतिभा की गरिमा के आधार पर किया गया है। इनके काव्य का रसास्वादन करने के लिए इनकी काव्य की प्रमुख विशेषताओं से अवगत कराना आवश्यक एवं उपयोगी है। इसी दृष्टि से इन कवियों की काव्यगत विशेषताओं का विहंगावलोकन किया गया है।

## सेनापति ( जन्म 1589 ई0 )

हिन्दी साहित्य में सेनापति की प्रसिद्धि उनके प्रकृति-वर्णन एवं श्लेष के उत्कृष्ट प्रयोग के कारण है। हिन्दी के किसी भी शृंगारी अथवा भक्तकवि में सेनापति जैसा प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण नहीं मिलता। इन्होंने सभी ऋतुओं के बहुत ही विशद एवं सजीव चित्र उपस्थित किये हैं। पर उसमें प्रकृति के आलम्बन रूप की अपेक्षा उसके उद्दीपन रूप की ही प्रधानता है। सेनापति ने प्रकृति को एक शहरी एवं दरबारी व्यक्ति की दृष्टि से देखा है, अतः इन्हें भोग और विलास की सामग्री ही अधिक प्रतीत हुई। सेनापति की कविता मर्मस्पर्शी है। इसमें भावुकता एवं चमत्कार का बहुत सुन्दर मिश्रण है। श्लेष के तो वे अनुपम कवि हैं। इसके अतिरिक्त अनुप्रास, यमक आदि का भी इनकी कविता में प्रचुर प्रयोग है। सेनापति की भाषा अत्यन्त मधुर एवं चमत्कारपूर्ण है। इनकी रामभक्ति की कविताएँ भी अपूर्व एवं हृदयस्पर्शी हैं।

### कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **नाम**—सेनापति।
- **जन्म**—1589 ई०।
- **जन्म-स्थान**—बुलन्दशहर (उ०प्र०)।
- **पिता का नाम**—गंगाधर दीक्षित।
- **कृतियाँ**—कवित्त रत्नाकर एवं काव्य कल्पद्रुम।
- **मृत्यु**—मृत्यु के सम्बन्ध में कोई निश्चित प्रमाणिक तिथि उपलब्ध नहीं है।

सेनापति की रचना '**कवित्त रत्नाकर**' के आधार पर उनकी गणना रीतिकाल के श्रेष्ठ कवियों में की जाती है। सेनापति ने प्रकृति को एक शहरी एवं दरबारी भक्ति की दृष्टि से देखा है। इन्होंने नायिका के नख-शिख-सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया है। इनके काव्य में उद्दीपन-भाव एवं वयःसन्धि आदि का मनोहारी चित्रण भी दर्शनीय है। अलंकार-विधान, प्रकृति-चित्रण एवं छन्द-विधान की दृष्टि से 'सेनापति' को 'केशवदास' के समकक्ष स्थान प्राप्त है।

## देव ( जन्म 1673 ई0, मृत्यु सन् 1767 ई0 )

इनका जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जिले में संवत् 1730 वि० (सन् 1673 ई०) में हुआ था। इनके पिता का नाम बिहारीलाल दूबे था। इनकी मृत्यु अनुमानतः संवत् 1824 वि० (सन् 1767 ई०) के आस-पास हुई थी। कवि देव द्वारा रचित विपुल साहित्य का उल्लेख मिलता है। विभिन्न ग्रंथों में उल्लिखित तथ्यों के अनुसार इन्होंने लगभग 62 ग्रंथों की रचना की, लेकिन इनमें से अब तक मात्र 15 ग्रंथ ही उपलब्ध हुए हैं जिनका विवरण इस प्रकार है–'भाव-विलास', 'अष्टयाम', 'भवानी-विलास', 'प्रेम-तरंग', 'कुशल-विलास', 'जाति-विलास', 'देवचरित्र', 'रस विलास', 'प्रेम चन्द्रिका', 'सुजान-विनोद', 'शब्द-रसायन', 'सुखसागर तरंग', 'राग-रत्नाकर', 'देवशतक' तथा 'देवमाया-प्रपंच' आदि।

### कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **नाम**—देवदत्त (देव)।
- **जन्म**—1673 ई०।
- **जन्म-स्थान**—इटावा (उ० प्र०)
- **कृतियाँ**—भाव-विलास, अष्टयाम, भवानी-विलास, प्रेम-चन्द्रिका, शब्द-रसायन, प्रेम-तरंग आदि।
- **मृत्यु**—1767 ई०।

देव प्रमुख रूप से दरबारी कवि थे। रीतिकालीन प्रवृत्ति के अनुसार देव ने भी काव्य-रीति के निरूपण को प्रमुखता दी है। कवित्वमयता, भावानुभूति एवं रसानुभूति की दृष्टि से देव की रचनाएँ आकर्षक और प्रभावशाली हैं। रीतिकाल के अनेक कवियों की भांति देव में आचार्य और कवि का मिश्रण है। देव के समान भाव-सौष्ठव तथा उनके समान सूक्ष्म कल्पना रीतिकाल के बहुत कम कवियों में मिलती है। देव ने अपनी रचनाएँ ब्रज-भाषा में की हैं, जिसमें संस्कृत का पुट भी मिलता है। देव का शब्द भण्डार भी अन्य कवियों की तुलना में अधिक समृद्ध है। देव रीतिकाल के सर्वाधिक सृजन करने वाले कवि हैं। देव विरह की चरम अवस्था का सम्यक् वर्णन करने में निपुण थे।

रीतिकाल के अनेक कवियों की तरह देव में आचार्य और कवि का मिश्रण है। देव में कवित्व की नैसर्गिक प्रतिभा है तथा इनका काव्य-क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। पर मूलतः वे गार्हस्थ प्रेम के अत्यन्त सरस और उत्कृष्ट कवि हैं। इनका सौन्दर्य-चित्रण हृदयस्पर्शी है। कहीं-कहीं भाव की अत्यन्त उच्च कल्पना है, पर अनुप्रास, अक्षर-मैत्री आदि के मोह के कारण उस उच्च भावभूमि पर टिक नहीं पाये हैं। पर देव का-सा भाव-सौष्ठव तथा उनकी सी सूक्ष्म कल्पना रीतिकाल के बहुत कम कवियों में मिलती है। इनका **'शब्द रसायन'** 'काव्य प्रकाश' पर आधारित ग्रन्थ है। देव रीतिकाल के सबसे अधिक सृजन करनेवाले कवि हैं।

## घनानन्द ( जन्म 1689 ई0, मृत्यु सन् 1739 ई0 )

घनानन्द का जन्म संवत् 1746 वि० (सन् 1689 ई०) में माना जाता है क्योंकि इनके जीवन से सम्बन्धित प्रामाणिक तथ्य अभी तक उपलब्ध नहीं हो सके हैं। किंवदन्तियों के अनुसार घनानन्द मुहम्मदशाह रंगीले के दरबारी कवि थे। किन्तु दरबारी षडयन्त्रों से खिन्न होकर इन्होंने दरबार छोड़ दिया और वृन्दावन में रहने लगे। इन्होंने कृष्ण भक्ति पर आधारित काव्य की रचना की। घनानन्द की प्रमुख काव्य कृतियों में 'सुजानमति', 'वियोग-बेलि', 'प्रीति-पावस', 'प्रेम-सरोवर' तथा 'प्रेम-पहेली' आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

शुक्ल जी घनानन्द को साक्षात् रसमूर्ति कहते हैं। इन्हें रीति-मुक्त धारा का सर्वश्रेष्ठ कवि कहा जा सकता है।

### कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **नाम**—घनानन्द।
- **जन्म**—1689 ई०।
- **जन्म-स्थान**—बुलन्दशहर (उ०प्र०)।
- **कृतियाँ**—सुजानमति, वियोग-बेलि, प्रीति-पावस, प्रेम-सरोवर, प्रेम-पहेली इत्यादि।
- **उपलब्धियाँ**—रीतिमुक्त धारा के सर्वश्रेष्ठ कवि, विरह वर्णन की उत्कृष्ट रचनाएँ करने के कारण प्रेम के पीर के कवि कहलाए।
- **मृत्यु**—1739 ई०।

अन्य रीतिकाल कवियों की तरह इनका काव्य-विषय कल्पना-प्रसूत नहीं है। इनकी कविता का प्रमुख विषय वियोग शृंगार है और उसकी पीर इन्हें जीवन से प्राप्त हुई है। माना जाता है कि 'सुजान' नामक किसी रमणी से इनका प्रेम था और वह इनके प्रेम के अनुरूप प्रतिदान नहीं दे सकी, अतः ये उसे 'बिसासी' कह कर पुकारते हैं। 'सुजान' शब्द कृष्ण और प्रेयसी दोनों का बोधक है, अतः इनकी कविता में प्रेम और भक्ति का मिश्रण है, पर लौकिक प्रेम के स्वर ही अधिक मुखर हैं। इनकी कविता में भी प्रेम की बाह्य चेष्टाओं का ही अधिक वर्णन है, पर हृदय का स्पर्श करनेवाली गहरी अन्तर्वृत्तियों के मर्मस्पर्शी चित्र भी पर्याप्त हैं। इन्होंने विरह की आभ्यन्तर अनुभूति का बहुत ही हृदय-द्रावक चित्रण किया है।

घनानन्द का भाषा पर पूर्ण अधिकार है। वे भाषा को बुद्धि से नहीं, हृदय से ग्रहण करते हैं। इन्होंने शब्दों के भावों का हृदय से साक्षात्कार किया है। यही कारण है कि ऊपर से आरोपित बोझिल अलंकारों की अपेक्षा घनानन्द ने भाव की रमणीयता को सम्प्रेषित करने में समर्थ लाक्षणिकता एवं ध्वन्यात्मकता का प्रयोग किया है। इनका उक्ति-वैचित्र्य और वचन-वक्रता छायावादी कवियों के टक्कर के हैं। घनानन्द की कविता में विशेषण-विपर्यय और विरोधमूलक चमत्कार के बहुत ही सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। घनानन्द की भाषा में वक्रोक्ति के साथ भाषा के स्निग्ध प्रवाह एवं भाव-व्यंजन-क्षमता का भी अपूर्व मिश्रण है।

●●

# सेनापति

*[निम्न काव्य-पंक्तियों में सेनापति ने प्रकृति का चित्रण किया है। प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से सेनापति अद्वितीय प्रतिभा के धनी थे। शृंगारी कवियों में इनके जैसा ऋतु-वर्णन और किसी कवि ने नहीं किया है।]*

बृष कौं तरनि, तेज सहसौ किरन करि
ज्वालन के जाल बिकराल बरसत है।
तचति धरनि जग जरत झरनि सीरी
छाँह कौं पकरि पंथी-पंछी विरमत है।
'सेनापति' नैक दुपहरी के ढरत होत,
धमका विषम ज्यौं न पात खरकत है।
मेरे जान पौनौं सीरी ठौर कौं पकरि कौनौं
घरी एक बैठि कहूँ घामै वितवत है।।1।।

सिसिर मैं ससि कौं सरूप पावै सविताऊ,
घामहूँ मैं चाँदिनी की दुति दमकति है।
'सेनापति' होत सीतलता है सहस गुनी,
रजनी की झाँई बासर मैं झमकति है।
चाहत चकोर सूर ओर दृग छोर करि,
चकवा की छाती तजि धीर धसकति है।
चंद के भरम होत मोद है कमोदनी कौं,
ससि संक पंकजिनी फूलि न सकति है।।2।।

# देव

*[देव रसवादी आचार्य थे और रस को आनन्दमयी अनुभूति मानते थे। देव ने अपने काव्य में शृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का चित्रण किया है। निम्न पंक्तियों में देव ने बसन्त का वर्णन बालक के रूप में किया है तथा नायिका द्वारा नायक के सौन्दर्य का वर्णन भी कराया है।]*

डार द्रुम पलना, बिछौना नवपल्लव, के,
सुमन झंगूला सोहै तन छबि भारी दै।

पवन झुलावै, केकी कीर बहरावै, 'देव',
  'कोकिल हलावै, हुलसावै करतारी दै।।
पूरित पराग सौं उतारौ करै राई-लोन,
  कंजकली नायिका लतानि सिर सारी दै।।
मदन महीपजू को बालक बसंत, ताहि,
  प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै।।1।।

झहरि झहरि झीनी बूँद हैं परति मानो,
  घहरि घहरि घटा घेरी है गगन में।
आनि कह्यो स्याम मो सौं, चलौ झूलिबे को आज,
  फूली न समानी भई ऐसी हौं मगन मैं।
चाहत उठ्योई उठि गई सो निगोड़ी नींद,
  सोय गए भाग मेरे जानि वा जगन में।
आँख खोलि देखौं तौं न घन हैं, न घनस्याम,
  वेई छाई बूँदें मेरे आँसू ह्वै दृगन में।।2।।

धार मैं धाइ धँसी निरधार ह्वै,
  जाइ फँसी उकसीं न उबेरी।
री! अंगराय गिरीं गहिरी, गहि
  फेरे फिरीं औ घिरीं नहिं घेरी।
'देव' कछू अपनो बसु ना, रस-
  लालच लाल चितै भईं चेरी।
बेगि ही बूड़ि गयीं पँखियाँ,
  अँखियाँ मधु की मँखियाँ भईं मेरी।।3।।

## घनानन्द

*[रीतिमुक्त कवियों में प्रधानता प्राप्त करनेवाले कविवर घनानन्द ने अपने काव्य की रचना प्रेम को आधार बनाकर की। उनका समस्त काव्य 'प्रेम की पीर' का परम रूप है। इन्होंने अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में सुजान नाम की रूपवती वेश्या से प्रेम किया था। इनका यह प्रेम सम एवं विषम दोनों कोटियों का था। प्रेम के मार्ग में तनिक भी सयानेपन और कुटिलता को इन्होंने श्रेयस्कर नहीं समझा। इनका मानना था कि प्रेम के ऐसे मार्ग पर अहंभाव को त्याग कर सच्चे लोग ही चल सकते हैं।]*

अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहाँ साँचें चलैं तजि आपुनपौ झझकैं कपटी जे निसाँक नहीं।

'घनआनँद' प्यारे सुजान सुनौ यहाँ एक से दूसरो आँक नहीं।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।।1।।

डगमगी डगरि धरनि छबि ही के भार,
ढरनि छबीले उर आछी बनमाल की।
सुन्दर बदन तर कोटिक मदन वारौं,
चित चुभी चितवनि लोचन बिसाल की।
काल्हि हि गली अली निकसे औचक आय,
कहा कहौं 'अटक मटक' तिहि काल की।
भिजई हौं रोम रोम आनन्द के घन छाय,
बसी मेरी आँखिन मैं आवनि गुपाल की।।2।।

पर काजहि देह को धारे फिरौ,
परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि नीर सुधा के समान करौ,
सबही विधि सज्जनता सरसौ।
'घनआनँद' जीवनदायक हौं,
कछु मेरियौ पीर हिये परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन,
मो अँसुवान को लै बरसौ।।3।।

## अभ्यास प्रश्न

## ➥ पद्यांश पर आधारित प्रश्न

**1.** निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

### सेनापति

**(क)** वृष कौं तरनि, तेज सहसौ किरन करि
ज्वालन के जाल विकराल बरसत है।
तचति धरनि जग जरत झरनि सीरी
छाँह कौं पकरि पंथी-पंछी विरमत है।

'सेनापति' नैक दुपहरी के ढरत होत,
धमका विषम ज्यौं न पात खरकत है।
मेरे जान पौनौं सीरी ठौर कौं पकरि कौनौं
घरी एक बैठि कहूँ घामै वितवत है।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पद्यानुसार हवा की स्थिति कैसी है?

(iv) भीषण गर्मी के कारण धरती की स्थिति कैसी है?

(v) प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

## देव

**(ख)** शहरि झहरि झीनी बूँद हैं परति मानो,
घहरि घहरि घटा घेरी है गगन में,
आनि कह्यो स्याम मो सौं, चलौ झूलिबे को आज,
फूली न समानी भई ऐसी हौं मगन मैं।
चाहत उठ्योई उठि गई सो निगोड़ी नींद,
सोय गए भाग मेरे जानि वा जगन में।
आँख खोलि देखौं तौं न घन हैं, न घनस्याम,
वेई छाई बूँदें मेरे आँसू ह्वै दृगन में।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) श्याम ने कब नायिका से झूला झूलने के लिए कहा और उसका क्या प्रभाव हुआ?

(iv) प्रस्तुत पद्यांश में किसकी मनोदशा का वर्णन हुआ है?

(v) प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

## घनानन्द

**(ग)** अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहाँ साँचें चलैं तजि आपुनपौ झझकैं कपटी जे निसाँक नहीं।
'घनआनँद' प्यारे सुजान सुनौ यहाँ एक से दूसरो आँक नहीं।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रेम मार्ग की विशेषताएँ बताइए।
(iv) पद्यांश में सुजान शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है?
(v) 'मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं' का भावार्थ स्पष्ट कीजिए।

**(घ)** पर काजहि देह को धारे फिरौ,
परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि नीर सुधा के समान करौ,
सबही विधि सज्जनता सरसौ।
'घनआनँद' जीवनदायक हौं,
कछु मेरियौ पीर हिये परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन,
मो अँसुवान को लै बरसौ।।

**प्रश्न–** (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
*अथवा* पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) कवि किससे प्रार्थना कर रहा है?
(iv) अपना कष्ट दूर करने के लिए कवि बादल को कौन-सा उलाहना देता है?
(v) बादल निधि नीर को सुधा के समान किस प्रकार करता है?

## ➡ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित काव्य-सूक्तियों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए—
   (क) अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
   (ख) निधि नीर सुधा के समान करौ, सबही विधि सज्जनता सरसौ।
   (ग) तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।
2. सेनापति की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. सेनापति की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
4. "देव रीतिकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं?" इस कथन के औचित्य पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
5. उपयुक्त उदाहरणों की सहायता से देव के काव्य-सौष्ठव का विवेचन कीजिए।
6. देव का जीवन-परिचय लिखिए।
7. घनानन्द के विरह-वर्णन की मार्मिकता का निरूपण कीजिए।
8. घनानन्द की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
9. घनानन्द का संक्षिप्त जीवन-परिचय लिखिए।

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सेनापति के प्रकृति-चित्रण की क्या विशेषताएँ हैं?
2. देव किस काल के कवि माने जाते हैं?
3. घनानन्द के अनुसार प्रेम का मार्ग कैसा है? स्पष्ट कीजिए।
4. घनानन्द की भाषा-शैली बताइए।
5. 'घनानन्द' के वियोग वर्णन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## ➡ काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्ति में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए–

   वृष कौं तरनि तेज सहसौ किरन करि,<br>
   ज्वालन के ज्वाल विकराल बरसत है।
2. 'सिसिर में ससि कौं सरूप पावै सविताऊ' पंक्ति में अलंकार का नाम तथा उसका लक्षण लिखिए।

●●●

# परिशिष्ट

## ॥ टिप्पणियाँ ॥

## सन्त कबीर

### ➡ साखी

**1. द्योहाड़ी कै बार**—प्रतिदिन कितने ही बार—बेला (आपकी बलिहारी है)। **बार** = देरी। **तैं** = से। **मानिष** = मनुष्य।

**3. दीपक दीया.......हट्ट**—रूपक। **विसाहुणाँ** = क्रय-विक्रय; जन्म मरण से हमेशा के लिए छूटने की व्यंजना।

**4. भेरा** = बेड़ा (नाव)। **लहरि** = कृपारूपी तरंग।

**7. जाके संग......लागि**—अज्ञान के कारण जीव ब्रह्म से बिछुड़ गया है, ज्ञान प्राप्त करके उसी के साथ पुनः लगने की प्रेरणा है।

**13. सुन्नि सिषर** = शून्य शिखर, सुषुम्ना नाड़ी का ऊपरी भाग।

**14. पाणी ही तै.......कहा न जाइ**—जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय में केवल उपाधि मात्र का अन्तर होता है, कोई सच्चा परिवर्तन नहीं होता। मुक्ति में भी कोई नयी उपलब्धि नहीं है, यथास्थिति है।

**15. पंखि** = कुण्डलिनी अथवा जीवात्मा का प्रतीक। **पंखि उड़ाणीं.......यहु देस**—कुण्डलिनी शून्य शिखर पर पहुँच गयी। वहाँ पर जीव ने अमृत सरोवर का जल पिया। उस दशा में जीव का देहाध्यास नहीं रहा। साधना के द्वारा ब्रह्मानन्द प्राप्ति का सन्देश है।

**18. पाका कलस** = ज्ञानी के शरीर का प्रतीक। **थाकि** = प्यास, तृष्णा।

**19. बूँद समानी समद मैं** = जीव का ब्रह्म में लय। **कत** = कैसे।

### ➡ पदावली

**1. दुलहनी गावहु मंगलचार**—कबीर ने पति-पत्नी के प्रतीक द्वारा परमात्मा-जीवात्मा के सम्बन्ध को प्रस्तुत किया है।

**2. बहुत दिनन थैं..................राम मोहि दीन्हाँ**—प्रेमी रूप में भगवान् के अनुग्रह की व्यंजना।

**3. संतौ भाई आई ग्यान की आँधी**..................अज्ञान-नाश का रूपक के माध्यम से वर्णन।

**4. पंडित बाद बदंते झूठा**..................ज्ञान के शब्दों के व्यवहार मात्र से नहीं, अपितु तत्त्व-साक्षात्कार से काम चलता है।

**5. हम न मरै**..................जीव शाश्वत है और जगत् नश्वर, अज्ञानी मरता है अर्थात् उसे ही मरने की प्रतीति होती है, ज्ञानी को नहीं।

**6. काहे री नलनी**................जीवात्मा का ताप और दुःख से तीनों कालों में कोई सम्बन्ध नहीं है। उसको दुःख और ताप की अनुभूति केवल भ्रमजनित है।

# मलिक मुहम्मद जायसी

## ➥ नागमती-वियोग-वर्णन

**बावनकरा** = वामनावतार। **छरा** = छल। **अपसबा** = चल दिया। **अलोपी** = गायब हो गया। **अकरूर** = अक्रूर। **पींजर** = अस्थिपंजर। **बाउर** = बावला। **जीऊ** = हृदय। **दाधै** = दग्ध करता है। **रामा** = रमणी। **हरे-हरे** = धीरे-धीरे। **नारी** = नाड़ियाँ। **खनहिं** = क्षण में। **चोला** = वस्त्र। **भाखा** = भाषा। **हँस** = चेतना, प्राण। **पाटमहादेइ** = महारानी। **मेरावा** = मेल। **सँवरि** = स्मरण करके। **मेहा** = बादल। **बेली** = बेल। **बारी** = बाला। **तरिबर** = शरीर। **विधंसा** = नष्ट हुआ। **मृगसिरा** = एक नक्षत्र जो ग्रीष्म ऋतु में उदित होता है। **पलुहंत** = पल्लवित। **घन बाजा** = बादलों का गरजना। **दुंद-दल** = युद्ध सेना। **बाजा** = नगाड़ा। **धौरे** = सफेद। **धाए** = दौड़ पड़े हैं। **सेतधजा** = श्वेतध्वजा। **बगपाँति** = बगुलों की पंक्ति। **बीजु** = बिजली। **उबारू** = बचाओ। **गारौ** = गौरव। **भरन परी** = मूसलधार वर्षा होने लगी। **झुरानी** = सूख गयीं। **पुनरबसु** = पुनर्वसु नामक नक्षत्र। **सरेखा** = चतुर। **भुँइ** = पृथ्वी। **खेवट** = मल्लाह। **वन ढाँक** = ढॉक के वन। **दूभर** = कठिन। **रैनि** = रात्रि। **हिय** = हृदय। **कुवार** = क्वार का महीना। **लटा** = दुर्बल हो गया। **पलुहै** = पल्लवित होगी। **उआ** = उगा। **तुरय** = घोड़ा। **पलनि** = दौड़े। **काँस** = एक प्रकार की घास। **हस्ति** = हाथी। **घाय** = घाव। **बाजहु** = आक्रमण। **गाजहुँ** = गर्जन। **करा** = कला। **अगि दाहू** = अग्निदाह। **परबदेवारी** = दीवाली का पर्व। **सवति** = सौत। **छार** = धूलि। **गाढ़ी** = गहन। **नाहू** = नाथ। **बहुरा** = लौटा। **दगधै** = जलता है। **सोधनि** = वह स्त्री। **सुरुजु** = सूर्य। **चाँपा** = जा छिपा। **बाढ़** = वृद्धि। **दारुन** = भयंकर। **नियरे** = समीप। **सौंर** = रजाई। **जूड़ी** = कंपन। **हिवंचल** = हिमाचल। **परवी** = पक्षी। **सचान** = बाज। **ओनंत** = झुकी। **चाँचरि** = होली का उल्लासपूर्ण नृत्य। **निहोर** = विनती। **छार** = राख। **मकु** = सम्भवतः। **चोआ** = चोबा नामक सुगन्धित पदार्थ। **बजागि** = वज्राग्नि। **बारू** = बालू। **दवँगरा** = वैशाख की वर्षा का प्रथम जल। **मेखहु** = मिला दो। **बिगसा** = खिला। **पलुहै** = पल्लवित हो उठेगी। **छाजनि** = छप्पर। **तिनउर** = तिनका। **गाढ़ी** = कठिन। **झूरौं** = सूख रही हूँ। **आगरि** = आग। **बंध** = बन्धु, बाँधने की रस्सी। **साँठि** = पूँजी। **नाठि** = नष्ट हो गयी। **छूँछा** = खाली। **टेक बिहूनी** = बिना टेक के। **धाँभ** = खम्भा।

# सूरदास

**1. पारधि** = बहेलिया। **सचान** = बाज पक्षी। डाल पर बैठे पक्षी की, जिसके ऊपर-नीचे दोनों ओर काल मुँह बाये खड़ा है, क्षण भर में स्मरण करते ही प्रभु ने रक्षा कर ली और उसके दोनों शत्रु पल भर में नष्ट हो गये।

**2. अंबुज** = कमल। **दुरमति** = दुर्बुद्धि। **अनत** = अन्यत्र।

**3. बदन** = मुख। **बिधु** = चन्द्रमा। **मेचक** = श्याम रंग। **फरनि** = फलों से। बाल कृष्ण के कायिक सौन्दर्य पर सूर की उक्ति है। समस्त उपमान कृष्ण के अंग-प्रत्यंग, उपमेयों से छवि में परास्त होकर जिसे जहाँ स्थान मिला, वहाँ भागे। भुजंग भुजाओं से हार कर विवरों (बिलों) में, कमल नेत्रों से हार कर पानी में, चन्द्रमा मुख से हार कर आकाश में जाकर रहने लगे और अन्य उपमान तो डर कर छिप गये।

**4. हंससुता** = सूर्य की पुत्री यमुना जी। **कगरी** = कगारों के बीच की हरी-भरी घाटियाँ। **सुरभी** = गाय। **खरिक** = गौओं के रहने के बाड़े। **मुक्ताहल** = मोती।

**5. घनसार** = कपूर। **सजीवन** = शीतल व सुगन्धित लेप। **दधिसुत** = चन्द्रमा। **छुंजै** = क्षीण होना, प्रतीक्षा में मार्ग देखते-देखते आँखों की ज्योति क्षीण हो गयी है।

**6. जकरी** = बकती है। **चकरी** = बच्चों के खेल की चकई जो घूमती रहती है। हारिल या हाड़िल एक पक्षी है जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह पृथ्वी पर कभी बैठता ही नहीं। 'हारिल त्यागि दई धरती पुनि पगु न धर्‌यो धरनी के माँही।' वह सदा वृक्ष पर ही रहता है और जीवन भर लकड़ी का साथ क्षण भर के लिए भी नहीं छोड़ता। पानी पीने के लिए वृक्ष से चोंच द्वारा तोड़कर लायी हुई किसी सूखी लकड़ी पर बैठ कर तृषा शान्त करता है।

गोपियाँ कहती हैं, हे उद्धव कृष्ण हम हारिल की लकड़ी के समान कभी न त्याग किये जाने योग्य हैं। एतदर्थ उनके त्याग और ब्रह्म के ग्रहण का तुम्हारा उपदेश निरर्थक है।

**7. मधुकर** = भौंरा, उद्धवजी से आशय है।

**8.** यह कूट पद का उदाहरण है। **मंदिर अरध** = आधा घर, पाख और पक्ष भी पन्द्रह दिन का पखवारा कहलाता है। **हरि अहार** = सिंह का भोजन मांस तथा मास, तीस दिन का महीना भी। **मघ पंचक** = मघा नक्षत्र से पाँचवाँ नक्षत्र। **चित्रा** = चित्त या मन। नक्षत्र 27, वेद 4 और ग्रह 9, सब जोड़ने पर 40 हुए, उसका आधा करने पर **बीस** = बिस या विष।

**9. परेखौ** = दुश्चिन्तायुक्त विस्मय।

**10. कुलाल** = कुम्भकार, कुम्हार।

**11. रूप रस राँची** = रूप का रस पीते रहने की अभ्यस्त। **झूखीं** = दुखी हुईं। **बारक** = एक बार। **पतूखी** = पत्तों से बनी दोनियाँ (जिनमें कृष्ण गाय दुह कर वन में दूध पी लिया करते थे।)

# गोस्वामी तुलसीदास

## ➥ भरत-महिमा ( रामचरितमानस )

**जुबती** = युवती। **परिनामा** = परिणाम। **अचिरिजु** = आश्चर्य। **कलपतरु** = कल्पतरु। **बासर** = दिन। **सगुण** = शगुन। **प्रातही** = प्रातः ही। **उछाहू** = प्रसन्नतापूर्वक। **सनेह** = स्नेह। **सिथिल** = शिथिल। **बिह्वल** = बेचैन। **सिरोमणि** = शिरोमणि। **पय** = दूध। **तीरा** = किनारा। **दोउ बीर** = दोनों भाई। **सेषु** = शेष। **दिनकर** = सूर्य। **ढरकें** = ढलना। **अवसेषा** = अवशेष। **लोचन** = नेत्र। **मलिन** = मुरझाया। **तिमिरु** = अंधकार। **तड़ागा** = तालाब। **पयोधि** = सागर। **विबुध** = देवता। **मंदाकिनी** = नदी। **नियोगा** = आज्ञा। **कोटि** = करोड़। **अनत** = दूसरी जगह।

**अघ** = पाप। **अवगुन** = अवगुण। **मीना** = मछली। **गुनत** = सोचते हुए। **कृत खोरी** = की हुई गलती। **उताइल पाऊ** = पैर जल्दी-जल्दी पड़ने लगते हैं। **भूरि भाँय** = अत्यन्त प्रेमपूर्वक। **उर** = हृदय। **दुहुँ** = दोनों। **आसिष** = आशीष। **अनुराग** = प्रेम। **देह** = शरीर। **लखि** = देखना। **बिकल** = विकल, व्याकुल।

## ➡ लंकादहन (कवितावली)

**बालधी** = पूँछ। **ज्वाल-जाल** = आग का समूह। **कैधौं** = अथवा। **ब्योम-बीथिका** = आकाशरूपी गली में। **सुरेश चाप** = इन्द्र-धनुष। **दामिनी कलाप** = बिजलियों का समूह। **कृसानु-सरि** = अग्नि की सरिता। **जातुधान** = राक्षस। **खोरि-खोरि** = गली-गली से। **चख** = आँख। **अगार** = घर।

## ➡ गीतावली

1. **मातु मते महँ** = माता के मत में सहमत होऊँ। **सुचि सपथनि** = आज शपथ खाने से मैं कैसे निर्दोष हो सकता हूँ। **खल बच बिसिखन बाँची** = दुष्टों के वाग्वाणों से विद्ध हुए बिना बची है। **रसना** = जीभ। 2. **साखामृग** = वानर। **हौं पुनि अनुज संघाती** = और मैं भैया लक्ष्मण का साथ पकड़ूँगा। 3. **कीरै** = तोता। **पाठ अरथ चरचा कीरै** = जैसे तोते से कोई पाठ के अर्थ की चर्चा करे। **छति लाहु** = हानि-लाभ। **खीरै नीरै** = दूध और पानी।

## ➡ दोहावली

1. **पसारहि** = फैलाते हैं। **मीत** = मित्र। **परमारथ** = जीव के परम लक्ष्य मोक्ष के लिए।
2. **फबैं** = शोभा देते हैं।
3. **जाचत** = याचना करता है। **माँगनेहि** = याचक, भिखारी।
4. **मराली** = हंस जैसी। **छीर-नीर** = दूध-पानी। **बिबरन** = विवेचन। **बक** = बगुला। **उघरत** = भेद खुल जाता है।
6. **भेषज** = ओषधि।
8. **करषत** = कर्षण, खींचना।
9. **बेगिही** = शीघ्र ही।
10. **दादुर** = मेंढक।

## ➡ विनयपत्रिका

1. **काहूसौं कछु न चहौंगो** = किसी से चाहे जो हो, मनुष्य या देवता या इतर योनि, कुछ भी नहीं चाहूँगा। **मन क्रम बचन नेम निबहौंगो** = मन, वचन और कर्म से यम-नियमों का पालन करूँगा। (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान–ये दस, यम नियम हैं।) **परुष** = कठोर। **तेहि पावक न दहौंगो** = उससे उत्पन्न हुई क्रोध की आग में नहीं जलूँगा। **परिहरि** = छोड़कर। **अविचल** = अडिग, अचंचल।

2. **चातक** = पपीहा। **तृषित** = प्यासा। **गच-काँच** = फर्श के शीशे में। **सेन** = बाज पक्षी। **छति** = हानि। **बिसारि** = भूलकर।

3. **मृषा** = मिथ्या। **भासै** = प्रतीत होता है। **सुमृति** = स्मृति।

4. **भवनिसा** = संसाररूपी रात्रि। **न डसैहौं** = माया का बिछौना नहीं बिछाऊँगा अर्थात् अब असार माया के बन्धन में नहीं बँधूँगा। **चिन्तामनि** = चिन्तामणि; समस्त कामनाओं को पूर्ण करनेवाली एक विशिष्ट मणि। **उर-कर** = हृदयरूपी हाथ से। **खसैहौं** = गिराऊँगा। **कसौटी** = एक विशेष काले पत्थर का नाम है जिस पर सोना कसकर उसकी शुद्धता की परीक्षा की जाती है। **कसैहौं** = कसकर निर्विकार विशुद्ध बनाऊँगा। **पन** = प्राण। **बसैहौं** = बसने के लिए बाध्य कर दूँगा।

# केशवदास

**खण्ड परस** = महादेवजी। **कोदंड** = धनुष। **धर** = धरा, पृथ्वी। **बरिबंड** = प्रबल। **अवली** = पंक्ति। **गजदंतमयी** = हाथियों के दाँतों से बने हुए मंच। **सुधाधरमण्डल** = चन्द्रमा के आस-पास बनने वाला घेरा। **जोन्हाई** = ज्योत्सना से। **देवन स्यों** = देवताओं सहित। (**अलंकार** = उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा।) **मणि पन्नग** = बड़े-बड़े सर्प, शेष, वासुकि आदि। **पितृ** = पितृलोक निवासी। **ज्योतिवंत** = प्रतापी (चन्द्र, सूर्य आदि)। **अंगी** = शरीरी। **अनंगी** = अशरीरी। **विश्वरूप** = विश्वभर के रूपधारी लोग। **बीस बिसे** = बीस बिस्वा, पूर्णरूप से। **घनश्याम** = (1) रामचन्द्र (2) काले बादल। **बिहाने** = प्रातःकाल। **तरुपुण्य पुराने** = पूर्व पुष्यरूपी वृक्ष। (**अलंकार** = रूपक।) **ऋषि** = याज्ञवल्क्य ऋषि। **राजहिं लीने** = राजा जनक को साथ लिए हुए। **प्रवीने** = पुरोहित कार्य में कुशल। **दुवौ** = राजा जनक और सतानन्द। **शीरषबासु** = सिर सूँघकर। **कीरतिबेलि** = यशरूपी लता। **बयी** = बोया। **दान-कृपान-विधानन** = दान के विधान से अर्थात् दान देकर। **कृपान-विधानन** = युद्ध करके। **अंग छ** = वेद के छह अंग — शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छन्द। **सातक** = राज्य के सात अंग — राजा, मंत्री, मित्र, कोष, देश, दुर्ग, सेना। **आठक** = योग के आठ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि। **वेदत्रयी** = ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद। **शुभ योगमयी है** = सुन्दर तथा अच्छा मेल हुआ है। (**अलंकार** = रूपक।) **वर्ण** = रंग, जाति। **उत्तमवर्ण** = वर्ण से उत्तम अर्थात् ब्राह्मण। विश्वामित्र तप करके क्षत्रिय से ब्राह्मण हुए थे। **उदोत** = अभ्युदय। **बिजना** = व्यंजन, पंखा। **बात** = हवा। **तमतेज** = घना अंधकार। **भवभूषण** = 1. शंकर के शरीर की विभूति अर्थात् राख, 2. सांसारिक आभूषण। **मसी** = कालिख। **देव अदेवन को** = देवताओं और दानवों अर्थात सभी का। **भूव** = पृथ्वी। **भूपति** = राजा, पृथ्वी का पति। **भूतन** = पृथ्वी के शरीर से। **विदेहन** = जीवन-मुक्त। **भूषण को भवि भूषण** = भूषणों के लिए भी भव्य भूषण, अलंकारों को भी अलंकृत करने वाली। (**अलंकार** = विरोधाभास।) **कमलापति** = विष्णु। **विमलापति** = ब्रह्मा। **दानिन के शील** = दानियों में श्रेष्ठ। **परदान के प्रहारी दिन** = (विरोध परिहार पक्ष में) प्रतिदिन शत्रुओं से दण्ड के रूप में दान लेनेवाले। **पृथु सम** = पुराण प्रसिद्ध राजा पृथु के समान। **कंद** = बादल। विष्णु। **सुरपालक** = इन्द्र। **परदार** = लक्ष्मी। (**अलंकार** = विरोधाभास, उपमा, अनुप्रास।) **चंद्रचूड़** = महादेवजी। **पन्नग प्रचंड पति प्रभु** = प्रचण्ड पन्नगों (सर्पों) का स्वामी (राजा) वासुकि। **पनच** = प्रत्यंचा। **पीन** = पुष्ट, मोटी। **पर्वतारि** = इन्द्र। **पर्वतप्रभा** = दैत्य। **विनायक** = गणेश। **पिनाक** = धनुष। (**अलंकार** = व्यतिरेक, अनुप्रास।) **लीलयैव** = सहज ही में।

**उत्तम गाथ** = सर्व प्रशंसित, शिव का वह धनुष। **निर्गुण ते गुणवंत कियो** = प्रत्यंचारहित स्थिति (अन्य राजा प्रत्यंचा नहीं चढ़ा पाये थे) को गुणवंत किया (अर्थात राम ने प्रत्यंचा चढ़ा दी)। **नराच** = बाण। (**अलंकार** = रूपक, अनुत्रास।) **टंकोर** = टंकार। **चंड कोदंड** = कठोर धनुष। **मंडि रह्यो** = भर गया। **नव खण्ड** = इला, रमणक, हिरण्य, कुरु, हरि, वृष, किंपुरुष, केतुमाल तथा भारत। **अचला** = पृथ्वी। **घालि** = तोड़कर। **ईश** = महादेव। **जगदीश** = विष्णु। **भृगु नंद** = परशुराम।

**बाधि वर स्वर्ग को** = स्वर्ग के वर (श्रेष्ठ) निवासियों के शान्त जीवन को बाधा देकर। **साधि अपवर्ग को** = मोक्ष साधकर (महर्षि दधीचि की हड्डियों से निर्मित शिव धनुष पर राम का हाथ पड़ते ही ऋषि दधीचि को मोक्ष प्राप्त हो गया।)

# कविवर बिहारी

## ➡ भक्ति एवं शृंगार

1. **कुबत** = निन्दा (बुरी बात)। **त्रिभंगी लाल** = श्रीकृष्ण को इसलिए कहते हैं कि वंशीवादन करते समय वे पैरों से, कमर से और गर्दन से तीन स्थानों में तिरछे या टेढ़े हो जाते हैं। कवि यही रूप हृदय में बसाना चाहता है।

2. **अजौं** = आज तक। **श्रुति** = कान, वेद।

3. **धर्‌यो** = पकड़ा, अपने अधिकार में किया। **समरू** = समर, कामदेव। **निशान** = झण्डा। कामदेव के झण्डे पर मकर का चिह्न अंकित है, इसीलिए उसे मकरध्वज कहते हैं—जैसे विष्णु को गरुड़ध्वज, शिव को वृषभध्वज और अर्जुन को कपिध्वज कहते हैं।

4. **लुकाइ** = छिपाकर। **नटि जाय** = मना कर देती है।

7. **दिया बढ़ाएँ** = दीपक बुझा देने पर भी अमंगल दोष के कारण दिया बुझाना न कहकर दिया बढ़ाना ही कहा जाता है।

8. **जल चादर** = मध्य युग में जलकुण्डों के भीतर जल की सतह के नीचे जलते दीपों की कतार दिखायी जाती थी। जल चादर के दीपों का उन्हीं से आशय है।

9. **ब्यौरति** = सुलझाती है। **कच** = बाल।

11. **मीचु** = मृत्यु। **गैल** = पीछा।

13. **मैन** = कामदेव।

17. **भलैं** = भलीभाँति। यहाँ इसका अर्थ बड़ी विलक्षणता से है। **अहेरी** = शिकारी। **मार** = कामदेव। **काननचारी** = (1) कानों तक विचरनेवाले अर्थात् दीर्घ। (2) जंगल में विचरने वाले। **नागर नरनु** = नगर निवासी (सुघर) मनुष्य। **अलंकार** = श्लेष, रूपक।

18. **सलोने** = (1) सुन्दर (2) लवणयुक्त। **सनेह**—(1) प्रीति (2) चिकनाई अर्थात् तेल या घी। **सूरन**—यह मुँह में कनकनाहट उत्पन्न करता है। इसी को सूरन का मुँह में लगना कहते हैं। लवण तथा घृत में पकाने से इसकी कनकनाहट जाती रहती है। परन्तु यदि यह कुछ भी कच्चा रह जाता है तो मुँह में लगता है। इसको जमीकन्द भी कहते हैं। **मुँह लागि** = मुँह लग कर (1) धृष्टतापूर्वक झूठी बातें कह कर (2) मुँह से कनकनाहट उपजा कर। (**अलंकार**—श्लेष।)

19. **अनियारे** = अनीदार, नुकीले।

21. असंगति अलंकार का यह अन्यतम उदाहरण है, कारण कहीं, कार्य कहीं।

# महाकवि भूषण

**चतुरंग** = रथ, हाथी, घोड़े एवं पैदल—इन चारों अंगों से युक्त सेना चतुरंग कही जाती थी। **जंग** = युद्ध। **गैबरन** = हाथियों के। **खैल-भैल** = खलभल। **तरनि** = सूर्य। **पारावार** = समुद्र। **बाने** = ध्वज। **नग** = पर्वत। **निसान** = निशान, ध्वज,

परन्तु यहाँ डंका के अर्थ में प्रयोग। **कुंजर** = हाथी। **कमठ** = कच्छप। **कोकबान** = एक प्रकार का बाण जिसे चलाते समय विशेष शब्द निकलता है। **इन्द्र को अनुज** = भगवान् विष्णु। **दुगध नदीस** = क्षीरसागर। **सुरसरिता** = देवनदी, गंगा। **रजनीस** = चन्द्रमा। **गिरीस** = शिव। **गिरिजा** = पार्वती। **मयूखैं** = किरणें। **गयंदन** = हाथी। **रुद्रहि** = शिव को। **करवाल** = तलवार। **कटक** = सेना। **किलकि** = प्रसन्न होकर। **वेसंगिनी** = वयःसंगिनी, आजीवन साथ देनेवाली। **दीह** = बड़े। **दारुन** = दारुण, भयंकर। **बलन** = सेना। **परछीने** = परक्षीण, परकटे पक्षी, बलक्षीण शत्रु अथवा हाथ-पैर कटे हुए शत्रु सैनिक। **बर** = बल। **पर** = शत्रु।

# विविधा

## ➡ सेनापति

1. **वृष** = वृष राशि। **तचति** = तपती है। **सीरी** = शीतल। **नैंक** = थोड़ा। **पौनौं** = पवन (वायु) भी। **पकरि** = आश्रय लेकर। **घामै** = घाम, धूप।

2. **सिसिर** = शिशिर ऋतु। **सरूप** = स्वरूप। **सविताऊ** = सूर्य भी। **दुति** = कान्ति। **रजनी** = रात्रि। **झाईं** = छाया। **बासर** = दिन।

## ➡ देव

1. **केकी** = मोर। **कीर** = तोता। **करतारी दै** = हाथ की ताली बजाकर। **महीप** = राजा।
2. **आनि** = आकर। **निगोड़ी** = निकृष्ट, नीच।
3. **निरधार** = निरालम्ब, बेसहारा।

## ➡ घनानन्द

1. **नेकु** = थोड़ा भी। **सयानप** = चतुरता। **झझकै** = झिझकते हैं। **आँक** = अंक।
2. **वारौं** = न्योछावर करती हूँ। **भिजई** = भीगी। **आवनि** = आने का ढंग।
3. **परजन्य** = मेघ, बादल। **जथारथ** = यथार्थ।

●●●

# कथा साहित्य

## यह संकलन

प्रस्तुत संकलन में हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कहानीकारों की पाँच चुनी हुई कहानियाँ संकलित हैं। विविध सामाजिक सन्दर्भों को आधार बनाकर विविध भाषा-शैलियों में गढ़ी हुई इन कहानियों में से हर एक की अपनी अलग गुणवत्ता है। इन कहानियों के माध्यम से छात्र-छात्राओं को हिन्दी कहानी के पुराने और नये रूपों का समग्र परिचय मिल सकेगा। दोनों प्रकार की कहानियों का संख्यात्मक अनुपात बराबर-बराबर है। निश्चय ही आदर्श और यथार्थ का यह सन्तुलन अध्येताओं को हिन्दी साहित्य और जीवन की एक स्वस्थ समझदारी दे सकेगा। इन कहानियों के द्वारा छात्र-छात्राओं को भारतीय ग्राम और नगर-समाज की सही झलक तो दिखायी देगी ही, उनमें अपनी संस्कृति और अपने राष्ट्र के प्रति एक ऐसा दायित्व-बोध उपज सकेगा जो उन्हें विचारशील नागरिक बनने की सजग प्रेरणा प्रदान करेगा।

प्रसिद्ध कहानीकार मुंशी प्रेमचन्द ने 'बलिदान' कहानी के माध्यम से तत्कालीन समाज में व्याप्त जमींदारी प्रथा के अवगुणों पर प्रकाश डाला है। प्रस्तुत कहानी में काश्तकार गिरधारी प्रमुख पात्र है। जयशंकर प्रसाद जी ने 'आकाशदीप' कहानी के माध्यम से प्रेम और कर्त्तव्य निष्ठा का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया है। भगवतीचरण वर्मा द्वारा लिखित कहानी 'प्रायश्चित' में कबरी बिल्ली के माध्यम से धार्मिक ढकोसले एवं अन्धविश्वास की खिल्ली उड़ायी गयी है। यशपाल द्वारा लिखित कहानी 'समय' में एक नौकरीपेशा मध्यम परिवार की कथा वर्णित है। इस कहानी के माध्यम से पीढ़ियों के चिन्तन का सूक्ष्म अन्तर दिखाया गया है। जैनेन्द्र जी ने 'ध्रुवयात्रा' कहानी में दो प्रेमियों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व की भयानक परिणति को दर्शाया है।

हमें विश्वास है कि यह संकलन अध्येताओं को हिन्दी कहानी का सही परिचय दे सकेगा।

# भूमिका

कहानी गद्य-साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा मानी जाती है। आरम्भ में मनोरंजन और आत्म-परितोष के लिए कहानी कही-सुनी जाती थी। बाद में व्यक्ति और समाज के महत्त्वपूर्ण अनुभवों को प्रकट करने के लिए तथा नीति और उपदेश, सामाजिक सुधार, बाह्य एवं आन्तरिक अनुभूतियों आदि की अभिव्यक्ति के लिए भी कहानी को माध्यम बनाया गया। कहानी अपनी वर्णनात्मक विशेषता के कारण अत्यन्त प्रभावशाली विधा रही है।

निबन्ध की तुलना में कहानी गद्य की बहुत सरल विधा है। कदाचित इसीलिए उसका चलन भी निबन्ध के पहले से है। कहानी कहना और सुनना सभी अवस्था के लोगों को प्रिय है। पर कहानी केवल मनोरञ्जन का ही साधन नहीं है, वह गहन विचारों और सन्देशों को भी वहन करती है। विश्व-साहित्य में ऐसी भी कहानियाँ लिखी गयी हैं जो देश और काल की सीमा का अतिक्रमण करती हुई मानव-मन पर अपना स्थायी प्रभाव छोड़ गयी हैं।

## ➡ परिभाषा

कहानी के लक्षण और परिभाषा के सम्बन्ध में विचारकों के अलग-अलग मत हैं। **प्रेमचन्द** के अनुसार, "कहानी ऐसा उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल और बेलबूटे सजे हुए हों, बल्कि वह एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"

**पं० रामचन्द्र शुक्ल** ने कहानी की परिभाषा इस प्रकार दी है—"सादे ढंग से केवल कुछ अत्यन्त व्यञ्जक घटनाएँ और थोड़ी बातचीत सामने लाकर क्षिप्र गति से किसी एक गम्भीर संवेदना या मनोभाव में पर्यवसित होनेवाली गद्य विधा कहानी है।"

**एडगर एलन पो** का अभिमत है कि "कहानी एक निश्चित प्रकार का वर्णनात्मक गद्य है जिसके पढ़ने में आधे से लेकर एक घण्टे का समय लगता है।"

इन तथा अन्य परिभाषाओं के आधार पर कहानी के लक्षण निम्नांकित रूप में निर्धारित किये जा सकते हैं—

1. कहानी में एक ही विषय अथवा संवेदन का प्रस्तुतीकरण होता है।
2. कहानी का एक निश्चित उद्देश्य होता है तथा उसमें संवेदनात्मक अन्विति होती है।
3. मानवीय संवेदनाओं, अनुभूतियों एवं तथ्यों की रोचक व्यञ्जना होती है।
4. वस्तु तत्त्व (चरित्र, घटनाएँ, कथानक) का आकार लघु होता है।
5. मनोरञ्जन के साथ-साथ जीवन की शाश्वत समस्याओं का प्रकाशन भी कहानी का लक्ष्य है।

## कहानी के तत्त्व

कहानी में 6 तत्त्वों की प्रधानता होती है—

(1) कथानक
(2) पात्र एवं चरित्र-चित्रण
(3) कथोपकथन (संवाद)
(4) वातावरण (देश-काल)
(5) भाषा-शैली
(6) उद्देश्य

## ➡ कथानक

कहानी में कथानक सबसे प्रधान तत्त्व है। कहानी में वस्तुविन्यास अथवा कथानक का निबन्धन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। घटना-प्रधान कहानियों में तो कथानक का ही विशेष महत्त्व है, परन्तु अन्य प्रकार की कहानियों में भी इसका महत्त्व कम नहीं है। कथानक के नियोजन पर ही कहानी की सफलता निर्भर करती है। वस्तुतः कथानक के बिना कहानी का कोई अस्तित्व ही नहीं है। यद्यपि अधुनातन कहानी में इस बात की भी चेष्टा की जाती रही है कि कथानक अनिवार्य न रहे, पर ऐसा कोई प्रयोग बहुत सफल नहीं हो सका है।

आज कहानियों में कथानक का निषेध तो नहीं हो सका, पर उसका ह्रास अवश्य लक्षित होता है और उसके स्थान पर मनःस्थितियों पर पड़नेवाले प्रभाव को महत्त्व दिया जाने लगा है। इस तरह कथानक का आधार क्षीण होता जा रहा है, यद्यपि कथानक के सूत्र किसी-न-किसी रूप में विद्यमान रहते ही हैं। जैनेन्द्रकुमार की 'एक रात', इलाचन्द्र जोशी की 'रोगी', उषा प्रियम्वदा की 'मछलियाँ', मन्नू भण्डारी की 'तीसरा आदमी' आदि कहानियाँ ऐसी ही हैं। कहानी का कथानक प्रभावोत्पादक, विचारोत्तेजक एवं जीवन के यथार्थ से सम्बद्ध होना चाहिए। कहानी का स्वरूप निश्चित करते समय कहानीकार को युग-बोध और भाव-बोध दोनों दृष्टियों से विचार करना चाहिए। कहानी में आरम्भ, उत्कर्ष और अन्त—तीन कथा-स्थितियाँ होती हैं और तीनों का ही अत्यधिक महत्त्व है। आरम्भ में परिचयात्मक स्वरूप धारण करते हुए कहानी परिस्थितिजन्य प्रभावों को एकत्र करती हुई अत्यन्त तीव्रता से उत्कर्ष बिन्दु पर पहुँचती है। इसीलिए कहा जाता है कि कहानी उस छोटी दौड़ की प्रतियोगिता की भाँति है, जिसमें आरम्भ से लेकर अन्त तक दौड़ की तीव्रता में कहीं कमी नहीं आती। इस दृष्टि से वस्तु-विन्यास के आरम्भ, मध्य और समापन—तीनों में गति की तीव्रता का नैरन्तर्य बराबर बना रहना चाहिए।

यदा-कदा ऐसी कहानियाँ भी मिलती हैं, जिनमें दुहरे कथानक होते हैं। नयी कहानियों में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलेगी। ऐसी कहानियों में प्रभावान्विति खण्डित नहीं होती, कहानी के मूल भाव के अनुसार ही कथावस्तु की संरचना की जाती है। कथावस्तु में क्रमबद्धता के साथ-साथ कुतूहल एवं चमत्कार का भी विशेष महत्त्व है। तिलस्मी, जासूसी आदि कहानियों में चमत्कारपूर्ण योजना ही प्रधान हुआ करती हैं। कथानक में द्वन्द्व और संघर्ष का स्थान भी महत्त्वपूर्ण है। कभी-कभी द्वन्द्व चित्रण ही कहानी का मुख्य ध्येय बन जाता है। यह द्वन्द्व भौतिक भी होता है और मानसिक भी। कभी व्यक्ति को अपने समानधर्मी व्यक्ति से, कभी परिस्थितियों से और कभी स्वयं अपने अन्तःकरण के मनोभावों से लड़ना पड़ता है। द्वन्द्व से कथानक में नाटकीयता उत्पन्न हो जाती है और कहानी रुचिकर हो जाती है।

कथानक में कल्पना संभाव्य और असंभाव्य दोनों रूपों में व्याप्त होती है। लेखक जिस विषय को कहानी का प्रतिपाद्य बनाता है, उसे प्रस्तुत करने के लिए वह ऐसे कारण, कार्य और परिणाम की योजना करता है जो कथ्य को प्रभावोत्पादक बनाकर यथार्थ धरातल पर प्रतिष्ठित कर सके। इसके लिए उसे पूरे कथानक को परिच्छेदों में विभाजित करना पड़ता है अथवा ऐसे मोड़ देने पड़ते हैं कि कथ्य प्रभावान्विति का कारण बन सके।

कथानक में आदि, मध्य और अन्त—तीन महत्त्वपूर्ण स्थल हैं। आदि से अन्त तक कहानी की एकोन्मुखता बनी रहती है। वस्तु के अनुरूप ही कहानी के कथानक की योजना करनी पड़ती है। आदि में वह पीठिका तैयार करनी पड़ती है जिस पर कहानी का अन्त प्रतिष्ठित होता है। कहानी का मध्य-बिन्दु वह स्थल है, जहाँ कहानी अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर पाठक की उत्सुकता को विशेष तीव्र एवं संवेदनशील बनाती है। कहानी को वास्तविक आकार मध्य में ही मिलता है। कभी-कभी कहानी में मध्य बिन्दु का पता नहीं लगता और कथानक की चरम सीमा अन्त में व्यक्त होती है। इस दृष्टि से समापन का स्थल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यहीं पहुँचकर कहानी अपनी सम्पूर्ण संवेदनशीलता, प्रभावोत्पादकता एवं पूर्णता का परिचय देती है। प्रभाव की पूर्णता समापन का लक्ष्य है। सारी जिज्ञासा की वृद्धि और कुतूहल की समाप्ति यहीं आकर होती है। मूलभाव की प्रतीति इसी स्थल पर होती है। कहानी का अन्त लघु, सांकेतिक और स्पष्ट होना आवश्यक है। लेखक को यह ध्यान में रखना पड़ता है कि अन्त ऐसे स्थल पर हो, जहाँ कहानी का सम्पूर्ण अन्तरंग ऐसे बिन्दु पर पहुँचकर अनावृत हो जाय कि आगे कुछ कहने की आवश्यकता न रहे। कुछ कहानियाँ ऐसी भी लिखी गयी हैं जिनमें कथावस्तु, घटनाओं और कार्य-कारण आदि की स्थिति एकदम नगण्य है।

## ➡ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

कहानी के मूल भाव के अनुसार ही पात्रों के व्यक्तित्व, चरित्र एवं प्रवृत्तियों का निर्धारण होता है। मानव का चरित्र जब बहुमुखी और जटिल नहीं हुआ था तब बाह्य घटनाओं का चमत्कारपूर्ण वर्णन कहानी के आकर्षण का केन्द्र था। साहित्य की सभी विधाओं

में घटनाओं और संघर्ष की ही प्रधानता थी। चरित्रों का विभाजन—धीरोदात्त, धीरललित, धीरोद्धत और धीरप्रशान्त रूप में करके उनकी सीमाएँ निर्धारित कर दी गयी थीं और उनके गुण-दोष तालिकाबद्ध थे। परन्तु 19वीं शती के आरम्भ में वैज्ञानिक प्रगति एवं मनोवैज्ञानिक उपलब्धियों ने साहित्य की निर्धारित मान्यताओं में युगान्तर उपस्थित किया। सामाजिक आचार-विचार एवं मान्यताओं में भी परिवर्तन हुआ और चरित्रों में अनेक जटिलताओं एवं रूपों की सृष्टि हुई। अब मानव-चरित्र कई स्तरों में विभाजित हो गया है। एक ही व्यक्ति के चरित्र में द्विव्यक्तित्व और बहुव्यक्तित्व का रूप दिखायी पड़ता है। भौतिकवादी और व्यावसायिक दृष्टि की प्रधानता होने से प्राचीन आदर्शवादी एवं नैतिक दृष्टि बहुत पीछे छूट गयी है। प्रत्येक मनुष्य अथवा मनुष्य द्वारा सम्पादित कोई विशिष्ट कार्य अथवा मनुष्य से सम्बद्ध कोई घटना ही इस मूलभाव के अन्तर्गत रहती है। घटना अथवा वातावरण को भी सजीव रूप देने के लिए, उसे प्राणमय बनाने के लिए मनुष्य को प्रतिष्ठित करना पड़ता है। निष्कर्ष यह है कि कहानी का मूलभाव चाहे जो भी हो, मानव-चरित्र की प्रतिष्ठा ही कहानी का प्रधान विषय है। कहीं मनुष्य मूलभाव से सीधे सम्बद्ध होता है और कहीं प्रकारान्तर से। कहानी में पात्र और कथावस्तु का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध होता है। दोनों मिलकर कहानी के केन्द्रीय भाव को व्यक्त करते हैं। कुछ पात्र सामान्य होते हैं और कुछ प्रतीकात्मक। सामान्य पात्रों के भी दो वर्ग होते हैं—कुछ वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और कुछ व्यक्ति का। कहानी लघु प्रसारवाली होती है। इसलिए उसमें नायक के चरित्र को ही अधिक उभारकर प्रस्तुत किया जाता है। दूसरे पात्रों के चरित्र की प्रमुखता होने पर कहानी का मूल भाव आच्छन्न हो जायगा। कहानी में उपन्यास की भाँति चरित्रांकन में वैविध्य की गुंजाइश नहीं होती। इसमें चरित्र या जीवन के किसी एक पक्ष की झलक मिलती है। किसी एक विशेष परिस्थिति में रखकर नायक की किसी एक प्रवृत्ति का उद्घाटन करना ही कहानीकार का अभीष्ट हुआ करता है। चरित्रांकन की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि चरित्र गतिशील हो और यथार्थ जीवन से सम्बद्ध हो। चरित्र-चित्रण यदि पुरानी रूढ़ियों एवं सिद्धान्तों के अनुसार किसी एक घिसी-पिटी परिपाटी से किया जायगा तो वह पत्थर की मूर्ति की तरह निर्जीव हो जायगा।

आज के बौद्धिक युग का पाठक चारित्रिक वैचित्र्य को देखना व समझना चाहता है। अन्तर्जगत् के भावात्मक संघर्ष में उसे एक विशेष प्रकार का रस मिलने लगा है। पहले की कहानियों में कुतूहल एवं जिज्ञासा जगाने और उसे तृप्त करने की प्रवृत्ति ही प्रधान थी, परन्तु आजकल का पाठक बौद्धिक दृष्टि से बहुत आगे बढ़ गया है। वह कहानी में चरित्र की सूक्ष्मता और चारित्रिक भंगिमाओं का वैविध्य देखने की आकांक्षा रखता है। इसीलिए आज की कहानियों में वैविध्य-विधायिनी मनोवृत्तियों के उद्घाटन की प्रवृत्ति अधिक दिखलायी पड़ती है। वेशभूषा, बाह्य क्रियाकलाप, शारीरिक द्वन्द्व आदि स्थूल बातें अब हमें तृप्त नहीं करतीं। आज के पाठक की इच्छा होती है कि वह विचित्र चरित्र के मनोलोक में प्रवेश कर उसके अन्तर्जगत् की झाँकी प्राप्त कर सके। तात्पर्य यह कि आज की सबसे उत्तम कहानी का आधार मनोवैज्ञानिक सत्य है। वातावरण एवं परिस्थितियों का अब कोई स्वतन्त्र महत्त्व नहीं रह गया है। वे पात्रों के सूक्ष्म मनोभावों के प्रस्तुतीकरण में योगदान करते हैं। चरित्र का युद्धस्थल, उसका सारा संघर्ष अब बाह्य से अधिक आन्तरिक हो गया है। आन्तरिक द्वन्द्वों के अनुरूप ही बाहरी घटनाएँ और क्रिया-व्यापार मुख्य रूप से प्रस्तुत किये जा रहे हैं। मनोवैज्ञानिक चरित्रांकन के साथ-साथ आज ऐसे चरित्रांकन की माँग है जो ईमानदारी के साथ मानव के यथार्थ स्वरूप की अवतारणा कर सके। चरित्रचित्रण की तीन प्रणालियाँ कहानियों में दिखलायी पड़ती हैं—वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और नाटकीय।

वर्णनात्मक प्रणाली के द्वारा लेखक स्वयं चरित्र की विशेषताओं का वर्णन करता है। विश्लेषणात्मक कहानियों में विभिन्न मानसिक स्थितियों का विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए लेखक चरित्र की विशेषताओं का उद्घटन करता है तथा सांकेतिक प्रणाली अपनाकर चरित्र के महत्त्वपूर्ण अंशों की ओर संकेत कर देता है और मूल्यांकन पाठकों पर छोड़ देता है। नाटकीय पद्धति में वार्त्तालाप और क्रिया-व्यापार की प्रधानता होती है।

## ➡ कथोपकथन

कथोपकथन के मुख्यतः दो कार्य होते हैं—पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उद्घाटित करना और कथा-प्रवाह को आगे बढ़ाना। कहानी में कथोपकथन को पूर्ण नियन्त्रित, चमत्कारयुक्त एवं लघुप्रसारी होना चाहिए। कहानी के आरम्भ में जिज्ञासा और कुतूहल को जगाने के लिए बहुधा नाटकीय संवादों की योजना करनी पड़ती है। परिस्थिति एवं पात्रों को जोड़ने के लिए और आन्तरिक भावों एवं मनोवृत्तियों के उद्घाटन के लिए संवाद-तत्त्व (कथोपकथन) की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। कथोपकथन में मात्रा और औचित्य पर भी ध्यान रखना जरूरी है। आवश्यकता से अधिक वार्त्तालाप उबा देनेवाला होता है और औचित्य का विचार न करके की गयी संवाद-योजना कहानी की प्रभावान्विति में बाधा डालती है। अतः पात्र की शिक्षा-दीक्षा, देश-काल और सामयिक स्थिति के अनुरूप ही संवादों की योजना की जानी चाहिए।

चरित्रप्रधान कहानियों में व्यक्तित्व और उसकी प्रवृत्तियों का परिचय देने के लिए कथोपकथन विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। वार्त्तालाप द्वारा ही चारित्रिक विशेषताएँ प्रकट होती हैं। पात्र का अन्तरंग वाणी के माध्यम से उद्घाटित होता है। इसके लिए भावानुरूप वाक्य-

योजना एवं शब्द-चयन अपेक्षित है। कही जानेवाली बात किस युग, काल अथवा देश की है, इसका भी कथोपकथन की योजना करते समय ध्यान रखना आवश्यक है। अभिवादन, सम्बोधन, प्रेम, क्रोध आदि को व्यक्त करने के लिए औचित्य एवं मर्यादा को ध्यान में रखकर भाषा का प्रयोग आवश्यक है। इसी प्रकार विभिन्न वर्गों जैसे मजदूर, किसान, अध्यापक, ग्रामीण और नगरीय चरित्रों की दृष्टि से भी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। व्यावहारिक एवं भावात्मक स्थलों के अनुसार विषयानुरूप संगति बैठानेवाली वाक्य-योजना से ही कहानी सुरुचिपूर्ण एवं मार्मिक बनती है। कथानक, विषय-प्रतिपादन एवं पात्र-योजना की दृष्टि से कथोपकथन की भाषा को व्यावहारिक स्वरूप देना पड़ता है। मुहावरों का सामाजिक एवं प्रसंगानुकूल प्रयोग भी कहानीकार के लिए आवश्यक है। शिष्ट हास्य और व्यंग्य से समन्वित होकर कथोपकथन सजीव हो जाता है।

कथोपकथन के प्रायः दो रूप मिलते हैं—विशुद्ध नाटकीय और विश्लेषणात्मक। विशुद्ध नाटकीय ढंग से लेखक अपनी ओर से कुछ भी नहीं जोड़ता। दो पात्र परस्पर वार्त्तालाप करते हैं। विश्लेषणात्मक ढंग में लेखक अपनी ओर से पात्रों के सम्बन्ध में उनकी मुद्राओं और भाव-भंगिमाओं का उद्घाटन करने के लिए कथोपकथन की योजना करता है। प्रथम प्रकार के कथोपकथन की प्रणाली प्रेमचन्द की कहानी 'सुजान भगत' और दूसरे प्रकार के कथोपकथन का उदाहरण भगवतीचरण वर्मा की 'प्रायश्चित्त' कहानी में मिलता है।

## ➡ वातावरण

वातावरण के अन्तर्गत देश-काल और परिस्थिति आती है। लेखक घटना और पात्रों से सम्बन्धित परिस्थितियों का चित्रण सजीव रूप में करता है। सम्पूर्ण परिस्थितियों की योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से की जाती है। प्रकृति, ऋतु, दृश्य आदि का अत्यन्त संक्षिप्त और सांकेतिक रूप में वर्णन करके किसी घटना अथवा परिणाम को सजीव एवं यथार्थ बना दिया जाता है। प्रेमचन्द की 'सुजान भगत' और प्रसाद की 'पुरस्कार' कहानी में इस प्रकार की योजनाएँ मानवीय प्रवृत्तियों एवं परिस्थितियों के अनुकूल की गयी हैं। वातावरण के दृश्य-विधान से न केवल चरित्र की मनःस्थिति पर प्रकाश पड़ता है, वरन् प्रेम, शोक आदि व्यापार सजीव बन जाते हैं। 'उसने कहा था' कहानी में वातावरण का यह चित्र लहनासिंह की मृत्यु की ओर संकेत देते हुए परिस्थिति को कितना बिम्बग्राही बना देता है—"लड़ाई के समय चाँद निकल आया था, ऐसा चाँद जिसके प्रकाश से संस्कृत कवियों का दिया हुआ क्षयी नाम सार्थक होता है। और हवा ऐसी चल रही थी, जैसी बाणभट्ट की भाषा में दन्तवीणोपदेशाचार्य कहलाती है।"

मनुष्य का रचनात्मक विकास और ह्रास बहुत कुछ वातावरण की ही देन है। संवेदना यदि कहानी की आत्मा है तो वातावरण उसका शरीर। 'आकाशदीप', 'पुरस्कार', 'बिसाती', 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी', 'रोज' और 'मक्रील' आदि कहानियाँ इस कथन की सार्थकता सिद्ध करती हैं। वातावरण की दृष्टि से नयी कहानियों में 'परिन्दे', 'मिस पाल' तथा 'मलबे का मालिक' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

वातावरण के प्रस्तुतीकरण की दो पद्धतियाँ हैं। पहले प्रकार में विषयारम्भ प्रकृति चित्रण से किया जाता है। इस प्रकार के प्रकृति-चित्रण में कहानी का प्रतिपाद्य सम्पूर्णतः ध्वनित हो जाता है। प्रकृति के खण्ड-चित्रों के विधान के द्वारा कथानक के अर्थ की विवृत्ति होती है और प्रतीक-पद्धति से कथानक का धरातल रसात्मक हो जाता है। प्रकृति का आधार पात्रों की स्थिति को प्राणमय बना देता है।

दूसरे प्रकार की पृष्ठभूमि में देश-काल और परिस्थितियों का आञ्चलिक और स्थानीय रंग उपस्थित किया जाता है। कृतिकार का रचना-कौशल इस बात में है कि वह जीवन की विभिन्न वस्तु-स्थितियों को देश और काल के परिवेश में इस प्रकार प्रस्तुत करे कि स्थानीय चित्र प्रभावपूर्ण हो जाय। वृन्दावनलाल वर्मा की कहानी 'शरणागत' में बुन्देलखण्ड की झलक और उपेन्द्रनाथ अश्क की कहानी 'डाची' में प्रान्तीय भाषा, रीति-रिवाज, वेश-भूषा और क्रिया-कलाप का ऐसा ही चित्र-विधान दिखलायी पड़ता है। इसी प्रकार विभिन्न तत्त्वों के सामूहिक संगठन की दृष्टि से परिवेश की परिधि भी निर्धारित की जाती है। कहानी के इतिवृत्त को विभिन्न परिच्छेदों एवं परिस्थितियों में विभाजित कर दिया जाता है। प्रत्येक विच्छेद का अपना एक अलग परिवेश होता है, जो अपने में पूर्ण होता है।

वातावरण कहानी के इष्ट-प्रतिपादन के लिए और प्रभाव की एकता स्थापित करने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। करुणा, आश्चर्य, प्रेम, वात्सल्य आदि की सरसता वातावरण के प्रभाव से मुखरित होती है। वातावरण का प्रभाव मानसिक होता है। वह कथ्य की प्रेषणीयता के लिए पाठक के मानस को तैयार करता है। कुछ कहानियों में तो वातावरण इतना प्रधान होता है कि वह अंगी का रूप धारण कर लेता है। ऐसी वातावरण-प्रधान कहानियाँ प्रभाव की दृष्टि से बड़ी सजीव और कल्पनाश्रयी होती हैं।

## ➡ भाषा-शैली

भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करने का माध्यम भाषा है और अभिव्यक्ति का ढंग शैली है। सरल एवं बोधगम्य भाषा के द्वारा ही कहानी को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। भाषा की क्लिष्टता और दुरूहता से कथन का अभिप्राय स्पष्ट नहीं हो पाता और

कहानी अस्वाभाविक हो जाती है। काल और पात्र की यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए भाषा में स्वाभाविकता अपरिहार्य है। भाषा जितनी ही सरल और भावाभिव्यञ्जक होगी, उतनी ही प्रभावशाली होगी। प्रेमचन्द की कहानियों का प्रभाव पाठकों पर इसीलिए पड़ता है कि उनकी भाषा अत्यन्त सरल और सरस है।

भाषा को समर्थ और प्रभावयुक्त बनाने के लिए शब्दों के चयन पर विशेष ध्यान देना पड़ता है। चित्रात्मकता एवं प्रवाहमयता के साथ-साथ अर्थ की उपयुक्ता भी अपेक्षित है। स्वाभाविक भाषा संवेदनशील होती है। विभिन्न सन्दर्भों में कौन-सा शब्द सही चेतना एवं अर्थ को व्यंजित कर सकता है, इसका चुनाव रचनाकार की कलात्मक संवेदना पर निर्भर करता है। कहानी का आकार अत्यन्त लघु होता है, अतएव सूक्ष्म सन्दर्भों को स्पष्ट करने के लिए भाषा में संकेतों का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार की सांकेतिक भाषा से व्यञ्जना-शक्ति बढ़ जाती है। आज की कहानियों में अनुभूति की प्रामाणिकता को चित्रित करने के लिए सांकेतिक भाषा का प्रयोग बढ़ गया है।

साधारण से साधारण कथानक में भी कुशल लेखक अपनी सुन्दर शैली से प्राण-प्रतिष्ठा कर देता है। शब्दों की सम्मोहन-शक्ति के द्वारा वह पाठकों को मन्त्रमुग्ध कर देता है। आधुनिक कहानियों में मनस्तत्त्वों के निरूपण और अवचेतन मन के विभिन्न स्तरों को खोलने के लिए विभिन्न प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया जा रहा है। इसी प्रकार प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से कुछ नयी विधियों का प्रयोग किया जाने लगा है। कहीं कहानीकार परिदृश्य पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता हुआ कमेण्टरी की विधि अपनाता है (अमरकान्त की 'घुड़सवार' कहानी) और कहीं 'फ्लैश बैक' यानी पूर्वदीप्ति की विधि का अनुसरण करते हुए पूर्व घटित अंश को सहज रूप से वर्तमान से सन्दर्भित करके प्रस्तुत करता जाता है। शिवप्रसाद सिंह की **'कर्मनाशा की हार'** इसका सशक्त उदाहरण है। दूरवीक्षण और अन्वीक्षण की विधियाँ भी वैज्ञानिक जगत् के अनुभव से ग्रहण की गयी हैं। एक में कहानीकार दूरस्थ वस्तु को निकटस्थ के रूप में चित्रित करता है, दूसरी में वह वस्तु की उस सूक्ष्मता को बहुत बारीकी से प्रस्तुत करता है जो साधारणतः लोगों को दिखायी नहीं देती। भीष्म साहनी की कहानी 'अहं ब्रह्मास्मि' रिपोर्ताज शैली में लिखी गयी ऐसी ही कहानी है जो आधुनिक युग में एक नयी साहित्यिक विधि से सम्बद्ध है।

## ➡ उद्देश्य

कहानी का उद्देश्य पुष्प में गन्ध की भाँति छिपा रहता है। प्राचीन कहानियों का उद्देश्य आध्यात्मिक विवेचना अथवा नैतिक उपदेश प्रदान करना था। कालान्तर में मनोरञ्जन करना अथवा महान् चरित्र के शौर्य आदि गुणों का प्रदर्शन करना कहानी का उपजीव्य बन गया। मनोरंजन अथवा उपदेश के साथ ही शाश्वत सत्य का उद्घाटन करना भी कथा का एक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन है।

प्रेमचन्द-युग में आदर्श की स्थापना और शाश्वत सत्य का उद्घाटन कहानी का प्रमुख उद्देश्य बन गया था।

कोई भी घटना, परिस्थितियाँ और कार्य लेखक के लिए निरपेक्ष रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। प्रत्येक कहानी के मूल में कोई केन्द्रीय भाव अवश्य छिपा होता है, जो कहानी का मौलिक आधार बनता है। एक ही घटना को लेकर अनेक प्रकार की कहानियाँ लिखी जा सकती हैं, परन्तु प्रत्येक का दृष्टिकोण भिन्न होने के कारण कथा का रूप बदल जाता है। यही कहानीकार की मौलिकता है। कहानी का केन्द्रीय भाव ही वह हेतु या उद्देश्य है, जिसके लिए कहानी लिखी जाती है। संवेदना की विशिष्ट इकाई के मूल में लेखक का एक निर्दिष्ट लक्ष्य होता है। प्रभावान्विति और संवेदनात्मक इकाई के कारण ही कहानी मुक्तक काव्य और एकांकी की समीपवर्ती कही जाती है।

# हिन्दी कहानी की विकास-यात्रा

देश में कहानी का आरम्भ वैदिक युग में ही हो गया था। ऋग्वेद के यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी आदि के संवाद, उपनिषदों के रूपात्मक व्याख्यान, नहुष, ययाति आदि के उपाख्यान तथा ऋषियों-मुनियों की कथाएँ भारतीय कहानी के प्राचीनतम रूप हैं। लौकिक संस्कृत में उपदेश और नीतिप्रधान कथाओं का प्राचुर्य मिलता है। वृहद्कथामंजरी, कथासरित्सागर, पंचतन्त्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थ तथा मुंज, भोज, विक्रमादित्य आदि के शौर्य और प्रणय की गाथाओं को लेकर लिखी गयी रचनाएँ कहानी के ही प्राचीन रूप हैं। संस्कृत के पश्चात् पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं में बौद्ध और जैन धर्म सम्बन्धी अनेकानेक कथायें लिखी गयी हैं। अपभ्रंश भाषा में चरित्र-काव्यों तथा कथा-काव्यों का लम्बा इतिहास मिलता है।

हिन्दी में आधुनिक कहानी के उदय के पूर्व प्राचीनकाल में संस्कृत और प्राकृत की परम्परा में कथा-साहित्य की रचना हुई। इसका आरम्भिक रूप काव्यमय है। इस कथा-साहित्य की एक परम्परा चारणों तथा अन्य कवियों द्वारा विकसित हुई, जिसमें ऐतिहासिक,

पौराणिक कथा-नायकों में कल्पना का पुट देकर उनके चरित्र-श्रवण से पुण्य का लोभ दिखाया गया। कथा-साहित्य की दूसरी परम्परा सूफियों द्वारा विकसित हुई। मृगावती, मधु-मालती, पद्मावत, चित्रावली, ज्ञानदीप, इन्द्रावती आदि ऐसे ही प्रेमाख्यानक काव्य हैं।

हिन्दी कहानियों का तीसरा प्राचीन रूप 'किस्सा', 'वृत्तान्त' आदि के रूप में मिलता है। भारतेन्दुयुगीन पत्र-पत्रिकायें इस प्रकार की कहानियों से भरी पड़ी हैं। सिंहासनबत्तीसी, बैतालपचीसी, माधवानल-कामकन्दला, राजा भोज का सपना, रानी केतकी की कहानी, देवरानी-जेठानी आदि इसी प्रकार की कहानियाँ हैं। इसी प्रकार संस्कृत-भाषा में कथा-साहित्य की जो पद्धति प्रारम्भ हुई, वह किंचित् परिवर्तन के साथ हिन्दी में भारतेन्दु तक चली आयी है। ये कहानियाँ, कथा, आख्यायिका, वृत्तान्त, वार्त्ता, किस्सा आदि अनेक रूपों में लिखी जाती रही हैं। इनका कोई स्वरूप भी निर्धारित नहीं हो सकता। ये कहानियाँ या कथाएँ गद्य-पद्य दोनों माध्यमों से लिखी जाती थीं। इनमें अप्राकृतिक तथा अतिप्राकृतिक तत्त्वों का प्राधान्य रहता था। भूत-प्रेत, पशु-पक्षी आदि कथा के विकास में सहायक होते थे। घटनाएँ नितान्त अविश्वसनीय और आश्चर्यजनक रहती थीं। इनमें स्वाभाविकता का अभाव था।

आधुनिक कहानी परम्परा और स्वरूप की दृष्टि से प्राचीन कहानी से भिन्न है। आज की कहानी का एक निश्चित लक्ष्य होता है। वह अस्वाभाविक घटनाओं और अतिमानवीय पात्रों का घटाटोप नहीं होती है। आज की कहानी जीवन के बहुत निकट आ गयी है। वह जीवन में यथार्थ की प्रतिच्छाया है। वह आज अभिव्यक्ति का सर्वाधिक सशक्त माध्यम बन गयी है। आज की कहानी मानव जीवन के किसी एक पक्ष अथवा घटना का सूक्ष्मता के साथ चित्रण करती है। इसका सम्बन्ध सामयिक जीवन से होता है। वह यथार्थ को प्रस्तुत करती है।

यूरोपीय कहानी का प्रभाव हिन्दी-कहानी पर आरम्भ में बंगला-कहानी के माध्यम से पड़ा। अमेरिका और यूरोप में आधुनिक कहानी का जन्म 19वीं शताब्दी के प्रथम चरण में हो गया था। वहाँ के प्रारम्भिक कहानी-लेखकों में हाफमैन, जेकब, ग्रिम, हाथर्न, पो, ब्रेटाहार्ट आदि का नाम लिया जाता है। पो ने सर्वप्रथम कहानी का स्वरूप और उसके लक्षण निर्धारित किये। इसी समय रूस में गांगोल, तुर्गनेव आदि कहानियाँ लिख रहे थे।

आधुनिक हिन्दी-कहानी का प्रारम्भ एक प्रकार से द्विवेदीकाल में हुआ। बंगला-भाषा से सम्पर्क, नयी शिक्षा-पद्धति, सामाजिक एवं राजनीतिक आन्दोलन, गद्य के परिष्कार आदि के परिणामस्वरूप इस विधा का सूत्रपात हुआ। सरस्वती, इन्दु, सुदर्शन आदि पत्रिकायें हिन्दी कहानियों की जननी हैं।

हिन्दी की प्रथम आधुनिक कहानी कौन है, इस पर विवाद है। इस सम्बन्ध में सात कहानियों के नाम गिनाये जाते हैं—रानी केतकी की कहानी, इन्दुमती, गुलबहार, प्लेग की चुड़ैल, ग्यारह वर्ष का समय, पण्डित और पण्डितानी तथा दुलाईवाली। रचनाकाल की दृष्टि से इनमें रानी केतकी की कहानी (इंशाअल्ला खां) सबसे पुरानी है। किन्तु कहानी-कला की दृष्टि से उसको आधुनिक नहीं कहा जा सकता। इसकी रचना प्राचीन कथा पद्धति पर हुई है। कथानक, पात्र तथा भाषा सभी इसे प्राचीन कथाओं के निकट ले जाते हैं। शेष छह कहानियों में किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' प्रथम है। यह सन् 1900 में 'सरस्वती' में छपी थी। आरम्भ में कुछ आलोचक इसे मौलिक कहानी नहीं मानते थे। वे उसे शेक्सपीयर के 'टेम्पेस्ट' का रूपान्तर प्रमाणित करते थे और रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' अथवा बंग-महिला की 'दुलाईवाली' को हिन्दी की प्रथम कहानी मानते थे। किन्तु अब यह स्पष्ट हो गया है कि 'इन्दुमती' एक मौलिक कहानी है। अतः यह हिन्दी की प्रथम आधुनिक कहानी मानी जा सकती है।

द्विवेदी-युग में मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार की कहानियाँ लिखी गयीं। एक ओर संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी आदि भाषाओं से कहानियों के अनुवाद हुए, दूसरी ओर जीवन की झाँकी उपस्थित करनेवाली आदर्शवादी और यथार्थवादी मौलिक कहानियों का भी सृजन हुआ। इस युग के प्रमुख कहानीकारों में किशोरीलाल गोस्वामी, गिरिजाकुमार घोष, गोपालराम गहमरी, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', जयशंकर प्रसाद और प्रेमचन्द के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके द्वारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक आदि सभी विषयों पर कहानियाँ लिखी गयीं। इस काल में घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान, वातावरणप्रधान तथा भावप्रधान कहानियों की अधिकता रही है। शैली की दृष्टि से इस समय आत्म-कथात्मक से लेकर स्वप्न-शैली तक में कहानियाँ लिखी गयी हैं। कहानीकारों में पार्वतीनन्दन, सूर्यनारायण दीक्षित तथा रूपनारायण मुख्य हैं। गदाधरसिंह ने 'कादम्बरी' का, जगन्नाथप्रसाद त्रिपाठी ने 'हर्षचरित' और 'रत्नावली' का तथा सूर्यनारायण दीक्षित ने 'जैमिनीकुमार' का अनुवाद किया। बंगला की कहानियों का अनुवाद पार्वतीनन्दन, बंग महिला आदि ने प्रस्तुत किया।

मौलिक कहानीकारों में किशोरीलाल ने सामाजिक कहानियाँ लिखीं। 'चन्द्रिका', 'इन्दुमती' और 'गुलबहार' आपके कहानी-संग्रह हैं। इनकी कहानियों पर जासूसी उपन्यासों का प्रभाव देखा जा सकता है। रामचन्द्र शुक्ल मूलतः निबन्धकार और आलोचक के रूप में प्रसिद्ध हैं, किन्तु उन्होंने 'ग्यारह वर्ष का समय' नामक एक कहानी भी लिखी। इसी प्रकार महावीरप्रसाद द्विवेदी ने कुछ कहानियाँ लिखीं जो 'सरस्वती' के विभिन्न अंकों में प्रकाशित हुईं। 'स्वर्ण की झलक' आपकी प्रसिद्ध कहानी है। इस समय के जासूसी कहानियाँ लिखनेवालों में गोपालराम गहमरी अग्रगण्य हैं। 'त्रिवेणी', 'तीन तहकीकात' तथा 'गल्पपंचक' आपके कहानी-संग्रह हैं। इन कहानियों में उपदेश की प्रवृत्ति पायी जाती है।

द्विवेदी-युग के उत्तरार्द्ध में हिन्दी-कहानी का उत्कर्ष दिखायी पड़ता है। इसमें कहानी-कला का परिष्कार होता है, शिल्प में प्रौढ़ता आती है और घटनाओं की अपेक्षा चरित्र को महत्त्व मिलता है। गुलेरी जी की प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' इसी समय 'सरस्वती' में छपी। इसके अतिरिक्त उनकी दो अन्य कहानियाँ 'सुखमय जीवन' तथा 'बुद्धू का काँटा' भी प्रकाश में आयी। 'उसने कहा था' कहानी कलात्मक प्रौढ़ता, नये शिल्प, सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण आदि की दृष्टि से अपने समय तक की सर्वोत्कृष्ट कहानी है। चतुरसेन शास्त्री इस युग के अन्तिम चरण के कहानीकार हैं। 'रजकण', 'अक्षत', 'बाहर भीतर', 'दुखवा मैं कासे कहूँ' आदि आपके प्रमुख संग्रह हैं। आपकी कहानियाँ सामाजिक यथार्थ को लेकर चली हैं। प्रसाद और प्रेमचन्द ने भी इसी समय हिन्दी-कहानी-जगत् में प्रवेश किया।

सन् 1911 में 'इन्दु' नामक पत्रिका का प्रकाशन हुआ और उसी वर्ष प्रसाद की पहली कहानी 'ग्राम' प्रकाशित हुई। उसके बाद प्रसाद जी 'इन्दु' तथा अन्य पत्रिकाओं में निरन्तर कहानियाँ लिखते रहे। ये कहानियाँ पाँच संग्रहों—छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी और इन्द्रजाल में संकलित हैं। प्रसाद जी की कहानियों की पृष्ठभूमि सांस्कृतिक है जिसमें भावुकता, कल्पना और रोमान्स का समन्वय मिलता है। वे प्रेम के उन्मुक्त रूप के पक्षधर थे। उनकी कहानियों में प्रेम के विविध पक्ष और नारी-चरित्र के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। प्रसाद जी का नाटककार-रूप भी उनकी कहानियों में देखा जा सकता है। 'आकाशदीप', 'पुरस्कार' आदि कहानियों में नाटकीय संवादों और अभिनयात्मक पद्धति से पात्रों के चरित्र विकसित होते हैं। उनकी कहानियों की भाषा संस्कृतनिष्ठ और काव्यात्मक है। भारतीय संस्कृति के परिवेश में लिखी गयी उनकी कहानियाँ आदर्शवादी वर्ग में आती हैं।

हिन्दी में प्रेमचन्द की पहली कहानी 'सौत' सन् 1915 में 'सरस्वती' में छपी थी, यद्यपि उसके पूर्व वे धनपतराय और नवाबराय के नाम से उर्दू में कई कहानियाँ लिख चुके थे। सन् 1936 तक उन्होंने लगभग 300 कहानियों की रचना की, जो हिन्दी की प्रमुख पत्रिकाओं (सरस्वती, माया, जागरण, मर्यादा, माधुरी, हंस, विशाल भारत आदि) में छपती रहीं। प्रेमचन्द अपने युग के श्रेष्ठतम कहानीकार थे। उन्होंने हिन्दी कहानी को विस्तृत आयाम दिया और कहानी को केवल मनोरंजन तक सीमित न रखकर जीवन से जोड़ा। कथानक के आधार पर उनकी कहानियों के तीन वर्ग बनाये जा सकते हैं– घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान और भावप्रधान। उन्होंने अपने समय तक प्रचलित सभी शैलियों को अपनाया तथा सामाजिक, राजनीतिक, पौराणिक, ऐतिहासिक आदि सभी विषयों पर कहानियाँ लिखीं। प्रेमचन्द की प्रारम्भिक कहानियों में घटनाओं की प्रधानता है। दूसरे चरण की कहानियों में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं को उठाकर उनका आदर्शमूलक समाधान खोजने की चेष्टा की गयी है।

राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह इस युग के आदर्शवादी कहानीकार हैं। 'कानों में कँगना' उनकी प्रसिद्ध कहानी है। विश्वम्भरनाथ और ज्वालादत्त शर्मा भी इसी युग के कहानीकार हैं। विश्वम्भरनाथ की कहानियों का एक संग्रह 'घूँघटवाली' उपलब्ध है। विश्वम्भरनाथ ने नारी-जीवन के विभिन्न पक्षों को अपनी कहानियों में उद्घाटित किया है। शर्मा जी भी प्रेमचन्द की परम्परा के कहानीकार हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक कुरीतियों और अंधविश्वासों पर प्रबल कशाघात किया है। उनका दृष्टिकोण सुधारवादी था। वृन्दावनलाल वर्मा इस युग के ऐतिहासिक कथाकार हैं। इनकी कहानियों में बुन्देलखण्ड का जीवन उभरकर आया है। 'राखी', 'कलाकार का दण्ड', 'युद्ध के मोर्चे से' आदि इनकी लोकप्रिय कहानियाँ हैं। जी० पी० श्रीवास्तव की कहानियाँ हास्य-व्यंग्य की शैली में लिखी गयी हैं। 'लम्बी दाढ़ी' उनकी अच्छी कहानियों का संग्रह है।

द्विवेदी-युग के पश्चात् हिन्दी-कहानी में शिल्प एवं विषय दोनों दृष्टियों से परिवर्तन होता है। सामयिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ हिन्दी-कहानी को भी प्रभावित करती हैं। राजनीति के क्षेत्र में यह समय अत्यन्त कोलाहल एवं अशान्ति का था। गाँधी के नेतृत्व में स्वाधीनता-आन्दोलन प्रबल होता जा रहा था। उधर सरकारी दमन भी उग्र होता जा रहा था। सन् 1914-19 में प्रथम विश्वयुद्ध हुआ। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों पर उसका व्यापक प्रभाव, सन् 1930 की गोलमेज परिषद्, सन् 1939 में काँग्रेस मन्त्रिमण्डलों द्वारा त्यागपत्र, द्वितीय विश्वयुद्ध, सन् 1942 की जनक्रान्ति और 15 अगस्त, 1947 को भारत का स्वाधीन होना इन घटनाओं की पृष्ठभूमि में हिन्दी-कहानी का स्वरूप-परिवर्तन स्वाभाविक था। फलतः घुटन, निराशा, कुण्ठा का स्वर कहानी में आ गया। इस समय सामाजिक युग-बोध और यथार्थपरक कहानियाँ लिखी गयीं। कुछ कहानियाँ आत्मपरक दृष्टिकोण को भी लेकर लिखी गयीं। इस युग की कहानियाँ कथानक की दृष्टि से दो प्रकार की हैं—स्थूल कथानकवाली कहानियाँ, सूक्ष्म कथानकवाली कहानियाँ। विषय की दृष्टि से इस युग में सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक, सैद्धान्तिक और ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी गयीं। इस युग की कहानियों का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्षण है–उनका शैलीगत वैविध्य। नवीनता की दृष्टि से नाटकीय शैली (यशपाल : उत्तराधिकारी, रांगेय राघव : मृत्यु), पत्रात्मक शैली (अज्ञेय : सिग्नलर), डायरी-शैली (इलाचन्द्र जोशी : मेरी डायरी के नीरस पृष्ठ), प्रतीक-शैली (जैनेन्द्र : पाजेब), स्वगत-शैली (जैनेन्द्र : क्या हो) तथा स्वप्न-शैली (अज्ञेय : चिड़ियाघर) विशेष ध्यान आकर्षित करती हैं।

इस युग के प्रमुख कहानीकार हैं—जैनेन्द्रकुमार, सियारामशरण गुप्त, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, उपेन्द्रनाथ अश्क, रांगेय राघव, विष्णु प्रभाकर, अमृतराय आदि। जैनेन्द्रकुमार बुद्धिवादी लेखक हैं। उनकी कहानियों में व्यक्तिगत चरित्र एवं जीवन-दर्शन का वैशिष्ट्य मिलता है। उनके पात्रों का चरित्र-विश्लेषण मानसिक द्वन्द्व एवं घात-प्रतिघात से हुआ है। सियारामशरण गुप्त आदर्शवादी कहानीकार हैं। वे पिछली परम्परा के अधिक निकट हैं। उनकी कहानियों का संग्रह 'मानसी' नाम से प्रकाशित हुआ है। अज्ञेय मनोवैज्ञानिक कहानीकार हैं। इनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं—'विपथगा', 'परम्परा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी' और 'जयदोल'। अज्ञेय फ्रायड के दर्शन से बहुत प्रभावित हैं, इसीलिए उनकी कहानियों में सेक्स सम्बन्ध, कुण्ठा और घुटन का मनोविश्लेषण मिलता है। यशपाल मार्क्सवादी विचारधारा के प्रगतिशील लेखक हैं। वर्ग-वैषम्य और आर्थिक-वैषम्य उनकी कहानियों में मुख्य रूप से उभरे हैं। भगवतीचरण वर्मा ने अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन को यथार्थवादी अभिव्यक्ति दी है। उनकी कहानियों का धरातल अपेक्षाकृत वैयक्तिक एवं बौद्धिक है।

अमृतलाल नागर यथार्थवादी कहानीकार हैं। ग्राम्य जीवन की नग्न और वास्तविक परिस्थितियाँ उनकी कहानियों में पायी जाती हैं। उनकी शैली व्यंग्यात्मक है। अश्क जी की कहानियों में निम्न-वर्ग का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। 'पलंग' उनकी कहानियों का अच्छा संग्रह है। उन्होंने समस्या प्रधान एवं मनोवैज्ञानिक कहानियाँ भी लिखी हैं। रांगेय राघव की कहानियाँ प्रगतिशील दृष्टिकोण से प्रभावित हैं। अमृतराय भी समाजवादी विचारधारा के कहानीकार हैं। 'एक साँवली लड़की', 'कस्बे का एक दिन' आदि उनकी श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

स्वतन्त्रता के बाद आधुनिक कहानी में एक युगान्तर आया है। नयी कहानी के प्रथम चरण में ग्राम-कथाओं में भी ठहराव आ गया था। मनोवैज्ञानिक फार्मूलों अथवा नारेबाजी से भरा यथार्थवाद अब आकर्षण की वस्तु नहीं रह गया। इसी समय ग्रामीण क्षेत्रों से आये लेखकों ने ताजगी से भरे ग्राम-जीवन को नये शैली-शिल्प में प्रस्तुत किया। उनकी कहानियाँ पहले की कहानियों से भिन्न थीं। इन कथाकारों ने खण्डित जीवन की विभिन्न समस्याओं को लेकर कहानी के क्षेत्र में शिल्प और विषय की दृष्टि से नये प्रयोग किये हैं।

युगीन परिस्थितियों ने कहानी के स्वरूप-निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। स्वतन्त्रता के बाद देश के समक्ष अनेक समस्याएँ उपस्थित हो गयी हैं। सब कुछ पुराना ध्वस्त हो रहा और नयी रूप-रेखा प्रस्तुत हो रही है। सामाजिक जीवन और विचार दोनों ही क्षेत्रों में उत्क्रान्ति हो रही है। फलतः साहित्यकार के ऊपर नयी जिम्मेदारियाँ आयी हैं। प्रतिदिन स्थितियों में परिवर्तन हो रहा है और इस नवीन सामयिक सन्दर्भ से नयी कहानी भी प्रभावित है। कहानीकारों के सामने भाव-बोध के नवीन स्तर, सौन्दर्य-बोध के नये आयाम और कल्पना के नये क्षितिज उद्घाटित हो रहे हैं।

प्रेमचन्दोत्तर कहानियों में पिछले बीस वर्षों तक शहरी मध्यवर्गीय एवं निम्न-मध्यवर्गीय जीवन का चरित्र अंकित किया जाता रहा है। बाद के कथाकारों का ध्यान ग्रामीण सन्दर्भों की ओर गया। गाँव का जीवन तेजी से बदल रहा है। इस परिवर्तित जीवन-धरातल का स्वरूप आञ्चलिक कथाओं में बड़े सजीव और यथार्थ रूप में उभरता रहा है। स्वातन्त्र्योत्तर काल में कहानी के अन्तर्गत यान्त्रिक जड़ता, व्यक्ति की कुण्ठा, मानसिक उलझन, संक्रमणकालीन मनःस्थिति आदि का चित्रण हो रहा है। नयी पीढ़ी के इन कथाकारों के प्रथम वर्ग में रेणु, मार्कण्डेय, भारती, निर्गुण, शैलेश मटियानी, शिवप्रसाद सिंह, शेखर जोशी, शिवानी आदि प्रमुख हैं। दूसरे वर्ग के कहानीकारों में मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी, निर्मल वर्मा, रघुवीर सहाय, भीष्म साहनी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें नगर-जीवन की जटिलताओं का विशेष अंकन हुआ है। इस युग की कहानियों में भोगे हुए जीवन को अभिव्यक्ति मिली है तथा संवेदना और सूक्ष्म निरीक्षण के सशक्त धरातल प्रकट हुए हैं। शहर और गाँव की भेदक-रेखा छोटी हुई है। शब्द-प्रयोग और शैली का तौर-तरीका बदला है। बिम्ब और सांकेतिकता के नये सन्दर्भ दिखलायी पड़ते हैं।

नयी कहानी का नया आन्दोलन जन्म ले रहा है और नये एवं पुराने के विवाद का दौर चल रहा है। आरम्भ में कहानी का जो शिल्प स्वीकार किया गया था, उसका उत्तरोत्तर विकास हुआ है। साठोत्तरी पीढ़ी के कहानीकारों की दृष्टि निःसन्देह अधिक खरी और प्रश्नात्मक है। ज्ञानरंजन की 'घण्टा', काशीनाथ सिंह की 'सुख', दूधनाथ सिंह की 'रक्तपात', रवीन्द्र कालिया की 'नौ साल छोटी पत्नी', महेन्द्र भल्ला की 'एक पति के नोट्स' आदि कहानियाँ युग के नये भयावह विडम्बनापूर्ण सम्बन्धों का साक्षात्कार करती हैं। गिरिराज किशोर, विजयमोहन सिंह, गोविन्द मिश्र, ममता कालिया, प्रयाग शुक्ल आदि की कहानियाँ आज के जटिल सन्दर्भों को उजागर करती हैं। इस प्रकार आज की हिन्दी कहानी शिल्प और कथ्य दोनों दृष्टियों से विश्व की कहानियों के समकक्ष आ गयी है।

●●●

# संकलित कहानियों का सारांश

## बलिदान

बलिदान कहानी जमींदारी के दिनों की एक काश्तकार किसान गिरधारी की कहानी है। ग्रामीण क्षेत्रों में धनवान ही प्रभावशाली होता है। गिरधारी के पिता हरखू की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। उनकी पाँच बीघा जमीन कुएँ के निकट, खाद-पाँस से लदी हुई मेड़-बाँध से ठीक थी। उनमें तीन-तीन फसलें पैदा होती थीं। समय बदलता है। हरखू बीमार पड़ गया। पाँच महीने कष्ट भोगने के बाद ठीक होली के दिन उसकी मृत्यु हो गयी। गिरधारी ने बड़ी धूमधाम से पिता की अन्तिम क्रिया कराई। कुछ दिनों के बाद जमींदार ओंकारनाथ ने गिरधारी को बुलाकर कहा कि नजराना देकर जमीन अपने पास रखो, हम लगान नहीं बढ़ाएँगे। वैसे तुम्हारी जमीन लेने के लिए गाँव के कई लोग दूना नजराना और लगान देने के लिए तैयार हैं। नजराना सौ रुपये से कम न होगा। गिरधारी उदास और निराश होकर घर लौट आया। वह सभी विकल्पों पर सोचता रहा किन्तु सौ रुपये की व्यवस्था करना असम्भव हो गया। तब जो होना था, वही हुआ। गाँव के ओंकारनाथ ने उसकी जमीन अपने नाम करा लिया। उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला, ऐसा लगा उसका बाप हरखू आज ही मरा है। वह अब तक गृहस्थ था, समाज में मान था, उसकी मर्यादा थी। अब उसे मजदूरी करनी पड़ेगी। कुछ ही दिनों में उसके बैल भी बिक गये जिनकी चिन्ता उसे अपने से अधिक थी। बैलों के चले जाने के बाद वह अन्दर से टूट गया। रात को गिरधारी ने कुछ नहीं खाया। चारपायी पर पड़ा रहा। सुबह उसकी पत्नी ने उसे चारों तरफ ढूँढ़ा किन्तु वह कहीं नहीं मिला। चारों ओर खोज होने लगी, पर गिरधारी का पता नहीं चला। गिरधारी को गायब हुए 6 महीने बीत गये। एक दिन सुबह उसकी पत्नी सुभागी ने देखा कि गिरधारी बैलों के नाँद के पास सिर झुकाये खड़ा है। सुभागी उसकी तरफ बढ़ी तो गिरधारी पीछे हटता हुआ गायब हो गया। इसी तरह एक दिन सुबह अँधेरे कालिकादीन हल-बैलों को लिये खेत पर पहुँचा और बैलों को हल में लगा रहा था कि देखा कि गिरधारी खेत की मेड़ पर खड़ा है। वह उससे बात करने आगे बढ़ा। गिरधारी पीछे हटने लगा और पीछेवाले कुएँ में कूद पड़ा। कालिकादीन हल-बैल छोड़ चीखकर गाँव में भागा। सारे गाँव में शोर मच गया। कालिका को गिरधारीवाले खेतों में जाने की हिम्मत न पड़ी। कालिकादीन ने गिरधारी के खेतों से इस्तीफा दे दिया क्योंकि गिरधारी अपने खेतों के चारों ओर मँडराया करता था। अँधेरा होते ही वह खेत के मेड़ पर आकर बैठ जाता है। कभी-कभी रात में उसके रोने की आवाज सुनाई पड़ती है। वह किसी से न बोलता है और न किसी को छेड़ता है। लाला ओंकारनाथ बहुत चाहते हैं कि कोई इन खेतों को ले ले किन्तु लोग नाम लेने से ही डरने लगते हैं। गिरधारी ने खेतों के लिए आत्म-बलिदान दे दिया था।

## आकाशदीप

आकाशदीप महाकवि अमर कहानीकार जयशंकर प्रसाद की कालजयी कहानियों में से एक है। कहानी की मुख्य पात्र चम्पा जाह्नवी नदी के तट पर बसी चम्पा-नगरी की क्षत्रिय बालिका थी। उसके पिता व्यवसायी मणिभद्र के यहाँ प्रहरी का काम करते थे। माता का देहावसान हो जाने पर वह भी पिता के साथ नाव पर ही रहने लगी। पिछले आठ वर्षों से समुद्र ही उसका घर। बुद्धगुप्त के आक्रमण के समय चम्पा के पिता ने आठ जल दस्युओं को मारकर जल समाधि ली थी। एक महीने से वह नीले आकाश और नीचे समुद्र के ऊपर निस्सहाय, अनाथ होकर रह रही है। एक दिन मणिभद्र ने उससे घृणित प्रस्ताव किया। उसने उसे गालियाँ सुनाईं। उसी दिन से वह बन्दी बना दी गई। अपनी आत्मकथा बुद्धगुप्त को वह उस समय सुनाई जब दोनों बन्दी जीवन से मुक्त हो गये थे। बुद्धगुप्त भी ताम्रलिप्ति का एक क्षत्रिय युवक था। दुर्भाग्य से जलदस्यु बन गया था। उसी के आक्रमण में चम्पा के पिता की मृत्यु हुई थी। बाद में किसी आक्रमण में बुद्धगुप्त भी बन्दी हो गया था। संयोग से दोनों बन्दी एक ही नाव पर थे। रात्रि में समुद्री आँधी में नाव डगमगाने लगी, अँधेरा घिर गया था। हवा के कोलाहल में कुछ सुनाई नहीं पड़ रहा था। उसी समय चम्पा बुद्धगुप्त से स्वतन्त्र होने का अवसर बताकर उसे एक नाविक की कटार लाकर देती है। बन्दी स्वतन्त्र होकर ढुलककर उस रज्जु के पास पहुँचा जो पोत से संलग्न थी। उसने रज्जु काट दी। नाव पोत से स्वतन्त्र

हो गयी। सुबह बुद्धगुप्त ने नायक को वशीभूत करके नाव का स्वामी बन गया। वे दोनों एक नये द्वीप पर पहुँचे। उस द्वीप का नाम चम्पा-द्वीप रखा गया। चम्पा और बुद्धगुप्त ने उसे अपना स्थायी निवास बनाया। चम्पा ने बुद्धगुप्त के कठोर हृदय में कोमलता पैदा कर दी थी। बुद्धगुप्त व्यापार करने लगा। द्वीप पर महानाविक बुद्धगुप्त को वहाँ के निवासी राजा और चम्पा को महारानी के रूप में मानकर उनकी सेवा में लगे रहते थे। चम्पा प्रतिदिन समुद्र के तट पर ऊँचे स्थान पर दीपक जलाया करती थी और उसे रस्सी की सहायता से ऊँचे स्थान पर पहुँचाती थी। एक दिन महानाविक ने पूछा कि ऐसा तुम क्यों करती हो तो चम्पा ने कहा, मैं अपने पिता के लिए, भूले-भटके लोगों को पथ दिखाने के लिए दीप जलाती हूँ। भगवान् भी भटकते हैं, भूलते हैं, नहीं तो बुद्धगुप्त को इतना ऐश्वर्य क्यों देते? 'तो इसमें बुरा क्या हुआ, इस द्वीप की अधीश्वरी चम्पारानी।' बुद्धगुप्त ने कहा। चम्पा कहती है कि यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता। वे दिन अच्छे थे जब खुले आकाश में हम लोग परिश्रम से थक कर पालों से शरीर लपेट कर पड़े रहते थे। बुद्धगुप्त ने कहा, "तो चम्पा हम अब और अच्छे से रह सकते हैं। तुम मेरी प्राणदात्री, मेरी सर्वस्व हो।" चम्पा अपनी माँ एवं पिता का जीवन स्मरण करते हुए क्रोधावेश में कहती है, "मेरे पिता, वीर पिता की मृत्यु के निष्ठुर कारण, जलदस्यु! हट जाओ!" बुद्ध बहुत प्रयास करता है कि चम्पा उसे क्षमा कर दे किन्तु चम्पा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वह कहता है, "आह चम्पा तुम इतनी निर्दय हो! यदि आज्ञा दो तो मैं अपना हृदय पिण्ड निकालकर अतल जल में विसर्जन कर दूँ।" चम्पा कहती है, "मैं तुमसे घृणा करती हूँ, फिर भी तुम्हारे लिये मर सकती हूँ। अँधेर है जलदस्यु। तुम्हें प्यार करती हूँ।" बुद्धगुप्त कहता है, "इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति से एक प्रकाश-गृह बनवाऊँगा, चम्पा! यहीं उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुँधली संध्या उससे आलोकपूर्ण हो जाय।" द्वीप स्तम्भ बनवाया गया। भव्य समारोह में चम्पा को बताया गया कि आज रानी की शादी होगी। चम्पा बुद्धगुप्त को फटकारती है। बुद्धगुप्त चम्पा के पैर पकड़ लिये और कहा कि तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ। वह बहुत अनुनय-विनय करता है। किन्तु चम्पा कहती है, "तुम स्वदेश लौट जाओ, मैं इन निरीह भोले-भाले प्राणियों की सेवा करूँगी।" महानाविक स्वदेश चला गया। चम्पा उसी द्वीप पर रहकर आजीवन द्वीप-स्तम्भ पर दीप जलाती रही। वह भी जलती रही जैसे आकाश-दीप।

# प्रायश्चित

कबरी बिल्ली से परेशान राम की बहू के लिए खाना-पीना दुश्वार हो गया था, किन्तु कबरी बिल्ली घर भर में किसी से प्रेम करती थी, तो रामू की बहू से। रामू की बहू दो महीने हुए मायके से ससुराल आयी थी। पति की प्यारी, सास की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका को भण्डार-घर की चाभी सौंप दी गयी थी। परिपक्वता के अभाव में वह सावधान नहीं रहती थी। कबरी बिल्ली रामू की बहू की असावधानी का लाभ उठाकर दूध, घी, मक्खन प्रतिदिन चट कर जाती थी। इस कारण उसे मिलती थी सास की मीठी झिड़कियाँ और पतिदेव को मिलता था रूखा-सूखा भोजन। एक दिन रामू के लिए खीर बनायी और कटोरा भरकर उसे ऐसे ऊँचे ताक पर रखा ताकि कबरी बिल्ली वहाँ तक न पहुँच सके फिर वह जाकर पान लगाने लगी। इसी बीच न जाने कहाँ से कबरी बिल्ली आयी, नीचे खड़े होकर ऊपर देखा, सूँघा और उछल कर ताक से कटोरा गिरा दिया। रामू की बहू आयी तो देखा फूल का कटोरा टुकड़े-टुकड़े और फर्श पर बिल्ली खीर उड़ा रही है। उसे देखकर बिल्ली चम्पत हो गयी। उसी दिन रामू की बहू कबरी की हत्या करने के लिए कमर कस ली। उस पर खून सवार हो गया। रात भर उसे नींद नहीं आयी। सुबह देखती है कि कबरी देहरी पर बैठी बड़े प्रेम से उसे देख रही है। वह मुस्कराती हुई उठी। उसे उठते देख बिल्ली खिसक गयी। रामू की बहू एक कटोरा दूध कमरे के दरवाजे पर रखकर चली गयी फिर पाटा लेकर लौटी, कबरी दूध पर जुटी हुई थी। उसने पाटा बिल्ली पर फेंका, कबरी एकदम उलट गयी। महरी दौड़ी आयी–"अरे राम! बिल्ली तो मर गयी।" सासू आयीं फिर गाँव की औरतें। पूरे गाँव में बिल्ली की हत्या की खबर फैल गयी। पण्डित परमसुख बुलाये गये। उन्होंने कहा कि बिल्ली की हत्या ऐसा-वैसा पाप नहीं, रामू की माँ! बहू के लिए कुम्भीपाक नरक है। बहुत मिन्नत के बाद पण्डित जी ने कहा कि प्रायश्चित के लिए ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊँ। दो घण्टे में लौटूँगा तब तक पूजा का प्रबन्ध करो और देखो पूजा के लिए.....। पण्डित जी की बात खतम नहीं हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुसी और सबको चौंकाते हुए बोली–"माँ जी! बिल्ली तो उठकर भाग गयी।"

# समय

यह एक नौकरीपेशा मध्यम परिवार की कहानी है। नौकरी से रिटायर होने के बाद अवकाश का बोझ चिन्ता का कारण बन जाता है। बच्चे बड़े हो जाते हैं। पीढ़ी का अन्तर, विचारों का अन्तर सब अपने-अपने व्यक्तित्व के अनुसार गतिमान रहते हैं। वृद्धावस्था की संवेदना पीढ़ी के अन्तर से प्रभावित होती है। कथा के नायक पापा का विचार था कि रिटायर होने के बाद अध्ययन का मनचाहा

अवसर होगा, दूसरों के आदेश से मुक्ति मिलेगी। पापा को बूढ़े और बुजुर्ग समझे जाने से सदा विरक्ति रही है। सर्विस के दौरान वे गर्मियों में महीने-दो-महीने हिल स्टेशनों पर चले जाते थे किन्तु अब वे पहाड़ पर जाना छोड़ चुके हैं। पहले जब पहाड़ जाते तो चढ़ाइयों पर सुविधा के लिए छड़ियाँ जरूर खरीदते थे किन्तु लौटने पर छड़ी का प्रयोग नहीं करते थे। वे सोचते थे कि छड़ी टेककर चलना बुढ़ापे या बुजुर्गी के लक्षण हैं, किन्तु वे स्वयं को स्वस्थ अनुभव करते थे। वे सुबह-शाम टहलने जाते तो केवल अपनी पत्नी के साथ। बच्चों को नौकरानी के साथ बाहर भेज देते थे। सर्विस के दौरान जब कभी बच्चे साथ होते तो बच्चों के ठुनकने से ही मनचाही चीज उन्हें मिल जाती थी। वे बच्चों को डाँटते-धमकाते नहीं थे। अवकाश-प्राप्ति के बाद वे नियमित कार्यक्रम के अनुसार काम में स्वयं को व्यस्त रखते थे। हल्की-फुल्की चीजें खरीदने के लिए वे सन्ध्या समय पैदल ही हजरतगंज चले जाते थे। अवकाश-प्राप्ति के बाद उनके स्वभाव और व्यवहार में अनेक परिवर्तन आये। पहले उन्हें अपने लिये अच्छी बढ़ियाँ चीजें खरीदने का और अच्छी पोशाक का शौक था किन्तु अब वे नये कपड़े के अनुरोध को टाल कर पुराने कपड़ों को पर्याप्त बताते थे। पापा के बच्चों को बाजार साथ न ले जाने के रवैये में भी अन्तर आया। अब वे किसी-न-किसी को साथ ले जाना चाहते थे। सुबह-शाम किसी को साथ लेकर टहलने जाना पसन्द करने लगे। अब वे छड़ी लेकर भी चलने लगे। लगभग एक वर्ष से उनकी नजर पर आयु का प्रभाव हो रहा था। अधिक देर तक पढ़ने-लिखने से धुँधलापन अनुभव होने लगा था। सड़क पर कम प्रकाश में ठोकर लगने और अधिक चकाचौंध से परेशानी अनुभव करते थे। स्थिति यह पैदा हो गयी थी कि वे बिना किसी को साथ लिये बाहर नहीं जा सकते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि कोई उनके साथ जाने के लिए तैयार नहीं हुआ। कहने पर मन्टू भी नहीं गया। उसने पुष्पा दीदी से कहा–''तुम भी क्या दीदी....बोर....बुड्ढों के साथ कौन बोर हो।'' पापा हैंगर से कोट पहनने जा रहे थे। शायद ये बातें सुनकर एक विचित्र, विषण्ण-सी मुस्कान के साथ कोट हाथ में लिये कुर्सी पर बैठ गये। नजर फर्श की ओर झुक गयी।

# ध्रुव-यात्रा

राजा रिपुदमन उत्तरी ध्रुव की यात्रा सफलतापूर्वक पूर्ण करके लौटते समय यूरोप के नगरों में जहाँ-जहाँ रुके वहाँ उनका भरपूर सम्मान हुआ। अखबारों में प्रकाशित इस खबर को पढ़कर उर्मिला प्रसन्न होकर अपने सोते शिशु का चुम्बन लिया। कई दिन तक अखबारों में ध्रुवयात्रा की खबर छपती रही और उर्मिला उसे पढ़ती रही। रिपुदमन मुम्बई आ पहुँचे, वहाँ भी उनका भरपूर स्वागत हुआ। शिष्टमण्डल के अनुरोध पर राजा रिपुदमन दिल्ली आये। वे सबसे सौजन्य से मिलते हैं। ऐसा लगा कि उन्हें प्रदर्शनों में उल्लास नहीं है। एक संवाददाता ने लिखा कि मैं मिला तो उनके चेहरे से ऐसा लगा कि वे यहाँ न हों, जाने कहीं दूर हों। उर्मिला ने इसे पढ़ा और अखबार अलग रख दिया। रिपुदमन ने यूरोप में आचार्य मारुति की ख्याति सुनी थी किन्तु दिल्ली में रहकर भी वे आचार्य मारुति को नहीं जानते थे। अवकाश पाते ही वे आचार्य मारुति के पास पहुँचे। अभिवादन के बाद मारुति ने पूछा कि वैद्य के पास रोगी आते हैं विजेता नहीं तो रिपुदमन ने कहा कि मुझे नींद नहीं आती, मन पर मेरा काबू नहीं रहता। आचार्य मारुति और राजा रिपुदमन में काफी देर तक बातें हुईं। रिपुदमन विवाह को बन्धन मानता है किन्तु प्रेम से इनकार नहीं करता है। एक दिन राजा रिपुदमन सिनेमा हाल के एक बाक्स में उर्मिला से मिलता है। उर्मिला उसकी प्रेमिका और उसके बेटे की माँ है। यह बात उन दोनों के अलावा तीसरा व्यक्ति नहीं जानता है। काफी बातें होती हैं। बच्चे का नाम रिपुदमन माधवेन्द्र बहादुर रखता है। उर्मिला पूछती है कि तुम अपना काम बीच में छोड़कर क्यों चले आये? वह कहती है तुम्हें मेरी और मेरे बच्चे की चिन्ता करना काम नहीं है। रिपुदमन कहता है कि मैं केवल तुम्हारा हूँ, तुम जो कहोगी वही करूँगा। क्या तुम अब भी नाराज हो। उर्मिला कहती है कि मुझे तुम पर गर्व है। तुम्हारा काम अब दक्षिणी ध्रुव पर विजय करना है, तुम्हें जाना ही होगा। यदि मेरे कारण तुम नहीं जाओगे तो मैं अपने को क्षमा नहीं कर पाऊँगी। मारुति की बात चलती है तो उर्मिला उसे ढोंगी कहती है किन्तु रिपुदमन के कहने पर वह मारुति के पास जाती है किन्तु उसके कहने पर विवाह के लिए तैयार नहीं होती है। मारुति रिपुदमन को बताता है कि उर्मिला उसकी सगी पुत्री है। उसे विवाह करके साथ रहना चाहिए। वह भी यही चाहता है किन्तु उर्मिला के हठ के कारण वह तीसरे दिन दक्षिणी ध्रुव जाने के लिए अमेरिका फोन पर बातें कीं और बताया कि परसों शटलैण्ड द्वीप के लिए पूरा जहाज हो गया है। उर्मिला के कुछ दिन रुकने के लिए कहने पर वह रुकने के लिए तैयार नहीं हुआ। इस खबर से अखबारों में धूम मच गयी। वह दिन भी आ गया जब रिपुदमन उससे दूर चला गया। उर्मिला कल्पनाओं में बहुत कुछ सोचती रहती थी। किन्तु अचानक तीसरे दिन उर्मिला ने अखबार में पढ़ा कि राजा रिपुदमन सबेरे खून में भरे पाये गये। गोली का कनपटी के आर-पार निशान था। मृतक के तकिये के नीचे मिले पत्र का आशय था–यह यात्रा निजी थी। किसी के वचन को पूरा करने जा रहा था। ध्रुव पर भी बचना नहीं था। अब भी नहीं बचूँगा। भगवान् मेरे प्रिय के अर्थ और मेरी आत्मा की रक्षा करें।

# 1 प्रेमचन्द

## ➥ व्यक्तित्व

प्रेमचन्द का जन्म वाराणसी जिले के लमही ग्राम में 31 जुलाई, 1880 ई० को हुआ था। आपने बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त की। प्रेमचन्द का बचपन कठिनाइयों में व्यतीत हुआ। जीवन की विषम परिस्थितियों में भी उनका अध्ययन-क्रम चलता रहा। उन्होंने उर्दू का भी विशेष ज्ञान प्राप्त किया। जीवन-संघर्ष में जूझते हुए वह एक स्कूल-अध्यापक से सब इंसपेक्टर के पद तक पहुँचे। वे कुछ समय तक काशी-विद्यापीठ में अध्यापक भी रहे। उन्होंने कई साहित्यिक पत्रों का सम्पादन किया, जिनमें 'हंस' प्रमुख था। आत्म-गौरव के साथ उन्होंने साहित्य के उच्च आदर्शों की रक्षा की। उनका बचपन का नाम धनपतराय था, किन्तु 'उर्दू' में वे 'नवाबराय' के नाम से कहानी लिखते थे। वे अंग्रेजी सरकार के कोप-भाजन भी रहे। उन्होंने प्रेमचन्द नाम से हिन्दी में सामाजिक कहानियों की रचना की तथा शीघ्र ही लोकप्रिय कथाकार हो गये। हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने उनकी रचनाओं को अत्यधिक महत्त्व दिया। उपन्यासकार, कहानीकार, सम्पादक, अनुवादक, नाटककार, निबन्ध लेखक आदि के रूप में प्रेमचन्द प्रतिष्ठित हुए। उनके कृतित्व में जीवन-सत्य का आदर्श रूप उभरकर आया है, परिणामस्वरूप वे सार्वभौम कलाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। 8 अक्टूबर, 1936 ई० को आपका निधन हो गया।

## ➥ कृतित्व

प्रेमचन्द के **कहानी-संग्रह** हैं—**सप्त सरोज, नवनिधि, प्रेमपूर्णिमा, बड़े घर की बेटी, लाल फीता, नमक का दारोगा, प्रेम-पचीसी, प्रेम-प्रसून, प्रेम-द्वादशी, प्रेम-प्रमोद, प्रेम-तीर्थ, प्रेम-चतुर्थी, प्रेम-प्रतिज्ञा, सप्तसुमन, प्रेम-पंचमी, प्रेरणा, समर-यात्रा, पंच-प्रसून, नवजीवन** आदि। आपके प्रसिद्ध **उपन्यास** हैं—**सेवासदन, प्रेमाश्रम, निर्मला, रंगभूमि, कायाकल्प, गबन, कर्मभूमि, गोदान, मंगलसूत्र** (अपूर्ण)। आपने **'संग्राम', 'कर्बला', 'प्रेम की वेदी'** आदि नाटक भी लिखे। सम्पादन, जीवनी, निबन्ध, अनुवाद और बालोपयोगी साहित्य में भी आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

## ➥ कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

प्रेमचन्द का विशाल कहानी साहित्य मानव-प्रकृति, मानव-इतिहास तथा मानवीयता के हृदयस्पर्शी एवं कलापूर्ण चित्रों से परिपूर्ण है। उन्होंने सांस्कृतिक उन्नयन, राष्ट्रसेवा, आत्मगौरव आदि के सजीव एवं रोचक चित्रण के साथ-साथ मानव के वास्तविक स्वरूप को उभारने में अपूर्व कौशल दिखलाया है। उनकी कहानियों में दमन, शोषण एवं अन्याय के विरुद्ध आवाज बुलन्द की गयी है तथा सामाजिक विकृतियों पर व्यंग्य के माध्यम से प्रहार किया गया है।

प्रेमचन्द की कहानी-रचना का केन्द्र-बिन्दु मानव है। उनकी कहानियों में लोक-जीवन के विविध पक्षों का मार्मिक चित्रण किया गया है। कथा-वस्तु का गठन समाज के विभिन्न धरातलों को स्पर्श करते हुए यथार्थ-जगत् की घटनाओं, भावनाओं, चिन्तन-मनन एवं जीवन संघर्षों को लेकर चलता है। 'शतरंज के खिलाड़ी', 'पूस की रात', 'रानी सारंधा' तथा 'आत्माराम' आपकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। प्रेमचन्द ने पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। साथ ही, मानव की अनुभूतियों एवं संवेदनाओं को भी महत्त्व दिया है। वे मानव-मन के सूक्ष्मतम भावों का आकर्षक चित्र उभारने में सफल हुए हैं।

प्रेमचन्द जी ने भाषा-शैली के क्षेत्र में उदार एवं व्यापक दृष्टिकोण अपनाया है। मुहावरों एवं लोकोक्तियों की लाक्षणिक तथा आकर्षक योजना ने उनकी अभिव्यक्ति को सशक्त बना दिया है। उनकी कहानियों के वास्तविक सौन्दर्य का मुख्य आधार उनके पात्रों की सहजता है, जिसके लिए प्रेमचन्द जी ने जन-भाषा का स्वाभाविक प्रयोग किया है। उनकी भाषा में व्यावहारिकता एवं साहित्यिकता का सजीव समन्वय है। भाषा-शैली सरल, रोचक, प्रवाह एवं प्रभावपूर्ण है।

कहानी के विकास एवं सौन्दर्य के अनुकूल वातावरण तथा परिस्थितियों के कलात्मक चित्र पाठक के हृदय पर अमिट छाप छोड़ते हैं। प्रेमचन्द जी की कहानियों का लक्ष्य मानव-जीवन के स्वरूप, उसकी गति तथा उसके सत्य की व्याख्या करना रहा है, जिसमें उन्हें पूर्ण सफलता मिली है। प्रेमचन्द की कहानी-कला की मौलिकता, गतिशीलता एवं व्यापकता ने हिन्दी कहानी को केवल समृद्ध ही नहीं बनाया, वरन् उसके विकास एवं विस्तार के अगणित स्रोतों का उद्घाटन भी किया है।

# बलिदान

## (1)

मनुष्य की आर्थिक अवस्था का सबसे ज्यादा असर उसके नाम पर पड़ता है। मौजे बेला के ठाकुर जब से कान्सटिबिल हो गये हैं, उनका नाम मंगलसिंह हो गया है, अब उन्हें कोई मँगरू कहने का साहस नहीं कर सकता। कल्लू अहीर ने जबसे हलके के थानेदार साहब से मित्रता कर ली है और गाँव का मुखिया हो गया है, उसका नाम कालिकादीन हो गया है। अब उसे कोई कल्लू कहे तो आँखें लाल-पीली करता है। इसी प्रकार हरखचन्द्र कुरमी अब हरखू हो गया है। आज से बीस साल पहले उसके यहाँ शक्कर बनती थी, कई हल की खेती होती थी और कारोबार खूब फैला हुआ था। लेकिन विदेशी शक्कर की आमद ने उसे मटियामेट कर दिया। धीरे-धीरे कारखाना टूट गया, जमीन टूट गयी, ग्राहक टूट गये और वह भी टूट गया। सत्तर वर्ष का बूढ़ा जो एक तकियेदार माचे पर बैठा हुआ नारियल पिया करता था, अब सिर पर टोकरी लिये खाद फेंकने जाता है। परन्तु उसके मुख पर भी एक प्रकार की गम्भीरता, बातचीत में अब भी एक प्रकार की अकड़, चाल-ढाल में अब भी एक प्रकार का स्वाभिमान भरा हुआ है। इन पर काल की गति का प्रभाव नहीं पड़ा। रस्सी जल गयी, पर बल नहीं टूटा। भले दिन मनुष्य के चरित्र पर, सदैव के लिए अपना चिह्न छोड़ जाते हैं। हरखू के पास अब केवल पाँच बीघा जमीन है। केवल दो बैल हैं। एक हल की खेती होती है।

लेकिन पंचायतों में, आपस की कलह में, उसकी सम्मति अब भी सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। वह जो बात कहता है, बेलाग कहता है और गाँव के अनपढ़े उसके सामने मुँह नहीं खोल सकते।

हरखू ने अपने जीवन में कभी दवा नहीं खायी। वह बीमार जरूर पड़ता है, कुँआर मास में मलेरिया से कभी न बचता था। लेकिन दस-पाँच दिन में वह बिना दवा खाये ही चंगा हो जाता था। इस वर्ष भी कार्तिक में बीमार पड़ा और यह समझकर कि अच्छा तो हो ही जाऊँगा, उसने कुछ परवाह न की। परन्तु अबकी ज्वर मौत का परवाना लेकर चला था। एक सप्ताह बीता, दूसरा सप्ताह बीता, पूरा महीना बीत गया; पर हरखू चारपाई से न उठा। अब उसे दवा की जरूरत मालूम हुई। उसका लड़का गिरधारी कभी नीम के सींके पिलाता, कभी गुर्च का सत, कभी गदापूरना की जड़; पर इन ओषधियों से कोई फायदा न होता था। हरखू को विश्वास हो गया कि अब संसार से चलने के दिन आ गये।

एक दिन मंगलसिंह उसे देखने गये, बेचारा टूटी खाट पर पड़ा राम-राम जप रहा था। मंगलसिंह ने कहा—बाबा, बिना दवा खाये अच्छे न होगे; कुनैन क्यों नहीं खाते? हरखू ने उदासीन भाव से कहा—तो लेते आना।

दूसरे दिन कालिकादीन ने आकर—बाबा, दो-चार दिन कोई दवा खा लो। अब तुम्हारी जवानी की देह थोड़े है कि बिना दवा-दर्पन के अच्छे हो जाओगे?

हरखू ने उसी मंद भाव से कहा—तो लेते आना। लेकिन रोगी को देख आना एक बात है, दवा लाकर उसे देना दूसरी बात है। पहली बात शिष्टाचार से होती है, दूसरी सच्ची संवेदना से। न मंगलसिंह ने खबर ली, न कालिकादीन ने, न किसी तीसरे ही ने। हरखू दालान में खाट पर पड़ा रहता। मंगलसिंह कभी नजर आ जाते तो कहता—भैया, वह दवा नहीं लाये? मंगलसिंह कतराकर निकल जाते। कालिकादीन दिखायी देते तो उनसे भी यही प्रश्न करता; लेकिन वह भी नजर बचा लेता। या तो उसे यह सूझता ही नहीं था कि दवा पैसों के बिना नहीं आती या वह पैसों को जान से भी प्रिय समझता था अथवा वह जीवन से निराश हो गया था। उसने कभी दवा के दाम की बात नहीं की। दवा न आयी। उसकी दशा दिनों-दिन बिगड़ती गयी। यहाँ तक कि पाँच महीने कष्ट भोगने के बाद उसने ठीक होली के दिन शरीर त्याग दिया। गिरधारी ने उसका शव बड़ी धूमधाम से निकाला। क्रिया-कर्म बड़े हौसले से किया। कई गाँव के ब्राह्मणों को निमन्त्रित किया।

बेला में होली न मनायी गयी, न अबीर और गुलाल उड़ी, न डफली बजी, न भंग की नालियाँ बहीं। कुछ लोग मन में हरखू को कोसते जरूर थे कि बुड्ढे को आज ही मरना था, दो-चार दिन बाद मरता।

लेकिन इतना निर्लज्ज कोई न था कि शोक में आनन्द मनाता। वह शहर नहीं था, जहाँ कोई किसी के काम में शरीक नहीं होता, जहाँ पड़ोसी के रोने-पीटने की आवाज हमारे कानों तक नहीं पहुँचती।

## (2)

हरखू के खेत गाँव वालों की नजर पर चढ़े हुए थे। पाँच बीघा जमीन कुएँ के निकट, खाद-पाँस से लदी हुई मेड़-बाँध से ठीक थी। उनमें तीन-तीन फसलें पैदा होती थीं। हरखू के मरते ही उन पर चारों ओर से धावे होने लगे। गिरधारी तो क्रिया-कर्म में फँसा हुआ था। उधर गाँव के मनचले किसान लाला ओंकारनाथ को चैन न लेने देते थे, नजराने की बड़ी-बड़ी रकमें पेश हो रही थीं। कोई साल भर का लगान पेशगी देने को तैयार था, कोई नजराने की दूनी रकम का दस्तावेज लिखने को तुला हुआ था। लेकिन ओंकारनाथ सबको टालते रहते थे। उनका विचार था कि गिरधारी का हक सबसे ज्यादा है। वह अगर दूसरों से कम भी नजराना दे तो खेत उसी को देने चाहिए। अस्तु, जब गिरधारी क्रिया-कर्म से निवृत्त हो गया और चैत का महीना भी समाप्त होने आया, तब जमींदार साहिब ने गिरधारी को बुलाया और उससे पूछा—खेतों के बारे में क्या कहते हो? गिरधारी ने रोकर कहा—उन्हीं खेतों का ही आसरा है, जोतूँगा नहीं तो क्या करूँगा?

ओंकारनाथ— नहीं, जरूर जोतो, खेत तुम्हारे हैं। मैं तुमसे छोड़ने को नहीं कहता हूँ। हरखू ने उन्हें बीस साल तक जोता। उन पर तुम्हारा हक है। लेकिन तुम देखते हो अब जमीन की दर कितनी बढ़ गयी है। तुम आठ रुपये बीघे पर जोतते थे, मुझे 10 रु० मिल रहे हैं। और नजराने के रुपये सो अलग। तुम्हारे साथ रियायत करके लगान वही रखता हूँ; पर नजराने के रुपये तुम्हें देने पड़ेंगे।

गिरधारी—सरकार, मेरे घर में तो इस समय रोटियों का भी ठिकाना नहीं है। इतने रुपये कहाँ से लाऊँ? जो कुछ जमा-जथा थी, दादा के काम में उठ गयी। अनाज खलिहान में है। लेकिन दादा के बीमार हो जाने से उपज भी अच्छी नहीं हुई। रुपये कहाँ से लाऊँ?

ओंकारनाथ—यह सच है लेकिन मैं इससे ज्यादा रियायत नहीं कर सकता।

गिरधारी—नहीं सरकार, ऐसा न कहिए। नहीं तो हम बिना मारे मर जायेंगे। आप बड़े होकर कहते हैं तो बैल-बधिया बेच कर पचास रुपया कर सकता हूँ। इससे बेशी की हिम्मत नहीं पड़ती।

ओंकारनाथ चिढ़कर बोले—तुम समझते होगे कि हम ये रुपये लेकर घर में रख लेते हैं और चैन की बंशी बजाते हैं। लेकिन हमारे ऊपर जो कुछ गुजरती है, हमीं जानते हैं। कहीं यह चंदा, कहीं वह इनाम। इनके मारे कचूमर निकल जाता है। बड़े दिन में सैकड़ों रुपये डालियों में उड़ जाते हैं। जिसे डाली न दो, वही मुँह फुलाता है। जिन चीजों के लिए लड़के तरस कर रह जाते हैं, उन्हें बाहर से मँगा कर डालियों में सजाता हूँ। उस पर कभी कानूनगो आ गये, कभी तहसीलदार, कभी डिप्टी साहब का लश्कर आ गया। सब मेरे मेहमान होते हैं। अगर न करूँ तो नक्कू बनूँ और सबकी आँखों में काँटा बन जाऊँ। साल में हजार-बारह सौ मोदी को इस रसद खुराक के मद में देने पड़ते हैं। यह सब कहाँ से आवे? बस, यही जी चाहता है कि छोड़कर निकल जाऊँ लेकिन हमें तो परमात्मा ने इसलिए बनाया है कि एक से रुपया सता कर लें और दूसरे को रो-रोकर दें, यही हमारा काम है। तुम्हारे साथ इतनी रियायत कर रहा हूँ। लेकिन तुम इतनी रियायत पर भी खुश नहीं होते तो हरि इच्छा। नजराने में एक पैसे की भी रियायत न होगी। अगर एक हफ्ते के अन्दर दाखिल करोगे तो खेत जोतने पाओगे, नहीं तो नहीं; मैं दूसरा प्रबन्ध कर दूँगा।

## (3)

गिरधारी उदास होकर घर आया। 100 रु० का प्रबन्ध करना उसके काबू के बाहर था। सोचने लगा—अगर दोनों बैल बेच दूँ तो खेत ही लेकर क्या करूँगा। घर बेचूँ तो यहाँ लेने वाला ही कौन है? और फिर बाप-दादों का नाम डूबता है। चार-पाँच पेड़ हैं लेकिन उन्हें बेच कर 25 रु० या 30 रु० से अधिक न मिलेंगे। उधार लूँ तो देता कौन है? अभी बनिये के 50 रु० सिर पर चढ़े हैं। वह एक पैसा भी न देगा। घर में गहने भी तो नहीं हैं। नहीं उन्हीं को बेचता। ले-देकर एक हँसली बनवायी थी, वह भी बनिये के घर पर पड़ी हुई है। साल भर हो गया, छुड़ाने की नौबत न आयी। गिरधारी और उसकी स्त्री सुभागी दोनों ही इसी चिन्ता में पड़े रहते, लेकिन कोई उपाय न सूझता था। गिरधारी को खाना-पीना अच्छा न लगता, रात को नींद न आती। खेतों के निकलने का ध्यान आते ही उनके हृदय में हूक-सी उठने लगती। हाय! वह भूमि जिसे हमने वर्षों जोता, जिसे खाद से पाटा, जिसमें मेड़ें रखीं, जिसकी मेड़ें बनायीं उसका मजा अब दूसरा उठायेगा?

ये खेत गिरधारी के जीवन के अंश हो गये थे। उनकी एक-एक अंगुल भूमि उसके रक्त से रँगी हुई थी। उनका एक-एक परमाणु उसके पसीने से तर हो गया था।

उनके नाम उसकी जिह्वा पर उसी तरह आते थे जिस तरह अपने तीनों बच्चों के। कोई चौबीसों था, कोई बाइसों था, कोई नाले वाला, कोई तलैया वाला। इन नामों के स्मरण होते ही खेतों का चित्र उसकी आँखों के सामने खिंच जाता था। वह इन खेतों की चर्चा इस तरह करता मानो वे सजीव हैं। मानो उसके भले-बुरे के साथी हैं। उसके जीवन की सारी आशाएँ, सारी इच्छाएँ, सारे मनसूबे, सारी मन की मिठाइयाँ, सारे हवाई किले इन्ही खेतों पर अवलम्बित थे। इसके बिना वह जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकता था और वे ही अब हाथ से निकले जाते हैं। वह घबरा कर घर से निकल जाता और घण्टों उन्हीं खेतों की मेड़ों पर बैठा हुआ रोता, मानो उससे विदा हो रहा हो। इस तरह एक सप्ताह बीत गया और गिरधारी रुपये का कोई बन्दोबस्त न कर सका। आठवें दिन उसे मालूम हुआ कि कालिकादीन ने 100 रुपये नजराने देकर 10 रु० बीघे पर खेत ले लिये। गिरधारी ने एक ठण्डी साँस ली। एक क्षण बाद वह दादा का नाम लेकर बिलख-बिलख रोने लगा। उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला। ऐसा मालूम होता था मानो हरखू आज ही मरा।

## (4)

लेकिन सुभागी यों चुपचाप बैठने वाली स्त्री न थी। वह क्रोध से भरी हुई कालिकादीन के घर गयी और उसकी स्त्री को खूब लथेड़ा—कल का बानी आज का सेठ, खेत जोतने चले हैं देखें, कौन मेरे खेत में हल ले जाता है? अपना और उसका लोहू एक कर दूँ। पड़ोसियों ने उसका पक्ष लिया, सब तो हैं, आपस में यह चढ़ा-उतरी नहीं करना चाहिए। नारायण ने धन दिया, तो क्या गरीबों को कुचलते फिरेंगे? सुभागी ने समझा, मैंने मैदान मार लिया। उसका चित्त शान्त हो गया। किन्तु वही वायु जो पानी में लहरें पैदा करती हैं, वृक्षों को जड़ से उखाड़ डालती हैं। सुभागी तो पड़ोसियों की पंचायत में अपने दुखड़े रोती और कालिकादीन की स्त्री से छेड़-छेड़ लड़ती। इधर गिरधारी अपने द्वार पर बैठा हुआ सोचता, अब मेरा क्या हाल होगा? अब यह जीवन कैसे कटेगा? ये लड़के किसके द्वार पर जायेंगे? मजदूरी का विचार करते ही उसका हृदय व्याकुल हो जाता। इतने दिनों तक स्वाधीनता और सम्मान का सुख भोगने के बाद अधम चाकरी की शरण लेने के बदले वह मर जाना अच्छा समझता था। वह अब तक गृहस्थ था, उसकी गणना गाँव के भले आदमियों में थी, उसे गाँव के मामले में बोलने का अधिकार था। उसके घर में धन न था, पर मान था। नाई, बढ़ई, कुम्हार, पुरोहित, भाट, चौकीदार, ये सब उसका मुँह ताकते थे। अब यह मर्यादा कहाँ! अब कौन उसकी बात पूछेगा? कौन उसके द्वार पर आवेगा? अब उसे किसी के बराबर बैठने का, किसी के बीच में बोलने का हक नहीं रहा। अब उसे पेट के लिए दूसरों की गुलामी करनी पड़ेगी। अब पहर रात रहे कौन बैलों को नाँद में लगावेगा? वह दिन अब कहाँ, जब गीत गा-गाकर हल चलाता था। अपने लहलहाते हुए खेतों को देखकर फूला न समाता था। खलिहान में अनाज का ढेर सामने रखे अपने को राजा समझता था। अब अनाज के टोकरे भर-भर कर कौन लावेगा?

अब खत्ते कहाँ? बखार कहाँ? यही सोचते-सोचते गिरधारी की आँखों से आँसू की झड़ी लग जाती थी। गाँव के दो-चार सज्जन, जो कालिकादीन से जलते थे, कभी-कभी गिरधारी को तसल्ली देने आया करते थे, पर वह उनसे भी खुलकर न बोलता। उसे मालूम होता था कि मैं सबकी नजर में गिर गया हूँ।

अगर कोई समझाता कि तुमने क्रिया-कर्म में व्यर्थ इतने रुपये उड़ा दिये, तो उसे बहुत दुःख होता। वह अपने उस काम पर जरा भी न पछताता। मेरे भाग्य में जो लिखा है वह होगा; पर दादा के ऋण से उऋण हो गया। उन्होंने अपनी जिन्दगी में चार बार खिलाकर खाया। क्या मरने के पीछे इन्हें पिण्डे-पानी को तरसाता?

इस प्रकार तीन मास बीत गये और असाढ़ आ पहुँचा। आकाश में घटाएँ आयीं, पानी गिरा, किसान हल-जुए ठीक करने लगे। बढ़ई हलों की मरम्मत करने लगा। गिरधारी पागल की तरह कभी घर के भीतर जाता, कभी बाहर आता, अपने हलों को निकाल-निकाल देखता; उसकी मुठिया टूट गयी है, इसकी फाल ढीली हो गयी है, जुए में सैला नहीं है। यह देखते-देखते वह एक क्षण अपने को भूल गया। दौड़ा हुआ बढ़ई के यहाँ गया और बोला—रज्जू मेरे हल भी बिगड़े हुए हैं, चलो बना दो। रज्जू ने उसकी ओर करुणभाव से देखा और अपना काम करने लगा। गिरधारी को होश आ गया; नींद से चौंक पड़ा, ग्लानि से उसका सिर झुक गया, आँखें भर आयीं। चुपचाप घर चला आया।

गाँव के चारों ओर हलचल मची हुई थी। कोई सन के बीज खोजता फिरता था, कोई जमींदार के चौपाल से धान के बीज लिये आता था, कहीं सलाह होती थी, किस खेत में क्या बोना चाहिए, कहीं चर्चा होती थी कि पानी बहुत बरस गया, दो-चार दिन ठहर कर बोना चाहिए। गिरधारी ये बातें सुनता और जलहीन मछली की तरह तड़पता था।

## (5)

एक दिन सन्ध्या समय गिरधारी खड़ा अपने बैलों को खुजला रहा था कि मंगलसिंह आये और इधर-उधर की बातें करके बोले—गोईं को बाँधकर कब तक खिलाओगे? निकाल क्यों नहीं देते? गिरधारी ने मलिन-भाव से कहा–हाँ, कोई गाहक आवे तो निकाल दूँ।

मंगलसिंह—एक गाहक तो हमीं हैं, हमीं को दे दो।

गिरधारी अभी कुछ उत्तर न देने पाया था कि तुलसी बनिया और गरजकर बोला—गिरधर, तुम्हें रुपये देने हैं कि नहीं वैसा कहो। तीन महीने से हीला-हवाला करते चले आते हो। अब कौन खेती करते हो कि तुम्हारी फसल को अगोरे बैठे रहें।

गिरधारी ने दीनता से कहा—साह, जैसे इतने दिनों माने हो आज और मान जाओ। कल तुम्हारी एक-एक कौड़ी चुका दूँगा।

मंगल और तुलसी ने इशारे से बातें कीं और तुलसी भुनभुनाता हुआ चला गया। तब गिरधारी मंगलसिंह से बोला—तुम इन्हें ले लो तो घर के घर ही में रह जायँ। कभी-कभी आँख से देख तो लिया करूँगा।

मंगल—मुझे अभी तो ऐसा कोई काम नहीं, लेकिन घर पर सलाह करूँगा।

गिरधारी—मुझे तुलसी के रुपये देने हैं, नहीं तो खिलाने को तो भूसा है।

मंगल—यह बड़ा बदमाश है, कहीं नालिश न कर दे।

सरल हृदय गिरधारी धमकी में आ गया। कार्य-कुशल मंगलसिंह को सस्ता सौदा करने का यह अच्छा सुअवसर मिला। ८० रु० की जोड़ी ६० रु० में ठीक कर ली।

गिरधारी ने अब बैलों को न जाने किस आशा से बाँध कर खिलाया था। आज आशा का वह कल्पित सूत्र भी टूट गया। मंगलसिंह गिरधारी की खाट पर बैठे रुपये गिन रहे थे और गिरधारी बैलों के पास विषादमय नेत्रों से उनके मुँह की ओर ताक रहा था। आह! यह मेरे खेतों के कमाने वाले, मेरे जीवन के आधार, मेरे अन्नदाता, मेरी मान-मर्यादा की रक्षा करने वाले, जिनके लिए पहर रात से उठकर छाँटी काटता था, जिनके खली-दाने की चिन्ता अपने खाने से ज्यादा रहती थी, जिनके लिए सारा घर दिनभर हरियाली उखाड़ा करता था। ये मेरी आशा की दो आँखें, मेरे इरादे के दो तारे, मेरे अच्छे दिनों के दो चिह्न, मेरे दो हाथ, अब मुझसे विदा हो रहे हैं।

जब मंगलसिंह ने रुपये गिनकर रख दिये और बैलों को ले चले तब गिरधारी उनके कंधों पर सिर रखकर खूब फूट-फूट कर रोया। जैसे कन्या मायके से विदा होते समय माँ-बाप के पैरों को नहीं छोड़ती, उसी तरह गिरधारी इन बैलों को न छोड़ता था। सुभागी भी दालान में खड़ी रो रही थी और छोटा लड़का मंगलसिंह को एक बाँस की छड़ी से मार रहा था।

रात को गिरधारी ने कुछ नहीं खाया। चारपाई पर पड़ा रहा! प्रातःकाल सुभागी चिलम भरकर ले गयी तो वह चारपाई पर न था। उसने समझा कहीं गये होंगे। लेकिन जब दो-तीन घड़ी दिन चढ़ आया और वह न लौटा तो उसने रोना-धोना शुरू किया। गाँव के लोग जमा हो गये, चारों ओर खोज होने लगी, पर गिरधारी का पता न चला।

## (6)

संध्या हो गयी। अँधेरा छा रहा था। सुभागी ने दिया जलाकर गिरधारी के सिरहाने रख दिया और बैठी द्वार की ओर ताक रही थी कि सहसा उसे पैरों की आहट मालूम हुई। सुभागी का हृदय धड़क उठा। वह दौड़कर बाहर आयी और इधर-उधर ताकने लगी। उसने देखा कि गिरधारी बैलों की नाँद के पास सिर झुकाये खड़ा है।

सुभागी बोल उठी—घर जाओ, वहाँ खड़े क्या कर रहे हो, आज सारे दिन कहाँ रहे? यह कहते हुए वह गिरधारी की ओर चली। गिरधारी ने कुछ उत्तर न दिया। वह पीछे हटने लगा और थोड़ी दूर जाकर गायब हो गया। सुभागी चिल्लायी और मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

दूसरे दिन कालिकादीन हल लेकर अपने खेत पर पहुँचे, अभी कुछ अँधेरा था। बैलों को हल में लगा रहे थे कि यकायक उन्होंने देखा कि गिरधारी खेत की मेड़ पर खड़ा है, वही मिर्जई, वही पगड़ी, वही सोंटा।

कालिकादीन ने कहा—अरे गिरधारी! मरदे आदमी, तुम यहाँ खड़े हो और बेचारी सुभागी हैरान हो रही है। कहाँ से आ रहे हो? यह कहते हुए बैलों को छोड़कर गिरधारी की ओर चले, गिरधारी पीछे हटने लगा और पीछे वाले कुएँ में कूद पड़ा। कालिकादीन ने चीख मारी और हल-बैल वहीं छोड़ कर भागा। सारे गाँव में शोर मच गया और लोग नाना प्रकार की कल्पनाएँ करने लगे। कालिकादीन को गिरधारीवाले खेतों में जाने की हिम्मत न पड़ी।

गिरधारी को गायब हुए 6 महीने बीत चुके हैं। उसका बड़ा लड़का अब एक ईंट के भट्ठे पर काम करता है और 20 रु० महीने घर आता है। अब वह कमीज और अंग्रेजी जूता पहनता है; घर में दोनों जून तरकारी पकती है और जौ के बदले गेहूँ खाया जाता है; लेकिन गाँव में उसका कुछ भी आदर नहीं। यह अब मजूर है। सुभागी अब पराये गाँव में आये हुए कुत्ते की भाँति दुबकती फिरती है। वह अब पंचायत में नहीं बैठती। वह अब मजूर की माँ है। कालिकादीन ने गिरधारी के खेतों से इस्तीफा दे दिया है, क्योंकि गिरधारी अभी तक अपने खेतों के चारों तरफ मँडराया करता है। अँधेरा होते ही वह मेड़ पर आकर बैठ जाता है और कभी-कभी रात को उधर से उसके रोने की आवाज सुनायी देती है। वह किसी से बोलता नहीं, किसी को छेड़ता नहीं। उसे केवल अपने खेतों को देख कर संतोष होता है। दिया जलने के बाद उधर का रास्ता बंद हो जाता है।

लाला ओंकारनाथ बहुत चाहते हैं कि ये खेत उठ जायँ, लेकिन गाँव के लोग अब उन खेतों का नाम लेते डरते हैं।

## अभ्यास प्रश्न

1. कहानी-कला की दृष्टि से 'बलिदान' कहानी की समीक्षा कीजिए।
2. प्रेमचन्द को एक सफल कहानी-लेखक क्यों कहा जाता है? अपने मत को उपयुक्त उदाहरणों से पुष्ट कीजिए।
3. श्रेष्ठ कहानी की विशेषताएँ बताते हुए 'बलिदान' का मूल्यांकन कीजिए।
4. 'बलिदान' कहानी की विशिष्टताओं का विवेचनात्मक परिचय दीजिए।
5. 'बलिदान' कहानी के प्रमुख पात्र का जीवन-चित्रण कीजिए।
6. "सोद्देश्यता कहानी का सार-तत्त्व है" उक्ति के प्रकाश में 'बलिदान' कहानी का विवेचन कीजिए।
7. कथावस्तु के संगठन की दृष्टि से इस कहानी की समीक्षा कीजिए।
8. 'बलिदान' कहानी के आधार पर प्रेमचन्द की भाषा-शैली पर एक लेख लिखिए।
9. 'बलिदान' कहानी में चित्रित 'गिरधारी' का चरित्र भारतीय नवयुवकों के लिए क्या प्रेरणा प्रदान करता है? स्पष्ट कीजिए।
10. 'बलिदान' कहानी का उद्देश्य क्या है? कहानीकार को इसमें कहाँ तक सफलता मिली है?
11. 'बलिदान' कहानी का कथासार लिखिए।
12. 'बलिदान' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
13. 'बलिदान' कहानी के आधार पर उसके नायक की चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
14. कहानी तत्त्वों के आधार पर 'बलिदान' कहानी की विवेचना कीजिए।

# 2 जयशंकर प्रसाद

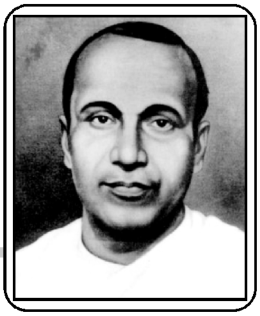

## ➡ व्यक्तित्व

हिन्दी में छायावादी काव्य के प्रवर्तक जयशंकर प्रसाद का जन्म 1889 ई० में वाराणसी में हुआ। बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न जयशंकर प्रसाद ने 'सुँघनी साहु' नामक प्रसिद्ध एवं वैभवसम्पन्न एक ऐसे परिवार में जन्म लिया जिसमें विद्वानों एवं कलाकारों को समुचित सम्मान दिया जाता था। उनके घर में शिव की उपासना की जाती थी। पारिवारिक विवशताओं के कारण कक्षा आठ तक ही वे स्कूली शिक्षा प्राप्त कर सके। आगे चलकर स्वाध्यायी प्रसाद ने घर पर ही संस्कृत के गहन अनुशीलन के अतिरिक्त हिन्दी, उर्दू, बंगला आदि का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया। पारिवारिक एवं आर्थिक संकटों में ग्रस्त साहसी जयशंकर प्रसाद अनवरत रूप से साहित्य-सर्जना में रत रहे। उनकी गणना मूर्धन्य साहित्यकारों में की जाती है। वे शीर्षस्थ 'कवि' होने के अतिरिक्त सुप्रसिद्ध नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार तथा निबन्ध-लेखक भी थे। वस्तुतः जयशंकर प्रसाद ने स्वानुभूति एवं गहन चिन्तन को साहित्य की विविध विधाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया तथा विविध कला-कृतियों की रत्न-राशि से हिन्दी-भाषा एवं साहित्य के भण्डार को समृद्ध एवं समुन्नत बनाया। इनकी मृत्यु 1937 ई० में हुई।

## ➡ कृतित्व

जयशंकर प्रसाद के पाँच कहानी-संग्रह हैं—**छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी** और **इन्द्रजाल**। आपने **कंकाल, तितली** तथा **इरावती** (अपूर्ण) उपन्यास भी लिखे हैं। **राज्यश्री, अजातशत्रु, स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी** आदि आपकी प्रसिद्ध **नाट्य-कृतियाँ** हैं। **'कामायनी'** आपका विश्वप्रसिद्ध महाकाव्य है। स्फुट काव्य तथा निबन्ध के क्षेत्र में भी आपका योगदान अविस्मरणीय है।

## ➡ कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

प्रसाद की कहानियों की सांस्कृतिक चेतना तथा उनके मनोवैज्ञानिक एवं भावात्मक चित्रण पाठक के मन पर गहरी छाप छोड़ते हैं। उनकी कहानी-रचना का धरातल साहित्यिक एवं कलात्मक है। उनकी कहानियाँ मानवता की उद्‌बोधक हैं। छायावादी कवि होने के कारण उनकी अधिकतर कहानियों में गहरी भावमयता और सूक्ष्मता की विशिष्टता मिलेगी। नाटकीय प्रतिभा एवं भावुक हृदय के अपूर्व संगम से उनकी अनेक कहानियाँ विशेष प्रभावशाली हो गयी हैं। आधार ऐतिहासिक हो अथवा काल्पनिक—काव्यतत्त्व उनकी अधिकांश कहानियों में समाहित रहता है। वस्तुतः हिन्दी-कहानी के विकास को नवीन दिशा देने में जयशंकर प्रसाद का अपूर्व योग है।

प्रसाद के कथानक आद्यन्त प्रवाहपूर्ण एवं चित्ताकर्षक है। कथावस्तु में सांस्कृतिक चेतना, प्रेम, कर्त्तव्य-निष्ठा, चरित्रगत सौन्दर्य आदि तत्त्व उभर कर आये हैं। प्रकृति के काव्यात्मक चित्र भी कथा-वस्तु के सौन्दर्य को निखारने में सफल हुए हैं। उनकी कहानियों में विविध प्रकार के पात्रों की सृष्टि हुई है। उन्होंने चरित्र-चित्रण में मानवीय गरिमा को महत्त्व दिया है तथा पात्रों के व्यक्तित्व को मार्मिकता से उभारा है। पात्रों की भावुकता उनको सक्रिय बनाती है तथा मानसिक संघर्षों में विवेक ऊपर उठकर कर्त्तव्य का मार्ग निर्धारित करता है। उनके कथोपकथन मार्मिक, सजीव एवं प्रभावशाली हैं। वे कहानी को रोचक बनाते हुए उसके स्वाभाविक विकास में योग देते हैं। उनकी कहानियों में एक काव्यात्मक वातावरण सर्वत्र छाया रहता है। उनकी प्रसिद्ध कहानियों के नाम हैं—**ग्राम, आकाशदीप, इन्द्रजाल, सलीम, आँधी** आदि।

प्रसाद की कहानियों की भाषा परिष्कृत, कलात्मक एवं संस्कृतनिष्ठ है तथा शैली ललित, नाटकीय एवं काव्यमयी है। स्थिति एवं पात्रों की मनोदशा के कलापूर्ण चित्रण तथा कथावस्तु का सौन्दर्य उभारने में उपयुक्त एवं कवित्वपूर्ण वातावरण की योजना प्रसाद जी की कहानी-कला का निजी वैशिष्ट्य है।

प्रसाद जी का 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की प्रतिष्ठा करनेवाला जीवन-दर्शन उनकी कहानियों के उद्देश्य को निर्धारित एवं प्रभावित करता रहता है।

●●●

# आकाशदीप

## (एक)

"बंदी!"

"क्या है? सोने दो।"

"मुक्त होना चाहते हो?"

"अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न मिलेगा।"

"बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

"आँधी की सम्भावना है। यही अवसर है। आज मेरे बंधन शिथिल हैं।"

"तो क्या तुम भी बंदी हो?"

"हाँ, धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं।"

"शस्त्र मिलेगा?"

"मिल जायेगा। पोत से संबद्ध रज्जु काट सकोगे?"

"हाँ।"

समुद्र में हिलोरें उठने लगीं। दोनों बंदी आपस में टकराने लगे। पहले बंदी ने अपने को स्वतंत्र कर लिया। दूसरे का बंधन खोलने का प्रयत्न करने लगा। लहरों के धक्के एक-दूसरे को स्पर्श से पुलकित कर रहे थे। मुक्ति की आशा-स्नेह का असंभावित आलिंगन। दोनों ही अंधकार में मुक्त हो गये। दूसरे बंदी ने हर्षातिरेक से उसको गले से लगा लिया। सहसा उस बंदी ने कहा—"यह क्या? तुम स्त्री हो?"

"क्या स्त्री होना कोई पाप है?"—अपने को अलग करते हुए स्त्री ने कहा।

"शस्त्र कहाँ है—तुम्हारा नाम?"

"चम्पा।"

तारक-खचित नील अंबर और नील समुद्र के अवकाश में पवन ऊधम मचा रहा था। अंधकार से मिलकर पवन दुष्ट हो रहा था। समुद्र में आंदोलन था। नौका लहरों में विकल थी। स्त्री सतर्कता से लुढ़कने लगी। एक मतवाले नाविक के शरीर से टकराती हुई सावधानी से उसका कृपाण निकालकर, फिर लुढ़कते हुए, बंदी के समीप पहुँच गई। सहसा पोत से पथ-प्रदर्शक ने चिल्लाकर कहा—"आँधी!"

आपत्तिसूचक तूर्य बजने लगा। सब सावधान होने लगे। बंदी युवक उसी तरह पड़ा रहा। किसी ने रस्सी पकड़ी, कोई पाल खोल रहा था। पर युवक बंदी लुढ़ककर उस रज्जु के पास पहुँचा, जो पोत से संलग्न थी। तारे ढँक गये। तरंगें उद्वेलित हुईं, समुद्र गरजने लगा। भीषण आँधी पिशाचिनी के समान नाव को अपने हाथों में लेकर कंदुक-क्रीड़ा और अट्टहास करने लगी।

एक झटके के साथ ही नाव स्वतंत्र थी। उस संकट में भी दोनों बंदी खिलखिलाकर हँस पड़े। आँधी के हाहाकार में उसे कोई न सुन सका।

## (दो)

अनंत जलनिधि में उषा का मधुर आलोक फूट उठा। सुनहली किरणों और लहरों की कोमल सृष्टि मुस्कराने लगी। सागर शांत था। नाविकों ने देखा, पोत का पता नहीं। बंदी मुक्त हैं।

नायक ने कहा—"बुद्धगुप्त! तुमको मुक्त किसने किया?"

कृपाण दिखाकर बुद्धगुप्त ने कहा—"इसने।"

नायक ने कहा—"तो तुम्हें फिर बंदी बनाऊँगा।"

"किसके लिए? पोताध्यक्ष मणिभद्र अतल जल में होगा—नायक! अब इस नौका का स्वामी मैं हूँ।"

"तुम? जलदस्यु बुद्धगुप्त? कदापि नहीं।"—चौंककर नायक ने कहा और अपना कृपाण टटोलने लगा। चम्पा ने इसके पहले उस पर अधिकार कर लिया था। वह क्रोध से उछल पड़ा।

"तो तुम द्वंद्वयुद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाओ; जो विजयी होगा, वह स्वामी होगा।"—इतना कहकर बुद्धगुप्त ने कृपाण देने का संकेत किया। चम्पा ने कृपाण नायक के हाथ में दे दिया।

भीषण घात-प्रतिघात आरम्भ हुआ। दोनों कुशल, दोनों त्वरित गतिवाले थे। बड़ी निपुणता से बुद्धगुप्त ने अपना कृपाण दाँतों से पकड़कर अपने दोनों हाथ स्वतंत्र कर लिये। चम्पा भय और विस्मय से देखने लगी। नाविक प्रसन्न हो गये। परन्तु बुद्धगुप्त ने लाघव से नायक का कृपाण वाला हाथ पकड़ लिया और विकट हुँकार से दूसरा हाथ डाल, उसे गिरा दिया। दूसरे ही क्षण प्रभात की किरणों में बुद्धगुप्त का विजयी कृपाण उसके हाथों में चमक उठा। नायक की कातर आँखें प्राण-भिक्षा माँगने लगीं। बुद्धगुप्त ने कहा—"बोलो, अब स्वीकार है कि नहीं?"

"मैं अनुचर हूँ, वरुणदेव की शपथ। मैं विश्वासघात नहीं करूँगा।" बुद्धगुप्त ने उसे छोड़ दिया।

चम्पा ने युवक जलदस्यु के समीप आकर उसके क्षतों को अपनी स्निग्ध दृष्टि और कोमल करों से वेदना-विहीन कर दिया। बुद्धगुप्त के सुगठित शरीर पर रक्त-बिन्दु विजय-तिलक कर रहे थे।

विश्राम लेकर बुद्धगुप्त ने पूछा—"हम लोग कहाँ होंगे?"

"बालीद्वीप से बहुत दूर, सम्भवतः एक नवीन द्वीप के पास, जिसमें अभी हम लोगों का बहुत कम आना-जाना होता है। सिंहल के वणिकों का वहाँ प्राधान्य है।"

"कितने दिनों में हम लोग वहाँ पहुँचेंगे?"

"अनुकूल पवन मिलने पर दो दिन में। तब तक के लिए खाद्य का अभाव न होगा।"

सहसा नायक ने नाविकों को डाँड़ लगाने की आज्ञा दी और स्वयं पतवार पकड़कर बैठ गया। बुद्धगुप्त के पूछने पर उसने कहा—"यहाँ एक जलमग्न शैल-खण्ड है। सावधान न रहने से नाव के टकराने का भय है।"

## (तीन)

"तुम्हें इन लोगों ने बंदी क्यों बनाया?"

"वणिक मणिभद्र की पाप-वासना ने।"

"तुम्हारा घर कहाँ है?"

"जाह्नवी के तट पर। चम्पा-नगरी की एक क्षत्रिय बालिका हूँ। पिता इसी मणिभद्र के यहाँ प्रहरी का काम करते थे। माता का देहावसान हो जाने पर मैं भी पिता के साथ नाव पर ही रहने लगी। आठ बरस से समुद्र ही मेरा घर है। तुम्हारे आक्रमण के समय मेरे पिता ने ही सात दस्युओं को मारकर जल-समाधि ली। एक मास हुआ, मैं इस नील नभ के नीचे, नील जलनिधि के ऊपर, एक भयानक अनंतता में निस्सहाय हूँ–अनाथ हूँ। मणिभद्र ने मुझसे एक दिन घृणित प्रस्ताव किया। मैंने उसे गालियाँ सुनाईं। उसी दिन से बंदी बना दी गई।"—चम्पा रोष से जल रही थी।

"मैं भी ताम्रलिप्ति का एक क्षत्रिय हूँ, चम्पा! परन्तु दुर्भाग्य से जलदस्यु बनकर जीवन बिताता हूँ। अब तुम क्या करोगी?"

"मैं अपने अदृष्ट को अनिर्दिष्ट ही रहने दूँगी। वह जहाँ ले जाय।"—चम्पा की आँखें निस्सीम प्रदेश में निरुद्देश्य थीं। किसी आकांक्षा के लाल डोरे न थे। धवल अपांगों में बालकों के सदृश विश्वास था। हत्या-व्यवसायी दस्यु भी उसे देखकर काँप गया। उसके मन में एक संभ्रमपूर्ण श्रद्धा यौवन की पहली लहरों को जगाने लगी। समुद्र-वक्ष पर बिम्बमयी राग-रंजित संध्या थिरकने लगी। चंपा के असंयत कुंतल उसकी पीठ पर बिखरे थे। दुर्दान्त दस्यु ने देखा, अपनी महिमा में अलौकिक एक वरुण? बालिका! वह विस्मय से अपने हृदय को टटोलने लगा। उसे एक नयी वस्तु का पता चला। वह थी कोमलता।

उसी समय नायक ने कहा—"हम लोग द्वीप के पास पहुँच गये।"

बेला से नाव टकराई। चम्पा निर्भीकता से कूद पड़ी। माँझी भी उतरे। बुद्धगुप्त ने कहा—"जब इसका कोई नाम नहीं है, तो हम लोग इसे चम्पा-द्वीप कहेंगे।"

चम्पा हँस पड़ी।

## (चार)

पाँच बरस बाद......

शरद के धवल नक्षत्र नील गगन में झिलमिला रहे थे। चंद्र की उज्ज्वल विजय पर अंतरिक्ष में शरदलक्ष्मी ने आशीर्वाद के फूलों और खीलों को बिखेर दिया।

चंपा के एक उच्चसौध पर बैठी हुई तरुणी चंपा दीपक जला रही थी। बड़े यत्न से अभ्रक की मंजूषा में दीप धरकर उसने अपनी सुकुमार उँगलियों से डोरी खींची। वह दीपाधार ऊपर चढ़ने लगा। भोली-भोली आँखें उसे ऊपर चढ़ते बड़े हर्ष से देख रही थीं। डोरी धीरे-धीरे खींची गई। चंपा की कामना थी कि उसका आकाश-दीप नक्षत्रों से हिलमिल जाय; किन्तु वैसा होना असम्भव था। उसने आशा-भरी आँखें फेर लीं।

सामने जल-राशि का रजत शृंगार था। वरुण बालिकाओं के लिए लहरें हीरे और नीलम की क्रीड़ा शैल-मालाएँ बना रही थीं—और वे मायाविनी छलनाएँ, अपनी हँसी का कलनाद छोड़कर छिप जाती थीं। दूर-दूर से धीवरों का वंशी-झनकार उनके संगीत-सा मुखरित होता था। चंपा ने देखा कि तरल संकुल जल-राशि में उसके कंडील का प्रतिबिम्ब अस्त-व्यस्त था। वह अपनी पूर्णता के लिए सैकड़ों चक्कर काटता था। वह अनमनी होकर उठ खड़ी हुई। किसी को पास न देखकर पुकारा—"जया!"

एक श्यामा युवती सामने आकर खड़ी हुई। वह जंगली थी। नील नभ-मण्डल से मुख में शुद्ध नक्षत्रों की पंक्ति के समान उसके दाँत हँसते ही रहते। वह चंपा को रानी कहती; बुद्धगुप्त की आज्ञा थी।

"महानाविक कब तक आवेंगे, बाहर पूछो तो।" चंपा ने कहा। जया चली गई।

दूरागत पवन चंपा के अंचल में विश्राम लेना चाहता था। उसके हृदय में गुदगुदी हो रही थी। आज न जाने क्यों वह बेसुध थी। एक दीर्घकाय दृढ़ पुरुष ने उसकी पीठ पर हाथ रख चमत्कृत कर दिया। उसने फिरकर कहा—"बुद्धगुप्त!"

"बावली हो क्या? यहाँ बैठी हुई अभी तक दीप जला रही हो, तुम्हें यह काम करना है?"

"क्षीरनिराधिशायी अनंत की प्रसन्नता के लिए क्या दासियों से आकाशदीप जलवाऊँ?"

"हँसी आती है। तुम किसको दीप जलाकर पथ दिखलाना चाहती हो? उसको, जिसको तुमने भगवान् मान लिया है?"

"हाँ, वह कभी भटकते हैं, भूलते हैं; नहीं तो, बुद्धगुप्त को इतना ऐश्वर्य क्यों देते?"

"तो बुरा क्या हुआ, इस द्वीप की अधीश्वरी चंपारानी!"

"मुझे इस बंदीगृह से मुक्त करो। अब तो बाली, जावा और सुमात्रा का वाणिज्य केवल तुम्हारे ही अधिकार में है महानाविक! परन्तु मुझे उन दिनों की स्मृति सुहावनी लगती है, जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी और चम्पा के उपकूल में पण्य लादकर हम लोग सुखी जीवन बिताते थे—इस जल में अगणित बार हम लोगों की तरी आलोकमय प्रभात में तारिकाओं की मधुर ज्योति में थिरकती थी। बुद्धगुप्त! उस विजन अनंत में जब माँझी सो जाते थे, दीपक बुझ जाते थे, हम-तुम परिश्रम से थककर पालों में शरीर लपेटकर एक-दूसरे का मुँह क्यों देखते थे? वह नक्षत्रों की मधुर छाया—"

"तो चंपा! अब उससे भी अच्छे ढंग से हम लोग विचर सकते हैं। तुम मेरी प्राण-दात्री हो, मेरी सर्वस्व हो।"

"नहीं-नहीं, तुमने दस्युवृत्ति छोड़ दी परन्तु हृदय वैसा ही अकरुण, सतृष्ण और ज्वलनशील है। तुम भगवान् के नाम पर हँसी उड़ाते हो। मेरे आकाश-दीप पर व्यंग्य कर रहे हो। नाविक! उस प्रचण्ड आँधी में प्रकाश की एक-एक किरण के लिए हम लोग कितने व्याकुल थे। मुझे स्मरण है, जब मैं छोटी थी, मेरे पिता नौकरी पर समुद्र में जाते थे—मेरी माता, मिट्टी का दीपक बाँस की पिटारी में भागीरथी के तट पर बाँस के साथ ऊँचे टाँग देती थी। उस समय वह प्रार्थना करती—'भगवान्! मेरे पथ-भ्रष्ट नाविक को अंधकार में ठीक पथ पर ले चलना।' और जब मेरे पिता बरसों बाद लौटते तो कहते—'साध्वी! तेरी प्रार्थना से भगवान् ने भयानक संकटों में मेरी रक्षा की है।' वह गदगद् हो जाती। मेरी माँ? आह नाविक! यह उसी की

पुण्यस्मृति है। मेरे पिता, वीर पिता की मृत्यु के निष्ठुर कारण, जल-दस्यु! हट जाओ।''—सहसा चंपा का मुख क्रोध से भीषण होकर रंग बदलने लगा। महानाविक ने कभी यह रूप न देखा था। वह ठठाकर हँस पड़ा।

''यह क्या, चंपा? तुम अस्वस्थ हो जाओगी, सो रहो।''—कहता हुआ चला गया। चंपा मुट्ठी बाँधे उन्मादिनी-सी घूमती रही।

## (पाँच)

निर्जन समुद्र के उपकूल में वेला में टकराकर लहरें बिखर जाती थीं। पश्चिम का पथिक थक गया था। उसका मुख पीला पड़ गया। अपनी शांत-गम्भीर हलचल में जलनिधि विचार में निमग्न था। वह जैसे प्रकाश की उन्मलिन किरणों से विरक्त था।

चंपा और जया धीरे-धीरे उस तट पर आकर खड़ी हो गईं। तरंग से उठते हुए पवन ने उनके वसन को अस्त-व्यस्त कर दिया। जया के संकेत से एक छोटी-सी नौका आयी। दोनों के उस पर बैठते ही नाविक उतर गया। जया नाव खेने लगी। चंपा मुग्ध-सी समुद्र के उदास वातावरण में अपने को मिश्रित कर देना चाहती थी।

''इतना जल! इतनी शीतलता! हृदय की प्यास न बुझी। पी सकूँगी? नहीं! तो जैसे वेला में चोट खाकर सिंधु चिल्ला उठता है, उसी के समान रोदन करूँ? या जलते हुए स्वर्ण-गोलक सदृश अनंत जल में डूबकर बुझ जाऊँ?''—चंपा के देखते-देखते पीड़ा और ज्वलन से आरक्त बिंब धीरे-धीरे सिंधु में चौथाई-आधा, फिर सम्पूर्ण विलीन हो गया। एक दीर्घ निःश्वास लेकर चंपा ने मुँह फेर लिया। देखा, तो महानाविक का बजरा उसके पास है। बुद्धगुप्त ने झुककर हाथ बढ़ाया। चंपा उसके सहारे बजरे पर चढ़ गई। दोनों पास-पास बैठ गये।

''इतनी छोटी नाव पर इधर घूमना ठीक नहीं। पास ही वह जलमग्न शैलखण्ड है। कहीं नाव टकरा जाती या ऊपर चढ़ जाती चंपा तो?''

''अच्छा होता, बुद्धगुप्त! जल में बंदी होना कठोर प्राचीरों से तो अच्छा है।''

''आह चंपा, तुम कितनी निर्दय हो! बुद्धगुप्त को आज्ञा देकर देखो तो, वह क्या नहीं कर सकता। जो तुम्हारे लिये नये द्वीप की सृष्टि कर सकता है, नयी प्रजा खोज सकता है, नये राज्य खोज सकता है, उसकी परीक्षा लेकर देखो तो.....। कहो, चंपा! वह कृपाण से अपना हृदय-पिंड निकाल अपने हाथों अतल जल में विसर्जन कर दे।'' महानाविक जिसके नाम से बाली, जावा और चंपा का आकाश गूँजता था, पवन थर्राता था, घुटनों के बल चंपा के सामने छलछलाई आँखों से बैठा था।

सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में विस्तृत जल-देश में, नील पिंगल संध्या, प्रकृति की सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया स्वप्नलोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्यपूर्ण नीलजाल का कुहक स्फुट हो उठा। जैसे मदिरा से सारा अंतरिक्ष सिक्त हो गया। सृष्टि नील कमलों में भर उठी। उस सौरभ से पागल चंपा ने बुद्धगुप्त के दोनों हाथ पकड़ लिये। वहाँ एक आलिंगन हुआ, जैसे क्षितिज में आकाश और सिंधु का किन्तु उस परिरम्भ में सहसा चैतन्य होकर चंपा ने अपनी कंचुकी से एक कृपाण निकाल लिया।

''बुद्धगुप्त! आज मैं अपने प्रतिशोध का कृपाण अतल जल में डुबा देती हूँ। हृदय ने छल किया, बार-बार धोखा दिया।''—चमककर वह कृपाण समुद्र का हृदय बेधता हुआ विलीन हो गया।

''तो आज से मैं विश्वास करूँ, क्षमा कर दिया गया?''—आश्चर्यकंपित कंठ से महानाविक ने पूछा।

''विश्वास? कदापि नहीं, बुद्धगुप्त! जब मैं अपने हृदय पर विश्वास नहीं कर सकी, उसी ने धोखा दिया, तब मैं कैसे कहूँ? मैं तुम्हें घृणा करती हूँ, फिर भी तुम्हारे लिये मर सकती हूँ। अँधेर है जलदस्यु। तुम्हें प्यार करती हूँ।''—चंपा रो पड़ी।

वह स्वप्नों की रंगीन संध्या, तम से अपनी आँखें बंद करने लगी थी। दीर्घ निःश्वास लेकर महानाविक ने कहा—''इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति से एक प्रकाश-गृह बनाऊँगा, चंपा! यहीं उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुँधली संध्या उससे आलोकपूर्ण हो जाय।''

## (छह)

चंपा के दूसरे भाग में एक मनोरम शैलमाला थी। वह बहुत दूर तक सिंधु-जल में निमग्न थी। सागर का चंचल जल उस पर उछलता हुआ उसे छिपाये था। आज उसी शैलमाला पर चंपा के आदि-निवासियों का समारोह था। उन सबों ने चंपा

को वनदेवी-सा सजाया था। ताम्रलिप्ति के बहुत से सैनिक नाविकों की श्रेणी में वन-कुसुम-विभूषिता चंपा शिविका रूढ़ होकर जा रही थी।

शैल के एक ऊँचे शिखर पर चंपा के नाविकों को सावधान करने के लिए सुदृढ़ दीप-स्तंभ बनवाया गया था। आज उसी का महोत्सव है। बुद्धगुप्त स्तंभ के द्वार पर खड़ा था। शिविका से सहायता देकर चंपा को उसने उतारा। दोनों ने भीतर पदार्पण किया था कि बाँसुरी और ढोल बजने लगे। पंक्तियों में कुसुम-भूषण से सजी वन-बालाएँ फूल उछालती हुई नाचने लगीं।

दीप-स्तंभ की ऊपरी खिड़की से यह देखती हुई चंपा ने जया से पूछा—"यह क्या है जया? इतनी बालिकाएँ कहाँ से बटोर लायी?"

"आज रानी का ब्याह है न?"—कहकर जया ने हँस दिया।

बुद्धगुप्त विस्तृत जलनिधि की ओर देख रहा था। उसे झकझोर कर चंपा ने पूछा—"क्या यह सच है?"

"यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो यह सच भी हो सकता है, चंपा! कितने वर्षों से मैं ज्वालामुखी को अपनी छाती में दबाये हूँ।"

"चुप रहो, महानाविक! क्या मुझे निस्सहाय और कंगाल जानकर तुमने आज सब प्रतिशोध लेना चाहा?"

"मैं तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ, चंपा! वह एक-दूसरे दस्यु के शस्त्र से मरे!"

"यदि मैं इसका विश्वास कर सकती! बुद्धगुप्त, वह दिन कितना सुन्दर होता, वह क्षण कितना स्पृहणीय! आह! तुम इस निष्ठुरता में भी कितने महान् होते!"

जया नीचे चली गई थी। स्तम्भ के संकीर्ण प्रकोष्ठ में बुद्धगुप्त और चंपा एकांत में एक-दूसरे के सामने बैठे थे।

बुद्धगुप्त ने चंपा के पैर पकड़ लिये। उच्छ्वसित शब्दों में वह कहने लगा—"चंपा, हम लोग जन्मभूमि-भारतवर्ष से कितनी दूर इन निरीह प्राणियों में इंद्र और शची के समान पूजित हैं पर न जाने कौन अभिशाप हम लोगों को अभी तक अलग किये है। स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश! वह महिमा की प्रतिमा! मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है; परन्तु मैं क्यों नहीं जाता? जानती हो, इतना महत्त्व प्राप्त करने पर भी मैं कंगाल हूँ! मेरा पत्थर-सा हृदय एक दिन सहसा तुम्हारे स्पर्श से चंद्रकांतमणि की तरह द्रवित हुआ।"

"चंपा! मैं ईश्वर को नहीं मानता, मैं पाप को नहीं मानता, मैं दया को नहीं समझ सकता, मैं उस लोक में विश्वास नहीं करता। पर मुझे अपने हृदय के एक दुर्बल अंश पर श्रद्धा हो चली है। तुम न जाने कैसे एक बहकी हुई तारिका के समान मेरे शून्य में उदित हो गई हो। आलोक की एक कोमल रेखा इस निविड़ तम में मुस्कराने लगी। पशु-बल और धन के उपासक के मन में किसी शांत और एकांत कामना की हँसी खिलखिलाने लगी; पर मैं न हँस सका।"

"चलोगी चंपा? पोतवाहिनी पर असंख्य धनराशि लादकर राजरानी-सी जन्मभूमि अंक में? आज हमारा परिणय हो, कल ही हम लोग भारत के लिए प्रस्थान करें। महानाविक बुद्धगुप्त की आज्ञा सिंधु लहरें मानती हैं। वे स्वयं उस पोत-पुंज को दक्षिण पवन के समान भारत में पहुँचा देंगी। आह चंपा! चलो।"

चंपा ने उसके हाथ पकड़ लिये। किसी आकस्मिक झटके ने एक पल भर के लिए दोनों के अधरों को मिला दिया। सहसा चैतन्य होकर चंपा ने कहा—"बुद्धगुप्त! मेरे लिये सब भूमि मिट्टी है; सब जल तरल है; सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक! तुम स्वदेश लौट जाओ, विभवों का सुख भोगने के लिए, और मुझे, छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुःख की सहानुभूति और सेवा के लिए।"

"तब मैं अवश्य चला जाऊँगा, चंपा! यहाँ रहकर मैं अपने हृदय पर अधिकार रख सकूँ-इसमें सन्देह है। आह! इन लहरों में मेरा विनाश हो जाय।" महानाविक के उच्छ्वास में विकलता थी। फिर उसने पूछा—"तुम अकेली यहाँ क्या करोगी?"

"पहले विचार था कि कभी-कभी इस दीप-स्तंभ पर से आलोक जलाकर अपने पिता की समाधि का इस जल में अन्वेषण करूँगी। किन्तु देखती हूँ, मुझे भी इसी में जलना होगा, जैसे आकाश-दीप।"

## (सात)

एक दिन स्वर्ण-रहस्य के प्रभात में चंपा ने अपने दीप-स्तम्भ पर से देखा—सामुद्रिक नावों की एक श्रेणी चंपा का उपकूल छोड़कर पश्चिम-उत्तर की ओर महा जलव्याल के समान संतरण कर रही है। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

यह कितनी ही शताब्दियों पहले की कथा है। चंपा आजीवन उस दीप-स्तम्भ में आलोक जलाती ही रही। किन्तु उसके बाद भी बहुत दिन, दीप-निवासी, उस माया-ममता और स्नेह-सेवा की देवी की समाधि-सदृश पूजा करते थे।

एक दिन काल के कठोर हाथों ने उसे भी अपनी चंचलता से गिरा दिया।

# अभ्यास प्रश्न

1. कहानी-कला की दृष्टि से 'आकाशदीप' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।
2. भाषा-शैली की दृष्टि से 'आकाशदीप' कहानी की समीक्षा कीजिए।
3. श्रेष्ठ कहानी की विशेषताएँ बताते हुए 'आकाशदीप' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।
4. 'आकाशदीप' कहानी के माध्यम से प्रसादजी ने कौन-सा आदर्श रखना चाहा है?
5. ''प्रसाद की नाटकीय एवं कवित्वपूर्ण भाषा ने 'आकाशदीप' कहानी को अत्यन्त प्रभावपूर्ण बना दिया है।'' इस कथन की पुष्टि कीजिए।
6. चंपा ने बुद्धगुप्त के निवेदन को क्यों ठुकराया? क्या चम्पा के हृदय में बुद्धगुप्त के लिए कोई स्थान नहीं था? अपने विचार व्यक्त कीजिए।
7. 'आकाशदीप' कहानी के कथा-संगठन पर प्रकाश डालिए।
8. 'अन्तर्द्वन्द्व' शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए चम्पा के अन्तर्द्वन्द्व का उल्लेख कीजिए।
9. 'आकाशदीप' कहानी के शीर्षक की सार्थकता बताइए।
10. 'आकाशदीप' कहानी के आधार पर लेखक का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
11. 'आकाशदीप' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
12. 'आकाशदीप' कहानी में सजीव ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि किस प्रकार की गयी है?
13. सिद्ध कीजिए 'आकाशदीप' कहानी की सफलता उसमें निहित वैचारिक द्वन्द्व है।
14. 'आकाशदीप' कहानी की कथावस्तु का उल्लेख करते हुए उसके नामकरण की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।
15. 'आकाशदीप' कहानी का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।
16. कहानी तत्त्वों के आधार पर 'आकाशदीप' कहानी की समीक्षा कीजिए।
17. जयशंकर प्रसाद की संकलित कहानी के आधार पर 'चम्पा' का चरित्र-चित्रण कीजिए।
18. 'आकाशदीप' कहानी की कथावस्तु व शीर्षक की समीक्षा कीजिए।
19. 'आकाशदीप' कहानी की विषय-वस्तु संक्षेप में लिखिए।
20. 'आकाशदीप' कहानी के आधार पर उसके नायक की चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
21. 'आकाशदीप' कहानी के मुख्य पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
22. 'आकाशदीप' कहानी के नायक का चरित्र-चित्रण कीजिए।
23. 'आकाशदीप' कहानी के नायक की चारित्रिक विशेषताएँ बताइए।
24. कहानी कला के तत्त्वों के आधार पर 'आकाशदीप' कहानी की समीक्षा कीजिए।

# 3 भगवतीचरण वर्मा

## ➥ व्यक्तित्व

भगवतीचरण वर्मा का जन्म 1903 ई० में उन्नाव जिले के शफीपुर में हुआ था। आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से बी०ए०, एल-एल०बी० तक की शिक्षा प्राप्त की। वर्माजी ने प्रायः सभी विधाओं में साहित्य-सर्जना की है। हिन्दी साहित्य में आपका पदार्पण छायावाद की नवीन धारा के कवि के रूप में हुआ था तथा प्रगतिशील कवियों में आपने अपना विशिष्ट स्थान बनाया। वर्माजी एक सफल उपन्यासकार तो थे ही, उच्चकोटि के व्यंग्यात्मक कहानीकार के रूप में भी आप प्रतिष्ठित हुए। फिल्म तथा आकाशवाणी कार्यक्रमों में भी आपने नाम कमाया। 1981 ई० में आपका देहावसान लखनऊ में हो गया।

## ➥ कृतित्व

वर्माजी के कहानी संग्रह हैं—**इन्स्टालमेण्ट, दो बाँके** तथा **राख और चिनगारी**। **'मोर्चाबन्दी'** नाम से इनकी व्यंग्य कथाओं का संग्रह प्रकाशित हुआ है। आपके उपन्यास हैं—**पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, सामर्थ्य और सीमा-रेखा, सीधी-सच्ची बातें, सबहिं नचावत राम गुसाईं, प्रश्न और मारीचिका**। आपने कविताएँ, रेडियो-रूपक तथा नाटक भी लिखे हैं।

## ➥ कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

वर्माजी की गणना अपने युग के शीर्षस्थ कहानीकारों में की जाती है। आपकी कहानियों में कला की सजीवता पाठक को मुग्ध कर देती है। सरलता, स्पष्टता, सहजता एवं व्यंग्यात्मक अभिव्यंजना आपकी कहानियों की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

आपकी कहानियों में अधिकतर सामाजिक परिवेशों तथा पारिवारिक प्रसंगों को कथानक के रूप में लिया गया है। कथानक लघु किन्तु कलापूर्ण एवं सव्यंग्य हैं। नगण्य एवं सामान्य घटनाओं का मार्मिक तथा चुटीला प्रस्तुतीकरण आपकी विशेषता है। शीर्षक आकर्षक एवं कुतूहलवर्धक होते हैं। वर्माजी ने मुख्यतः चरित्रप्रधान, समस्याप्रधान अथवा विचारप्रधान कहानियाँ लिखी हैं। कहानियों के पात्र समाज के विभिन्न वर्गों से चुने गये हैं। वर्गीय पात्रों के चरित्र-चित्रण में आपने मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर उन्हें सजीव बना दिया है। पात्रों के मनोगत भावों को स्पष्ट करने तथा उनकी मनोग्रन्थियों को खोलने में आपका कौशल देखते ही बनता है।

आपकी कहानियों में कथोपकथनों की योजना मनोरंजक ढंग से की गयी है। कथोपकथन संक्षिप्त एवं सार्थक हैं तथा पात्रों के मनोगत भावों को व्यक्त करने में समर्थ हैं। लेखक ने नाटकीयता का पुट देकर संवादों को अत्यन्त सजीव तथा वातावरणपरक बना दिया है।

**'दो बाँके'**, **'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी'**, **'प्रायश्चित'**, **'काश मैं कह सकता'**, **'विक्टोरिया क्रास'**, **'कायरता'**, **'वसीयत'** आदि आपकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

आपकी भाषा-शैली सरल, सहज एवं व्यावहारिक है। शैली में व्यंग्य के साथ-साथ प्रवाह है तथा वह पात्रों के अनुकूल एवं परिस्थिति के अनुसार बदलती है। आपकी अधिकतर कहानियों में शिष्ट हास्य एवं परिमार्जित व्यंग्य पाठक को प्रभावित करते रहते हैं।

परिस्थिति एवं प्रसंग के उपयुक्त, रोचक एवं प्रभावशाली वातावरण चित्रित करने में वर्मा जी सिद्धहस्त थे। आपकी कहानियाँ जीवन की विकृतियों और विसंगतियों को पाठक के समक्ष न केवल उद्घाटित करती हैं, अपितु यथार्थ अनुभव के प्रति पाठक को संवेदनशील भी बनाती हैं।

●●●

# प्रायश्चित

अगर कबरी बिल्ली घर भर में किसी से प्रेम करती थी, तो रामू की बहू से और अगर रामू की बहू घर भर में किसी से घृणा करती थी, तो कबरी बिल्ली से। रामू की बहू, दो महीने हुए मायके से प्रथम बार ससुराल आयी थी, पति की प्यारी और सास की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका। भण्डार-घर की चाभी उसकी करधनी में लटकने लगी, नौकरों पर उसका हुक्म चलने लगा, और रामू की बहू घर में सबकुछ। सास जी ने माला ली और पूजा-पाठ में मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्ष की बालिका, कभी भण्डार-घर खुला है, तो कभी भण्डार-घर में बैठे-बैठे सो गयी। कबरी बिल्ली को मौका मिला, घी-दूध पर अब वह जुट गयी। रामू की बहू की जान आफत में और कबरी बिल्ली के छक्के-पंजे। रामू की बहू हाँडी में घी रखते-रखते ऊँघ गयी और बचा हुआ घी कबरी के पेट में। रामू की बहू दूध ढँककर मिसरानी को जिन्स देने गयी और दूध नदारद। अगर यह बात यहीं तक रह जाती, तो भी बुरा न था, कबरी रामू की बहू से कुछ परच गयी थी कि रामू की बहू के लिए खाना-पीना दुश्वार। रामू की बहू के कमरे में रबड़ी से भरी कटोरी पहुँची और रामू जब आये तब कटोरी साफ चटी हुई। बाजार से मलाई आयी और जब तक रामू की बहू ने खाना लगाया मलाई गायब।

रामू की बहू ने तै कर लिया कि या तो वही घर में रहेगी या फिर कबरी बिल्ली ही। मोरचाबन्दी हो गयी और दोनों सतर्क। बिल्ली फँसाने का कठघरा आया, उसमें दूध, मलाई, चूहे और भी बिल्ली को स्वादिष्ट लगनेवाले विविध प्रकार के व्यंजन रखे गये, लेकिन बिल्ली ने उधर निगाह तक न डाली। इधर कबरी ने सरगर्मी दिखलायी। अभी तक तो वह रामू की बहू से डरती थी; पर अब वह साथ लग गयी, लेकिन इतने फासिले पर कि रामू की बहू उस पर हाथ न लगा सके।

कबरी के हौसले बढ़ जाने से रामू की बहू को घर में रहना मुश्किल हो गया। उसे मिलती थी सास की मीठी झिड़कियाँ और पतिदेव को मिलता था रूखा-सूखा भोजन।

एक दिन रामू की बहू ने रामू के लिए खीर बनायी। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह-तरह के मेवे दूध में औटाए गये, सोने का वर्क चिपकाया गया और खीर से भरकर कटोरा कमरे के एक ऐसे ऊँचे ताक पर रखा गया, जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामू की बहू इसके बाद पान लगाने में लग गयी।

उधर बिल्ली कमरे में आयी, ताक के नीचे खड़े होकर उसने ऊपर कटोरे की ओर देखा, सूँघा, माल अच्छा है, ताक की ऊँचाई अन्दाजी और रामू की बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामू की बहू सास जी को पान देने चली गयी और कबरी ने छलाँग मारी, पंजा कटोरे में लगा और कटोरा झनझनाहट की आवाज के साथ फर्श पर।

आवाज रामू की बहू के कान में पहुँची, सास के सामने पान फेंककर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फूल का कटोरा टुकड़े-टुकड़े, खीर फर्श पर बिल्ली डटकर खीर उड़ा रही है। रामू की बहू को देखते ही कबरी चम्पत।

रामू की बहू पर खून सवार हो गया, न रहे बाँस न बजे बाँसुरी, रामू की बहू ने कबरी की हत्या पर कमर कस ली। रात भर उसे नींद न आयी, किस दाँव से कबरी पर वार किया जाय कि फिर जिन्दा न बचे, यही पड़े-पड़े सोचती रही। सुबह हुई और वह देखती है कि कबरी देहरी पर बैठी बड़े प्रेम से उसे देख रही है।

रामू की बहू ने कुछ सोचा, इसके बाद मुस्कराती हुई वह उठी, कबरी रामू की बहू के उठते ही खिसक गयी। रामू की बहू एक कटोरा दूध कमरे के दरवाजे की देहरी पर रखकर चली गयी। हाथ में पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूध पर जुटी हुई है। मौका हाथ में आ गया, सारा बल लगाकर पाटा उसने बिल्ली पर पटक दिया। कबरी न हिली न डुली, न चीखी न चिल्लाई, बस एकदम उलट गयी।

आवाज जो हुई तो महरी झाड़ू छोड़कर, मिसरानी रसोई छोड़कर और सास पूजा छोड़कर घटनास्थल पर उपस्थित हो गयीं। रामू की बहू सिर झुकाये हुए अपराधिनी की भाँति बातें सुन रही है।

महरी बोली—"अरे राम! बिल्ली तो मर गयी, माँ जी, बिल्ली की हत्या बहू से हो गयी, यह तो बुरा हुआ।"

मिसरानी बोली—"माँ जी, बिल्ली की हत्या और आदमी की हत्या बराबर है, हम तो रसोई न बनावेंगी, जब तक बहू के सिर हत्या रहेगी।"

सास जी बोलीं—"हाँ ठीक तो कहती हो, अब जब तक बहू के सिर से हत्या न उतर जाय, तब तक न कोई पानी पी सकता है न खाना खा सकता है। बहू, यह क्या कर डाला?"

महरी ने कहा—"फिर क्या हो, कहो तो पण्डित जी को बुलाए लाएँ।"

सास की जान में जान आयी—"अरे हाँ, जल्दी दौड़ के पण्डित जी को बुला ला।"

बिल्ली की हत्या की खबर बिजली की तरह पड़ोस में फैल गयी—पड़ोस की औरतों का रामू के घर में ताँता बँध गया। चारों तरफ से प्रश्नों की बौछार और रामू की बहू सिर झुकाये बैठी।

पण्डित परमसुख को जब यह खबर मिली, उस समय वे पूजा कर रहे थे। खबर पाते ही वे उठ पड़े—पण्डिताइन से मुस्कराते हुए बोले—"भोजन न बनाना, लाला घासीराम की पतोहू ने बिल्ली मार डाली, प्रायश्चित होगा, पकवानों पर हाथ लगेगा।"

पण्डित परमसुख चौबे छोटे-से, मोटे-से आदमी थे। लम्बाई चार फीट दस इंच और तोंद का घेरा अट्ठावन इंच। चेहरा गोल-मटोल, मूँछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुँचती हुई।

कहा जाता है कि मथुरा में जब पंसेरी खुराकवाले पण्डितों को ढूँढ़ा जाता था, तो पण्डित परमसुख जी को उस लिस्ट में प्रथम स्थान दिया जाता था।

पण्डित परमसुख पहुँचे और कोरम पूरा हुआ। पंचायत बैठी—सास जी, मिसरानी, किसनू की माँ, छन्नू की दादी और पण्डित परमसुख! बाकी स्त्रियाँ बहू से सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनू की माँ ने कहा—"पण्डित जी, बिल्ली की हत्या करने से कौन नरक मिलता है?"

पण्डित परमसुख ने पत्रा देखते हुए कहा, "बिल्ली की हत्या अकेले से तो नरक का नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महूरत जब मालूम हो, जब बिल्ली की हत्या हुई, तब नरक का पता लग सकता है।"

"यही कोई सात बजे सुबह"—मिसरानी जी ने कहा।

पण्डित परमसुख ने पत्रे के पन्ने उलटे, अक्षरों पर उँगलियाँ चलाईं, मत्थे पर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरे पर धुँधलापन आया, माथे पर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गम्भीर हो गया—'हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल ब्रह्म-मुहूर्त में बिल्ली की हत्या! घोर कुम्भीपाक नरक का विधान है! रामू की माँ, यह तो बड़ा बुरा हुआ।'

रामू की माँ की आँखों में आँसू आ गये—"तो फिर पण्डित जी, अब क्या होगा, आप ही बतलाएँ!"

पण्डित परमसुख मुस्कराए—"रामू की माँ, चिन्ता की कौन-सी बात है, हम पुरोहित फिर कौन दिन के लिए हैं? शास्त्रों में प्रायश्चित का विधान है, सो प्रायश्चित से सबकुछ ठीक हो जाएगा।"

रामू की माँ ने कहा—"पण्डित जी, उसी लिये तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाय!"

"किया क्या जाय, यही एक सोने की बिल्ली बनवाकर बहू से दान करवा दी जाय। जब तक बिल्ली न दे दी जाएगी, तब तक तो घर अपवित्र रहेगा। बिल्ली दान देने के बाद इक्कीस दिन का पाठ हो जाय।"

छन्नू की दादी—"हाँ और क्या, पण्डित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली अभी दान दे दी जाय और पाठ फिर हो जाय।"

रामू की माँ ने कहा—"तो पण्डित जी, कितने तोले की बिल्ली बनवाई जाय?"

पण्डित परमसुख मुस्कराये, अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा—"बिल्ली कितने तोले की बनवायी जाय? अरे रामू की माँ, शास्त्रों में तो लिखा है कि बिल्ली के वजन-भर सोने की बिल्ली बनवायी जाय, लेकिन अब कलियुग आ गया है, धर्म-कर्म नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामू की माँ, बिल्ली के तौलभर की बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योंकि बिल्ली बीस-इक्कीस सेर से कम की क्या होगी। हाँ, कम-से-कम इक्कीस तोले की बिल्ली बनवा के दान करवा दो, और आगे तो अपनी-अपनी श्रद्धा!"

रामू की माँ ने आँखें फाड़कर पण्डित परमसुख को देखा—"अरे बाप रे, इक्कीस तोला सोना! पण्डित जी यह तो बहुत है, तोलाभर की बिल्ली से काम न निकलेगा?"

पण्डित परमसुख हँस पड़े—"रामू की माँ! एक तोला सोने की बिल्ली! अरे रुपया का लोभ बहू से बढ़ गया? बहू के सिर बड़ा पाप है, इसमें इतना लोभ ठीक नहीं!"

मोल-तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोले की बिल्ली पर ठीक हो गया। इसके बाद पूजा-पाठ की बात आयी। पण्डित परमसुख ने कहा—"उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिए हैं, रामू की माँ, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।"

"पूजा का सामान कितना लगेगा?"

'अरे, कम-से-कम सामान में हम पूजा कर देंगे, दान के लिए करीब दस मन गेहूँ, एक मन चावल, एक मन दाल, मनभर तिल, पाँच मन जौ और पाँच मन चना, चार पसेरी घी और मन भर नमक भी लगेगा। बस, इतने से काम चल जाएगा।"

"अरे बाप रे, इतना सामान! पण्डित जी इसमें तो सौ-डेढ़ सौ रुपया खर्च हो जाएगा"—रामू की माँ ने रुआँसी होकर कहा।

"फिर इससे कम में तो काम न चलेगा। बिल्ली की हत्या कितना बड़ा पाप है, रामू की माँ! खर्च को देखते वक्त पहले बहू के पाप को तो देख लो! यह तो प्रायश्चित में उसे वैसा खर्च भी करना पड़ता है। आप लोग कोई ऐसे-वैसे थोड़े हैं, अरे सौ-डेढ़ सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।"

पण्डित परमसुख की बात से पंच प्रभावित हुए, किसनू की माँ ने कहा—"पण्डित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली की हत्या कोई ऐसा-वैसा पाप तो है नहीं। बड़े पाप के लिए बड़ा खर्च भी चाहिए।"

छन्नू की दादी ने कहा—"और नहीं तो क्या, दान-पुन्न से ही पाप कटते हैं—दान-पुन्न में किफायत ठीक नहीं।"

मिसरानी ने कहा—"और फिर माँ जी आप लोग बड़े आदमी ठहरे। इतना खर्च कौन आप लोगों को अखरेगा।"

रामू की माँ ने अपने चारों ओर देखा—सभी पंच पण्डित जी के साथ। पण्डित परमसुख मुस्करा रहे थे। उन्होंने कहा—"रामू की माँ! एक तरफ तो बहू के लिए कुम्भीपाक नरक है और दूसरी तरफ तुम्हारे जिम्मे थोड़ा-सा खर्चा है। सो उससे मुँह न मोड़ो।"

एक ठण्डी साँस लेते हुए रामू की माँ ने कहा—"अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।"

पण्डित परमसुख जरा कुछ बिगड़कर बोले—"रामू की माँ! यह तो खुशी की बात है—अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो, मैं चला"—इतना कहकर पण्डित जी ने पोथी-पत्रा बटोरा।

"अरे पण्डित जी—रामू की माँ को कुछ नहीं अखरता—बेचारी को कितना दुःख है—बिगड़ो न!" मिसरानी, छन्नू की दादी और किसनू की माँ ने एक स्वर में कहा।

रामू की माँ ने पण्डित जी के पैर पकड़े—और पण्डित जी ने अब जमकर आसन जमाया।

"और क्या हो?"

"इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपए और इक्कीस दिन तक दोनों बखत पाँच-पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा।" कुछ रुककर पण्डित परमसुख ने कहा—"सो इसकी चिंता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करने से पाँच ब्राह्मण के भोजन का फल मिल जाएगा।"

"यह तो पण्डित जी ठीक कहते हैं, पण्डित जी की तोंद तो देखो!" मिसरानी ने मुसकराते हुए पण्डित जी पर व्यंग्य किया।

"अच्छा तो फिर प्रायश्चित का प्रबन्ध करवाओ रामू की माँ, ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊँ—दो घण्टे में मैं बनवाकर लौटूँगा, तब तक सब पूजा का प्रबन्ध कर रखो—और देखो पूजा के लिए..."

पण्डित जी की बात खतम भी न हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुस आयी और सब लोग चौंक उठे। रामू की माँ ने घबराकर कहा—"अरी क्या हुआ री?"

महरी ने लड़खड़ाते स्वर में कहा—"माँ जी, बिल्ली तो उठकर भाग गई।"

# अभ्यास प्रश्न

1. 'प्रायश्चित' कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'प्रायश्चित' कहानी के प्रमुख तत्त्वों के आधार पर विशेषताएँ लिखिए।
3. 'प्रायश्चित' कहानी में लेखक ने समाज की किस घातक मनोवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है?
4. वातावरण एवं भाषा-शैली की दृष्टि से 'प्रायश्चित' कहानी की समीक्षा कीजिए।
5. सप्रमाण सिद्ध कीजिए कि 'प्रायश्चित' एक सफल कहानी है।
6. वर्माजी को मानव-समाज की गहरी परख है। इस कथन की व्याख्या 'प्रायश्चित' के पात्रों के आधार पर कीजिए।
7. "जिज्ञासा की उत्तरोत्तर वृद्धि अच्छी कहानी की पहचान है।" इस कथन के आधार पर 'प्रायश्चित' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।
8. 'प्रायश्चित' कहानी के आधार पर पण्डित परमसुख का चरित्र-चित्रण कीजिए।
9. 'प्रायश्चित' कहानी में सामाजिक रूढ़ियों और धर्मान्धताओं पर प्रहार और व्यंग्य का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
10. 'प्रायश्चित' कहानी जिज्ञासा-भाव से परिपूर्ण है—इस कथन का औचित्य सिद्ध कीजिए।
11. श्रेष्ठ कहानी की विशेषताएँ बताते हुए 'प्रायश्चित' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।
12. सिद्ध कीजिए कि 'प्रायश्चित' कहानी की सफलता उसमें निहित घटनाओं पर आधारित है।
13. कहानी-कला की दृष्टि से 'प्रायश्चित' कहानी की समीक्षा कीजिए।
14. 'प्रायश्चित' कहानी की कहानी तत्त्वों के आधार पर समीक्षा कीजिए।
15. 'प्रायश्चित' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
16. भगवतीचरण वर्मा की संकलित कहानी की कथावस्तु की समीक्षा कीजिए।
17. 'प्रायश्चित' कहानी का कथानक अपनी भाषा में लिखिए।
18. 'प्रायश्चित' कहानी के आधार पर पण्डित परमसुख का चित्रांकन कीजिए।
19. 'प्रायश्चित' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।

# 4 यशपाल

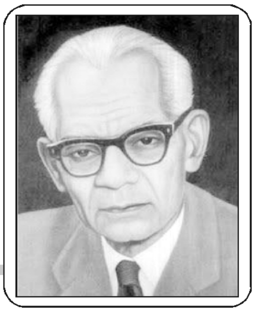

## ➡ व्यक्तित्व

यशपाल का जन्म 1903 ई० में फिरोजपुर छावनी (पंजाब) में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल-कांगड़ी में हुई, जहाँ के राष्ट्रीय वातावरण ने उनके मन को प्रभावित एवं उद्वेलित किया। तत्पश्चात् नेशनल कालेज, लाहौर में आप भगतसिंह तथा सुखदेव जैसे क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में आये और अन्य सशस्त्र-क्रान्तिकारी-आन्दोलनों में सक्रिय हो उठे। राजद्रोह के अभियोग में आपको कारावास का दण्ड मिला। आपने लखनऊ से एक लोकप्रिय मासिक पत्र 'विप्लव' प्रकाशित किया। जेल-जीवन में भी आप स्वाध्याय तथा कहानी-लेखन में रत रहे। आपका देहावसान 26 दिसम्बर, 1976 ई० को हुआ।

## ➡ कृतित्व

यशपाल जी के कथा-संकलन हैं—**'पिंजरे की उड़ान'**, **'ज्ञानदान'**, **'अभिशप्त'**, **'तर्क का तूफान'**, **'भस्मावृत'**, **'चिन्गारी'**, **'वो दुनिया'**, **'फूलो का कुर्ता'**, **'धर्मयुद्ध'**, **'उत्तराधिकारी'**, **'चित्र का शीर्षक'**, **'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुन्दर हूँ; 'बीबीजी कहती हैं'**; **'मेरा चेहरा रौबीला है'**। **'दादा कामरेड'**, **'देशद्रोही'**, **'पार्टी कामरेड'**, **'दिव्या'**, **'मनुष्य के रूप में'**, **'अमिता'** तथा **'झूठा-सच'** आपके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। आपके निबन्धों तथा संस्मरणों के संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं।

## ➡ कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

यशपाल जी यशस्वी कथाकार थे। यथार्थवादी तथा प्रगतिशील कहानीकारों में आपका विशिष्ट स्थान है। आपकी कहानियों में जीवन-संघर्ष में रत सन्तप्त मानव का स्वर मुखर हो उठा है। आप पर मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव था।

आपने समस्या-प्रधान कहानियों की रचना की है। आपकी कहानियों के कथानक सरल एवं स्पष्ट हैं। वे अधिकतर मध्यवर्गीय जीवन से चुने गये हैं। कथावस्तु जन-जीवन के व्यापक क्षेत्र से सम्बद्ध है तथा सामाजिक जीवन के विविध पक्षों को प्रस्तुत करती है। आपने विविध वर्गों, स्थितियों एवं जातियों के पात्रों का चयन किया है तथा उनके जीवन-संघर्ष, विद्रोह एवं उत्साह के सजीव चित्र प्रस्तुत किये हैं। चरित्र-चित्रण मनोवैज्ञानिक है। यशपाल सामाजिक-जीवन के सन्दर्भ में मानव के मानसिक द्वन्द्वों के कथाकार थे। आपकी प्रमुख कहानियाँ हैं—**'धर्मयुद्ध'**, **'फूल की चोरी'**, **'चार आने'**, **'अभिशप्त'**, **'कर्मफल'**, **'फूलो का कुर्ता'**, **'पाँव तले की डाल'**, **'वर्दी'**, **'उत्तमी की माँ'** आदि।

आपकी कहानियाँ जन-सामान्य से सम्बद्ध हैं, अतः आपकी कहानियों की भाषा-शैली व्यावहारिक एवं सरल है। आपने सर्व-सामान्य में प्रचलित अन्य भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग किया है। मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग से रोचकता में वृद्धि हुई है। सामाजिक विकृतियों पर आपने बड़े तीखे व्यंग्य किये हैं। कहानियों में कथोपकथन अकृत्रिम एवं स्वाभाविक हैं। वे पात्रों की मनोदशा का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करने के साथ-साथ कथावस्तु को विकसित करने में योग देते थे।

# समय

पापा की अवचेतना में रिटायर हो जाने से डेढ़-दो वर्ष पूर्व से ही चिन्ता सिर उठाने लगी थी—रिटायर हो जाने पर अवकाश का बोझ कैसे सँभलेगा? अपनी इस चिन्ता का निराकरण करने के लिए प्रायः ही कहने लगते—"लोग-बाग रिटायर होकर निरुत्साह क्यों हो जाते हैं? सोचिये नौकरी करते समय अवकाश के दिनों की प्रतीक्षा की जाती है। जब दीर्घ श्रम के पुरस्कार में पूर्ण अवकाश का अवसर आ जाये तो निरुत्साह होने का क्या कारण? इसे तो अपने श्रम का अर्जित फल मानकर, उससे पूरा लाभ उठाना और सन्तोष पाना चाहिए। अभाव होगा या मुक्ति मिलेगी केवल मजबूरी से, ड्यूटी की मजबूरी से। आराम और अपनी इच्छा से श्रम करने में तो कोई बाधा नहीं डालेगा। अध्ययन का मनचाहा अवसर होगा और पर-आदेश से मुक्ति। इससे बड़ा सन्तोष दूसरा क्या चाहिए?"

पापा के मन में बुढ़ापे और बुजुर्गी से या कहिए बूढ़े और बुजुर्ग समझे जाने से सदा विरक्ति रही है। रिटायर होने पर मितव्ययिता के विचार से गर्मियों में पहाड़ जाना छोड़ दिया है। सर्विस के समय गर्मियों में महीने-दो-महीने हिल स्टेशनों पर रह लेने का बहुत शौक था। प्रतिवर्ष नहीं तो दूसरे वर्ष अवश्य पहाड़ जाते थे। पहाड़ जाते तो चढ़ाइयों पर सुविधा से चल सकने के लिए एक-दो छड़ियाँ जरूर खरीद लेते और हर बार नयी छड़ियाँ खरीदते। परन्तु लखनऊ लौटने पर बाजार या सैर के लिए जाते समय छड़ी उनके हाथ में न रहती। कभी स्वास्थ्य का विचार आ जाता या शरीर पर माँस अधिक चढ़ने की आशंका होने लगती तो सुबह-शाम तेज चाल से सैर आरम्भ कर देते। प्रातः मुँह-अँधेरे सैर के लिए जाते समय अम्मी के सुझाने पर कुत्तों या ढोर-डंगरों से सावधानी के लिए छड़ी हाथ में होने पर भी उसे टेककर न चलते थे। छड़ी को पुलिस या सैनिक अफसर की तरह, बेटन की ढंग से, हाथ में लिये रहते। छड़ी टेककर चलना उनके विचार से बुढ़ापे या बुजुर्गी का चिह्न था।

पापा का कायदा था कि सन्ध्या समय टहलने के लिए अथवा शापिंग के लिए भी जाते तो केवल अम्मी को साथ ले जाते थे। बच्चों को साथ ले जाना उन्हें कम पसन्द था। अन्य बच्चों की तरह हम लोगों को भी अम्मी-पापा के साथ बाजार जाने की उत्सुकता बनी रहती थी। बाजार में हम बच्चे कोई भी चीज माँग लेते तो तनिक ठुनकने से ही मनचाही चीज मिल जाती थी। बाजार में पापा हम लोगों को डाँटते-धमकाते नहीं थे। उन्हें बाजार में तमाशा बनना पसन्द नहीं था। इसलिए अम्मी और पापा बाजार जाने के लिए तैयार होने लगते तो हम लोगों को नौकर या आया के साथ इधर-उधर टहला दिया जाता। बच्चों को बाजार ले चलने की अनिच्छा में सम्भवतः पापा की बुजुर्ग न जान पड़ने की भावना भी अवचेतना में रहती होगी।

पापा ने अवकाश प्राप्त हो जाने पर अवकाश के बोझ से बचने के लिए अच्छी खासी दिनचर्या बना ली है। अवकाश-प्राप्ति से कुछ महीने पूर्व ही उन्होंने योजना बना ली थी कि शासन-कार्य के छत्तीस वर्ष के अनुभव और चिन्तन के आधार पर 'एथिक्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' (शासन का नैतिक पक्ष) पर एक पुस्तक लिखेंगे। दोपहर से पूर्व और अपराह्न में कम-से-कम दो-दो घण्टे इस विषय में अध्ययन करते रहते हैं अथवा नोट्स लिखते रहते हैं। पहले उन्हें काम के दबाव के कारण कम अवसर मिलता था परन्तु अब सप्ताह में एक-दो दिन निकट सम्बन्धियों और इष्ट-मित्रों की खोज-खबर लेने भी चले जाते हैं। अब किसी हद तक वे शापिंग भी करने लगे हैं। रसद और साग-सब्जी की खरीद उनके बस की नहीं। वह काम पहले अम्मी करती थीं और अब भी रिक्शा पर बैठकर स्वयं ही करती हैं। अलबत्ता हल्की-फुल्की चीजें, टूथब्रुश, ब्लेड, सिगार-सिगरेट, मोजे-रुमाल और दवा-दारू की खरीद के लिए पापा सन्ध्या के समय स्वयं हजरतगंज पैदल जाते हैं। कारण वास्तव में कुछ चलने-फिरने का बहाना।

पापा के स्वभाव और व्यवहार में कुछ और भी परिवर्तन आये हैं। पहले उन्हें अपनी पोशाक चुस्त रखने और व्यक्तिगत की बढ़िया चीजों का शौक रहता था। पोशाक के मामले में वे बिलकुल बेपरवाह नहीं हो गये हैं। परन्तु गत तीन वर्षों में जाड़े के आरम्भ में अम्मी हर बार उनसे एक नया ऊनी सूट बनवा लेने का अनुरोध कर रही हैं। पापा पुराने कपड़ों को काफी बताकर टाल जाते हैं। यही बात जूतों के मामले में भी है। अम्मी खीझकर कहती हैं—अपने लिये उन्हें जाने क्या कंजूसी हो गयी है! बच्चों को पहाड़ पर या सैर के लिए बाहर भेज देंगे। उनके लिये कपड़ों की जरूरत भी दिखायी दे जाती है; अपने लिये कुछ नहीं!...लगता है पापा अब अपने शौक और रुचियों को बच्चों द्वारा पूरा होते देखकर सन्तोष पाते हैं; मानो उन्होंने अपने व्यक्तित्व का न्यास बच्चों में कर लिया है।

पापा के बच्चों को बाजार साथ न ले जाने के रवैये में भी परिवर्तन हो गया है। उनके रवैये में परिवर्तन का एक प्रकट कारण यह हो सकता है कि अम्मी अब अपने स्वास्थ्य के कारण पैदल चलने से कतराती हैं और हम लोग उँगली पकड़कर साथ चलने वाले बच्चे नहीं रह गये हैं। कभी पापा या अम्मी के साथ चलना होता है तो हमारे कन्धे उनके बराबर या कुछ ऊँचे ही रहते हैं। पापा को आशंका नहीं है कि बच्चे बाजार में गुब्बारेवाले या आइसक्रीम वाले को देखकर हाथ फैलाकर ठुनकने लगेंगे। अब शायद अपने जवान, स्वस्थ, सुडौल बच्चों की संगति में उन्हें कुछ गर्व भी अनुभव होता होगा। इसलिए सन्ध्या समय हजरतगंज या बाजार जाते समय कभी मुझे, कभी मन्टू बहन को, कभी गोगी को, कभी कजिन पुष्पा को ही साथ चलने का संकेत कर देते हैं। उनके साथ हजरतगंज जाने पर हम लोगों को चाकलेट-टॉफी या आइसक्रीम के लिए कहना नहीं पड़ता। पापा हजरतगंज का चक्कर पूरा करके स्वयं ही प्रस्ताव कर देते हैं—"कहो, क्या पसन्द करोगे? कॉफी या आइसक्रीम?"

हमारे समवयस्क साथी हम लोगों को बाजार, पार्क या रेस्तरां में पापा के साथ देखकर कभी-कभी आँख दबाकर या किसी संकेत से हमारी स्थिति के प्रति विद्रूप या करुणा प्रकट कर देते हैं। निस्सन्देह पापा की उपस्थिति में सभी प्रकार की हरकतें या बातें नहीं की जा सकतीं परन्तु उनकी संगति बोर या उबा देने वाली भी नहीं होती। वे अन्य अवकाश-प्राप्त लोगों की सामान्य प्रवृत्ति के अनुसार केवल अपनी नौकरी के अनुभवों, ऐडवेंचर्स, नवयुवक लड़के-लड़कियों के लिए उपयुक्त विवाह-सम्बन्धों अथवा पुराने जमाने की सस्ती और आज की मँहगाई की ही चर्चा नहीं करते। उनके मानसिक सम्पर्क और चिन्ताएँ वैयक्तिक और पारिवारिक क्षेत्र में सिमट जाने के बजाय पढ़ने और सोचने का अधिक अवसर पाकर कुछ फैल ही गयी हैं। उनकी बातचीत में चुस्ती और हाजिर-जवाबी कम नहीं हुई बल्कि अपने को तटस्थ और अनासक्त समझ लेने से उनका तीखापन कुछ बढ़ गया। परन्तु हम लोग उनकी संगति के लिए बचपन के दिनों की तरह लालायित नहीं रह सकते। कारण यह है कि अठारह-बीस पार कर लेने पर हम लोग भी अपना व्यक्तित्व अनुभव करने लगे हैं। हम लोगों की अपनी वैयक्तिक रुझाने, अपने काम और अपने क्षेत्र भी हो गये हैं और उनके आकर्षण और आवश्यकताएँ भी रहती हैं। कभी-कभी पापा की आवश्यकता और हमारी संगति के लिए उनकी इच्छा और हमारी अपनी आवश्यकताओं और आकर्षणों में द्वन्द्व की स्थिति आ जाना अस्वाभाविक नहीं है।

सन्ध्या समय हम लोगों में से किसी-न-किसी को साथ ले जाने की इच्छा में पापा के दो प्रयोजन हो सकते हैं। एक प्रयोजन तो वे स्वीकार करते हैं। उन्हें बूढ़ों या बुजुर्गों की अपेक्षा नवयुवकों की संगति अधिक पसन्द है। दूसरा कारण पापा प्रकट नहीं करना चाहते। लगभग एक वर्ष से उनकी नजर पर आयु का प्रभाव अनुभव हो रहा है। अधिक देर तक पढ़ने-लिखने से धुँधलापन अनुभव होने लगता है। विशेषकर सूर्यास्त के पश्चात् यदि सड़क पर प्रकाश कम हो तो ठोकर खा जाते हैं और प्रकाश अधिक होने पर चकाचौंध से परेशानी अनुभव करते हैं। इसलिए सन्ध्या समय बाहर जाते हैं तो हम लोगों में से किसी को साथ ले जाना चाहते हैं।

पिछले जाड़ों की बात है। उस दिन डाक में आयी पत्रिका में एक बहुत रोचक लेख पढ़ रहा था। पापा के कमरे से अम्मी को सम्बोधन करती आवाज सुनायी दी—"एक जग गरम पानी भिजवा देना।" यह संकेत था कि दिन ढल गया है, पापा बाहर जाने की तैयारी आरम्भ कर रहे हैं। तब ध्यान आया, सूर्यास्त का समय हो जाने से कमरे में प्रकाश कर लेना चाहिए था परन्तु वह यात्रा-वर्णन समाप्त किये बिना पत्रिका हाथ से छूट न रही थी।

पापा की बाहर जाने की तैयारी अनेक घोषणाओं और पुकारों के साथ होती है ताकि सब जान जायँ—वे बाहर जा रहे हैं और कोई उनके साथ हो ले। मैंने सुना तो, परन्तु मन जापान के उस यात्रा-वर्णन में गहरा रमा हुआ था। पढ़ते-पढ़ते भी पापा की बाहर जाने की तैयारी की आहटें कान में पड़ रही थीं।

आहट से अनुमान हो रहा था कि पापा बाहर जाने के लिए जूते पहन चुके होंगे, टाई बाँध ली होगी। उनके कमरे से पुकार आयी—"कोई है हजरतगंज की सवारी।"

पापा की पुकार के स्वर से अनुमान हुआ कि उन्होंने ऊपर के कमरों की ओर मुँह करके पुकारा था। मेरे कमरे से अपनी तैयारी की कोई प्रतिक्रिया न सुनकर उन्होंने लड़कियों को पुकार लिया था। ऊपर से भी कोई उत्तर न आने पर पापा ने फिर पुकारा—"है कोई चलने वाला!"

पापा की इस पुकार की प्रक्रिया में ऊपर पुष्पा दीदी के कमरे से सुनायी दिया—"मन्टू, जाओ न, पापा के साथ घूम आओ।"

मन्टू ने अपने कमरे से पुष्पा दीदी को उत्तर दिया—"तुम भी क्या दीदी... बोर... बुड्ढों के साथ कौन बोर हो!"

मन्टू ने अपने विचार में स्वर दबाकर उत्तर दिया था, परन्तु उसकी बात पापा के समीप के कमरे में भी मैं सुन सका था। पत्रिका आँखों के सामने से हट गयी। नजर पापा के कमरे में चली गयी। पापा ने जरूर सुन लिया था। जान पड़ा, वे कोट हैंगर से उतारकर पहनने जा रहे थे, कोट उनके हाथ में रह गया। चेहरे पर एक विचित्र, विषण्ण-सी मुस्कान आ गयी। कोट उसी प्रकार हाथ में लिये कुर्सी पर बैठ गये। नजर फर्श की ओर परन्तु चेहरे पर विषण्ण मुस्कान। कई क्षण बिलकुल निश्चल बैठे रहे, मानो किसी दूर की स्मृति में खो गये हों।

मैंने दृष्टि पापा की ओर से हटा ली कि नजर मिल जाने से संकोच अथवा असुविधा न अनुभव करें। फिर पत्रिका उठा ली परन्तु पढ़ न पाया। अनुमान कर रहा था—'पापा क्या सोच रहे होंगे?' सहसा स्मृति में बचपन की याद कौंध गयी—तब हम लोग उनके साथ बाहर जाने के लिए कितने लालायित रहते थे। हमारी उस लालसा से उन्हें कभी-कभी परेशानी भी अनुभव हो जाती थी। एक दिन की स्मृति आँखों के सामने प्रत्यक्ष दिखायी देने लगी—

हम लोग अम्मी और पापा के साथ बाहर जाने की जिद करते तो पापा को अच्छा नहीं लगता था। अम्मी ऐसी अप्रिय स्थिति से बचने का यह उपाय करती थीं कि स्वयं बाहर जाने के लिए साड़ी बदलने से पहले हमें आया हुबिया या नौकर बहादुर के साथ कुछ समय के लिए बाहर भेज देती थीं। हम लोगों के लौटने से पहले ही अम्मी और पापा बाहर जा चुके होते।

एक दिन सन्ध्या समय अम्मी ने हम दोनों को बुलाकर कहा—"बच्चों, हुबिया साग-सब्जी लेने चौराहे तक जा रही है। तुम लोग भी घूम आओ।" उन्होंने हुबिया से भी कह दिया—"देखो, कुंजड़े के यहाँ ताजे नरम सिंघाड़े हों तो इन दोनों को ले देना।"

हम लोग हुबिया के साथ घर से बीस-पच्चीस कदम गये थे। मन्टू ने मुझे रोककर कहा—"सुनो, अम्मी पापा के साथ बाजार जा रही हैं। हम भी उनके साथ बाजार जाएँगे।" मन्टू ने हुबिया को सम्बोधन किया, "हुबिया, हमारी सैण्डल में कील लग रहा है। हम दूसरी सैण्डल पहनकर आते हैं।" हम दोनों घर की ओर भाग आये।

मन्टू का अनुमान ठीक था। हम लौटे तो ड्योढ़ी में पहुँचते ही अम्मी की पुकार सुनायी दी—"जी, आइए, मैं चल रही हूँ।" अम्मी बाहर जाने के लिए साड़ी बदले और जूड़े में पिनें खोंसती हुई आ रही थीं।

मन्टू अम्मी की कमर से लिपट गयी और डबडबाई आँखें अम्मी के मुँह की ओर उठाकर आँसू-भरे स्वर में हिचक-हिचककर गिड़गिड़ाने लगी—"कभी... कभी... कभी बच्चों को भी... तो... साथ... ले जाना चाहिए।"

तब तक पापा भी आ गये थे। उन्होंने पूछा—"क्या है, क्या है?" वे समझ गये थे, बोले—"अच्छा बच्चों, एकदम तैयार हो जाओ।"

अम्मी ने कहा—"आ मन्टू, तेरी फ्राक बदल दूँ।"

परन्तु मन्टू, अपनी इस हरकत से इतना शरमा गयी थी कि दोनों हाथों में मुँह छिपाकर भाग गयी। पापा और अम्मी के कई बार बुलाने पर भी नहीं आयी।

बात पापा के मन में लग गयी। उस समय बाहर नहीं जा सके। उसके बाद से हफ्ते-पखवाड़े में हम लोगों को भी बाजार ले जाने लगे थे। कभी-कभी खाने की मेज पर हम लोगों के साथ बैठने पर उस दिन की घटना—मन्टू रो-रोकर 'बच्चों को भी कभी साथ ले जाने' की दुहाई देने की बात सुनाने लगते और इसी प्रसंग से मन्टू झेंप जाती है।

आज पापा के साथ चलने के अनुरोध का उत्तर मन्टू दे रही है—''बोर... बुड्ढों के साथ बोर... ''

पापा सहसा, मानो दृढ़ निश्चय से, कुर्सी से उठ खड़े हुए। कोट पहन लिया और अम्मी को सम्बोधन कर पुकारा—''सुनो, कई बार पहाड़ से छड़ियाँ लाये हैं, तो कोई एक तो दो!''

एक छड़ी उठाकर मैंने अपने कमरे में रख ली थी। पापा को उत्तर दिया, ''एक तो यहाँ पड़ी है, चाहिए?'' छड़ी कोने से उठाकर पापा के सामने कर दी।

''हाँ, यह तो बहुत अच्छी बात है।'' पापा ने छड़ी की मूठ पर हाथ फेरकर कहा और छड़ी टेकते हुए किसी की ओर देखे बिना घूमने के लिए चले गये? मानो हाथ की छड़ी को टेककर उन्होंने समय को स्वीकार कर लिया।

## अभ्यास प्रश्न

1. 'समय' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
2. कथावस्तु की दृष्टि से 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
3. कहानी के प्रमुख तत्त्वों को दृष्टि में रखते हुए 'समय' कहानी की विशेषताएँ लिखिए।
4. 'समय' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
5. 'समय' कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
6. सप्रमाण सिद्ध कीजिए कि 'समय' एक सफल कहानी है।
7. 'समय' कहानी में ''यशपाल ने मध्यवर्गीय जीवन की विषम परिस्थितियों की ओर संकेत किया है।'' इस कथन की व्याख्या कीजिए।
8. 'समय' कहानी किस वर्ग-विशेष का प्रतिनिधित्व करती है? इसके विभिन्न रूपों पर प्रकाश डालिए।
9. अच्छी कहानी की सबसे बड़ी पहचान है कि उसे पढ़कर पाठक के मुँह से अनायास निकल जाय कि 'सच कहा है।' इस कथन के आधार पर 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
10. वातावरण और भाषा-शैली की दृष्टि से 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
11. पारिवारिक सम्बन्धों के विषय में 'समय' शीर्षक कहानी कौन-सा दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है?
12. कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
13. 'समय' कहानी की समीक्षा देश-काल के आधार पर कीजिए।
14. 'समय' कहानी के पात्रों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
15. 'समय' कहानी के मुख्य पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
16. 'समय' कहानी के प्रमुख पात्र की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

# 5 जैनेन्द्र कुमार

## ➡ व्यक्तित्व

जैनेन्द्र का जन्म 1905 ई० में अलीगढ़ (कौड़ियागंज) में हुआ था। बाल्यावस्था का नाम आनन्दीलाल था। हस्तिनापुर में स्थापित एक गुरुकुल में आपकी प्रारम्भिक शिक्षा के लिए व्यवस्था की गयी तथा उसी संस्था में आपका वर्तमान नामकरण भी हुआ। पंजाब से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण कर आपने उच्च शिक्षा के लिए हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में प्रवेश लिया। किन्तु, कांग्रेस के असहयोग आन्दोलन में सक्रिय सहयोग देने की प्रेरणा से पढ़ाई छोड़ कर दिल्ली चले गये। दिल्ली में आपने लगभग दो वर्ष तक व्यापार का भी काम किया। कुछ क्रान्तिकारी राजनीतिक पत्रों के संवाददाता के रूप में भी कार्य किया। जीवन की विषम परिस्थितियों में भी आपका लेखन-कार्य शिथिल नहीं हुआ। इसी बीच आपके प्रथम उपन्यास 'परख' को अकादमी पुरस्कार मिला। राजनीतिक आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेने के कारण आपको कई बार जेल जाना पड़ा। इनकी प्रतिभा को देखते हुए 'आगरा विश्वविद्यालय' तथा 'गुरुकुलकाँगड़ी विश्वविद्यालय' ने इनको डी॰ लिट् की उपाधि से सम्मानित किया। 24 दिसम्बर, 1988 ई० में आपका निधन दिल्ली में हुआ।

## ➡ कृतित्व

आपके कहानी संग्रह हैं—**'फाँसी'**, **'वातायन'**, **'नीलम देश की राजकन्या'**, **'एक रात'**, **'दो चिड़ियाँ'**, **'पाजेब'** तथा **'जयसन्धि'**। आपकी सम्पूर्ण कहानियाँ **'जैनेन्द्र की कहानियाँ'** शीर्षक से सात भागों में प्रकाशित हुई हैं।

आपने **'परख'**, **'तपोभूमि'**, **'सुनीता'**, **'त्यागपत्र'**, **'कल्याणी'**, **'सुखदा'**, **'विवर्त'**, **'व्यतीत'** और **'जयवर्धन'** उपन्यास भी लिखे हैं जो साहित्य-जगत् में बहुचर्चित तथा लोकप्रिय हुए हैं। आपने अनुवाद और सम्पादन का काम भी किया है। आपके अनेक निबन्ध-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इनके अनेक निबन्ध-संग्रह **'प्रस्तुत प्रश्न'**, **'जड़ की बात'**, **'पूर्वोदय'**, **'साहित्य का श्रेय और प्रेय'**, **'मन्थन'**, **'सोच-विचार'**, **'काम-क्रोध'**, **'परिवार'**, **'साहित्य संचय'**, **'विचार-वल्लरी'** आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

## ➡ कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

जैनेन्द्र की कहानी-कला चरित्र की निष्ठा तथा संवेदना के व्यापक धरातल पर विकसित हुई है। आपकी कहानियों में दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण विशेष रूप से उभरा हुआ है। दार्शनिक आधार पर लिखी हुई आपकी कहानियों में आपके गम्भीर चिन्तन एवं बौद्धिक सघनता का समावेश हुआ है। आपकी कहानियों के कथानक मुख्य रूप से संवेदना पर आधारित

हैं तथा पाठक के अन्तस्तल को स्पर्श करते हुए गतिशील हुए हैं। आपकी कहानियाँ मनोविश्लेषणात्मक तथा जीवन-दर्शन-परक भी हैं। फलतः उनमें विस्तार की अपेक्षा गहनता अधिक है। आपकी प्रमुख कहानियाँ हैं—**'जाह्नवी'**, **'पाजेब'**, **'एक रात'**, **'मास्टरजी'** आदि। आपके अधिकतर कथानक स्पष्ट तथा सूक्ष्म हैं। उनमें व्यक्ति को केन्द्र में रखकर समाज के जीवन का चित्रण किया गया है। आपने कथा-वस्तु के विकास में सत्य, अहिंसा, प्रेम, करुणा तथा मानवीय आदर्शों की स्थापना को महत्त्व दिया है।

आपने चरित्र-चित्रण पर विशेष बल दिया है तथा विविध प्रकार के चरित्रों की सृष्टि की है। मनोविश्लेषण के माध्यम से पात्रों के आन्तरिक द्वन्द्वों तथा मानसिक उलझनों को व्यक्त किया गया है। आपके पात्र मुख्यतः अन्तर्मुखी हैं। आप विशिष्ट पात्रों को विशिष्ट व्यक्तित्व देने में सफल रहे हैं। दूसरे प्रकार के पात्र वर्ग-प्रतिनिधि हैं जो प्रायः सामान्य कोटि में आते हैं।

जैनेन्द्र की शैली के विविध रूप हैं, जिनमें दृष्टान्त, वार्त्ता तथा कथा-शैलियाँ मुख्य हैं। नाटकीय एवं स्वगत-भाषण शैलियों का प्रयोग भी अनेक कहानियों में हुआ है। संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी के शब्दों को समेटे आपकी भाषा भावपूर्ण, चित्रात्मक एवं सशक्त है। यथोचित शब्द-रचना तथा भावानुकूल शब्द-चयन आपकी भाषा-शैली की उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं। जैनेन्द्र की कहानियों में संवादों की सीमित योजना हुई है, तथापि उनके कथोपकथन मानव-चरित्र का विश्लेषण करते हुए, पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं एवं उनकी मानसिक स्थितियों को उजागर करते हैं।

आपकी कहानियों में निश्चित लक्ष्य है तथा उनमें चिन्तन की गहराई के अतिरिक्त अनुभूति की व्यंजना एवं आदर्श की प्रतिष्ठा का प्रयत्न भी हुआ है। आपने व्यक्ति के जीवन के आन्तरिक पक्षों, उसके रहस्यों एवं उसकी उत्कृष्टताओं को दार्शनिक दृष्टिकोण से उभारने का प्रयत्न किया है।

●●●

# ध्रुव-यात्रा

## (1)

राजा रिपुदमन बहादुर उत्तरी ध्रुव को जीतकर योरुप के नगर-नगर से बधाइयाँ लेते हुए हिन्दुस्तान आ रहे हैं। यह खबर अखबारों ने पहले सफे या मोटे अक्षरों में छापी।

उर्मिला ने खबर पढ़ी और पास पालने में सोते शिशु का चुम्बन किया।

अगले दिन पत्रों ने बताया कि योरुप के तट एथेन्स से हवाई जहाज पर भारत के लिए रवाना होते समय उन्होंने योरुप के लिए सन्देश माँगने पर कहा कि उसे 'अद्‌भुत' की पूजा की आदत छोड़नी चाहिए।

उर्मिला ने यह भी पढ़ा।

अब वह बम्बई आ पहुँचे हैं, जहाँ स्वागत की जोर-शोर की तैयारियाँ हैं। लेकिन उन्हें दिल्ली आना है। नागरिक आग्रह कर रहे हैं और शिष्ट-मण्डल मिल रहा है। उसकी प्रार्थना सफल हुई तो वह दिल्ली के लिए रवाना हो सकेंगे। अखबार के विशेष प्रतिनिधि का अनुमान है कि उनको झुकाना कठिन होगा। वह यद्यपि सबसे सौजन्य से मिलते हैं, पर यह भी स्पष्ट है कि उनको अपने सम्बन्ध के प्रदर्शनों में उल्लास नहीं है। संवाददाता ने लिखा है, "मैं मिला तब उनका चेहरा ऐसा था कि वह यहाँ न हों, जाने कहीं दूर हों।"

उर्मिला ने पढ़ा और पढ़कर अखबार अलग रख दिया।

सचमुच राजा रिपुदमन बम्बई नहीं ठहर सके। छपते-छपते की सूचना है कि आज सबेरे के झुटपुटे में उनका जहाज निर्विघ्न दिल्ली पहुँच गया है।

एक दिन, दो दिन, तीन दिन। उर्मिला रोज अखबार पढ़ती है। इन दिनों वह कहीं बाहर नहीं गयी। राजा रिपु को लोग अवकाश नहीं दे रहे हैं। सुना जाता है कि वह दिल्ली छोड़ेंगे। कहाँ जायेंगे, इसके कई अनुमान हैं। निश्चय यह है कि जायेंगे किसी कठिन यात्रा पर।

उर्मिला ने सदा की भाँति यह भी पढ़ लिया।

चौथे दिन एक बड़ा मोटा लिफाफा उसे मिला। अन्दर खत संक्षिप्त था। पढ़ा और उसी तरह मोड़कर लिफाफे में रख दिया। फिर बच्चे की ओर ध्यान दिया। वह जागने को तैयार न था। फिर भी उठाकर उसे कन्धे से लगाया और कमरे में डोलने लगीं।

## (2)

इधर राजा रिपुदमन को अपने से शिकायत है। उन्हें नींद कम आती है। मन पर पूरा काबू नहीं मालूम होता। सामने की चीज पर एकाग्र होने में कठिनाई होती है। नहीं चाहते, वहाँ ख्याल जाते हैं। कभी तो अपनी ही कल्पनाओं से उन्हें डर लगने लगता है। अभी योरुप से आते हुए, ऊपर आसमान की तरह नीचे भी गहन और अपार नीलिमा को देखकर उन्हें होता था कि क्यों इस जहाज से मैं इस नगर में कूद नहीं पड़ूँ। सारांश इसी तरह की अस्त-व्यस्त बातें उनके मन में उठ आया करती हैं और वह अपने से असन्तुष्ट हैं।

योरुप में ही उन्होंने मानसोपचार के सम्बन्ध में आचार्य मारुति की ख्याति सुनी थी। भारत में और तिस पर दिल्ली में रखकर जिन मारुति को नहीं जानते थे, उन्हीं के विषय में योरुप के देशों से वह बड़ी श्रद्धा लेकर लौटे हैं। इसलिए

अवकाश पाते ही वह उनकी शरण में पहुँचे। यद्यपि सन् 1960 की बात है कि जिस वर्ष आचार्य का देहान्त हुआ, पर उस समय वह जीवित थे।

अभिवादनपूर्वक आचार्य ने कहा, "वैद्य के पास रोगी आते हैं। विजेता मेरे पास किस सौभाग्य से आये हैं?"

रिपु, "रोगी ही आपके पास आया है। विजेता छल है और उस दुनिया के छल को दुनिया के लिए छोड़िये। पर आप तो जानते हैं।"

आचार्य, "हाँ चेहरे पर आपके विजय नहीं पराजय देखता हूँ। शिकायत क्या है?"

रिपु, "मैं खुद नहीं जानता। मुझे नींद नहीं आती। और मन पर मेरा काबू नहीं रहता।"

"हूँ, क्या होता है?"

"जो नहीं चाहता, मन के अन्दर वह सब कुछ हुआ करता है।"

"खासतौर पर आप क्या नहीं चाहते?"

"क्या कहूँ? यही देखिये के हिन्दुस्तान लौट आया हूँ, जबकि ध्रुव पर अभी बहुत काम बाकी है। विजेता शब्द व्यंग्य है, ध्रुव देश भी हम सबके लिए उद्यान होना चाहिए। एक अकेला झण्डा गाड़ आने से क्या होता है? यह सब काम काफी है। फिर भी मैं हिन्दुस्तान आ गया। भला क्यों?"

मारुति गौर से रिपुदमन को देखते रहे। बोले, "तो हिन्दुस्तान न आना जरूरी था।"

"हाँ, आना किसी भी तरह जरूरी न था।"

"क्यों? हिन्दुस्तान तो घर है।"

"पर क्या मेरा? मेरा घर तो ध्रुव भी हो सकता है।"

आचार्य ने ध्यानपूर्वक रिपुदमन को देखते हुए कुछ हँसकर कहा, "यानी हिन्दुस्तान को छोड़कर कोई घर हो सकता है।"

राजा रिपुदमन ने उत्साह से कहा, "लेकिन क्यों कोई घर हो? और मेरे जैसे आदमी के लिए!"

आचार्य, "खैर, अब हम काम की बातें करें। अभी मैं कुछ नहीं कह सकता। कल पहली बैठक दीजिये, तीन बजकर बीस मिनट पर। डायरी रखते हैं? नहीं, तो अब से कल तक की डायरी रखिये। साथ जो खर्च करें उसका पायी-पायी हिसाब और जिनसे मिलें उनका ब्योरा भी लिखियेगा।"

"वह सब अभी न कह सकूँगा। मैं सोचता हूँ, कोई खराबी नहीं है। मैं वैज्ञानिक से अधिक विश्वासी हूँ। विश्वास में बहुत शक्ति है। अब हम कल मिलेंगे।... जी नहीं, इसके लिए बाहर सेक्रेटरी है।"

बड़े-बड़े नोटों को वापस पर्स में रखते हुए राजा ने कहा, "मेरा स्वास्थ्य आप मुझे दे दें तो मैं बड़ा ऋणी होऊँगा।"

आचार्य हँसकर बोले, "लेकिन आप तो स्वस्थ ही हैं। मैं आत्मा को मानता और शरीर को जानता हूँ। शरीर आत्मा का यन्त्र है। यन्त्र आपका साबित है, निरोग है—सब अवयव ठीक है। कृपया कल सबेरे आप यहाँ के यन्त्र-मन्दिर में भी हो आयें। सेक्रेटरी सब बता देंगे। वहाँ आपके हृदय, मस्तिष्क और शेष शरीर का पूरा निरीक्षण हो जायगा और परिणाम दोपहर तक मैं देख चुकूँगा। यह सब शास्त्रीय सावधानी है और उपयोगी भी है। लेकिन आप मान लें कि आपका शरीर एकदम तन्दुरुस्त है।... कल डायरी लाइयेगा।"

अगले दिन रिपुदमन समय पर पहुँचे। आचार्य ने तरह-तरह के नक्शे और चित्र उनके आगे रखे और कहा, "देखिये, आपके यन्त्र का पूरा खुलासा मौजूद है। मस्तक और हृदय-सम्बन्धी परिणाम सही नहीं उतरे हैं तो विकार उन अवयवों में मत मानिये। व्यतिरेक यों है भी सूक्ष्म... डायरी है?"

रिपुदमन ने क्षमा माँगी। कहा, "मैं चित्त को उस जितना भी तो एकाग्र न कर सका।"

आचार्य हँसे। बोले, "कोई बात नहीं; अगली बार सही, यह कहिए कि अपने भाई महाराज-साहब और रानी-माता से मिलने आप जाइयेगा। विजेता को जीतने के लिए मारके बहुत हैं, पर अपनों का मन जीतना भी छोटी बात नहीं है। मैंने कल फोन पर महाराज से बातें की थीं। आप जो करो वह उसमें खुशी हैं। लेकिन अपने सुख से आप इतने विमुख न

रहो—यह भी वह चाहते हैं। अच्छे-से-अच्छे सम्बन्ध मिल सकते हैं या आप चुन लो। विवाह अनिष्ट वस्तु नहीं है। वह तो एक आश्रम का द्वार है। क्यों, यह चर्चा अरुचिकर है?''

रिपुदमन ने कहा, ''जी, मैं उसके अयोग्य हूँ। विवाह से व्यक्ति रुकता है। वह बँधता है। वह तब सबका नहीं हो सकता। अपना एक कोल्हू बनाकर उसमें जुता हुआ चक्कर में ही घूम सकता है। नहीं, उस बारे में मुझे कुछ कहने को नहीं है।''

आचार्य हँसकर बोले, ''विवाह चक्कर सही। लेकिन प्रेम?''

रिपुदमन ने कुछ जवाब नहीं दिया।

''प्रेम से तो नाराज नहीं हो? विवाह का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। प्रेम के निमित्त से उसकी सृष्टि है। इससे विवाह की बात तो दूकानदारी की है। सच्चाई की बात प्रेम है। इस बारे में तुम अपने से बात करके देखो। वह बात डायरी में दर्ज कीजियेगा। अब परसों मिलेंगे।''

''परसों यदि न गया।''

''कहाँ न गये?''

''यही हिमालय या कहीं।''

''जहाँ चाहे जाओ। लेकिन मेरा दो बैठकों का कर्ज अभी बाकी है। परसों वहीं तीन-बीस पर आप आओगे। अब घड़ी हमें समय देना नहीं चाहती।''

''परसों के विषय में मैं आशावान से अधिक नहीं हूँ।''

''अच्छा तो कल उनसे मिलकर आशा को विश्वास बना लीजिए, जिनसे न मिलने के लिए मुझसे मिला जाता है। फोन पर मिलिये, वह न हो और दूरी हो तो हवाई यात्रा कीजिए। पर खटका छोड़कर उनसे मिलिये—अवश्य और कल! रेग्युलेटर जहाँ है उसके विपरीत मेरी सलाह जाकर बेकार ही हो सकती है।''

रिपुदमन ने चमककर कहा, ''किसकी बात आप करते हैं।''

''नहीं जानता वह कौन है! और जानूँगा तो आप ही से जानूँगा।... देखिये, ध्रुव से और हिमालय से लड़ाई भी ठीक-ठीक तभी आपकी चलेगी, जब अपनी लड़ाई एक हद तक सुलझ चुकेगी। प्रेम का इनकार अपने से इनकार है।... लेकिन घड़ी की आज्ञा का उल्लंघन हम अधिक नहीं करेंगे।''

''देखिये, परसों यदि आ सका।''

''आ जायेंगे... नमस्कार।''

''नमस्कार।''

## (3)

समय सब पर बह जाता है और अखबार कल को पीछे छोड़ आज पर चलते हैं। राजा रिपु नयेपन से जल्दी छूट गये। ऐसे समय सिनेमा के एक बॉक्स में उर्मिला से उन्होंने भेंट की। उर्मिला बच्चे को साथ लायी थी। राजा सिनेमा के द्वार पर उसे मिले और बच्चे को गोद में लेना चाहा। उर्मिला ने जैसे यह नहीं देखा और अपने कन्धे से उसे लगाये वह उनके साथ जीने पर चढ़ती चली गयी। बॉक्स में आकर सफलतापूर्वक उन्होंने बिजली का पंखा खोल दिया। पूछा, ''कुछ मँगाऊँ?''

''नहीं!''

घण्टी बजाकर आदमी को बुलाया। कहा, ''दो क्रीम?''

उसके जाने पर कहा, ''लाओ मुझे दो न, क्या नाम है!''

उर्मिला ने मुस्कराकर कहा, ''नाम अब तुम दो।''

''तो लो, आदित्यप्रसन्नबहादुर, खूब है!''

''बड़े आदमी बड़ा नाम चाहते हैं। मैं तो मधु कहती हूँ।''

"तो वह भी ठीक है, माधवेन्द्रबहादुर, खूब है।"

"तुम जानो। मुझे तो मधु काफी है।"

इस तरह कुल बातें हुईं और बीच ही में जरूरत हुई कि दोनों खेल से उठ जायँ और कहीं जाकर आपस की सफाई कर लें।

दूर जमुना किनारे पहुँचकर राजा ने कहा, "अब कहो, मुझे क्या कहती हो?"

"कहती हूँ कि तुम क्यों अपना काम बीच में छोड़कर आये?"

"मेरा काम क्या है?"

"मेरी और मेरे बच्चे की चिन्ता जरूर तुम्हारा काम नहीं है। मैंने कितनी बार तुमसे कहा, तुम उससे ज्यादा के लिए हो?"

"उर्मिला, अब भी मुझसे नाराज हो?"

"नहीं, तुम पर गर्वित हूँ।"

"मैंने तुम्हारा घर छुड़ाया। सब में रुसवा किया। इज्जत ली। तुमको अकेला छोड़ दिया। उर्मिला, मुझे जो कहो थोड़ा। पर अब बताओ, मुझे क्या करने को कहती हो? मैं तुम्हारा हूँ। रियासत का हूँ, न ध्रुव का हूँ। मैं बस, तुम्हारा हूँ। अब कहो।"

"देखो राजा तुम भूलते हो। गिरिस्ती की-सी बात न करो। महाप्राणों की मर्यादा और है। तुम उन्हीं में हो। मेरे लिए क्या यही गौरव कम है कि मैं तुम्हारे पुत्र की माँ हूँ। मुझे दूसरी सब बातों से क्या मतलब है? लेकिन तुम्हें हक नहीं कि मुझसे घिरो। दुनिया को भी जताने की जरूरत नहीं कि मेरा बालक तुम्हारा है। मेरा जानना मेरे गर्व को काफी है। मेरा अभिमान इसमें तीसरे को शरीक न करेगा। लेकिन मैं अपने को क्षमा नहीं कर सकूँगी, अगर जानूँगी कि मैं तुम्हारी गति में बाधा हूँ। अपने भीतर के वेग को शिथिल न करो, तीर की नाईं बढ़े चलो कि जब तक लक्ष्य पार हो। याद रखना कि पीछे एक है जो इसी के लिए जीती है।"

"उर्मिला, तुमने मुझे ध्रुव भेजा। कहती थी—उसके बाद मुझे दक्षिणी ध्रुव जीतने जाना होगा। क्या सच मुझे वहीं जाना होगा?"

"राजा, कैसी बात करते हो! तुम कहीं रुक कैसे सकते हो? जाना होगा, नहीं जाओगे? अतुल वेग तुममें है, क्या वह यों ही? नहीं, मैं देखूँगी कि कुछ उसके सामने नहीं टिक सकता। मैं तुम्हारी बनी, तो क्या इतना नहीं कर सकती? इस पुत्र को देखो। भवितव्य के प्रति यह तुम्हारा दान है। अब तुम उऋण हो, गति के लिए मुक्त हो। ध्रुव धरती के हो चुकेंगे, जबकि आकाश के सामने होंगे। राजा तुमको रुकना नहीं है। पथ अनन्त हो, यही गति का आनन्द है।"

"उर्मिला, मैं आचार्य मारुति के यहाँ गया था—"

"मारुति! वह ढोंगी?"

"वह श्रद्धेय है, उर्मिला।"

"जानती हूँ, वह स्त्री को चूल्हे के और आदमी को हल के लिए पैदा हुआ समझता है। वह महत्त्व का शत्रु और साधारणता का अनुचर है। उसने क्या कहा?"

"तुम उन्हें जानती हो?"

"माँ उनकी भक्त थी। वह अक्सर हमारे यहाँ आते थे। उन्हीं की सीख से माँ ने मुझे संस्कृत पढ़ायी और नयी हवा से बचाया। तभी से जानती हूँ। वह तेजस्विता का अपहर्ता है। अब वहाँ न जाना। उसने कहा क्या था?"

"कहा था, यह गति अगति है। जगह बदलना नहीं, सचेत होना गतिशीलता का लक्षण है। उसकी शायद राय है कि मुझे घूमना नहीं, विवाह करना चाहिए।"

"मैं जानती थी। और तुम्हारी क्या राय है?"

"वही जानने तुम्हारे पास आया हूँ। मारुति सब जानते हैं, मुझको तुम भी जानती हो। इसलिए तुम ही कहो, मुझको क्या करना है?"

"'विवाह नहीं करना है।"

"उर्मिला!"

"तुम्हारा शरीर स्वस्थ है और रक्त उष्ण है तो..."

"उर्मिला!"

"तो स्त्रियों की कहीं कमी नहीं है।"

"बको मत, उर्मिला, तुम मुझे जानती हो।"

"जानती हूँ, इसी से कहती हूँ। तुम्हारे लिए क्या मैं स्त्री हूँ? नहीं, प्रेमिका हूँ। मैं इस बारे में कभी भूल नहीं करूँगी। इसीलिए किसी स्त्री के प्रति तुममें मैं निषेध नहीं चाह सकती। मुझमें तुम्हारे लिए प्रेम है, इससे सिद्धि के अन्त तक तुम्हें पहुँचाये बिना मैं कैसे रह सकती हूँ।"

"उर्मिला, सिद्धि मृत्यु से पहले कहाँ है।"

"वह मृत्यु के भी पार है, राजा! इससे मुझ तक लौटने की आशा लेकर तुम नहीं आओगे। सौभाग्य का क्षण मेरे लिए शाश्वत है। उसका पुनरावर्तन कैसा?"

"उर्मिला, तो मुझे जाना ही होगा? तुम्हारे प्रेम-दया नहीं जानेगा?"

"यह क्या कहते हो, राजा! मैं तुम्हें पाने के लिए भेजती हूँ, और तुम मुझे पाने के लिए जाते हो। यही तो मिलने की राह है। तुम भूलते क्यों हो?"

"उर्मिला, आचार्य मारुति ने कहा था—साधारण रहो, सरल रहो। हम दोनों कहीं अपने साथ छल तो नहीं कर रहे हैं?"

"नहीं राजा, मारुति नहीं जानता। वह समझ की बात समझ से जो परे है, उस तक प्रेम ही पहुँच सकता है। जाओ राजा, जाओ। मुझको परिपूर्ण करो, स्वयं भी सम्पूर्ण होओ।"

"देखो उर्मिला, तुम भी रो रही हो।"

"हाँ, स्त्री रो रही है, प्रेमिका प्रसन्न है। स्त्री की मत सुनना, मैं भी पुरुष की नहीं सुनूँगी। दोनों जने प्रेम की सुनेंगे। प्रेम जो अपने सिवा किसी दया को, किसी कुछ को नहीं जानता।"

## (4)

पौने चार बजे राजा रिपु आचार्य के यहाँ पहुँचे। डायरी दी। आचार्य ने उसे गौर से देखा। अनन्तर नोटबुक अलग रखी। कुछ देर विचार में डूबे रहे। अनन्तर सहसा उबरकर बोले, "क्षमा कीजियेगा। मैं कुछ याद करता रह गया। आपने डायरी में संक्षिप्त लिखा। उर्मिला माता है और कुमारी है—यही न?"

"जी।"

"तुम्हारे पुत्र की अवस्था क्या है?"

"वर्ष से कुछ अधिक है।"

"उत्तरी ध्रुव जाने में उर्मिला की सम्मति थी?"

"प्रेरणा थी।"

"यह विचार उसने कहाँ से पाया?"

"शायद मुझसे ही।"

"आरम्भ से तुम विवाह को उद्यत थे, वह नहीं?"

"जी नहीं। मैं बचता था, वह उद्यत थी।"

"हुँह! बचते थे, अपनी स्थिति और माता-पिता के कारण?"

"कुछ अपने स्वप्नों के कारण भी।"

"हुँह... फिर?"

"गर्भ के बाद मैं तैयार हुआ कि हम साथ रहें।"

"विवाहपूर्वक?"

"जी, वह चाहे तो विवाहपूर्वक भी।"

"हूँह,... फिर?"

"तब उसका आग्रह हुआ कि मुझे ध्रुव के लिए जाना होगा।"

"तो उस आग्रह की रक्षा में आप गये?"

"पूरी तरह नहीं। मन से मैं भी साथ रहने का बहुत इच्छुक न था। इससे निकल जाना चाहता था।"

"तुम्हारे आने से तो वह प्रसन्न हुई।"

"शायद हुई। लेकिन रुकने से अप्रसन्न है।"

"क्या कहती है?"

"कहती है कि जाओ। जय-यात्रा की कहीं समाप्ति नहीं। सिद्धि तक जाओ जो मृत्यु के पार है।"

अकस्मात् आवेश में आकर आचार्य बोले, "कौन, उर्मिला? वही धनञ्जयी की लड़की? वह यह कहती है?

"जी!"

"वह पागल है।"

"यही वह आपके बारे में कहती है।"

आचार्य जोर से बोले, "चुप रहो, तुम जानते नहीं। वह मेरी बेटी है।"

"बेटी!"

"मैं बुड्ढा हूँ। रिपु, तुम समझदार हो। हाँ, सगी बेटी।"

"आचार्य जी, यह आप क्या कह रहे हैं? तो आप सब जानते थे।"

"सब नहीं तो बहुत-कुछ जानता ही था। देखो रिपुदमन, अब बताओ तुम क्या कहते हो?"

"मैं कुछ नहीं जानता, कुछ नहीं कहता। मेरे लिए सब उर्मि से पूछिये।"

"सुनो रिपुदमन, तुम अच्छे लड़के हो। उर्मि मुझसे बाहर न होगी। पुत्र की व्यवस्था हो जायेगी और तुम लोग विवाह करके यहीं रहोगे।"

रिपुदमन ने हाथों से मुँह ढँककर कहा, "मैं कुछ नहीं जानता। उर्मि कहे, वही मेरी होनहार है।"

"उर्मि तो मेरी ही बेटी है। रिपुदमन, निराश न हो।"

## (5)

आचार्य के समक्ष पहुँचकर उर्मिला ने कहा, "आपने मुझे बुलाया था?"

"हाँ बेटी, रिपुदमन ने सब कहा है। जो हुआ, हुआ। अब तुम्हें विवाह कर लेना चाहिए।"

"अब से मतलब कि पहले नहीं करना चाहिए था?"

"विवाह हुआ है तब तो खुशी की बात है, फिर वह प्रकट क्यों न हो? तुम दोनों साथ रहो।"

"भगवान् पर तो सब प्रकट है। और साथ बहुतेरे लोग रहते हैं।"

"तो तुम क्या चाहती हो?"

"वही जो राजा रिपुदमन उस अवस्था में चाहते थे, जब मुझे मिले थे। उनके स्वप्न मेरे कारण भग्न होने चाहिए कि पूर्ण? मेरी चिन्ता उन्हें उनके प्रकृत मार्ग से हटाये, यह मैं कैसे सह सकती हूँ?"

"स्वप्न तो सत्य नहीं है, बेटी! तब की मन की बहक को उसके लिए सदा क्यों अंकुश बनाये रखना चाहती हो? एक भूल के लिए किसी से इतना चिढ़ना न चाहिए।"

"आचार्यजी, आप किस अधिकार से मुझसे यह कह रहे हैं?"

"रिपु ने जो अपनी हैसियत और माता-पिता के ख्याल से आरम्भ में विवाह में झिझक की, इसी का न यह बदला है?"

"आचार्यजी, आप इन बातों को नहीं समझेंगे। शास्त्र में से स्त्री को आप नहीं जान लेंगे।"

"बेटी, फिर कोई किसमें किसको जानेगा, बता दो?"

"सब-कुछ प्रेम में से जाना जायगा जोकि मेरे लिये आपके पास नहीं है।"

"सच बेटी, मेरे पास वह नहीं है। और तेरे लिए जितना चाहूँ उतना है, यह मैं किसी तरह न कह सकूँगा। लेकिन तुमसे जो सच्चाई छिपाता रहा हूँ और अब छिपा रहा हूँ, वह अनर्थ अपने लिये नहीं, तेरे प्रेम के लिए ही मुझसे बन सका है, यह भी झूठ नहीं है। बेटी, मैं काफी जी लिया। अब मरने में देर लगाने की बिलकुल इच्छा नहीं है। ऐसे समय तेरे अहित की बात कह सकूँगा, ऐसा निष्ठुर मुझे न मानना। रिपुदमन को भरमा मत, उर्मिला! किसी का सपना होने के लिए वह नहीं है। तुम लोग विवाह करो और राज-मार्ग पर चल पड़ो।"

उर्मिला ने हँसकर कहा, "आप थक गये हैं, आचार्यजी भीड़ चलती रही है, इसी कारण जो प्रशस्त और स्वीकृत हो गया है, वहाँ आपका राज-मार्ग है न? पर मुक्ति का पथ अकेले का है। अकेले ही उस पर चला जायगा। वहाँ पाण्डव तक पाँच नहीं हैं। सब एक-एक हैं।"

"बेटी, यह क्या कहती है? सनातन ने जिसको प्रतिष्ठा दी है, बुद्धि के अहंकार में उसका तर्जन श्रेयस्कर नहीं होने वाला है। उर्मिला, यह एक बुड्ढे की बात रखो। पर बेटी, उसे छोड़ो। बताओ, मुझे माफ कर सकोगी?"

"आप रिपुदमन की, अपनी समझ से उससे हित की ओर मोड़ना चाहते हैं, उसके लिए आपको क्षमा माँगने की जरूरत है?"

"तो तुम रिपु से नाराज ही रहोगी? उसके साथ अपने को भी दण्ड ही देती रहोगी?"

"मुझे पाने के लिए उन्हें जाना होगा, उन्हें पाने के लिए मुझे भेजना होगा—यह आपको कैसे समझाऊँ?"

"हाँ, मैं नहीं समझ सकूँगा। लेकिन मेरा हक और दावा है। सोचता था, भगवान् के आगे पहुँचूँगा, उससे पहले उस बात को कहने का मौका नहीं... ! क्यों तू अपने पिता की भी बात नहीं मानेगी?"

"पिता को जीते-जी इस सम्बन्ध में, मैं कब सन्तोष दे सकी?"

"बेटी, अब भी नहीं दे सकोगी?"

"उर्मिला ने चौंककर कहा, "क्यों आचार्यजी?"

मारुति का कण्ठ भर आया। काँपते हुए बोले, "हाँ बेटी! चाहे तो अब तू अपने बाप को सन्तोष और क्षमा दोनों दे सकती है।"

उर्मि स्तब्ध, आचार्य को देखती रही। उनकी आँखों से तार-तार आँसू बह रहे थे। उनकी दशा दयनीय थी। बोली, "मुझ अभागिन के भाग्य में आज्ञा-पालन तक का सुख, हाय, विधाता क्यों नहीं लिख सका? जाती हूँ, इस हतभागिन को भूल जाइयेगा।"

## (6)

रिपुदमन ने कहा, "आचार्य से तुम मिली थीं?"

"मिली थी।"

"अब मुझे क्या करना है?"

"करना क्या है राजा, तुम्हें जाना है, मुझे भेजना है!"

"कहा जाना है—दक्षिणी ध्रुव!"

"हाँ, नहीं तो उत्तर के बाद कहीं तुम दक्षिण के लिए शेष न रहो।"

"दक्षिण के बाद फिर किसी के लिए शेष बचने की बात नहीं रह जायगी न?"

"दिशाओं के द्वार-दिगंत में हम खो जायँ। शेष यहाँ किसको रहना है?"

"छोड़ो, मैं तुम्हें नहीं समझता, तुम्हारी संस्कृत नहीं समझता। सीधे बताओ, मुझे कब जाना है?"

"जब हवाई जहाज मिल जाय।"

"तो लो, तुम्हारे सामने फोन से तय किये लेता हूँ।"

फोन पर भी बात करते समय टकटकी बाँधकर उर्मिला रिपु को देखती रही। अनन्तर पूछा, "तो परसों शटलैण्ड द्वीप के लिए पूरा जहाज हो गया?"

"हाँ, हो गया।"

"लेकिन परसों कैसे जाओगे, दल जुटाना नहीं है?"

"तुम्हारा मन रखूँगा! दल के लिए ठहरूँगा।"

"लेकिन उसके बिना क्या होगा? नहीं, परसों तुम नहीं जाओगे।"

"और न सताओ उर्मिला, जाऊँगा। अमरीका को फोन किये देता हूँ। दक्षिण से कुछेक साथी हो जायेंगे।"

"नहीं राजा, परसों नहीं जाओगे।"

"मैं स्त्री की बात नहीं सुनूँगा; मुझे प्रेमिका के मन्त्र का वरदान है।"

आँखों में आँसू लाकर उर्मिला ने रिपु के दोनों हाथ पकड़कर कहा, "परसो नहीं जाओगे तो कुछ हर्ज है? यह तो बहुत जल्दी है?"

रिपु हाथ झटककर खड़ा हो गया। बोला, "मेरे लिए रुकना नहीं है। परसों तक इसी प्रायश्चित में रहना है कि तब तक क्यों रुक रहा हूँ।"

उर्मिला के फैले हुए हाथ खाली रहे। और वह कहती ही रही, "राजा, ओ मेरे राजा!"

## (7)

दुनिया के अखबारों में धूम मच गयी। लोगों की उत्कण्ठा का ठिकाना न था। योरुप, अमरीका, रूस आदि देशों के टेलीफोन जैसे इसी काम के हो गये। ध्रुव-यात्रा योजना की बारीकियाँ पाने के बारे में संवाददाताओं में होड़ मच उठी। रिपुदमन उन्हें कुछ न बता सका, यह उसकी दक्षता का प्रमाण बना। हवाई जहाज जो शटलैण्ड के लिए चार्टर हुआ था, उसकी विभिन्न कोणों से ली गयी असंख्य तस्वीरें छपीं।

उर्मिला अखबार लेती, पढ़ती और रख देती। अनन्तर शून्य में देखती रह जाती। नहीं तो बच्चे में डूबती।

एक दिन-दो दिन। वह कहीं बाहर नहीं गयी। टेलीफोन पास रख छोड़ा। पर कोई नहीं, कुछ नहीं अखबार के पन्नों से आगे और कोई बात उस तक नहीं आयी।

आज अन्तिम सन्ध्या है। राष्ट्रपति की ओर से दिया गया भोज हो रहा होगा। सब राष्ट्रदूत होंगे, सब नायक, सब दलपति। गई रात तक वह इन कल्पनाओं में रही।

तीसरा दिन। उर्मिला ने अखबार उठाया। सुर्खी है और बॉक्स में खबर है। राजा रिपुदमन सबेरे खून में मरे पाये गये। गोली का कनपटी के आर-पार निशान है।

खबर छोटी थी; जल्दी पढ़ ली गयी। लेकिन पूरे अखबार में विवरण और विस्तार के साथ दूसरी सूचनाएँ थीं। जिन्हें उर्मिला पढ़ती ही चली गयी, पढ़ती ही चली गयी। पिछली सन्ध्या को जगह-जगह राजा रिपुदमन के सम्मान में सभाएँ हुई थीं। उनकी चर्चा थी। खासकर राष्ट्रपति के उस भोज का पूरा विवरण था, जिसे दुनिया का एक महत्त्वपूर्ण समारोह कहा गया था।

उर्मिला रस की एक बूँद नहीं छोड़ सकी। उसने अक्षर-अक्षर सब पढ़ा।

दोपहर बीत गयी, तब नौकरानी ने चेताया कि खाना तैयार है। इस समय उसने भी तत्परता से कहा, "मैं भी तैयार हूँ। यहीं ले आओ। प्लेट्स इसी अखबार पर रख दो।"

उसी दिन अखबारों ने अपने खास अंक में मृत व्यक्ति का तकिये के नीचे से मिला जो पत्र छापा था, वह भी नीचे दिया जाता है।

"सब के प्रति—

बन्धुओ,

मैं दक्षिणी ध्रुव जा रहा था, सब तैयारियाँ थीं। ध्रुव में मुझे महत्त्व नहीं है। फिर भी मैं जाना चाहता था। कारण, इस बार मुझे वापस आना नहीं था। ध्रुव के एकान्त में मृत्यु सुखकर होती। ध्रुव-यात्रा मेरी व्यक्तिगत बात थी, उसे सार्वजनिक महत्त्व दिया गया, यह अन्याय है। इसी शाम राष्ट्रपति और राष्ट्रदूतों ने मुझे बधाइयाँ दीं, मेरे पराक्रम को सराहा। पर उन्हें छल हुआ है। मैं यह श्रेय नहीं ले सकता। यह चोरी होगी। उस भ्रम में लोगों को रखना मेरे लिए गुनाह है। क्या अच्छा होता कि ध्रुव मैं जा सकता, लेकिन लोगों ने सार्वजनिक रूप से जो श्रेय मुझ पर डाला, उसका स्वल्पांश भी किसी तरह अपने साथ लेकर मैं नहीं बढ़ सकता हूँ। यात्रा एकदम निजी कारणों से थी। मुझे बहुत खेद है कि मैं किसी से मिले आदेश और उसे दिये अपने वचन को पूरा नहीं कर पा रहा हूँ; लेकिन ध्रुव पर भी मुझे बचना था नहीं। इसलिए बचना अब नहीं है। मुझे सन्तोष है कि किसी की परिपूर्णता में काम आ रहा हूँ। मैं पूरे होश-हवाश में अपना काम तमाम कर रहा हूँ। भगवान् मेरे प्रिय के अर्थ मेरी आत्मा की रक्षा करे!"

## अभ्यास प्रश्न

1. 'ध्रुवयात्रा' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।
2. संवाद की दृष्टि से 'ध्रुवयात्रा' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।
3. चरित्र-चित्रण की दृष्टि से 'ध्रुवयात्रा' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।
4. 'ध्रुवयात्रा' कहानी की कथावस्तु का विवेचन कीजिए और कहानी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
5. 'ध्रुवयात्रा' कहानी के आधार पर उर्मिला का चरित्र-चित्रण कीजिए।
6. 'ध्रुवयात्रा' कहानी की मूल संवेदना को उद्घाटित कीजिए।
7. जैनेन्द्र की संकलित कहानी का सारांश लिखिए।
8. कहानी कला की दृष्टि से 'ध्रुवयात्रा' की समीक्षा कीजिए।
9. 'ध्रुवयात्रा' के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
10. उद्देश्य की दृष्टि से 'ध्रुवयात्रा' की समीक्षा कीजिए।
11. 'ध्रुवयात्रा' कहानी की समीक्षा कीजिए।
12. 'ध्रुवयात्रा' कहानी की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।
13. 'ध्रुवयात्रा' कहानी की भाषा-शैली की समीक्षा कीजिए।
14. 'ध्रुवयात्रा' कहानी के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

# नाटक

# निर्धारित नाटकों का आलोचनात्मक अध्ययन

## नाटक एवं उसके तत्त्व

भारतीय प्राचीन आचार्यों ने नाटक के तीन प्रमुख तत्त्व माने हैं—(1) वस्तु, (2) नायक, (3) रस। किन्तु यूरोपीय विद्वानों ने इसके तत्त्वों की संख्या 6 मानी है। (1) कथावस्तु, (2) पात्र और चरित्र-चित्रण, (3) कथोपकथन, (4) देश-काल, (5) उद्देश्य, (6) भाषा-शैली। यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो भारतीय आचार्यों के तीन ही तत्त्वों में योरोपीय विद्वानों के उक्त 6 तत्त्व समाहित हो जाते हैं। किन्तु आधुनिक हिन्दी नाटकों में मुख्यत: योरोपीय शैली का ही अनुकरण किया जाता है जो भारतीय शैली से भी बहुत कुछ प्रभावित है, अत: योरोपीय विद्वानों द्वारा निर्धारित तत्त्वों पर ही हम यहाँ विवेचन उपयुक्त समझते हैं–

**(1) कथावस्तु**

नाटक की कहानी को 'कथावस्तु' या 'कथानक' कहा जाता है। नाटक की वर्णन शैली कहानी या उपन्यास की कथा शैली से सर्वथा भिन्न होती है। नाटककार को अपनी कथावस्तु के चयन में कहानीकार या उपन्यासकार की भाँति अधिक सामग्री प्रयोग करने का बिल्कुल ही अधिकार नहीं होता। उसे अभिनय में एक निश्चित समय की सीमा के भीतर ही कथानक का समावेश करना होता है इसलिए वह पूरी कथा की मुख्य-मुख्य घटनाओं को ही नाटक में इस ढंग से रखता है कि दर्शकों को कथा की प्रतीति हो जाती है। उसकी कथा का आकार अधिक-से-अधिक इतना ही होना चाहिए जो तीन या चार घण्टे में अभिनीत हो सके। (वैसे आधुनिक नाटक तो अधिक-से-अधिक दो या तीन घण्टे में ही समाप्त किये जाते हैं)। नाटक की कथा दो प्रकार की होती है—

**(क) आधिकारिक अथवा मुख्य कथा–**जो नायक के चरित्र से सीधा सम्बन्ध रखती है।

**(ख) प्रासंगिक अथवा गौण कथा–**जो प्रसंगवश कथा में आ जाती है। प्रासंगिक कथा भी दो प्रकार की होती है–(अ) पताका, (ब) प्रकरी।

**(अ) पताका** वह प्रासंगिक कथा है जो मुख्य कथा के साथ-साथ अन्त तक चलती है।

**(ब) प्रकरी** वह प्रासंगिक कथा है जो बीच में ही समाप्त हो जाती है। रामायण की कथा में राम की कथा के साथ-साथ अन्त तक चलने वाली भरत की कथा 'पताका' है जबकि 'शबरी' की कथा 'प्रकरी' है।

भारतीय आचार्यों के मतानुसार नाटकों की कथावस्तु पाँच प्रकार की होती है—

(i) प्रारम्भ (ii) प्रयत्न (iii) प्रत्याण (iv) नियताप्ति (v) फलागम।

**(2) पात्र और चरित्र-चित्रण**

नाटक में घटनाओं के आधार पर पात्र होते हैं। नाटक के प्रमुख पात्र को 'नायक' कहते हैं। नायक ही नाटक में फल का अधिकारी होता है। नायक की पत्नी या प्रेमिका 'नायिका' कहलाती है। भारतीय आचार्यों के मतानुसार नायक विनीत, मधुर, त्यागी,

प्रियवादी, दक्ष, लोकप्रिय, आदर्शवादी, शास्त्रज्ञ, धर्मनिष्ठ, आत्म-सम्मानी, ओजस्वी आदि सभी गुणों से सम्पन्न होना चाहिये। किन्तु आधुनिक नाटकों में उपर्युक्त गुणों से सम्पन्न होना आवश्यक नहीं माना जाता। साधारण से साधारण और बुरा-से-बुरा व्यक्ति भी नाटक में 'नायक' हो सकता है।

### (3) कथोपकथन

कथोपकथन ही नाटक का प्राण है। इसी से पात्रों के चरित्र का विकास होता है। नाटक में निरर्थक कथोपकथन की कोई गुंजाइश नहीं है। कथोपकथन स्वाभाविक, तर्कसंगत और यथासम्भव संक्षिप्त होने चाहिये। उसमें अभिनय की उपयुक्तता होनी चाहिये। कथोपकथन को आचार्यों ने तीन श्रेणियों में बाँटा है—

**(क) नियत श्राव्य–**यह कथोपकथन कुछ निश्चित पात्रों के ही बीच होता है। रंगमंच पर उपस्थित सभी पात्रों का सम्बन्ध उससे नहीं होता।

**(ख) सर्व श्राव्य–**यह सबके सुनने के लिए होता है।

**(ग) अश्राव्य–**यह रंगमंच पर उपस्थित किसी पात्र के सुनने के लिए न होकर केवल दर्शकों के सुनने के लिए होता है। इसे स्वगत कथन या स्वगत भाषण भी कहा जाता है। यद्यपि स्वगत कथन को आजकल अनुचित माना जाता है किन्तु इसकी उपयोगिता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

### (4) देश-काल तथा वातावरण

देश-काल और वातावरण से पात्रों के व्यक्तित्व में स्पष्टता और वास्तविकता आती है। प्रत्येक युग, देश तथा वातावरण का चित्रण, उसकी संस्कृति, सभ्यता, रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेशभूषा के अनुकूल होनी चाहिए। किन्तु इस चित्रण में रंगमंच की सुविधाओं और सीमित स्थान का भी ध्यान रखना होता है। प्राचीन ग्रीक आचार्यों ने इसी कठिनाई को ध्यान में रखते हुए 'संकलनत्रय' का विधान किया था। इसके अनुसार स्थान, काल और कार्य (परिस्थिति) में एकता का होना आवश्यक माना गया था। उनका विचार था कि नाटक में घटित घटना किसी एक ही कृत्य से, एक ही स्थान में और एक ही समय से सम्बन्धित हो। किन्तु आधुनिक नाटकों में इसका पालन नहीं हो रहा है।

### (5) उद्देश्य

नाटक के उद्देश्य के सम्बन्ध में भारतीय और पाश्चात्य दृष्टिकोणों में पर्याप्त अन्तर है। हमारा देश आदर्शवादी रहा है, अत: यहाँ साहित्य रचना किसी न किसी आदर्श को ध्यान में रखकर हुई है। यहाँ के नाटकों में धर्म, अर्थ और काम जीवन के तीन प्रमुख उद्देश्यों में से किसी न किसी एक की प्रधानता अवश्य रहती है। पाश्चात्य नाटकों में व्यक्त या अव्यक्त रूप से कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है किन्तु वह किसी प्रकार की जीवन मीमांसा के रूप में होता है। आन्तरिक या बाह्य संघर्ष के द्वारा दर्शक या पाठक उस उद्देश्य को समझने में सफल होते हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के साथ ही साथ संघर्ष का शमन हो जाता है। पाश्चात्य नाटककार अपने इस उद्देश्य की अभिव्यक्ति स्वयं न करके कथोपकथन के माध्यम से करता है इसलिए इसमें एक प्रकार की अस्पष्टता होती है। इस उद्देश्य की जानकारी के लिए हमें पात्रों के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना पड़ता है।

### (6) भाषा-शैली

कथोपकथन की शैली ही नाटक की मुख्य शैली है। शैली नाटक की मात्राएँ हैं। ये चार प्रकार की होती हैं—कौशिकी, सात्विकी, आरभटी व भारतीय।

शैली के साथ ही साथ नाटक की भाषा पर भी ध्यान देना आवश्यक है। नाटक की भाषा अत्यन्त ही सरल, स्वाभाविक, बोधगम्य, प्रभावशाली तथा अभिनेयता के गुणों से सम्पन्न होनी चाहिये। भाषा की दुरूहता पाठकों अथवा दर्शकों के लिए आनन्द में बाधक हो जाती है।

# 1

# कुहासा और किरण

**( विष्णु प्रभाकर )**

**मेरठ, आजमगढ़, मुरादाबाद, बलिया, रायबरेली, झाँसी, सुल्तानपुर, लखीमपुर, खीरी, बदायूँ, पीलीभीत।**

हिन्दी के प्रसिद्ध नाटककार विष्णु प्रभाकर द्वारा रचित नाटक 'कुहासा और किरण' में स्वतंत्र भारत के राजनीतिक, सामाजिक जीवन से जुड़ी समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है। भारत की राजनीतिक शासन व्यवस्था, बुद्धिजीवी वर्ग (सम्पादक) तथा अर्थव्यवस्था के आधार व्यापारी वर्ग, तीनों एक-दूसरे से मिलकर अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए अपने पद का दुरुपयोग कर रहे हैं। इस नाटक में इसी भ्रष्टाचार रूपी कुहासे का वास्तविक चित्रण किया गया है। विष्णु प्रभाकर ने इस नाटक में समाज के नेताओं, संपादकों तथा व्यापारियों के पाखण्ड एवं छद्मवेश को स्पष्ट किया है। स्वतंत्रता के उपरान्त भारतीय समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, पाखण्ड एवं छद्‌मवेश में छाए हुए कुहासे को कृष्ण चैतन्य, विपिन बिहारी, उमेशचन्द्र जैसे स्वार्थी चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है, तो इस कुहरे को दूर करने के लिए देश-प्रेम, कर्त्तव्यनिष्ठा, आस्था एवं नवचेतना की किरणों को अमूल्य, सुनन्दा, गायत्री जैसे चरित्रों के माध्यम से सामने लाया गया है, जो अन्याय के खिलाफ खड़े होकर कुहासे के प्रतिरूप भ्रष्टाचार को दूर करने का प्रयास करते हैं।

## 'कुहासा और किरण' नाटक की कथावस्तु (सारांश)

'कुहासा और किरण' नाटक की कथावस्तु कृष्ण चैतन्य नामक एक छद्म स्वतन्त्रता सेनानी एवं समाजसेवी की सामाजिक प्रतिष्ठा का चित्रण करते हुए प्रारम्भ होती है, जिसका वास्तविक नाम 'कृष्णदेव' है और जो मुलतान में हुए सन् 1942 ई. के आन्दोलन में स्वतन्त्रता सेनानियों के विरुद्ध मुखबिरी करता था। वह अपने पाखण्ड से स्वयं को 'कृष्णचैतन्य' के नाम से स्वतन्त्रता सेनानी एवं राष्ट्र प्रेमी के रूप में प्रतिष्ठित कर लेता है।

**प्रथम अंक**—प्रथम अंक की कहानी 'कृष्णचैतन्य' के निवास पर उनकी सेक्रेटरी सुनन्दा एवं अमूल्य के वार्तालाप से होती है। अमूल्य एक सच्चे स्वतन्त्रता सेनानी का पुत्र है। वह गरीबी एवं बेकारी में पड़ा है। सुनन्दा उसे सिफारिश करवाकर 'कृष्णचैतन्य' के यहाँ रखवाए देती है। दोनों कृष्णचैतन्य की 'षष्टिपूर्ति' के अवसर पर स्वागत की तैयारियों में व्यस्त हैं। इसी समय कृष्णचैतन्य आते हैं। दोनों उन्हें बधाई देते हैं।

अमूल्य को अपने अनिष्ट का कारण मानकर कृष्णचैतन्य शंकित रहते हैं। उन्होंने अमूल्य को विपिनबिहारी के यहाँ सम्पादक नियुक्त करवा दिया है। कृष्णचैतन्य को सरकार से 250 रुपये की पेंशन मिलती है और वे सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में दर्शकों के सामने आते हैं। प्रभा अपने उपन्यास की कथा सुनाने के लिए कृष्णचैतन्य के पास आयी। उसी समय देशभक्त डॉ. चन्द्रशेखर की विधवा अपने पेन्शन के कागजों पर हस्ताक्षर कराने आई और मुल्तान में सन् 1942 ई. के आन्दोलन तथा घटना का विवरण सुनाया, जिसे सुनकर कृष्णचैतन्य घबरा उठे। प्रभा और मालती में वाक्‌युद्ध होने लगा। इस संघर्ष में कृष्णचैतन्य सन्तुलन खो बैठे। वे प्राचीन घटनाओं को याद करके मानसिक रूप से भयभीत भी हो उठे। उन्हें भय हुआ कि उनकी कलई खुल न जाय।

कृष्णचैतन्य की पत्नी गायत्री अपने पति के व्यवहार एवं कपटी आचरण से विरक्त होकर अपने भाई के पास चली गई है। कृष्णचैतन्य अपने सभी सहयोगियों की कमी व दुर्बलताओं को जानता था।

**द्वितीय अंक**—इस अंक की घटना विपिनबिहारी के सम्पादकीय कार्यालय से सम्बन्धित है जहाँ विपिनबिहारी युवक अमूल्य को अपने काम तक सीमित रहने का निर्देश देते हैं। अमूल्य विपिनबिहारी को बतलाता है कि उसके पिता स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी थे। मुलतान षड्यन्त्र केस के पाँच अभियुक्तों में उनका भी नाम था। कृष्णदेव नामक विश्वासघाती मुखबिर की काली करतूत के कारण मालती के पति तथा दल के नेता डॉ. चन्द्रशेखर तथा उसके पिता को जेल की सजा भुगतनी पड़ी थी। कृष्णचैतन्य की सेक्रेटरी सुनन्दा विपिनबिहारी के पास आकर कृष्णचैतन्य की सच्ची कहानी प्रकाशित कराना चाहती है कि वास्तव में मुखबिर कृष्णदेव ही आज छद्मवेश में 'कृष्णचैतन्य' बने हुए हैं। किन्तु विपिनबिहारी इस सत्य कहानी को प्रकाशित करने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। प्रभा भी आकर देश में फैले मुखौटाधारी भ्रष्टाचारियों को बेनकाब करने का सुझाव देती है किन्तु विपिनबिहारी कृष्णचैतन्य के

विरुद्ध कुछ भी लिखने में अपनी असमर्थता व्यक्त कर देते हैं। युवक 'अमूल्य' सभी के रहस्य को खोल देता है। विपिनबिहारी सभी को समझाने का असफल प्रयास करते हैं किन्तु कोई प्रभाव नहीं पड़ता। फिर 50 रिम कागज उमेशचन्द्र अग्रवाल के हाथ चोरी से बेचने के अपराध में पुलिस इन्सपेक्टर आकर अमूल्य को गिरफ्तार कर लेता है जिसके पीछे कृष्णचैतन्य की साजिश है। प्रभा और सुनन्दा कृष्णचैतन्य की धूर्तता से क्षुब्ध और क्रोधित होती हैं। अमूल्य को इतनी यातना दी जाती है कि वह आत्म-हत्या करने के लिए तैयार हो जाता है। सुनन्दा इसकी सूचना कृष्णचैतन्य की पत्नी 'गायत्री' को देती है जो अमूल्य को देखने के लिए अस्पताल जाती है और आते समय कार-ट्रक दुर्घटना के बहाने आत्म-हत्या कर लेती है। कृष्णचैतन्य, उमेशचन्द्र तथा विपिन में गुप्त वार्ता होती है। विपिनबिहारी अब आगे इस प्रकार से भ्रष्ट आचरण से मुक्ति चाहने का संकेत देता है किन्तु कृष्णचैतन्य "मरेंगे हम तीनों, डूबेंगे हम तीनों" कहकर बात को टाल देता है। इस बीच उसे पत्नी की दुर्घटना का समाचार मिलता है और तीनों देखने के लिए वहाँ से अस्पताल के लिए चल पड़ते हैं। आम आदमी के इस व्यंग्य के साथ कि "आखिर इन्हें भी भगवान की याद आई। दर्द का पता लगा क्या होता है। काश ......" और दूसरे अंक की समाप्ति होती है।

**तीसरा अंक**—कृष्णचैतन्य पत्नी की मृत्यु के पश्चात् अपने निवास-स्थान पर गायत्री देवी के चित्र के समीप स्तब्ध भाव से बैठे चिन्ता मग्न हैं। वे गायत्री के बलिदान की महानता और अपनी नीचता को अनुभव करते हैं। एक पत्र को जिसे उसने मृत्यु से पहले लिखा था, प्रस्तुत करते हैं। सुनन्दा इसकी सूचना पुलिस को देकर जीवित व्यक्तियों के मुखौटे उतारना चाहती है। सी0 आई. डी0 के सुपरिन्टेन्डेन्ट टमटा का अमूल्य के बारे में जानकारी प्राप्त करने हेतु आगमन होता है। प्रभा अमूल्य को निर्दोष सिद्ध करना चाहती है। विपिनबिहारी अपने पत्रों के स्वामित्व परिवर्तन की सूचना देकर टमटा के साथ अपनी उदारता प्रदर्शित करते हैं। किन्तु अचानक कृष्णचैतन्य टमटा के समक्ष सभी रहस्यों को खोल देते हैं और स्पष्ट कर देते हैं कि मुलतान षड्यन्त्र केस का मुखबिर कृष्णदेव मैं ही हूँ। वे उमेश और विपिन को भ्रष्टाचार तथा अमूल्य को झूठे अभियोग में फँसाने के कुचक्र को भी टमटा के आगे स्पष्ट कर देते हैं। टमटा साहब सभी को अपने साथ चलने को कहते हैं। कृष्णचैतन्य अपना सर्वस्व मालती को सौंप पत्नी गायत्री देवी को प्रणाम कर टमटा के साथ चल देते हैं। आम आदमी स्टेज पर आकर 'कृष्णचैतन्य' को 'कृष्ण मन्दिर' (जेल) में भिजवाने की सूचना देता है। विपिनबिहारी और उमेशचन्द्र का सामाजिक बहिष्कार किया जाता है। अमूल्य छूट जाता है और मुखौटाधारियों को बेनकाब करने के लिए जनता को संकेत देता है। वह चोर दरवाजे तोड़ कर मगरमच्छों को देखने का निश्चय करता है तभी आम आदमी द्वारा सूचना मिलती है कि विपिन और उमेश दोनों पुलिस की गिरफ्त में आ गये हैं। अमूल्य के इस निर्णयात्मक वाक्य के साथ कि—"बलिदान कभी व्यर्थ नहीं जाता" नाटक का अन्त होता है।

## अभ्यास प्रश्न

**प्रश्न 1.** नाट्यकला की दृष्टि से 'कुहासा और किरण' की समीक्षा कीजिए।

**प्रश्न 2.** 'कुहासा और किरण' नाटक की सामान्य विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 3.** कथानक की दृष्टि से 'कुहासा और किरण' की समीक्षा कीजिए।

**प्रश्न 4.** 'कुहासा और किरण' नाटक का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।

**प्रश्न 5.** 'कुहासा और किरण' नाटक की कथावस्तु/कथानक पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 6.** इस नाटक के प्रमुख पात्र (नायक) अमूल्य का चरित्र-चित्रण कीजिए।

**प्रश्न 7.** 'कुहासा और किरण' नाटक का नायक कौन है? उसकी चारित्रिक विशेषताएँ संक्षेप में बताइए।

**प्रश्न 8.** "'कुहासा और किरण' नाटक में सामाजिक समस्याओं और ऐतिहासिक घटनाओं का सुन्दर सामंजस्य है।" स्पष्ट कीजिए।

**प्रश्न 9.** 'कुहासा और किरण' एक समस्यामूलक नाटक है। सिद्ध कीजिए।

**प्रश्न 10.** भाषा और संवाद-योजना की दृष्टि से 'कुहासा और किरण' की समीक्षा कीजिए।

**प्रश्न 11.** विष्णु प्रभाकर की नाट्य-शैली पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 12.** नाटक के सर्वाधिक मार्मिक प्रसंगों पर प्रकाश डालिए।

# 2 आन का मान

**( हरिकृष्ण 'प्रेमी' )**

**वाराणसी, लखनऊ, इटावा, बरेली, फर्रुखाबाद, एटा, शाहजहाँपुर, उन्नाव, हमीरपुर।**

हरिकृष्ण प्रेमी द्वारा रचित नाटक 'आन का मान' की विषय-वस्तु मुगलकालीन भारत के इतिहास से अवतरित है, जिसमें राजपूत सरदार दुर्गादास की स्वाभाविक बहादुरी, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि को चित्रित कर उसके व्यक्तित्व की महानता को प्रस्तुत किया गया है। नाटककार ने इस नाटक के माध्यम से मानवीय गुणों को प्रस्तुत किया है, साथ ही समाज में साम्प्रदायिक सौहार्द्र के संदेश को प्रसारित करने का सफल प्रयास किया है। इस नाटक में वीर दुर्गादास जहाँ भारतीय हिन्दू संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं, वहीं इनके समानान्तर मुगल सत्ता को रखा गया है। 'आन का मान' नाटक का प्रमुख उद्देश्य भारतीय युवकों एवं नागरिकों में स्वदेश के प्रति प्रेम की भावना का संचार, राष्ट्रीय एकता, धार्मिक सहिष्णुता, विश्वबन्धुत्व, सत्य व नैतिकता जैसे मानवीय भावों का चित्रण कर समाज में उनकी स्थापना को प्रेरित किया गया है।

## 'आन की मान' नाटक की कथावस्तु ( सारांश )

**प्रथम अंक**–नाटक का प्रारम्भ मुगल शहजादी सफीयतुन्निसा और बुलन्द अख्तर के पारस्परिक बातचीत से होता है। दोनों अपने पिता अकबर के ईरान चले जाने के बाद वीर दुर्गादास राठौर के यहाँ पल रहे हैं। दोनों की बातचीत का विषय औरंगजेब की संकीर्ण विस्तारवादी नीति की आलोचना है। फिर दुर्गादास का प्रवेश होता है। वह औरंगजेब के हिंसक कारनामों को उनके सामने खोलता है, जिससे दोनों क्षुब्ध हो जाते हैं। दुर्गादास और शहजादा अख्तर थोड़ी देर में तुरही की आवाज सुनकर शत्रु का सामना करने के लिए चले जाते हैं। अकेली शहजादी सफीयतुन्निसा चाँदनी रात के सौन्दर्य पर मुग्ध हो गीत गाने लगती है। गीत के स्वर को सुनकर अजीत सिंह पहुँच जाते हैं और दोनों में प्रेमालाप होने लगता है। इसी बीच वीरवर दुर्गादास वापस आ जाते हैं। वे दोनों के प्रेमालाप को उचित नहीं मानते और उन्हें समझाते हैं। फिर मुकुन्ददास खीची कोई गोपनीय सन्देश दुर्गादास के पास लाते हैं, जिससे अजीत सिंह को अविश्वास हो जाता है; किन्तु कासिम खाँ उसका निराकरण कर देते हैं। अन्त में औरंगजेब की ओर से शहजादी और शहजादे को वापस कराने के लिए ईश्वरदास सन्धि का प्रस्ताव लेकर आते हैं और शुजाअत खाँ को लेकर दुर्गादास से आमने-सामने बातचीत करा देते हैं। अजीत सिंह अपने उतावलेपन में आकर शुजाअत खाँ पर तलवार उठा लेते हैं, किन्तु दुर्गादास इसे अनुचित मानकर रोक देता है। नाटक के प्रथम अंक में बस इसी कथा का उल्लेख है।

**द्वितीय अंक**–औरंगजेब की भी दो पुत्रियाँ हैं—मेहरु तथा जीनत। मेहरु औरंगजेब द्वारा हिन्दुओं पर किये जा रहे अत्याचारों का विरोध करती है। जीनत पिता की समर्थक है। औरंगजेब अपनी पुत्रियों की बात सुनता है तथा मेहरु द्वारा बताये अत्याचारों के लिए पश्चात्ताप करता है। औरंगजेब अपनी पुत्रियों को जनता के साथ उदार व्यवहार करने के लिए कहता है। औरंगजेब अपने अन्तिम समय में अपनी वसीयत करता है कि उसका संस्कार सादगी से किया जाए। इस समय ईश्वरदास दुर्गादास को बन्दी बनाकर औरंगजेब के पास लाता है। औरंगजेब अपने पौत्र-पौत्री बुलन्द तथा सफीयत को पाने के लिए दुर्गादास से सौदेबाजी करता है, परन्तु दुर्गादास इसके लिए तैयार नहीं होते।

**तृतीय अंक**–तृतीय अंक सफीयतुन्निसा (शहजादी) के 'अगर पंख मैं भी पा जाती–नभ के पार त्वरित उड़ जाती।' गीत से प्रारम्भ होता है। फिर सफीयतुन्निसा और अजीत सिंह की बातचीत होती है, जिसमें एक ओर अजीत सिंह की भावुकता और दूसरी ओर सफीयतुन्निसा की सच्ची प्रेम-भावना का दिग्दर्शन कराया गया है। सफीयतुन्निसा अजीत सिंह से सच्चा प्रेम-भाव रखते हुए मारवाड़ और अजीत सिंह के हित में उससे विवाह करना नहीं चाहती। दूसरी ओर अजीत सिंह क्षणिक आवेश और भावुकता में

सफीयतुन्निसा को जबर्दस्ती अपने प्रेम-पाश में बाँधे रखना चाहते हैं। भाई शहजादा बुलन्द अख्तर भी जाता है। वह भी अजीत सिंह को समझाने का असफल प्रयास करता है। बुलन्द अख्तर के चले जाने के बाद अजीत सिंह पुन: सफीयतुन्निसा से प्रेमालाप करने लगते हैं। इसी बीच दुर्गादास दो हृदयों के मधुर मिलन को नष्ट करने लगते हैं और अजीत सिंह को कर्त्तव्य का ध्यान दिलाते हुए सफीयतुन्निसा को औरंगजेब के हाथों में सौंपने का कारण बतलाते हैं—"राजपूत, शत्रु-परिवार की नारियों की उतनी ही प्रतिष्ठा करते हैं जितनी माँ-बहनों के सम्मान की। मुझे आज मारवाड़ में शहजादी की प्रतिष्ठा सुरक्षित दिखायी नहीं पड़ती।"

अजीत सिंह दुर्गादास का विरोध करता है और अपने अधिकार से सफीयतुन्निसा को रोकने की घोषणा करता है; किन्तु दुर्गादास निर्भीकतापूर्वक इसका विरोध करता है। इस बीच मुकुन्ददास खीची मेवाड़ के राजपूत के आगमन की सूचना देते हैं, जो मेवाड़ की राजकुमारी के साथ मारवाड़ के महाराजा अजीत सिंह का विवाह सम्पन्न कराने हेतु सगाई का टीका लेकर आये हैं। अजीत सिंह इनका विरोध करते हैं, किन्तु सफीयतुन्निसा इस सम्बन्ध को मारवाड़ के हित में उचित मानकर इस सम्बन्ध को स्वीकारने हेतु अजीत सिंह को सहमति देती है।

इसी बीच बुलन्द अख्तर और कासिम खाँ एक पालकी के साथ आते हैं। शहजादी सफीयतुन्निसा सम्मान सहित पालकी पर बिठाकर औरंगजेब के पास भेज दी जाती है। दुर्गादास उसकी पालकी को अपने कन्धे का सहारा देकर शहजादी को सम्मान देते हैं। अजीत सिंह रोकना चाहते हैं, किन्तु कासिम खाँ और मुकुन्द दास उन्हें रोक देते हैं। अजीत सिंह क्रुद्ध होकर दुर्गादास को राज्य से निर्वासित कर देते हैं। पालकी बढ़ जाती है और इसी दृश्य के साथ तीसरा और अन्तिम अंक का पर्दा गिर जाता है।

## अभ्यास प्रश्न

**प्रश्न 1.** 'आन का मान' नाटक के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।

**प्रश्न 2.** नायक दुर्गादास का चरित्र-चित्रण कीजिए।

**प्रश्न 3.** 'आन का मान' नाटक की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 4.** 'आन का मान' नाटक के भावनात्मक स्थलों का वर्णन कीजिए।

**प्रश्न 5.** 'आन का मान' नाटक की कथावस्तु संक्षेप में प्रस्तुत कीजिए।

**प्रश्न 6.** 'आन का मान' नाटक के प्रथम अंक की कथा संक्षेप में लिखिए।

**प्रश्न 7.** 'आन का मान' नाटक के द्वितीय अंक की कथा संक्षेप में लिखिए।

**प्रश्न 8.** सिद्ध कीजिए कि 'आन का मान' नाटक दुर्गादास के आदर्श चरित्र पर आधारित है।

# 3 गरुड़ध्वज
**( पं. लक्ष्मीनारायण मिश्र )**

**आगरा, गोरखपुर, जौनपुर, फैजाबाद, बिजनौर, फतेहपुर, गोण्डा, सीतापुर, प्रतापगढ़, बहराइच, ललितपुर।**

पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र द्वारा रचित ऐतिहासिक नाटक 'गरुड़ध्वज' की कथावस्तु शुंग वंश के शासक सेनापति विक्रममित्र के शासनकाल और उसके व्यक्तित्व पर आधारित है। 'गरुड़ध्वज' में प्राचीन भारत के स्वरूप का चित्रण किया गया है। इस नाटक में धार्मिक संकीर्णताओं एवं स्वार्थों के कारण विघटित होने वाले देश की एकता एवं नैतिक पतन की ओर नाटककार ने ध्यान आकृष्ट किया है। इस नाटक में आचार्य विक्रममित्र, कालिदास, कुमार विषमशील, वासन्ती, मलयवती आदि पात्रों के द्वारा धार्मिक सहिष्णुता, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रप्रेम, नारी स्वाभिमान जैसे गुणों को प्रस्तुत कर समाज में इनके विकास का सन्देश दिया गया है। इस ऐतिहासिक नाटक में समाज में व्याप्त समस्याओं, विदेशियों द्वारा किए गए अत्याचार एवं धर्म तथा अहिंसा के नाम पर राष्ट्र की पहचान से छेड़छाड़ करने वालों के षड्यन्त्रों को रेखांकित किया गया है।

## 'गरुड़ध्वज' नाटक की कथावस्तु (सारांश)

**प्रथम अंक**—नाटक के प्रथम अंक की घटना राजधानी विदिशा में घटित होती है, जिसमें विदिशा के वैभव, वंश और राष्ट्र के लिए त्याग करने वाले आचार्य विक्रमादित्य का चरित्र उजागर हुआ है। शुंग वंश का पुष्यमित्र सम्राट के अकर्मण्य हो जाने के पश्चात् विदेशियों द्वारा कुचली जाने वाली प्रजा के आग्रह से शासन अपने हाथ में ले लेता है और 'सम्राट' अथवा 'महाराज' शब्द का सम्बोधन अपने लिए अग्राह्य और घृणित घोषित कर देता है। विक्रम मित्र भी उसी परम्परा का पालन करते आ रहे हैं। नाटक का प्रारम्भ इसी प्रसंग को लेकर होता है। राज्य-कर्मचारियों के पारस्परिक हास-परिहास के बीच 'पुष्कर' नामक कर्मचारी के मुख से 'महाराज' शब्द निकल जाता है, जिसके लिए वह प्राणदण्ड के भावी संकट की आशंका से अत्यन्त ही भयभीत हो जाता है। मलयवती तथा काशिराज की कन्या वासन्ती, जिनका उद्धार विक्रम मित्र के सैनिकों ने किया है, आती है और उसके संकट-मुक्ति का आश्वासन देती है। मलयवती पुष्कर को सहस्रदल कमल लाने के बहाने बाहर भेज देती है। वासन्ती को विश्वास नहीं है कि पुष्कर दण्ड से बच जायेगा, क्योंकि उसे विक्रम मित्र की न्यायप्रियता और दृढ़ निश्चय की भली-भाँति जानकारी है। मलयवती और वासन्ती की पारस्परिक बातचीत से पाठकों को यह जानकारी हो जाती है कि विक्रममित्र कितना त्यागी, शूर और दृढ़-निश्चयी है। इसी बीच एक दूसरी प्रासंगिक घटना भी घटित हो जाती है। शुंग वंश के कुमार सेनानी देवभूति श्रेष्ठि की कुमारी कन्या कौमुदी का विवाह-मण्डप से ही अपहरण कर लेता है। इस समाचार से विक्रम मित्र अत्यन्त क्षुब्ध हो जाते हैं। उसके शासन में उनके दो आदमियों द्वारा नीति और धर्म की हत्या की जाय, उन्हें स्वीकार नहीं है। इसे वे राज्य का अपमान मानते हैं। देवभूति शुंग साम्राज्य में काशी के शासक हैं। विक्रम मित्र, देवभूति को कौमुदी समेत पकड़ लाने के लिए मेघरुद्र (कालिदास) के नेतृत्व में सैनिकों को भेजने का आदेश देते हैं।

प्रथम अंक में ही मलयवती और वासन्ती की बातचीत से यह आभास मिल जाता है कि मलयवती का झुकाव कुमार विषमशील की ओर है और वासन्ती अपने जीवन से निराश है। वह आत्महत्या द्वारा इस जीवन को समाप्त कर देना चाहती है। उसे इस लोकापवाद की आत्म-ग्लानि है कि वह एक यवन सेनापति द्वारा भगायी गयी काशिराज की पुत्री है। यद्यपि वह निर्दोष और सर्वथा पवित्र है, किन्तु लोकोपवाद के कारण उसमें आत्महीनता की भावना आ गयी है। कालिदास की रचनाओं और उनके आकर्षक व्यक्तित्व पर वह मुग्ध है।

**द्वितीय अंक**—नाटक के द्वितीय अंक में राष्ट्रीय एकता के भाव-पक्ष पर विशेष जोर दिया गया है। द्वितीय अंक की घटना भी विदिशा प्रासाद के भीतरी कक्ष से सम्बन्धित है। शुंग साम्राज्य कुरु प्रदेश तक फैला है, उसके पश्चिम यवन शासन है, जिसकी राजधानी तक्षशिला (पेशावर) है। उसका शासक अन्तलिखित है। दोनों राज्यों के सीमा के सैनिकों में परस्पर कुछ विवाद हो जाता है, जिसमें शुंग शासक बड़ा कड़ा रुख अपनाता है। इसमें यवन शासक 'अन्तलिखित' और उसका मन्त्री हलोदर (हालिओदर) दोनों आतंकित और क्षुब्ध हो जाते हैं। हलोदर भारतीय जीवन और भारतीय संस्कृति के प्रति अत्यन्त ही आस्था रखता है। वह श्रीकृष्ण का भक्त है। वह दोनों राज्यों की मैत्री को दोनों देशों की प्रजा के लिए कल्याणकारी मानता है और शासक से अनुमति लेकर सन्धि

का प्रस्ताव लेकर विदिशा पहुँच जाता है। हलोदर विदिशा में उस समय पहुँचता है, जबकि कालिदास (मेघरुद्र) सेना सहित विक्रम मित्र के आदेश से यवन श्रेष्ठि पुत्री कौमुदी के उद्धार के लिए देवभूति को पकड़ने के लिए जा चुके हैं। कालिदास भी मलयवती और वासन्ती की भाँति ही राजाश्रय में पालित वह व्यक्ति है, जिसका उद्धार विक्रम मित्र ने बौद्धों के विहार से किया है।

विदिशा में विक्रम मित्र से हलोदर की मैत्री वार्ता होती है और भारतीय संस्कृति के नये अध्याय का प्रारम्भ होता है। हलोदर प्रजा के हित की सारी शर्तों को मानते हुए विदिशा में शान्ति का स्तम्भ स्थापित करने का प्रस्ताव रखता है, जिसे विक्रम मित्र मान लेता है। हलोदर अपने कुशल शिल्पियों को शीलभद्र नामक कलाकार के नेतृत्व में इस शुभ कार्य के लिए समर्पित करता है। उसके बाद ही सैनिक देवभूति और कौमुदी को लेकर पहुँच जाते हैं। एकान्त पाकर वासन्ती कालिदास को विजयी कार्तिकेय का सम्बोधन कर माला पहनाकर उनका स्वागत करती है और बिना किसी रक्तपात के विजय प्राप्ति के लिए प्रसन्नता व्यक्त करती है। इसी बीच विक्रम मित्र पहुँच जाते हैं। वासन्ती और कालिदास सहम जाते हैं। विक्रम मित्र वासन्ती से कहते हैं कि तुम्हारे पिता अभी आ रहे हैं और वे तुम्हें लेकर काशी जायेंगे। साथ ही वे कालिदास को भी माँग रहे हैं। वासन्ती आचार्य के पास ही रहने की इच्छा व्यक्त करती है। दूसरी ओर कालिदास भी जाना नहीं चाहते। वे कुमार विषमशील का राज कवि, अन्तरंग सखा बनकर रहने की इच्छा प्रकट करते हैं।

**तृतीय अंक**—नाटक के तीसरे अंक की घटना अवन्ति में घटित होती है। इसमें गर्दभिल्ल, महेन्द्रादित्य के पुत्र विषमशील के नेतृत्व में भारत के अनेक वीर सेनानी और शासक एकजुट होकर शक क्षत्रपों को पराजित करते हैं और मालवा का उद्धार करके शकों के विरुद्ध इस अभियान में सारे सहयोग और सफलता का श्रेय शुंग सेनापति विक्रम मित्र को है। उनके प्रभाव से कलिंग के जैन क्षारबेलि, दक्षिण के स्वाशितफर्णि, विगत, काशिराज आदि अनेक महारथी इस अभियान में सम्मिलित होते हैं। विक्रम मित्र के प्रभाव से जैन आचार्य कालक जिन्होंने शकों को इस देश पर आक्रमण करने के लिए उत्साहित किया है, अपनी गलती का अनुभव करते हैं। उसमें देश के नव-निर्माण की भावना का उदय होता है। वे अवन्ति के निर्माण में जैन मठों में एकत्र सारी सम्पत्ति सोना, चाँदी, दुर्लभ रत्न आदि को समर्पित करने का संकल्प लेते हैं।

अस्सी वर्षीय वृद्ध विक्रम मित्र को कुमार विषमशील की सफलता से अतीव प्रसन्नता होती है। वे स्वेच्छा से साकेत, मगध, विदिशा समेत सारी प्रजा का पालन-भार विषमशील पर छोड़ देते हैं। राज्याभिषेक के उपरान्त विषमशील के समक्ष देवभूति और कौमुदी का मामला न्याय के लिए प्रस्तुत किया जाता है। देवभूति अपने अपराध के लिए स्वयं देश निर्वासन स्वीकार करता है। मलयवती का विवाह कुमार विषमशील से तथा वासन्ती का विवाह कालिदास के साथ सम्पन्न होता है। कालिदास की इच्छानुसार 'विक्रम मित्र' का पूर्वार्द्ध 'विक्रम' और पिता 'महेन्द्रादित्य' का उत्तरार्द्ध 'आदित्य' शब्द मिलाकर विषमशील का नाम विक्रमादित्य रखा जाता है। कौमुदी और देवभूति के देश छोड़ देने से साकेत और पाटलिपुत्र भी अवन्ति के अधिकार में आ जाता है। अवन्ति के इस उद्धार पर नये विक्रम संवत् का प्रवर्तन होता है।

## अभ्यास प्रश्न

**प्रश्न 1.** 'गरुड़ध्वज' नाटक राष्ट्रीय चेतना का सन्देश देता है, सिद्ध कीजिए।
**प्रश्न 2.** देश-काल की दृष्टि से 'गरुड़ध्वज' की समीक्षा कीजिए।
**प्रश्न 3.** 'गरुड़ध्वज' एक ऐतिहासिक नाटक है। इस कथन की समीक्षा कीजिए।
**प्रश्न 4.** 'गरुड़ध्वज' नाटक में किस समस्या को उठाया गया है?
**प्रश्न 5.** 'गरुड़ध्वज' नाटक में कौन-सा अंक आपको सबसे अच्छा लगा और क्यों?
**प्रश्न 6.** 'गरुड़ध्वज' के प्रतिपाद्य विषय (कथावस्तु) पर प्रकाश डालिए।
**प्रश्न 7.** 'गरुड़ध्वज' के पहले अंक में चित्रित घटनाओं को अपने शब्दों में लिखिए।
**प्रश्न 8.** 'गरुड़ध्वज' नाटक के द्वितीय अंक की कथा संक्षेप में लिखिए।
**प्रश्न 9.** 'गरुड़ध्वज' नाटक के तृतीय अंक की कथा संक्षेप में लिखिए।
**प्रश्न 10.** 'गरुड़ध्वज' नाटक की नाटक के तत्त्वों के आधार पर समीक्षा कीजिए।

# 4 सूतपुत्र

## (डॉ. गंगासहाय 'प्रेमी')

**प्रयागराज, सहारनपुर, अलीगढ़, मुजफ्फरनगर, गाजीपुर, मैनपुरी, जालौन, हरदोई, बाराबंकी।**

डॉ० गंगासहाय 'प्रेमी' द्वारा लिखित नाटक 'सूत-पुत्र' महाभारत के प्रसिद्ध पात्र दानवीर कर्ण के जीवन की घटनाओं पर आधारित है। इस नाटक में पौराणिक कथा को आधार बनाकर वर्तमान भारतीय समाज की विसंगतियों—वर्ण, जाति, वर्ग एवं महिलाओं की स्थिति का विवेचन किया गया है। इस नाटक के माध्यम से नाटककार ने कर्ण के प्रति पाठकों के मन में सहानुभूति उत्पन्न करने का प्रयास किया है। इस नाटक में नाटककार ने नारी की समाज में विवशता, नारी शिक्षा की समस्या आदि का चित्रण कर उसे वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समझाने का प्रयास किया है।

## 'सूतपुत्र' नाटक की कथावस्तु (सारांश)

डॉ. गंगासहाय 'प्रेमी' द्वारा लिखित 'सूतपुत्र' एक समस्यामूलक विचारोत्तेजक पौराणिक नाटक है, जिसका कथानक महाभारत से लिया गया है। इसका कथानक (सारांश) इस प्रकार है—

**प्रथम अंक—**आचार्य परशुराम सूतपुत्र 'कर्ण' के जंघे पर सिर रखकर सोये हुए हैं। उनका उत्तरीय रक्त से भीग गया है। रक्त की उष्णता से उनकी नींद टूट जाती है। वे देखते हैं कि विषैला कीड़ा कर्ण की जांघ में माँस कुतरकर भीतर प्रवेश कर गया है और कर्ण सब कुछ सहन करता हुआ उन्हें इसलिए नहीं जगा रहा है कि गुरुदेव को कष्ट होगा। वे उठकर तुरन्त आश्रम में जाते हैं और बाण लाकर कीड़े को उसकी नोक से निकाल देते हैं। वन से 'नखरंजनी' घास लाकर उसके रस को घाव पर गिराकर उसका उपचार करते हैं। इस प्रकार शिष्य पर प्रगाढ़ प्रेम होते हुए भी उसकी दृढ़ता और धैर्य को देखकर उन्हें उसके ब्राह्मण होने पर सन्देह हो जाता है और बातचीत द्वारा सारे रहस्य को खुलवा लेते हैं। उनका क्रोध जाग उठता है। वे कर्ण को शाप देते हैं कि यहाँ आश्रम में सीखी हुई विद्या उसके काम नहीं आयेगी। वह विद्या अन्तिम समय में भूल जायेगी।

इस प्रकार कर्ण 'सूर्यपुत्र' होते हुए भी 'सूतपुत्र' के असवर्णत्य का नामपट्ट लगा होने के कारण गुरु के आशीर्वाद से वंचित रह जाता है। जन्मदाता और गुरु दोनों में से किसी का भी उसे स्नेह अथवा आशीष नहीं मिल पाता।

**द्वितीय अंक—**नाटक के दूसरे अंक में पांचाल नरेश द्रुपद की सुन्दर कन्या द्रौपदी के स्वयंवर का दृश्य है। वहाँ शर्त रखी गई है कि जो व्यक्ति कड़ाह के खौलते हुए तेल को देखकर ऊपर चक्र में घूमती हुई मछली की बाईं आँख को वेध देगा, उसी के साथ द्रौपदी का विवाह होगा। स्वयंवर की शर्त बड़ी है। दूर-दूर के राजकुमार पहुँचे हुए हैं। कर्ण दुर्योधन के साथ वहाँ पहुँच जाता है। किन्तु यहाँ भी उसका असवर्णत्व उसके मार्ग में बाधक बन जाता है। कर्ण अपना पूरा परिचय नहीं दे पाता, अत: वह लक्ष्य-वेध से रोक दिया जाता है। कर्ण में निहित विद्रोही भावनाओं को परखकर उसी राजसभा में दुर्योधन कर्ण को अंग देश का राजा घोषित कर देता है किन्तु फिर भी उसे अज्ञात कुल-जन्मा होने के कारण स्वयंवर में भाग लेने के लिए पात्र नहीं माना जाता। अन्त में अज्ञातवास बिता रहे अर्जुन भीम के साथ ब्राह्मण वेश में स्वयंवर सभा में आते हैं और लक्ष्य-वेध कर द्रौपदी को वरण करते हैं। दुर्योधन विरोध द्वारा द्रौपदी को छीनना चाहता है किन्तु कर्ण इसे अनुचित मानता है। वह क्षोभ और कटुता लेकर स्वयंवर से वापस आता है। द्रौपदी के इस स्वयंवर की घटना से कर्ण दुर्योधन का पक्षधर और पाण्डवों का कट्टर विरोधी बन जाता है।

**तृतीय अंक—**नाटक के तीसरे अंक में महाभारत युद्ध से पूर्व गंगा तट पर कर्ण सूर्य की उपासना करता है। सूर्यदेव प्रकट होकर उसे अपना परिचय-सम्बन्ध सब कुछ बता देते हैं। कर्ण की रक्षा के लिए वे सोने का कुण्डल और कवच देते हैं। जिसकी विशेषता यह है कि वह शरीर से आसानी से नहीं छूट सकता। वे कर्ण को भावी आसन्न संकट से भी अवगत करा देते हैं कि इन्द्र

उसे छलने के लिए आ रहे हैं। किन्तु वह अपनी दानवीरता पर अडिग है। इन्द्र की याचना पर कवच और कुण्डल इन्द्र को दे देता है। इन्द्र प्रसन्न हो जाते हैं और अपनी ओर से 'अमोघ' अस्त्र उसकी अन्तिम रक्षा के लिए दे देते हैं। इसके बाद ही वहाँ महाभारत के भीषण युद्ध की आशंका से भयभीत कुन्ती का आगमन होता है जो स्पष्ट कर देती है कि कर्ण उसका जेष्ठ पुत्र है। वह कर्ण से अनुरोध करती है कि वह दुर्योधन का पक्ष छोड़कर पाण्डवों की ओर आ जाय और उनके राज्य का उत्तराधिकारी बने। किन्तु कुन्ती का वात्सल्य प्रेम, राज्य, प्रलोभन, मातृत्व आदि कर्ण को उसके कर्त्तव्य पथ से विचलित नहीं कर पाते। वह इसे विश्वासघात मानता है और कुन्ती को इस बात पर आश्वस्त करके वापस करता है कि 'अर्जुन' को छोड़कर वह किसी पाण्डव का अहित नहीं करेगा और अर्जुन के न रहने पर भी उसको लेकर कुन्ती के पाँच पुत्र रहेंगे।

**चतुर्थ अंक—**नाटक के चतुर्थ अंक में कर्ण के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालने के लिए नाटककार को तीन दृश्यों का आयोजन करना पड़ा है। प्रथम दृश्य में कुरुक्षेत्र के युद्ध का दृश्य है जिसमें कर्ण और शल्य के पारस्परिक सम्बन्ध की चर्चा है। शल्य सारथि है। वह कर्ण के अधीनस्थ काम करने में अपमान का अनुभव करता है। उधर कर्ण महारथी के पद पर आसीन है। उसकी आज्ञा का उल्लंघन और शल्य के व्यंग्य-बाणों से उसका मनोबल गिरता है। बहुत कहने के बाद शल्य रथ को अर्जुन के पास लाता है। कर्ण की वीरता का लोहा श्रीकृष्ण भी मानते हैं। दुर्भाग्य से कर्ण का रथ दलदल में फँस जाता है। शल्य नीचे नहीं उतरता। कर्ण को शस्त्र त्याग कर भूमि पर रथ का चक्का कीचड़ से निकालने के लिए उतरना पड़ता है। अर्जुन नि:शस्त्र कर्ण पर बाण-प्रहार करते हैं। कर्ण गिर पड़ता है। कौरव सेना में शोक व्याप्त हो जाता है।

दूसरे दृश्य में कर्ण के चरित्र को और भी उजागर करने के लिए श्रीकृष्ण और अर्जुन के प्रयास की चर्चा है। चौथे अंक के दूसरे दृश्य में श्रीकृष्ण और अर्जुन कर्ण की दानशीलता, धैर्य और साहस की अन्तिम परीक्षा लेने की योजना बनाते हैं।

तीसरे दृश्य में श्रीकृष्ण और अर्जुन ब्राह्मण वेश बनाकर कुरुक्षेत्र के युद्ध भूमि से आहत-मरणासन्न कर्ण की दानवीरता, धैर्य और साहस की परीक्षा लेते हैं। युद्ध भूमि में अब कर्ण लाशों के बीच मरणासन्न कराह रहा है। श्रीकृष्ण अर्जुन के साथ ब्राह्मण बनकर दान माँगने के लिए पहुँचते हैं। कर्ण अपने दाँत में लगे सोने को देना चाहता है। वह पत्थर के टुकड़े से दाँत तोड़ता है। बाण से पृथ्वी छेद कर जल निकालता है और सोने को धोकर दान दे देता है तथा श्रीकृष्ण की परीक्षा में खरा उतरता है। श्रीकृष्ण अर्जुन और कर्ण को भाई-भाई के रूप में मिला देते हैं और कर्ण हमेशा के लिए आँखें बन्द कर लेता है।

## अभ्यास प्रश्न

**प्रश्न 1.** 'सूत्रपुत्र' शीर्षक की सार्थकता पर विचार व्यक्त कीजिए।

**प्रश्न 2.** 'सूतपुत्र' नाटक का कथानक (कथावस्तु) का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

**प्रश्न 3.** डॉ. गंगासहाय 'प्रेमी' ने अपने नाटक 'सूतपुत्र' में प्राचीन कथा को आधार बनाकर वर्तमान की किन ज्वलन्त समस्याओं को चित्रित किया है? संक्षिप्त उत्तर दीजिए।

**प्रश्न 4.** 'सूतपुत्र' नाटक की भाषा-शैली पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

**प्रश्न 5.** संवाद-योजना की दृष्टि से 'सूतपुत्र' नाटक की विवेचना कीजिए।

**प्रश्न 6.** कर्ण की चारित्रिक विशेषताएँ लिखिए।

**प्रश्न 7.** 'सूतपुत्र' के आधार पर परशुराम की चारित्रिक विशेषताओं का संक्षेप में उल्लेख कीजिए।

**प्रश्न 8.** 'सूतपुत्र' नाटक के आधार पर श्रीकृष्ण के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 9.** कुन्ती के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 10.** ''कर्ण का जीवन फूलों की शैय्या नहीं, ज्वालागिरि का निवास था।'' 'सूतपुत्र' नाटक के आधार पर सिद्ध कीजिए।

**प्रश्न 11.** नाट्य कला की दृष्टि से 'सूतपुत्र' की समीक्षा कीजिए।

# 5

# राजमुकुट

## ( व्यथित हृदय )

**कानपुर, बुलन्दशहर, मथुरा, बस्ती, मिर्जापुर, देवरिया, बांदा, रामपुर।**

नाटककार 'व्यथित हृदय' द्वारा रचित नाटक 'राजमुकुट' महाराणा प्रताप के जीवन पर आधारित है। इस ऐतिहासिक नाटक में महाराणा प्रताप, शक्ति सिंह, अकबर, जगमल आदि के चरित्रों के माध्यम से देशप्रेम, धार्मिक सहिष्णुता एवं धार्मिक एकता की भावना आदि को आधुनिक समाज हेतु उपयोगी मानकर स्थापित करने की कोशिश की गयी है। 'राजमुकुट' नाटक की कथावस्तु का मूल उद्देश्य देशप्रेम एवं स्वाधीनता की रक्षा के लिए बलिदान करने की भावना को प्रेरित करना है। नाटककार ने ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर काल्पनिक तत्त्वों का समायोजन करके आधुनिक समाज में व्याप्त समस्याओं की ओर संकेत किया है। इस नाटक में देश के प्राचीन मूल्यों एवं प्राचीन संस्कृति का भी उल्लेख किया गया है।

## 'राजमुकुट' नाटक की कथावस्तु ( सारांश )

**प्रथम अंक :** 'राजमुकुट' भारतीय इतिहास की एक स्वर्णिम गाथा को आधार बनाकर लिखा गया ऐतिहासिक एकांकी है। इसमें महाराणा प्रताप के पराक्रम, अनन्य त्याग और बलिदान की कथा को प्रस्तुत किया गया है।

संक्षेप में इस नाटक की कथा इस प्रकार है—

नाटक के प्रथम अंक में महाराणा प्रताप के पूर्व की पृष्ठभूमि का उल्लेख है, जिसमें जगमल के विलासितापूर्ण जीवन का बड़ा ही सजीव किन्तु हास्यास्पद चित्रण प्रस्तुत किया गया है। जगमल शराब के नशे में आधी रात को प्रलाप कर रहा है। उसे प्रजावती के जागरण गीत सुनाई पड़ते हैं, जो जगमल को बिलकुल ही प्रिय नहीं हैं। वह प्रहरी से प्रजावती को दण्ड देने का आदेश देता है। प्रजावती की हत्या कर दी जाती है।

राज्य में दूसरी ओर जगमल की राजव्यवस्था और विलासितापूर्ण जीवन के विरुद्ध जनता में असन्तोष की आग सुलग रही है। प्रजावती की हत्या उसमें भी काम करती है। किसान और मजदूरों में विरोध की आग भड़कती है। चन्दावत और अजय बाप-बेटे राज्य की दुर्व्यवस्था पर चिन्तन कर रहे हैं, तब तक उन्हें प्रजावती के साथ प्रदर्शनकारियों का जुलूस दिखलाई पड़ता है। चन्दावत कृषक प्रदर्शनकारियों को शान्त करके विवेक से काम लेने का उपदेश देते हैं।

सत्ता के विरुद्ध विद्रोह की आग धीरे-धीरे विकराल रूप धारण करती जा रही है। मेवाड़ के राजसिंहासन पर बैठे जगमल को कोई चिन्ता नहीं है। वह पूर्ववत् विलासिता में लीन है। उसके चापलूस सेवक निरीह और भोली-भाली जनता पर अत्याचार कर रहे हैं। अन्त में जगमल के विरुद्ध जनमत तैयार हो जाता है और चन्दावत के नेतृत्व में वह राजभवन में जाकर जगमल का राजमुकुट उतार लेता है। यह राजमुकुट मेवाड़ के उदीयमान सशक्त वीर योद्धा महाराणा प्रताप के सिर पर रखा जाता है। इस प्रकार प्रथम अंक में कथा का प्रारम्भ हो जाता है, साथ-ही-साथ प्रयत्न की भूमिका के रूप में महाराणा प्रताप देश की एकता और स्वतन्त्रता का संकल्प लेते हैं।

**द्वितीय अंक :** महाराणा प्रताप के राजसिंहासन पर बैठते ही देश का नक्शा बदल जाता है। विलासिता के स्थान पर शौर्य का साम्राज्य हो जाता है। महाराणा प्रताप देश की रक्षा के लिए सैनिकों को तैयार रहने की प्रेरणा देते हैं। वीरता प्रदर्शन के लिए राज्य में 'अहेरिया उत्सव' का आयोजन किया जाता है, जिसमें प्रत्येक सैनिक को अपने बर्छे से एक शिकार लाना आवश्यक है। 'अहेरिया उत्सव' के अवसर पर ही एक अत्यन्त ही दुःख और दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटित होती है। राणा प्रताप सिंह और उनके भाई शक्ति सिंह में एक शूकर के शिकार के प्रश्न पर विवाद छिड़ जाता है। दोनों उसे अपने बाण से मारा हुआ बतलाते हैं। विवाद बढ़ते-बढ़ते युद्ध का रूप ले लेता है। दोनों ओर से तलवारें खिंच जाती हैं। इसी बीच पुरोहित दोनों को शान्त कराने के लिए पहुँच जाते हैं, किन्तु कोई उनका कहना नहीं मानता। अन्त में वह कटार से आत्महत्या करके घटनास्थल पर ही आत्मोत्सर्ग कर देते हैं। इस घटना से दोनों अवाक् रह जाते हैं। अन्त में महाराणा प्रताप शक्ति सिंह को 'ब्रह्महत्या' के आरोप में देश-निर्वासन का दण्ड देते हैं, जिसे शक्ति सिंह स्वीकार कर देश-निर्वासित हो जाते हैं। वे अकबर के पुत्र सलीम से जा मिलते हैं।

**तृतीय अंक :** महाराणा प्रताप को बराबर देश की स्वतन्त्रता की चिन्ता लगी रहती है। इसी बीच अकबर के दूत मानसिंह महाराणा प्रताप से मिलने के लिए आते हैं। महाराणा मानसिंह-जैसे देशद्रोही, कुल कलंक से मिलने में अपना अपमान मानते हैं। वे अपने पुत्र अमरसिंह को मानसिंह का उचित आतिथ्य-सत्कार करने का आदेश देते हैं, किन्तु स्वयं मिलना नहीं चाहते और सिर-दर्द का बहाना बनाकर अपने झोपड़े में बैठे रहते हैं। मानसिंह इस व्यवहार को भाँप जाता है और संघर्ष की चुनौती देने लगता है। चुनौती सुनकर राणा प्रकट हो जाते हैं और मानसिंह को ललकारते हुए उसकी चुनौती स्वीकार कर लेते हैं। वे कहते हैं—''जाइए राजा जी, जाइए! मैं आज से ही आपकी प्रतीक्षा करूँगा। आशा है आप अब मेवाड़ में उफान लेकर ही आयेंगे।''

युद्ध की तैयारियाँ मेवाड़ के घर-घर में होने लगती है। क्षत्राणियाँ अपने पतियों को देश पर जूझने के लिए प्रेरणा प्रदान करती हैं।

उधर कूटनीतिज्ञ अकबर शक्ति सिंह और मान सिंह को मिलाकर अपनी राह का काँटा निकाल देने का अच्छा अवसर देखता है। वह दोनों को मिलाकर अपने बेटे सलीम के सेनापतित्व में मेवाड़ पर आक्रमण करने का आदेश देता है।

हल्दी-घाटी युद्ध-भूमि बनी है। घमासान युद्ध होता है। महाराणा प्रताप मान सिंह को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते शत्रुओं के सैनिकों के बीच घिर जाते हैं। रक्षा के लिए चन्दावत कृष्ण वहाँ पहुँच जाते हैं और राणा का 'राजमुकुट' अपने सिर पर रख लेते हैं और आग्रहपूर्वक राणा को सुरक्षित चेतक के साथ बाहर भेज देते हैं। राणा के भ्रम में चन्दावत कृष्ण का वध हो जाता है। किन्तु शक्ति सिंह जब चन्दावत के इस त्याग को देखते हैं तो उनकी आँखें खुल जाती हैं। वे देखते हैं कि राणा प्रताप क्षत-विक्षत अवस्था में चेतक के साथ दूर चले जा रहे हैं। दो मुगल सैनिक उनका पीछा कर रहे हैं। शक्ति सिंह उन्हें रोकते हैं। 'चेतक' मर जाता है। राणा खिन्न मन बैठे हैं। शक्ति सिंह अपने किये पर पश्चात्ताप करते हैं। दोनों भाई गले मिलते हैं। शक्ति सिंह अपना घोड़ा राणा प्रताप को देकर विदा करते हैं और स्वयं राजस्थान की पहाड़ियों में अज्ञातवास के लिए चले जाते हैं।

**चतुर्थ अंक :** हल्दी-घाटी का युद्ध समाप्त हो जाता है, परन्तु राणा हार नहीं मानते। अकबर प्रताप की देशभक्ति, त्याग और वीरता का लोहा मानते हैं तथा महाराणा प्रताप के प्रशंसक बन जाते हैं। एक दिन प्रताप के पास एक संन्यासी आता है। प्रताप संन्यासी का उचित सत्कार न कर पाने के कारण व्यथित हैं। उसी समय राणा की पुत्री चम्पा घास की बनी रोटी लेकर आती है, जिसे एक वन-बिलाव छीनकर भाग जाता है। चम्पा गिर जाती है और पत्थर से टकराकर उसकी मृत्यु हो जाती है। इस समय अकबर राणा को भारत माता का पूत बताता है और प्रताप के दर्शन करके अपने को धन्य मानता है। संघर्षरत प्रताप रोगग्रस्त हो जाते हैं। वह शक्ति सिंह तथा अपने सभी साथियों से स्वतन्त्रता-प्राप्ति के वचन लेते हैं। 'भारत-माता की जय' के साथ महाराणा का देहान्त हो जाता है। 'राजमुकुट' की यह कथा भारत के स्वर्णिम इतिहास और एक रण-बाँकुरे वीर की अमर कहानी है।

## अभ्यास प्रश्न

**प्रश्न 1.** 'राजमुकुट' नाटक के नायक का चरित्र-चित्रण कीजिए।
**प्रश्न 2.** 'राजमुकुट' नाटक के आधार पर महाराणा प्रताप का चरित्र-चित्रण कीजिए।
**प्रश्न 3.** 'राजमुकुट' नाटक की भाषा एवं संवाद-योजना की विशेषता पर प्रकाश डालिए।
**प्रश्न 4.** 'राजमुकुट' नाटक के देश-काल और वातावरण का वर्णन कीजिए।
**प्रश्न 5.** 'राजमुकुट' नाटक की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
**प्रश्न 6.** स्पष्ट कीजिए कि 'राजमुकुट' नाटक में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समावेश किया गया है।
**प्रश्न 7.** 'राजमुकुट' नाटक की नाट्य-कला की दृष्टि से समीक्षा कीजिए।
**प्रश्न 8.** 'राजमुकुट' नाटक के आधार पर महाराणा प्रताप और अकबर की भेंट का वर्णन कीजिए।
**प्रश्न 9.** 'राजमुकुट' नाटक के मार्मिक स्थलों का वर्णन कीजिए।
**प्रश्न 10.** 'राजमुकुट' नाटक के प्रथम अंक की कथावस्तु लिखिए।
**प्रश्न 11.** 'राजमुकुट' नाटक के द्वितीय अंक की कथा का सार लिखिए।
**प्रश्न 12.** 'राजमुकुट' नाटक के तृतीय अंक की कथा का सार लिखिए।
**प्रश्न 13.** 'राजमुकुट' नाटक के तृतीय अंक के कथ्य संक्षेप में लिखिए।

## 【 खण्ड : 'ख' 】

# संस्कृत दिग्दर्शिका

## प्रथमः पाठः

# वन्दना

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव,
यद् भद्रं तन्न आसुव।।१।।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्,
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद् धनम्।।२।।

सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै,
तेजस्वि नावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै।।३।।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।।४।।

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु,
शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः।।५।।

## अभ्यास प्रश्न

### ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. वन्दनायाः प्रथमे मन्त्रे का प्रार्थना कृता?

२. जगति मानवः कथं वसेत्?

३. वयं कथं जीवनम् यापयेम्?

४. पञ्चमे मन्त्रे का प्रार्थना कृता?

५. अस्मभ्यम् प्रजाभ्य: पशुभ्य: च ईश किम् ददातु?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

१. **निम्नलिखित श्लोकों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए—**

(क) विश्वानि...................................... आसुव।

(ख) ईशावास्यमिदं.................................... धनम्।

(ग) यतो यत: .................................... पशुभ्य:।

२. **निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए—**

(क) मा विद्विषावहै।

(ख) विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव।

(ग) मा गृध: कस्य स्विद धनम्।

(घ) तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध: कस्य स्विद् धनम्।

(ङ) सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै।

(च) उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।

(छ) ईशावास्यमिदं सर्वं।

३. **निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—**

(क) ईश्वर का सदा ध्यान करना चाहिए।

(ख) किसी के धन का लोभ न करो।

(ग) आलस्य में अपना बहुमूल्य समय न व्यतीत करो।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

१. **शन्न:, तन्न में सन्धि-विच्छेद कीजिए।**

२. **निम्नलिखित शब्दों में विभक्ति एवं वचन बताइए—**

कस्य, विश्वानि, पशुभ्य:।

## शब्दार्थ

**विश्वानि** = सम्पूर्ण। **दुरितानि** = पाप। **परासुव** = दूर कीजिए। **भद्रं** = कल्याणकारी। **आसुव** = प्रदान कीजिए। **ईशावास्यम्** = ईश्वर से व्याप्त है। **तेन** = इस कारण से। **त्यक्तेन** = त्यागपूर्वक। **भुञ्जीथा:** = भोग करो। **मा गृध:** = लोभ या लालच न करो। **कस्य स्वित्** = किसका है। **शन्न:** = शं + न: (**शं** = कल्याण, **न:** = हमारा।)। **प्रजाभ्य:** = प्रजाओं (सन्तान) का। **पशुभ्य:** = पशुओं से।

●●

# द्वितीयः पाठः

# प्रयागः

भारतवर्षस्य उत्तरप्रदेशराज्ये प्रयागस्य विशिष्टं स्थानमस्ति। अत्र ब्रह्मणः प्रकृष्टयागकरणात् अस्य नाम प्रयागः अभवत्। गङ्गा-यमुनयोः संगमे सितासितजले स्नात्वा जनाः विगतकल्मषा भवन्ति इति जनानां विश्वासः। अमायां पौर्णमास्यां संक्रान्तौ च स्नानार्थिनामत्र महान् सम्मर्दः भवति। प्रतिवर्षं मकरं गते सूर्ये माघमासे तु अनेकलक्षाः जनाः अत्र आयान्ति मासमेकमुषित्वा च संगमस्य पवित्रेण जलेन, विदुषां महात्मनामुपदेशामृतेन च आत्मानं पावयन्ति। अस्मिन्नेव पर्वणि महाराजः श्रीहर्षः प्रतिपञ्चवर्षम् अत्रागत्य सर्वस्वमेव याचकेभ्यो दत्त्वा मेघ इव पुनः सञ्चयार्थं स्वराजधानीं प्रत्यगच्छत्।

ऋषेः भरद्वाजस्य आश्रमः अपि अत्रैव अस्ति, यत्र पुरा दशसहस्रमिताः विद्यार्थिनः अधीतिनः आसन्। पितुः आज्ञां पालयन् पुरुषोत्तमः श्रीरामः अयोध्यायाः वनं गच्छन् 'कुत्र मया वस्तव्यम्' इति प्रष्टुम् अत्रैव भरद्वाजस्य समीपम् आगतः। चित्रकूटमेव त्वन्निवासयोग्यम् उचितं स्थानम् इति तेनादिष्टः रामः, सीतया लक्ष्मणेन च सह चित्रकूटम् अगच्छत्।

पुरा वत्सनामकमेकं समृद्धं राज्यमासीत्। अस्य राजधानी कौशाम्बी इतः नातिदूरेऽवर्तत। अस्य राज्यस्य शासकः महाराजः उदयनः वीरः अप्रतिमसुन्दरः ललितकलाभिज्ञश्चासीत्। यमुनातटे आधुनिक-'सुजावन'–ग्रामे तस्य सुयामुनप्रासादस्य ध्वंसावशेषाः तस्य सौन्दर्यानुरागं ख्यापयन्ति। प्रियदर्शी सम्राट् अशोकः कौशाम्ब्यामेव स्वशिलालेखमकारयत् योऽधुना कौशाम्ब्याः आनीय प्रयागस्य दुर्गे सुरक्षितः।

गङ्गायाः पूर्वं पुराणप्रसिद्धस्य महाराजस्य पुरुरवसः राजधानी प्रतिष्ठानपुरम् झूँसीत्याधुनिकनाम्ना प्रसिद्धमस्ति। यस्य प्रतिष्ठा अद्यापि विदुषां महात्मनाञ्च स्थित्या अक्षुण्णैव।

इतिहासप्रसिद्धः नीतिनिपुणः मुगलशासकः अकबरनामा दिल्ल्याः सुदूरे पूर्वस्यां दिशि- स्थितयोः कड़ाजौनपुरनामकयोः समृद्धयोः राज्ययोः निरीक्षणं दुष्करं विज्ञाय तयोर्मध्ये प्रयागे गङ्गायमुनाभ्यां परिवृतं दृढं दुर्गमकारयत् गङ्गाप्रवाहाच्चास्य रक्षणाय विशालं बन्धमप्यकारयत्, योऽद्यापि नगरस्य गङ्गायाश्च मध्ये सीमा इव स्थितोऽस्ति। अयमेव प्रयागस्य नाम स्वकीयस्य 'इलाही' धर्मस्यानुसारेण 'इलाहाबाद' इत्यकरोत्। इदं दुर्गमतीव विशालं सुदृढं सुरक्षादृष्ट्या च अतिमहत्त्वपूर्णमस्ति।

भारतस्य स्वतन्त्रतान्दोलनस्य इदं नगरं प्रधानकेन्द्रम् आसीत्। श्रीमोतीलालनेहरू, महामना मदनमोहनमालवीय, आजादोपनामकश्चन्द्रशेखरः, अन्ये च स्वतन्त्रतासंग्रामसैनिकाः अस्यामेव पावनभूमौ उषित्वा आन्दोलनस्य सञ्चालनम् अकुर्वन्। राष्ट्रनायकस्य पण्डितजवाहरलालस्य इयं क्रीड़ास्थली कर्मभूमिश्च।

राष्ट्रभाषा-हिन्दी-प्रचारे संलग्नं हिन्दीसाहित्यसम्मेलनम् अत्रस्थितम् अत्रैव च अनेकसहस्रसंख्यैः देशविदेशविद्यार्थिभिः परिवृतः विविधविद्यापारङ्गतैः विद्वद्वरेण्यैः उपशोभितः च प्रयागविश्वविद्यालयः भरद्वाजस्य प्राचीन-गुरुकुलस्य नवीनं रूपमिव शोभते। स्वतन्त्रेऽस्मिन् भारते प्रत्येकं नागरिकाणां न्यायप्राप्तेरधिकारघोषणामिव कुर्वन् उच्चन्यायालयः अस्य नगरस्य प्रतिष्ठां वर्द्धयति।

एवं गङ्गा-यमुना-सरस्वतीनां पवित्रसङ्गमे स्थितस्य भारतीयसंस्कृतेः केन्द्रस्य च महिमानं वर्णयन् महाकविः कालिदासः सत्यमेव अकथयत्–

**समुद्रपत्न्योर्जलसन्निपाते**
**पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात्।**
**तत्त्वावबोधेन विनापि भूयस्-**
**तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः।।**

# अभ्यास प्रश्न

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. प्रयागः कस्मिन् राज्ये वर्तते?
२. ऋषेः भरद्वाजस्य आश्रमः कुत्रास्ति?
३. रामः सीतया लक्ष्मणेन च सह कुत्र अगच्छत्?
४. वत्स-राज्यस्य राजधानी का आसीत्?
५. उदयनस्य राजधानी का आसीत्?
६. प्रयागे कयोः नद्योः सङ्गमः अस्ति?
७. "कुत्र मया वस्तव्यम्" इति प्रष्टुम् श्रीरामः कस्य समीपम् आगतः?
८. हिन्दीसाहित्यसम्मेलनं कुत्र वर्तते (स्थितम्)?
९. झूँसीत्याधुनिक नाम्ना प्रसिद्धं पुरा किं नगरं कुत्र च आसीत्?
१०. भारतस्य स्वातन्त्र्यान्दोलनस्य प्रधानकेन्द्रं किम् नगरमभूत?
११. उत्तरप्रदेशस्य उच्चन्यायालयः कुत्र अस्ति?
१२. प्रतिष्ठानपुरम् वर्तमाने केन नाम्ना प्रसिद्धम् अस्ति?
१३. प्रयागे स्नानार्थिनां महान् सम्मर्दः कदा भवति?
१४. कस्य राज्यस्य शासकः उदयनः आसीत्?
१५. प्रयागस्य नाम 'प्रयागः' कथम् अभवत्?
१६. सम्राट अशोकः स्वशिलालेखं कुत्र अकारयत्?
१७. गङ्गा-यमुनयोः संगमः कुत्र अस्ति?
१८. प्रयागस्य नाम 'इलाहाबाद' इति कः अकरोत्?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित अनुच्छेदों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**

(क) राष्ट्रभाषा-हिन्दी-प्रचारे .................प्रतिष्ठां वर्द्धयति।
(ख) ऋषेः भरद्वाजस्य ............................... अगच्छत्।
(ग) भारतवर्षस्य उत्तरप्रदेशराज्ये ................ प्रत्यगच्छत्।
अथवा भारतवर्षस्य ..................................... पावयन्ति।

अथवा अत्र ब्राह्मणः ..........................आत्मानं पावयन्ति।

(घ) पुरा वत्सनामकमेकं........................... ख्यापयन्ति।

(ङ) इतिहासप्रसिद्धः ..................... अतिमहत्त्वपूर्णमस्ति।

(च) समुद्रपत्न्योर्जलसन्निपाते...................... शरीरबन्धः।

(छ) भारतस्य..................................... कर्मभूमिश्च।

(ज) राष्ट्रभाषा-हिन्दी ................................. वर्द्धयति।

अथवा राष्ट्रभाषा ........................................... शोभते।

२. **निम्नलिखित सूक्तिपरक पंक्ति की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**

(क) "तत्त्वावबोधेन विनापि भूयसतनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः।"

(ख) तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः।

३. **निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

(क) प्रयाग उत्तर प्रदेश राज्य में है।

(ख) यहाँ पर भरद्वाज का आश्रम है।

(ग) पुरुषोत्तम राम यहाँ आये थे।

(घ) प्रयाग में गङ्गा और यमुना का सङ्गम है।

(ङ) चन्द्रशेखर का उपनाम 'आजाद' था।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

१. **निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**

तेनादिष्टः, झूँसीत्याधुनिक, नातिदूरे, योऽधुना।

२. **गङ्गायमुनयोः** तथा **सितासितौ** में विग्रह सहित समास बताइए।

## शब्दार्थ

**ब्रह्मणः** = ब्रह्मा के द्वारा। **प्रकृष्टयागकरणात्** = श्रेष्ठ यज्ञ करने के कारण। **सितासितजले** = श्वेत और श्याम जल में। **विगतकल्मषाः** = पापरहित। **सम्मर्दः** = भीड़। **पूतात्मनाम्** = पवित्र आत्मावाले। **अभिषेक** = स्नान। **कड़ा** = कौशाम्बी जनपद में पश्चिम की ओर गंगा तट पर स्थित एक स्थान जो मुगलकाल में एक सम्पन्न राज्य था। **पुरुरवा** = एक पौराणिक महान् राजा। **परिवृतः** = घिरा हुआ, युक्त। **विद्वद्वरेण्यैः** = श्रेष्ठ विद्वानों से। **समुद्रपत्न्योः** = समुद्र की दोनों पत्नियों अर्थात् गंगा और यमुना के। **भूयः** = पुनः। **तनुत्यजां** = शरीर त्याग करनेवाले।

## तृतीयः पाठः

# सदाचारोपदेशः

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना: उपासते।।१।।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।२।।

मधुमन्मे निष्क्रमणं मधुमन्मे परायणम्।
वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसदृशः।।३।।

आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम्।
आचारात् कीर्तिमाप्नोति पुरुषः प्रेत्य चेह च।।४।।

ये नास्तिकाः निष्क्रियाश्च गुरुशास्त्रातिलङ्घिनः।
अधर्मज्ञा दुराचारास्ते भवन्ति गतायुषः।।५।।

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्माथौं चानुचिन्तयेत्।
उत्थायाचम्य तिष्ठेत पूर्वां सन्ध्यां कृताञ्जलिः।।६।।

अक्रोधनः सत्यवादी भूतानामविहिंसकः।
अनुसूयुरजिह्मश्च शतं वर्षाणि जीवति।।७।।

अकीर्तिं विनयो हन्ति हन्त्यनर्थं पराक्रमः।
हन्ति नित्यं क्षमा क्रोधमाचारो हन्त्यलक्षणम् ।।८।।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्।।९।।

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः।।१०।।

सत्येन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते।
मृजया रक्ष्यते रूपं कुलं वृत्तेन रक्ष्यते।।११।।

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।।१२।।

(संकलित)

# अभ्यास प्रश्न

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. विद्या केन रक्ष्यते?
२. धर्मः केन रक्ष्यते?
३. धर्मस्य सर्वस्वं किमस्ति?
४. कः शतं वर्षाणि जीवति?
५. अकीर्तिम् कः हन्ति?
६. अभिवादनशीलस्य कानि वर्द्धन्ते?
७. के पुरुषाः गतायुषः भवन्ति?
८. सदाचारस्य किं महत्वम्?
९. मनुष्यः आचारात् किं किं लभते?
१०. कुलं केन रक्ष्यते?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित श्लोकों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**

(क) संगच्छध्वं............................................ उपासते।
(ख) श्रूयतां............................................. समाचरेत्।
(ग) आचाराल्लभते ................................ प्रेत्य चेह च।
(घ) ब्राह्मे मुहूर्ते .................................... कृताञ्जलिः।
(ङ) अभिवादनशीलस्य ............................. यशोबलम्।
(च) वृत्तं यत्नेन ..........................................हतोहतः।
(छ) अक्रोधनः ............................................. जीवति।
(ज) अकीर्तिं विनयो ............................... हन्त्यलक्षणम्।
(झ) सत्येन रक्ष्यते ................................ वृत्तेन रक्ष्यते।
(ञ) ये नास्तिकाः ...................................... गतायुषः।
(ट) मधुमन्मे ..........................................मधुसदृशः।
(ठ) कुर्वन्नेवेह कर्माणि ........................ कर्म लिप्यते नरे।

**२. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**

(क) वृत्ततस्तु हतो हतः।
(ख) मृजया रक्ष्यते रूपं कुलं वृत्तेन रक्ष्यते।
(ग) आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।
(घ) विद्या योगेन रक्ष्यते।

(ङ) आचारात् कीर्तिमाप्नोति।
(च) कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
(छ) आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम्।
(ज) सत्येन रक्ष्यते धर्मः।
(झ) आचारो हन्त्य लक्षणम्।
(ञ) वृत्तं यत्नेन संरक्षेद्।
(ट) अधर्मज्ञा दुराचारास्ते भवन्ति गतायुषः।
(ठ) सं गच्छध्वं संबदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

३. **निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**
(क) सदाचार से मनुष्य आयु प्राप्त करता है।
(ख) मनुष्य को ब्राह्ममुहूर्त में उठना चाहिए।
(ग) चरित्र की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए।
(घ) सत्य से धर्म की रक्षा होती है।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

१. **धर्मार्थौ** एवं **महापुरुषः** में विग्रह सहित समास बताइए।
२. **निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**
ह्यायुः, धर्मार्थौ, वृद्धोपसेविनः।

## शब्दार्थ

**संगच्छध्वम्** = साथ-साथ चलो। **संवदध्वम्** = साथ-साथ बोलो। **सं वो मनांसि जानताम्** = (वः मनांसि सञ्जानताम्) **वः** = अपने। **मनांसि** = मनों को। **सञ्जानताम्** = मिलकर जानो। **एवं** = इस प्रकार। **वाचा** = वाणी से। **उपासते** = पूजा करते थे। **जिजीविषेत्** = जीने की इच्छा करनी चाहिए। **शतं समाः** = सौ वर्ष। **मधुमद्** = मधुर। **निष्क्रमणं** = प्रवृत्ति। **परायणम्** = निवृत्ति। **प्रेत्य** = मृत्यु के पश्चात् परलोक में। **इह** = इस लोक में। **अनुसूयुः** = निन्दा न करनेवाला। **गतायुषः** = मृत (मरे हुए)। **अक्रोधनः** = क्रोध न करनेवाला। **अजिह्म (ऋजु)** = जो कुटिल न हो। **अलक्षणम्** = बुराई। **वृत्तम्** = चरित्र। **मृजया** = स्वच्छता या सफाई से। **वृत्तेन** = सदाचार से। **श्रूयताम्** = सुनो। **धर्मसर्वस्वम्** = धर्म का सार। **अवधार्यताम्** = धारण करो।

●●

## चतुर्थः पाठः

# हिमालयः

भारतदेशस्य सुविस्तृतायाम् उत्तरस्यां दिशि स्थितो गिरिः पर्वतराजो हिमालय इति नाम्नाभिधीयते जनैः। अस्य महोच्चानि शिखराणि जगतः सर्वानपि पर्वतान् जयन्ति। अतएव लोका एनं पर्वतराजं कथयन्ति। अस्योन्नतानि शिखराणि सदैव हिमैः आच्छादितानि तिष्ठन्ति। अत एवास्य हिमालय इति हिमगिरिरित्यपि च नाम सुप्रसिद्धम्। 'एवरेस्ट', 'गौरीशङ्कर' प्रभृतीनि अस्य शिखराणि जगति उन्नततमानि सन्ति। अस्य अधित्यकायां त्रिविष्टप-नयपाल-भूतान-देशाः पूर्णसत्तासम्पन्नाः,कश्मीरहिमाचलप्रदेशासम-सिक्किम-मणिपुरप्रभृतयाः भारतीयाः प्रदेशाः सन्ति। उत्तरभारतस्य पर्वतीयो भागोऽपि हिमालयस्यैव प्रान्तरे तिष्ठति।

अयं पर्वतराजः भारतवर्षस्य उत्तरसीम्नि स्थितः तत् प्रहरीव शत्रुभ्यः सततं रक्षति। हिमालयादेव समुद्गम्य गङ्गा-सिन्धु-ब्रह्मपुत्राख्याः महानद्यः, शतद्रि-विपाशा-यमुना-सरयू-गण्डकी-नारायणीकौशिकीप्रभृतयः नद्यश्च समस्तामपि उत्तरभारतभुवं स्वकीयैः तीर्थोदकैः न केवलं पुनन्ति अपितु इमां शस्यश्यामलामपि कुर्वन्ति।

अस्योपत्यकासु सुदीर्घाः वनराजयो विराजन्ते, यत्र विविधाः ओषधयो वनस्पतयस्तरवश्च तिष्ठन्ति। इमाः ओषधयः जनान् आमयेभ्यो रक्षन्ति, तरवश्च आसन्द्यादिगृहोपकरणनिर्माणार्थं प्रयुज्यन्ते। हिमालयः वर्षर्तौ दक्षिणसमुद्रेभ्यः समुत्थिता मेघमाला अवरुध्य वर्षणाय ताः प्रवर्तयति।

अस्योपत्यकायां विद्यमानः कश्मीरो देशः स्वकीयाभिः सुषमाभिः भूस्वर्ग इति संज्ञया अभिहितो भवति लोके, ततश्च पूर्वस्यां दिशि स्थितः किन्नर-देशो देवभूमिनाम्ना प्राचीनसाहित्ये प्रसिद्धः आसीत्। अद्यापि 'कुलूघाटी' इति नाम्ना प्रसिद्धोऽयं प्रदेशः रमणीयतया केषां मनो न हरति। शिमला-देहरादून-मसूरी-नैनीताल-प्रभृतीनि नगराणि देशस्य सम्पन्नान् जनान् ग्रीष्मर्तौ बलादिव भ्रमणाय आकर्षन्ति। एभ्योऽपि पूर्वस्मिन् भागेऽवस्थितः रमणीयतमः प्रदेशः कामरूपतया 'कामरूप' इति संज्ञया अभिधीयते।

अस्यैव कन्दरासु तपस्यन्तः अनेके ऋषयो मुनयश्च परां सिद्धिं प्राप्तवन्तः। अस्य सिद्धिमत्वं विलोक्यैव 'उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां धिया विप्रोऽजायत' इत्यादि कथयन्तः वैदिका ऋषयः अस्य महत्त्वं स्वीकृतवन्तः। पुराणेषु सर्वविधानां सिद्धीनां प्रदातुः शिवस्य स्थानम् अस्यैव पर्वतस्य कैलासशिखरे स्वीकृतमस्ति। अस्यैव प्रदेशेषु बदरीनाथ-केदारनाथ-पशुपतिनाथ-हरिद्वार-हृषीकेश-वैष्णवदेवी-ज्वालादेवीप्रभृतीनि तीर्थस्थानानि सन्ति।

अतएव पर्वतराजोऽयं हिमालयः रक्षकतया, पालकतया, सर्वौषधिभिः संरक्षकतया, सर्वसिद्धिप्रदातृतया च भारतीयेषु जनेषु सुतरां समादृतः पर्वतराजः इति।

## अभ्यास प्रश्न

### ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. कस्य शिखराणि सदैव हिमैः आच्छादितानि सन्ति?
२. हिमालय पर्वतः भारतदेशस्य कस्यां दिशि वर्तते?
३. हिमालयस्य सर्वोच्च पर्वतशिखरस्य किं नाम?
४. हिमालयस्य कानि शिखराणि सर्वोच्चानि सन्ति?
५. कस्य कन्दरासु मुनयः सिद्धिं प्राप्तवन्तः?
६. हिमालयात् काः काः नद्यः निःसरन्ति?
७. हिमालयस्य उपत्यकायां के प्रदेशाः सन्ति?
८. कस्य पर्वतराजस्य शिखराणि सर्वानपि पर्वतान् जयन्ति?
९. कः देशः 'भू-स्वर्गः' इति संज्ञया अभिहितो भवति?

१०. हिमालये कानि-कानि नगराणि सन्ति?
११. कस्य उपत्यकासु सुदीर्घा: वनराजयो विराजन्ते?
१२. कस्य शोभा पर्यटकानां हृदयं मोहयति?
१३. कस्य उपत्यकायां कश्मीरो प्रदेश: विद्यते?
१४. हिमालय: प्रहरीव शत्रुभ्य: कं रक्षति?
१५. 'कुलूघाटी' प्रदेशस्य प्राचीनसाहित्ये किं नाम आसीत्?
१६. हिमालयस्योपत्यकासु के विराजन्ते?
१७. कश्मीरो देश: कस्योपत्यकायां विद्यमान: अस्ति।
१८. हिमालयप्रदेशेषु कानि तीर्थस्थानानि सन्ति?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित अवतरणों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**

(क) भारतदेशस्य ............................ उन्नततमानि सन्ति।
(ख) अयं पर्वतराज: .................................... कुर्वन्ति।
(ग) अस्योपत्यकासु ................................. प्रवर्तयति।
(घ) अस्योपत्यकायां .................................. आकर्षन्ति।
(ङ) अस्यैव कन्दरासु .................................... सन्ति।

**२. निम्न सूक्तिपरक पंक्ति की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**

"उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां धिया विप्रोऽजायत"

**३. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

(क) भारत की उत्तर सीमा में हिमालय पर्वत है।
(ख) हिमालय के ऊँचे शिखर सर्वदा बर्फ से ढके रहते हैं।
(ग) हिमालय से गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र आदि नदियाँ निकलती हैं।
(घ) हिमालय भारतवर्ष की रक्षा करता है।
(ङ) कश्मीर की शोभा पर्यटकों का मन मोह लेती है।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**

हिमगिरिरिति, हिमालयस्यैव, प्रहरीव, तरवश्च, महोच्चानि।

**२. निम्नलिखित शब्दों में विभक्ति और वचन बताइए–**

शिखराणि, हिमै:, उत्तरस्याम्, भारतीयान्, भूभागे।

## शब्दार्थ

**नाम्नाभिधीयते** (नाम्ना + अभिधीयते) = नाम से पुकारा जाता है। **हिमगिरिरित्यपि** = (हिमगिरि: + इति + अपि) = हिमगिरि भी। **उत्तरसीम्नि** = उत्तरी सीमा पर। **उपत्यका** = घाटी। **अधित्यका** = पहाड़ का ऊपरी मध्य भाग। **प्रान्तरे** = अन्तर्वर्ती भू-भाग में। **पुनन्ति** = पवित्र बनाते हैं। **आमयेभ्य:** = रोगों से। **एभ्योऽपि** = इनके भी। **आसन्द्यादि** = गद्दीदार आराम कुर्सी आदि। **धिया** = बुद्धि से। **सुतरां समादृत:** = अत्यन्त आदर प्राप्त। **उपह्वरे** = गुफा में। **विप्रोऽजायत** = (विप्र: + अजायत) ब्राह्मण हुए। **प्रदातु:** = प्रदान करनेवाले। **सर्वसिद्धिप्रदातृतया** = समस्त सिद्धियों को प्रदान करने के कारण। **सुतराम्** = अत्यन्त। **समादृत:** = आदर पानेवाला। **पर्वतराजोऽयम्** (पर्वतराज: + अयम्) यह पर्वतराज। **सर्वौषधिभि:** = (सर्व+ओषधिभि:) सभी ओषधियों से।

●●

## पञ्चमः पाठः

# गीतामृतम्

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः।।१।।

क्लैव्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप।।२।।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः।।३।।

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति।।४।।

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते।।५।।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा–
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ।।६।।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।७।।

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।८।।

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ! लभन्ते युद्धमीदृशम्।।९।।

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय! युद्धाय कृतनिश्चयः।।१०।।

(श्रीमद्भगवद्गीता)

# अभ्यास प्रश्न

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. विषादमापन्नमर्जुनं श्रीकृष्ण: किम् उपादिशत्?
२. स क: यं न शस्त्राणि छिन्दन्ति, न पावक: दहति?
३. क: न हन्ति न च हन्यते?
४. देही जीर्णानि शरीराणि विहाय किम् करोति?
५. पण्डिता: कान् नानुशोचन्ति?
*अथवा* के गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति?
६. आत्मा अमर: इति कस्योपदेश: अस्ति?
७. सुखिन: क्षत्रिया: किम् लभन्ते?
८. शस्त्राणि कं न छिन्दन्ति?
९. क: आत्मान: न दहति?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित श्लोकों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए—**

(क) तं तथा ........................................ मधुसूदन:।
(ख) देहिनोऽस्मिन्.................................... न मुह्यति।
(ग) वासांसि जीर्णानि ............................ नवानि देही।
(घ) नैनं ........................................ शोचितुमर्हसि।
(ङ) हतो वा...................................... कृतनिश्चय:।
(च) अशोच्यानन्वशोचस्त्वं ......................... पण्डिता:।
(छ) क्लैव्यं मा.......................................... परन्तप।
(ज) यदृच्छया.................................... युद्धमीदृशम्।
(झ) य एनं वेत्ति ............................. हन्ति न हन्यते।
(ञ) जातस्य हि ................................. शोचितुमर्हसि।

**२. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए—**

(क) गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिता:।
(ख) नायं हन्ति न हन्यते।
(ग) जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
(घ) तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय!
(ङ) नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक:।

**३. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

(क) यह तेरे लिए उचित नहीं है।

(ख) अर्जुन युद्ध करो।

(ग) आत्मा को अग्नि नहीं जला सकती।

(घ) मृत व्यक्ति का जन्म निश्चित है।

(ङ) तुझे शोक नहीं करना चाहिए।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

**१. अधोलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**

कृपयाविष्टम्, नैतत्, चोपपन्नम्, त्यक्त्वोत्तिष्ठ।

**२. अधोलिखित शब्दों में विभक्ति एवं वचन बताइए–**

एनम्, युद्धाय, वासांसि, जातस्य।

**३. अधोलिखित क्रिया-पदों में धातु एवं लकार बताइए–**

उत्तिष्ठ, वेत्ति, हन्ति, प्राप्स्यसि, गृह्णाति।

## शब्दार्थ

**कृपयाविष्टम्** = (कृपया + आविष्टम्) करुणा से पूर्ण। **अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्** = (अश्रुपूर्ण + आकुल + ईक्षणम्) आँसुओं से भरे हुए व्याकुल नेत्रोंवाले। **विषीदन्तम्** = दुःखी होते हुए। **मधुसूदनः** = श्रीकृष्ण। **क्लैव्यं** = नपुंसकता को। **नैतत्वय्युपपद्यते** = न + एतत् + त्वयि + उपपद्यते = यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। **क्लैव्यम्** = कायरता को। **पण्डिताः** = ज्ञानी, विद्वान्। **जरा** = वृद्धावस्था। **विहाय** = छोड़कर। **देही** = आत्मा। **यदृच्छया** = स्वेच्छा से। **चोपपन्नम्** = च + उपपन्नम् = और प्राप्त हुए। **अपावृतम्** = खुला हुआ। **सुखिनः** = भाग्यवान्। **युद्धमीदृशम्** = (युद्धम् + ईदृशम्) ऐसे युद्ध की। **हतो वा** = (हतः + वा) मरकर या। **प्राप्स्यसि** = तू प्राप्त करेगा। **भोक्ष्यसे** = तू भोगेगा। **तस्मादुत्तिष्ठ** = (तस्मात् + उत्तिष्ठ) इसलिए तू उठ खड़ा हो। **कौन्तेय** = हे कुन्ती-पुत्र (अर्जुन)!

●●

## षष्ठः पाठः

# चरैवेति-चरैवेति

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।।१।।

देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि। नो इतराणि। यान्यस्माकँ सुचरितानि। तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि।।२।।

ये के चास्मच्छ्रेयाँ सोब्राह्मणाः। तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम् भिया देयम्। संविदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात् ।।३।।

ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथाः। अथाभ्याख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषु वर्तेरन्। तथा तेषु वर्तेथाः। एष आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्। एवमु चैतदुपास्यम् ।।४।।

## अभ्यास प्रश्न

### ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. आचार्यः अन्तेवासिनं किं उपदिशति?
२. स्वाध्यायात् किम् न कुर्यात्?
३. सत्यात् च धर्मात् किम् न कुर्यात्?
४. आचार्यस्य आदेशः कस्य तुल्यः भवति?
५. कस्मात् कस्मात् न प्रमदितव्यम्?
६. सत्य भाषणे किम् न कुर्यात्?
७. पिता कस्य तुल्यः भवति?

### ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

१. **अधोलिखित अवतरणों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**
(क) वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति............................. न प्रमदितव्यम्।
(ख) देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्........................... तानि त्वयोपास्यानि।
(ग) नो इतराणि ............................................ वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्।
(घ) ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः .................................. एवमु चैतदुपास्यम्।

२. **अधोलिखित सूक्तिपरक पंक्तियों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**
(क) सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान्मा प्रमादः।
(ख) मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव अतिथि देवो भव।

(ग) श्रद्धया देयम्, ह्रिया देयम्, भिया देयम्, संविदा देयम्।
(घ) एतदनुशासनम्।

३. **अधोलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**
(क) तुम सत्य बोलो और धर्म का आचरण करो।
(ख) स्वाध्याय में प्रमाद मत करना।
(ग) सत्य भाषण में प्रमाद नहीं करना चाहिए।
(घ) श्रद्धापूर्वक दान करना चाहिए।
(ङ) आचार्य का आदेश वेदवाक्य के समान होता है।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

१. **अधोलिखित क्रियापदों में धातु एवं लकार बताइए–**
आगमिष्यति, गच्छाम:, भवन्ति।
२. **निम्नलिखित शब्दों में प्रत्यय बताइए–**
प्रदितव्यम्, गत्वा, गृहीत्वा, नीत्वा, मन्त्रयित्वा।
३. **अधोलिखित में सन्धि विच्छेद कीजिए–**
सत्यान्न, धर्मान्न, यान्यनवद्यानि, यान्यस्माकम्, त्वयोपास्यानि।

## शब्दार्थ

**वेदम्** = वेद को। **अनूच्य** = कहकर, उच्चारण करके। **अन्तेवासिनम्** = शिष्य को। **अनुशास्ति** = उपदेश देता है। **सत्यं वद** = सत्य बोलो। **धर्मं चर** = धर्म का आचरण करो। **स्वाध्यायात्** = स्वाध्याय से। **मा** = नहीं। **आचार्याय** = आचार्य के लिए। **प्रियम्** = प्यारा। **धनमाहृत्य** = धन भेंट करके। **प्रजातन्तुम्** = सन्तान की परम्परा को। **व्यवच्छेत्सी:** = नष्ट करो। **सत्यान्न** = सत्य से नहीं। **प्रमदितव्यम्** = प्रमाद करना चाहिए। **धर्मान्न** = धर्म से नहीं। **कुशलान्न** = कुशल से नहीं। **भूत्यै** = उन्नति के साधनों के विषय में। **स्वाध्यायप्रवचनाभ्याम्** = वेदों के अध्ययन और अध्यापन में। **देवपितृ कार्याभ्याम्** = देवों तथा पितरों से सम्बन्धित कर्मो में। **मातृदेव:** = माता को देव समझने वाले। **भव** = होओ, बनो। **पितृदेव:** = पिता को देव समझने वाले। **आचार्य देव:** = आचार्य में देवता की भावना रखने वाले। **अतिथि देव:** = अतिथि को देवता मानने वाले। **यान्यनवद्यानि** = जो प्रशंसनीय, श्रेष्ठ। **तानि** = वे। **सेवितव्यानि** = सेवन करने चाहिए। **इतराणि** = अन्य। **अस्मच्छ्रेया:** = हमसे श्रेष्ठ। **श्रद्धया** = श्रद्धा की भावना से। **श्रिया** = अपनी सम्पत्ति के अनुसार। **ह्रिया** = लज्जा के अनुसार। **भिया** = भय के कारण। **संविदा** = मित्रता की भावना से। **कर्मविचिकित्सा** = किसी कर्म के विषय में सन्देह। **वृत्तविचिकित्सा** = किसी आचरण के सम्बन्ध में सन्देह। **सम्मर्शिन:** = विवेकशील। **आयुक्ता:** = स्वेच्छा से काम करने वाला। **अलूक्षा** = सरल स्वभाव के। **वर्तेथा:** = व्यवहार करना। **अथाभ्याख्यातेषु** = जो आरोपित है। **एष:** = यह। **आदेश:** = आदेश है। **वेदोपनिषत्** = वेदों का रहस्य, वेदों की शिक्षा। **एतदनुशासनम्** = यही अनुशासन है। **एवमुपासितव्यम्** = इसी प्रकार तुम्हें उपासना करनी चाहिए।

●●

## सप्तमः पाठः

# लोभः पापस्य कारणम्

एको वृद्धव्याघ्रः स्नातः कुशहस्तः सरस्तीरे ब्रूते। भोः भोः पान्थाः! इदं सुवर्ण-कङ्कणं गृह्यताम्। ततो लोभाकृष्टेन केनचित् पान्थेनालोचितम्– भाग्येनैतत् संभवति किन्तु अस्मिन् आत्मसन्देहे प्रवृत्तिनं विधेया। यतः–

**न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति।**
**संशयं पुनरारुह्य यदि जीवति पश्यति।।**

स आह– कुत्र तव कङ्कणम्? व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य दर्शयति। पान्थोऽवदत्– कथं मारात्मके त्वयि विश्वासः। व्याघ्र उवाच– शृणु रे पान्थ! प्रागेव यौवनदशायाहमतीव दुर्वृत्त आसम्। अनेकगोमानुषाणां बधान्मे पुत्रा मृताः दाराश्च वंशहीनश्चाहम्। ततः केनचिद् धार्मिकेणाहमादिष्टः– दानधर्मादिकं चरतु भवान्। तदुपदेशादिदानीमहं स्नानशीलो दाता वृद्धो गलितनखदन्तो न कथं विश्वासभूमिः। मम चैतावान् लोभविरहो येन स्वहस्तस्थमपि सुवर्णकङ्कणं यस्मैकस्मैचिद् दातुमिच्छामि। तथापि व्याघ्रो मानुषं खादति इति लोकप्रवादो दुर्निवारः। मया च धर्मशास्त्राणि अधीतानि–

**मरुस्थल्यां यथा वृष्टिः क्षुधार्ते भोजनं तथा।**
**दरिद्रे दीयते दानं सफलं पाण्डुनन्दन।।**
**मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।**
**आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः।।**

त्वं चातीव दुर्गतः तत्तुभ्यं सुवर्णकङ्कणं दातुं सयत्नोऽहम्। यतः–

**दरिद्रान् भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम्।**
**व्याधितस्यौषधं पथ्यं नीरुजस्य किमौषधैः।।**

तदत्र सरसि स्नात्वा सुवर्णकङ्कणं गृहाण। ततो यावदसौ तद्वचः प्रतीतो लोभात् सरः स्नातुं प्रविशति तावत् महापङ्के निमग्नः पलायितुमक्षमः। पङ्के पतित दृष्ट्वा व्याघ्रोऽवदत्–अहह! महापङ्के पतितोऽसि। अतस्त्वामहमुत्थापयामि इत्युक्त्वा शनैः शनैरुपगम्य तेन व्याघ्रेण भक्षितः। **(हितोपदेश)**

## अभ्यास प्रश्न

### ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. लोभः कस्य कारणम् अस्ति?
२. व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य पान्थं किमदर्शयत्?
३. व्याघ्रस्य वचनं श्रुत्वा पथिकः किम् अचिन्तयत्?
४. पान्थं पङ्के पतितं दृष्ट्वा व्याघ्रः किम् अवदत्?
५. दानं कस्मै दातव्यम्?
६. पापस्य किम् कारणम् अस्ति?
७. व्याघ्रे यौवने कीदृशः आसीत्?
८. व्याघ्रस्य सम्बन्धे कः लोकप्रवादः?
९. सः पथिकः केन भक्षितः?
१०. पण्डितः कः भवति?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. अधोलिखित अवतरणों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**

(क) शृणु रे पान्थ! व्याघ्र उवाच– ..................... दातुमिच्छामि।
(ख) मरुस्थल्यां ................................................ पण्डितः।
(ग) त्वं चातीव ................................................ किमौषधैः।
(घ) तदत्र सरसि ................................................ भक्षितः।
(ङ) मातृवत् ................................................ स पण्डितः।

**२. अधोलिखित सूक्तिपरक पंक्तियों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**

(क) न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति।
(ख) मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
(ग) दरिद्रे दीयते दानं सफलं पाण्डुनन्दन।
(घ) आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः।
(ङ) व्याधितस्यौषधं पथ्यं नीरुजस्य किमौषधैः।
(च) लोभः पापस्य कारणम्।

**३. अधोलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

(क) लोभ पाप का कारण होता है।
(ख) दरिद्र को दान देना चाहिए।
(ग) तेरा कंगन कहाँ है?
(घ) धनवान् को धन मत दो।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**

पान्थोऽवदत्, लोभाकृष्टः, चैतावान्।

**२. निम्नलिखित में विभक्तियाँ बताइए–**

भाग्येन, सन्देहे, उपदेशात्, व्याघ्रः।

**३. निम्नलिखित क्रियापदों में धातु, पुरुष एवं वचन बताइए–**

अपश्यन्, पश्यति, तिष्ठति, इच्छामि।

## शब्दार्थ

**स्नातः** = स्नान करके। **कुशहस्तः** = हाथ में कुशा लिये हुए। **पान्थाः** = हे पथिकों। **पान्थेनालोचितम्** = (पान्थेन + आलोचितम्) पथिक ने सोचा। **भाग्येनैतत्** = (भाग्येन + एतत्) भाग्य से यह। **अनारुह्य** = बिना चढ़े हुए। **पुनरारुह्य** = (पुनः + आरुह्य) फिर चढ़कर, फिर प्राप्त करके। **प्रसार्य** = फैलाकर। **मारात्मके त्वयि** = हिंसा करनेवाले तुझ पर। **प्रागेव** = (प्राक् + एव) पहले ही। **दाराश्च** = (दाराः + च) और स्त्री। **धार्मिकेणाहमादिष्टः** = (धार्मिकेण + अहम् + आदिष्टः) धार्मिक ने मुझे आदेश दिया। **तदुपदेशादिदानीमहम्** = (तद् + उपदेशात् + इदानीम् + अहम्) उसके उपदेश से अब मैं। **गलितनखदन्तः** = गिरे हुए नाखून और दाँतोंवाला। **लोकप्रवादः** = लोकनिन्दा। **दुर्निवारः** = नहीं हट सकती। **मा** = मत (नहीं)। **प्रयच्छेश्वरे** = (प्रयच्छ + ईश्वरे) समर्थ को दो। **व्याधितस्य** = रोगी की। **नीरुजस्य** = नीरोगी की। **पङ्के** = कीचड़ में। **निमग्नः** = फँसा हुआ। **पलायितुमक्षमः** = (पलायितुम् + अक्षमः) भागने में असमर्थ। **अतस्त्वामहमुत्थापयामि** = (अतः + त्वाम् + अहम् + उत्थापयामि) इसलिए तुझे मैं निकालता हूँ। **मारात्मक** = हिंसक। **दुर्वृत्तः** = दुराचारी। **प्रतीतः** = विश्वास करके। **शनैः-शनैः** = धीरे-धीरे। **उपगम्य** = पास जाकर।

●●

## अष्टमः पाठः

# विश्ववन्द्याः कवयः

**वाल्मीकिः**

**कवीन्दुं नौमि वाल्मीकिं यस्य रामायणीं कथाम्।**
**चन्द्रिकामिव चिन्वन्ति चकोरा इव कोविदाः।।**
**वाल्मीकिकविसिंहस्य कवितावनचारिणः।**
**शृण्वन् राम-कथा-नादं को न याति परं पदम्।**
**कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्।**
**आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम्।।**

**व्यासः**

**श्रवणाञ्जलिपुटपेयं विरचितवान् भारताख्यममृतं यः।**
**तमहमरागमकृष्णं कृष्णद्वैपायनं वन्दे।।**
**नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे।**
**चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम्।।**
**नमोस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र।**
**येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः।।**

**कालिदासः**

**पुरा कवीनां गणनाप्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।**
**अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।।**
**कालिदासगिरां सारं कालिदासः सरस्वती।**
**चतुर्मुखोऽथवा ब्रह्मा विदुर्नान्ये तु मादृशाः।।**
**निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।**
**प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मंजरीष्विव जायते।।**

**(संकलित)**

# अभ्यास प्रश्न

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. संस्कृत साहित्यस्य आदिकविः कः आसीत्?
*अथवा* संस्कृत आदिकवेः नाम लिखत।
२. वाल्मीकिः कः आसीत्?
३. कालिदासः कथं प्रसिद्ध अस्ति?
४. विश्ववन्द्याः कवयः के के सन्ति?
५. कवीनां गणनाप्रसङ्गे कालिदासः कुत्राधिष्ठितः आसीत्?

६. कालिदासस्य सूक्तीनां का विशेषता?
७. कालिदासस्य त्रयाणाम् ग्रन्थानां नामानि लिख।
८. क: कवि: कवीन्दु: इति कथित:।
९. क: कवि: महाभारतम् विरचितवान्?
१०. व्यास: किं रचितवान्?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित श्लोकों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**

(क) कवीन्दुं नौमि .................................... कोविदा:।
(ख) वाल्मीकिकविसिंहस्य ........................... परं पदम्।
(ग) कूजन्तम्......................................... कोकिलम्।
(घ) नम: सर्वविदे ..................................... भारतम्।
(ङ) पुरा कवीनां .......................................... बभूव।
(च) कालिदासगिरां ................................ तु मादृशा:।
(छ) निर्गतासु............................................जायते।

**२. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**

(क) शृण्वन् राम-कथा-नादं को न याति परं पदम्।
(ख) अनामिका सार्थवती बभूव।
(ग) पुरा कवीनां गणनाप्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदास:।
(घ) प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते।
(ङ) प्रज्वालितो ज्ञानमय: प्रदीप:।
(च) चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम्।

**३. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

(क) वाल्मीकि संस्कृत साहित्य के आदिकवि थे।
(ख) रामायण के रचयिता वाल्मीकि थे।
(ग) सदा सत्य बोलना चाहिए।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**

कवीन्दुम्, भारताख्यम्, मधुराक्षरम्, कनिष्ठिकाधिष्ठित:, कवेरभावात्।

**२. निम्नलिखित पदों में विभक्ति बताइए–**

सर्वविदे, सरस्वत्या:, वनचारिण:, त्वया, कवे:, सूक्तिषु।

## शब्दार्थ

**कवीन्दुम्** = (कवि + इन्दुम्) कविरूपी चन्द्रमा को। **चन्द्रिकामिव** = (चन्द्रिकाम् + इव) चाँदनी के समान। **कोविदा:** = विद्वान्। **आरुह्य** = चढ़कर। **कूजन्तम्** = कूजन करते हुए। **रामरामेति** = (राम-राम + इति) 'राम-राम' इस (शब्द) का। **कविताशाखाम्** = कवितारूपी शाखा पर। **वाल्मीकिकोकिलम्** = वाल्मीकिरूपी कोयल की। **श्रवणाञ्जलिपुटपेयम्** = (श्रवण + अञ्जलि-पुट-पेयम्) कानरूपी अञ्जलि के पुट से पीने-योग्य। **तमहमरागमकृष्णम्** = (तम् + अहम् + अरागम् + अकृष्णम्) उन रागरहित और पापरहित को मैं। **मादृशा:** = मुझ जैसे। **प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु** = (प्रीति: + मधुर-सान्द्रासु) **प्रीति:** = आनन्द। **मधुर-सान्द्रासु** = मधुर और सघन।

●●

## नवमः पाठः

# चतुरश्चौरः

आसीत् काञ्ची नाम राजधानी। तत्र सुप्रतापो नाम राजा। तत्रैकदा कस्यापि धनिकस्य धनं चोरयन्तश्चत्वारश्चौराः सन्धिद्वारि प्रशास्तृपुरुषैः शृङ्खलया बद्ध्वा राज्ञे निवेदिताः राजा च घातकपुरुषानादिष्टवान्– रे घातकपुरुषाः! इमान् नीत्वा मारयत। यतः–

**संवर्द्धनञ्च साधूनां दुष्टानाञ्च विमर्दनम्।**
**राजधर्मं बुधा प्राहुर्दण्डनीति-विचक्षणाः।।**

ततो राजाज्ञया त्रयश्चौराः शूलमारोप्य हताः। चतुर्थेन चिन्तितम्–

**प्रत्यासन्नेऽपि मरणे रक्षोपायो विधीयते।**
**उपाये सफले रक्षा निष्फले नाधिकं मृतेः।।**
**व्याधिना पीड्यमानोऽपि मार्यमाणोऽपि भूभुजा।**
**प्रत्यायाति यमद्वारात् प्रतीकारपरो नरः।।**

चौरोऽवदत्– रे रे घातकपुरुषाः! त्रयश्चौराः युष्माभिर्हता एव राजाज्ञया, मां तु राजसन्निधानं कृत्वा मारयत। यतोऽहमेकां महतीं विद्यां जानामि। मयि मृते सा विद्या अस्तं यास्यति। राजा तु तां गृहीत्वा मां मारयतु, येन सा विद्या मर्त्यलोके तिष्ठतु।

घातका अब्रुवन्– रे चौर! पापपुरुषाधम! वधस्थानमानीतोऽसि। किमपरं जीवितुमिच्छसि? कां विद्यां जानासि? कथं वा तवाधमस्य विद्या भूपालेन पूजयितव्या? चौरोऽवदत्–रे घातकाः? किं ब्रूथ? राजकार्ये विघ्नं कर्तुमिच्छथ? यूयं गत्वा निवेदयत, यदि राजा ज्ञातुमिच्छति तां विद्यां तदा गृह्णातु। कथं सा विद्या युष्मभ्यं मया दातव्या।

ततश्चौरस्य वचनैः राजकार्यानुरोधेन च सा वार्ता तैः राज्ञे निवेदिता। राजा च सकौतुकं चौरमाहूय अपृच्छत्– रे चौर! कां विद्यां जानासि? चौरोऽवदत्–देव! सर्षपपरिमाणानि सुवर्णबीजानि कृत्वा भूमौ उप्यन्ते मासमात्रेणैव च कन्दल्यो भवन्ति पुष्पाणि च। तानि पुष्पाणि सुवर्णान्येव भवन्ति। रक्तिकामात्रेण बीजेन पलसंख्याकानि भवन्ति। तद् देवः प्रत्यक्षं पश्यतु। राजाऽवदत्– चौर! सत्यमेतत्? चौरोऽवदत्–देवस्य पुरतः कस्यासत्यभाषणे शक्तिः। यदि मम वचनं व्यभिचरितं तदा मासान्ते ममाप्यन्तो भविष्यति। राजाऽवदत्–भद्र! वप सुवर्णम्।

ततश्चौरः सुवर्णं दाहयित्वा सर्षपमात्राणि बीजानि कृत्वा, राजान्तःपुरक्रीडासरस्तीरे परमनिगूढस्थाने भूपरिष्कारं कृत्वा अभाषत्–देव! क्षेत्र-बीजे सम्पन्ने, वप्ता कश्चिद् दीयताम्। राजाऽवदत्– त्वमेव किं न वपसि? चौरोऽवदत्— महाराज! यदि सुवर्णवपने एव ममाधिकारो भवेत् तदानया विद्यया कथमहं दुःखी भवामि। किन्तु चौरस्य सुवर्णवपनाधिकारो नास्ति। येन कदापि किमपि न चोरितं स वपतु। देव एव किं न वपति?

राजाऽवदत्– मया चारणेभ्यो दातुं तातचरणानां धनं चोरितम्। चौरोऽवदत्– तर्हि मन्त्रिणो वपन्तु। मन्त्रिणोऽवदन्– वयं राजोपजीविनः कथमस्तेयिनो भवामः। चौरोऽवदत्– तर्हि धर्माधिकारी वपतु। धर्माध्यक्षोऽकथयत्– मया बाल्यदशायां मातुर्मोदकाश्चोरिताः।

चौरोऽवदत्–यदि यूयं सर्वेऽपि चौराः कथमहमेको मारणीयोऽस्मि। तच्चौरवचनं श्रुत्वा सभासदः सर्वे हसितवन्तः। राजापि हास्यरसापनीतक्रोधो विहस्याकथयत्– रे चौर! न मारणीयोऽसि। हे मन्त्रिणः! कुबुद्धिरपि बुद्धिमानयं चौरो हास्यरसप्रवीणश्च। ततो ममैव सन्निधाने तिष्ठतु, प्रस्तावे मां हासयतु खेलयतु च। इत्युक्त्वा स चौरः राजा स्वसन्निधाने धृतः।

**न चौरादधमः कश्चित् स च हासेन विद्यया।**
**मृत्यु-पाशं समुच्छिद्य राज्ञो वल्लभतां गतः।।**

**(पुरुषपरीक्षा)**

# अभ्यास प्रश्न

## ➡ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. राज्ञः सुप्रतापस्य राजधानी का आसीत्?
२. चौराः किम् अचोरयन्?
३. काञ्ची कस्य राज्ञः राजधानी आसीत्?
४. चौरः मृत्युपाशात् कथं विमुक्तः?
५. राजा कस्य धनं चोरितमासीत्?
६. सुवर्णस्य वपने कस्य अधिकारः नास्ति?
७. सुवर्णस्य वपने कस्य अधिकारः?
८. कीदृशः नरः यमद्वारात् प्रत्यायाति?
९. राजा सकौतुकम् चौरमाहूय किमपृच्छत्?
१०. कः अवदत्– यदि यूयं सर्वेऽपि चौराः कथमहमेको मारणीयोऽस्मि?

## ➡ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित अवतरणों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए–**

(क) संवर्द्धनञ्च .................................... विचक्षणाः।
(ख) देव ........................................... वप सुवर्णम्।
*अथवा* ततश्चौरस्य वचनैः.......................... वप सुवर्णम्।
(ग) प्रत्यासन्नेपि........................................... नरः।
(घ) घातका ........................................... दातव्या।
(ङ) ततश्चौरः सुवर्णं .................................. वपति।
(च) चौरोऽवदत्......................................... धृतः।

**२. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए–**

(क) प्रत्यासन्नेऽपि मरणे रक्षोपायो विधीयते।
*अथवा* उपाये सफले रक्षा निष्फले नाधिकं मृतेः।
(ख) प्रत्यायाति यमद्वारात् प्रतीकारपरो नरः।
(ग) न चौरादधमः कश्चित्।
(घ) राजधर्मं बुधा प्राहुर्दण्ड नीति–विचक्षणाः।

**३. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

(क) चोरों ने धनिक का धन चुराया।
(ख) राजपुरुषों ने उन्हें पकड़ लिया।
(ग) राजा ने उन्हें मृत्यु-दण्ड दिया।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

१. **निम्नलिखित में सन्धि-विच्छेद कीजिए–**
तत्रैकदा, राजाज्ञया, रक्षोपायः, चौरोऽवदत्।

२. **निम्नलिखित शब्दों में मूल शब्द, विभक्ति एवं वचन बताइए–**
साधूनाम्, चतुर्थेन, युष्माभिः, राज्ञे, मृतेः।

३. **निम्नलिखित में धातु, लकार, पुरुष एवं वचन बताइए–**
मारयत, अपृच्छत्, वपन्तु।

## शब्दार्थ

**तत्रैकदा** = (तत्र + एकदा) वहाँ एक बार। **सन्धिद्वारि** = सेंध के द्वार पर। **विमर्दनम्** = दण्ड देना। **मृतेः** = मृत्यु से। **भूभुजा** = राजा द्वारा। **सकौतुकम्** = कौतूहल के साथ। **उप्यन्ते** = बोये जाते हैं। **पुरतः** = सामने। **व्यभिचरितम्** = गलत। **वप्ता** = बोनेवाला। **तच्चौरवचनम्** = (तत् + चौरवचनम्) चोर के उस वचन को। **हास्यरसापनीतक्रोधः** = (हास्य-रस + अपनीत + क्रोधः) हास्य रस से क्रोध दूर होने पर। **प्रस्तावे** = समय-समय पर, अवसर पर। **धृतः** = रख लिया। **समुच्छिद्य** = काटकर। **वल्लभतां गतः** = प्रिय हो गया।

●●

# दशमः पाठः

# सुभाषचन्द्रः

सप्तनवत्युत्तराष्टादशशततमेऽब्दे (१८९७) जनवरी मासस्य त्रयोविंशतितिथौ श्रीसुभाषः स्वजन्मना बङ्गभुवमलञ्चकार। अस्य पिता जानकीनाथवसुः राजकीय-प्राड्विवाकः आसीत्। सुभाषः बाल्यादेव बुद्धिमान्, धीरः, साहसी, प्रतिभासम्पन्नश्चासीत्। अयं कलिकातानगर्यां शिक्षां प्राप्य सम्मानिताम् आई० ए० एस० परीक्षामुत्तीर्यापि विदेशीयशासनस्य भृत्यत्वं न स्वीकृतवान्।

आङ्ग्लशासकानां भारते नाधिकारः, ते विदेशीयाः कथमत्र शासनं कुर्वन्ति इति चिन्तापरोऽयं स्वप्रयत्नेन भारतवर्षस्य स्वातन्त्र्यार्थं बहून् भारतीयान् स्वपक्षे अकरोत्। एवं विधेभ्यः अस्योग्रविचारेभ्यः भीताः आङ्ग्लशासकाः इमं पुनः पुनः कारागारे अक्षिपन् परं वीरोऽयं स्वातन्त्र्यार्थं स्वप्रयासं नात्यजत्।

सप्तत्रिंशदुत्तरैकोनविंशतिशततमे (१९३७) वर्षे त्रिपुरा कांग्रेसाधिवेशने अयं सर्वसम्मत्या सभापतिः वृतः, अस्य सम्मानार्थञ्च पञ्चाशद्वृषभयुक्ते रथेऽस्य शोभायात्रा नागरिकैः सम्पादिता।

'अहिंसामात्रेण स्वातन्त्र्यप्राप्तेः प्रयासः कल्पनामात्रमेव' इति निश्चित्य सः क्रान्तिपक्षमङ्गीकृतवान्। अस्योग्रक्रान्तेः भीताः आङ्ग्लशासकाः पुनरिमं कलिकातानगर्यां कारागारे अक्षिपन्। कष्टकरमिमं वृत्तान्तं श्रुत्वा सुभाषानुरक्तानां भारतीयानां हृदयं व्यदीर्यत। एकदा रात्रौ निद्रावशीभूतेषु कारागारनिरीक्षकेषु वीरोऽयं सहसा समुत्थाय 'शठे शाठ्यं समाचरेत्' इति नीतिमनुसरन्, स्वेष्टसिद्धिं कामयमानश्च सिद्धिदात्रीं जगदम्बां संस्मृत्य कारागाराद् बहिर्गतः।

प्रातः सुभाषमनवलोक्य सर्वे कारागारनिरीक्षकाः आश्चर्यचकिता जाताः, भृशमन्विष्यापि ते प्राप्तुं नाशक्नुवन्। कारागाराद् बहिरागत्य सुभाषः वेषपरिवर्त्तनं विधाय पुरुषपुर (पेशावर) नगरमगच्छत्। तत्र उत्तमचन्द्रनाम्नः वणिजो गेहे कञ्चित् कालमवसत्। ततश्च आङ्लशासकैः अवधानपूर्वकं निरीक्षणे कृतेऽपि 'जियाउद्दीन' इति नाम्ना 'जर्मन' देशं गतः। तत्रत्यशासकेन हिटलर नामकेन सह मैत्रीं विधाय वायुयानेन जयपाणि (जापान) देशं गतः।

मलयदेशे स्वसङ्घटनकौशलेन 'आजाद हिन्द फौज' इत्याख्यां सेनां सङ्घटितवान्। अस्यास्मिन् सङ्घटने हिन्दुयवनादिसर्वसम्प्रदायावलम्बिनः राष्ट्रानुरागिणः वीरवराः सम्मिलिता आसन्। अस्य सङ्घटनस्य अभिवादनपदम् 'जय हिन्द' इति, उद्घोषश्च 'दिल्ली चलत' इत्यासीत्।

'यूयं मह्यं रक्तमर्पयत, अहं युष्मभ्यं स्वतन्त्रतां दास्यामि' इति रोमाञ्चकरः शब्दसमूहः सुभाषस्य मुखात् येनापि श्रुतः सः त्वरितमेव तेन सह स्वातन्त्र्यसंग्रामे सैनिकरूपेण अवतीर्णः। तस्मिन्नेव समये ब्रह्मदेशनिवासिनीभिः नारीभिः स्वभूषणैः सह सौभाग्यसूचकानि स्वर्णसूत्राण्यपि सुभाषचरणयोरर्पितानि।

'दिल्ली चलत, दिल्ली नातिदूरे वर्तते' इत्येतैः सुभाषस्य प्रोत्साहनवचनैः सैनिकाः दिल्लीं प्रति प्रस्थिताः। एतदन्तरे एव दुर्भाग्यवशात् जयपाणिदेशस्य पराजयात् सुभाषस्य सर्वे सैनिकाः आङ्लशासकैः बन्दीकृताः।

अस्य वीरवरस्य स्वातन्त्र्यप्राप्तेः कामना सप्तचत्वारिंशदुत्तरैकोनविंशतिशततमेऽब्दे (१९४७) अगस्तमासस्य पञ्चदशतिथौ पूर्णा जाता। अद्यास्माकं मध्येऽनुपस्थितोऽपि सुभाषः 'कीर्तिर्यस्य स जीवति' इत्युक्त्या सदैवामरः इति सुनिश्चितम्।

# अभ्यास प्रश्न

## ➠ लघु उत्तरीय प्रश्न

१. कारागाराद् बहिरागत्य सुभाषचन्द्रः वेषपरिवर्तनं विधाय कुत्रागच्छत्?
२. सुभाषस्य जन्म कुत्र अभवत्?
३. सुभाषस्य पितुः नाम किम् आसीत्?
४. सुभाषचन्द्रस्य सङ्घटनस्य किं नाम आसीत्?
*अथवा* सुभाषचन्द्रः मलयदेशे कां सेनां संघटितवान्?
५. सुभाषचन्द्रस्योग्रक्रान्ते भीताः आङ्गलशासकाः किमकुर्वन्?
६. सुभाषचन्द्रः कं देशं स्वजन्मना अलंचकार?
७. सुभाषचन्द्रः कां नीतिम् अन्वसरत्?
८. सुभाषस्य सङ्घटनस्य उद्घोषः कः आसीत्?
*अथवा* कस्य उद्घोषः 'दिल्ली चलत' इति आसीत्?
९. आजाद-हिन्द-सेनां कः सङ्घटितवान्?
१०. आजाद-हिन्द-फौजस्य अभिवादन पदं किम् आसीत्?
११. सुभाषस्य कः रोमाञ्चकरः शब्दसमूहः आसीत्?
१२. सुभाषचन्द्रः केन नाम्ना जर्मनदेशं गतः?
१३. सुभाषचन्द्रः कस्यां नगर्यां शिक्षां प्राप्तवान्?
१४. सुभाषचन्द्रः कां सेनां सङ्घटितवान्?

## ➠ अनुवादात्मक प्रश्न

**१. निम्नलिखित अवतरणों का ससन्दर्भ हिन्दी-अनुवाद कीजिए—**

(क) आङ्गलशासकानां .............................. नात्यजत्।
(ख) प्रातः सुभाषमनवलोक्य ........... 'जर्मन' देशं गतः।
(ग) अहिंसामात्रेण .................................. बहिर्गतः।
(घ) यूयं मह्यं ......................... सुभाषचरणयोरर्पितानि।
(ङ) यूयं मह्यं ...................................... प्रस्थिताः।
(च) दिल्ली चलत ................................ बन्दीकृताः।
अथवा अस्य वीरवरस्य ............................ सुनिश्चितम्।
(छ) सप्तनवत्युतराष्ट्र ........................ स्वपक्षे अकरोत्।

**२. निम्नलिखित पंक्तियों की ससन्दर्भ हिन्दी-व्याख्या कीजिए—**

(क) शठे शाठ्यं समाचरेत्।
(ख) यूयं मह्यं रक्तमर्पयत्, अहं युष्मभ्यं स्वतन्त्रतां दास्यामि।

(ग) कीर्तिर्यस्य स जीवति।

(घ) अहिंसामात्रेण स्वातंत्र्यप्राप्ते: प्रयास: कल्पनामात्रमेव।

(ङ) दिल्ली नातिदूरे वर्तते।

३. **निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—**

(क) श्री सुभाषचन्द्र साहसी व्यक्ति थे।

(ख) दिल्ली दूर नहीं है।

(ग) अहिंसा परम धर्म है।

## ➡ व्याकरणात्मक प्रश्न

१. **निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए—**

सूत्राण्यपि, परोऽयम्,अत्रैव।

२. **निम्नलिखित में सन्धि कीजिए—**

वीर: + अयम्। बहि: + गत:। तत: + च।

३. **निम्नलिखित में विभक्तियों का उल्लेख कीजिए—**

जन्मना, नगर्याम्, भारते, वृत्तान्तम्, रात्रौ।

## शब्दार्थ

**प्राड्विवाकः** = सरकारी वकील। **भृत्यत्वम्** = नौकरी। **वृत्तः** = चुने गये। **भीताः** = डरे हुए। **व्यदीर्यत** = फट गया। **कामयमानः** = चाहते हुए। **त्वरितमेव** = तुरन्त ही। **संस्मृत्य** = स्मरण करके। **बन्दीकृताः** = बन्दी बना लिये गये।

●●

# काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व

## ॥ रस, छन्द और अलंकार ॥

## (क) रस

कविता, कहानी, उपन्यास आदि को पढ़ने या सुनने से एवं नाटक को देखने से जिस आनन्द की अनुभूति होती है, उसे 'रस' कहते हैं। रस काव्य की आत्मा है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य-दर्पण में काव्य की परिभाषा देते हुए लिखा है—'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' अर्थात् रसात्मक वाक्य काव्य है। रस की निष्पत्ति के सम्बन्ध में भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में व्याख्या की है—**'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'** अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है।

रसों के आधार भाव हैं। भाव मन के विकारों को कहते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—स्थायी भाव और संचारी भाव। यही काव्य के अंग कहलाते हैं।

### ➡ स्थायी भाव

रस रूप में पुष्ट या परिणत होनेवाला तथा सम्पूर्ण प्रसंग में व्याप्त रहनेवाला भाव स्थायी भाव कहलाता है। स्थायी भाव नौ माने गये हैं—रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय और निर्वेद। वात्सल्य नाम का दसवाँ स्थायी भाव भी स्वीकार किया जाता है।

**रति**—स्त्री-पुरुष के परस्पर प्रेम-भाव को रति कहते हैं।

**हास**—किसी के अंगों, वेश-भूषा, वाणी आदि के विकारों के ज्ञान से उत्पन्न प्रफुल्लता को हास कहते हैं।

**शोक**—इष्ट के नाश अथवा अनिष्टागम के कारण मन में उत्पन्न व्याकुलता शोक है।

**क्रोध**—अपना काम बिगाड़नेवाले अपराधी को दण्ड देने के लिए उत्तेजित करनेवाली मनोवृत्ति क्रोध कहलाती है।

**उत्साह**—दान, दया और वीरता आदि के प्रसंग से उत्तरोत्तर उन्नत होनेवाली मनोवृत्ति को उत्साह कहते हैं।

**भय**—प्रबल अनिष्ट करने में समर्थ विषयों को देखकर मन में जो व्याकुलता होती है, उसे भय कहते हैं।

**जुगुप्सा**—घृणा उत्पन्न करनेवाली वस्तुओं को देखकर उनसे सम्बन्ध न रखने के लिए बाध्य करनेवाली मनोवृत्ति को जुगुप्सा कहते हैं।

**विस्मय**—किसी असाधारण अथवा अलौकिक वस्तु को देखकर जो आश्चर्य होता है, उसे विस्मय कहते हैं।

**निर्वेद**—संसार के प्रति त्याग-भाव को निर्वेद कहते हैं।

**वात्सल्य**—पुत्रादि के प्रति सहज स्नेह-भाव वात्सल्य है।

### ➡ विभाव

जो व्यक्ति, वस्तु, परिस्थितियाँ आदि स्थायी भावों को जागरित या उद्दीप्त करती हैं; उन्हें विभाव कहते हैं। विभाव दो प्रकार के होते हैं (1) आलम्बन (2) उद्दीपन।

**( 1 ) आलम्बन विभाव**—स्थायी भाव जिन व्यक्तियों, वस्तुओं आदि का अवलम्ब लेकर अपने को प्रकट करते हैं, उन्हें आलम्बन विभाव कहते हैं। इसके दो भेद हैं—आश्रय और विषय।

**आश्रय**—जिस व्यक्ति के मन में रति आदि स्थायी भाव उत्पन्न होते हैं, उसे आश्रय कहते हैं।

**विषय**—जिस व्यक्ति या वस्तु के कारण आश्रय के चित्त में रति आदि स्थायी भाव उत्पन्न होते हैं, उसे विषय कहते हैं।

**( 2 ) उद्दीपन विभाव**—भाव को उद्दीप्त अथवा तीव्र करनेवाली वस्तुएँ, चेष्टाएँ आदि को उद्दीपन विभाव कहते हैं।

**उदाहरणार्थ–** सुन्दर, पुष्पित और एकान्त उद्यान में शकुन्तला को देखकर दुष्यन्त के हृदय में रति भाव जागृत होता है। यहाँ शकुन्तला आलम्बन विभाव है और पुष्पित तथा एकान्त उद्यान उद्दीपन विभाव। दुष्यन्त आश्रय है। प्राय: नायक एवं नायिका आलम्बन विभाव होते हैं। शृंगार के उद्दीपन विभाव प्राय: बसन्त काल, उद्यान, शीतल मन्द-सुगन्धित पवन, भ्रमर-गुंजन इत्यादि होते हैं।

## ➡ अनुभाव

आश्रयगत आलम्बन की उन चेष्टाओं को जो उसे स्थायी भाव का अनुभव कराती हैं, अनुभाव कहते हैं। भाव कारण और अनुभाव कार्य हैं।

अनुभाव चार प्रकार के माने गये हैं—कायिक, मानसिक, आहार्य और सात्विक।

**( 1 ) कायिक अनुभाव**—आँख, भौंह, हाथ आदि शरीर के अंगों के द्वारा जो चेष्टाएँ की जाती हैं।

**( 2 ) मानसिक अनुभाव**—मानसिक चेष्टाओं को मानसिक अनुभाव कहते हैं।

**( 3 ) आहार्य अनुभाव**—वेशभूषा से जो भाव प्रदर्शित किये जाते हैं।

**( 4 ) सात्विक अनुभाव**—शरीर के सहज अंग विकार।

## ➡ संचारी भाव

आश्रय के चित्त में उत्पन्न होनेवाले अस्थिर मनोविकारों को संचारी भाव कहते हैं। उदाहरणार्थ, शृंगार रस के प्रकरण में शकुन्तला से प्रीतिबद्ध दुष्यन्त के चित्त में उल्लास, चपलता, व्याकुलता आदि भाव संचारी भाव हैं। इन्हें व्यभिचारी भाव भी कहते हैं। इनकी संख्या 33 मानी गयी है—

निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, उग्रता, मोह, विबोध, स्वप्न, अपस्मार, गर्व, मरण, आलस्य, अमर्ष, निद्रा, अवहित्था, उत्सुकता, उन्माद, शंका, स्मृति, मति, व्याधि, संत्रास, लज्जा, हर्ष, असूया, विषाद, धृति, चपलता, ग्लानि, चिन्ता और वितर्क। स्थायीभाव उत्पन्न होकर नष्ट नहीं होते और संचारी भाव पानी के बुलबुलों की भाँति बनते-मिटते रहते हैं।

प्रत्येक रस का स्थायी भाव नियत है, जबकि एक ही संचारी भाव अनेक रसों के साथ रह सकता है।

इन्हीं विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से स्थायी भाव रस दशा को प्राप्त होता है।

**रस और उनके स्थायी भाव**

| क्रम सं० | रस | स्थायी भाव | क्रम सं० | रस | स्थायी भाव |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | शृंगार | रति | 6. | भयानक | भय |
| 2. | हास्य | हास | 7. | वीभत्स | जुगुप्सा |
| 3. | करुण | शोक | 8. | अद्भुत | विस्मय |
| 4. | रौद्र | क्रोध | 9 | शान्त | निर्वेद |
| 5. | वीर | उत्साह | 10. | वत्सल | वात्सल्य |

## (1) शृंगार रस

सहृदय के चित्त में रति नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से संयोग होता है तो वह

शृंगार रस का रूप धारण कर लेता है। उसके दो भेद होते हैं—संयोग और वियोग, इन्हें क्रमशः संभोग एवं विप्रलम्भ भी कहते हैं।

(i) **संयोग शृंगार**—नायक और नायिका के मिलन का वर्णन संयोग शृंगार कहलाता है। उदाहरण—

**कौन हो तुम वसंत के दूत**
**विरस पतझड़ में अति सुकुमार;**
**घन तिमिर में चपला की रेख**
**तपन में शीतल मंद बयार!**

**—प्रसाद : कामायनी**

इसमें रति स्थायी भाव है। आलम्बन विभाव हैं—श्रद्धा (विषय) और मनु (आश्रय)। उद्दीपन विभाव हैं—एकान्त प्रदेश, श्रद्धा की कमनीयता, कोकिल-कण्ठ, रम्य परिधान। संचारी भाव हैं—आश्रय मनु के हर्ष, चपलता, आशा, उत्सुकता आदि भाव।

इस प्रकार विभावादि से पुष्ट रति स्थायी भाव शृंगार रस की दशा को प्राप्त हुआ है।

(ii) **वियोग शृंगार**—जिस रचना में नायक और नायिका के मिलन का अभाव रहता है और विरह वर्णन होता है, वहाँ वियोग शृंगार होता है। उदाहरण—

**मेरे प्यारे नव जलद से कंज से नेत्रवाले।**
**जाके आये न मधुबन से औ न भेजा संदेशा।**
**मैं रो रो के प्रिय-विरह से बावली हो रही हूँ।**
**जा के मेरी सब दुख-कथा श्याम को तू सुना दे।।**

**—हरिऔध : प्रियप्रवास**

इस छन्द में विरहिणी राधा की विरह-दशा का वर्णन किया गया है। रति स्थायी भाव है। राधा आश्रय और श्रीकृष्ण आलम्बन हैं। शीतल, मन्द पवन और एकान्त उद्दीपन विभाव हैं। स्मृति, रुदन, चपलता, आवेग, उन्माद आदि संचारियों से पुष्ट श्रीकृष्ण से मिलन के अभाव में यहाँ वियोग शृंगार रस का परिपाक हुआ है।

## (2) हास्य रस

अपने अथवा पराये परिधान, वचन अथवा क्रिया-कलाप आदि से उत्पन्न हुआ हास नामक स्थायी भाव विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से हास्य रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

**मातहिं पितहिं उरिन भये नीके।**
**गुरु ऋण रहा सोच बड़ जी के।।** **—तुलसी : रामचरितमानस**

परशुराम-लक्ष्मण संवाद में लक्ष्मण की यह हास्यमय उक्ति है। हास्य इसका स्थायी भाव है। परशुराम आलम्बन हैं। उनकी झुँझलाहट उद्दीपन है। हर्ष, चपलता आदि संचारी भाव हैं। इन सबसे पुष्ट हास स्थायी हास्य रस दशा को प्राप्त हुआ है।

## (3) करुण रस

शोक स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से करुण रस की दशा को प्राप्त होता है। उदाहरण—

**जथा पंख बिनु खग अति दीना। मनि बिनु फनि करिबर कर हीना।।**
**अस मम जिवन बंधु बिनु तोही। जौ जड़ दैव जियावइ मोही।।**

**—तुलसी : रामचरितमानस**

यहाँ लक्ष्मण की मूर्च्छा पर राम-विलाप प्रस्तुत किया गया है। शोक स्थायी भाव है। लक्ष्मण आलम्बन और राम आश्रय हैं। राम के उद्‌गार अनुभाव हैं। हनुमान् का विलम्ब उद्‌दीपन एवं दैन्य, चिन्ता, व्याकुलता, स्मृति आदि संचारी हैं। इन सबसे पुष्ट शोक स्थायी करुण रस दशा को प्राप्त हुआ है।

## (4) रौद्र रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से क्रोध नामक स्थायी भाव रौद्र रस का रूप धारण कर लेता है। उदाहरण—

**ज्वलल्ललाट पर अदम्य, तेज वर्तमान था**
**प्रचण्ड मान भंग जन्य, क्रोध वर्तमान था**
**ज्वलन्त पुच्छ-बाहु व्योम में उछालते हुए**
**अराति पर असह्य अग्नि-दृष्टि डालते हुए**
**उठे कि दिग-दिगन्त में अवर्ण्य ज्योति छा गई।**
**कपीश के शरीर में प्रभा स्वयं समा गई।**

**—श्यामनारायण पाण्डेय : जय हनुमान्**

इस पद में लंका में हनुमान्‌जी की पूँछ के जलाये जाने पर उनकी प्रतिक्रिया का वर्णन है। यहाँ क्रोध स्थायी भाव है। हनुमान् आश्रय हैं। शत्रु आलम्बन है। राक्षसों का सामने पड़ना उद्‌दीपन, पूँछ का आकाश में उछालना, अग्नि-दृष्टि डालना, तन का तेज आदि अनुभाव हैं। आवेश, चपलता, उग्रता आदि संचारी भाव हैं। इन सबसे पुष्ट क्रोध स्थायी भाव ने रौद्र रस का रूप ग्रहण किया है।

## (5) वीर रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से उत्साह नामक स्थायी भाव वीर रस की दशा को प्राप्त होता है। उदाहरण–

**आये होंगे यदि भरत कुमति-वश वन में,**
**तो मैंने यह संकल्प किया है मन में—**
**उनको इस शर का लक्ष्य चुनूँगा क्षण में,**
**प्रतिषेध आपका भी न सुनूँगा रण में।**

**—मैथिलीशरण गुप्त : साकेत**

इस पद में उत्साह स्थायी भाव है। लक्ष्मण आश्रय और भरत आलम्बन हैं। उनके वन में आगमन का समाचार उद्‌दीपन है। लक्ष्मण के वचन अनुभाव हैं। उत्सुकता, उग्रता, चपलता आदि संचारी भाव हैं। इनसे पुष्ट उत्साह स्थायी भाव वीर रस दशा को प्राप्त हुआ है।

## (6) भयानक रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से भय नामक स्थायी भाव भयानक रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

**लंका की सेना तो कपि के गर्जन रव से काँप गई।**
**हनूमान के भीषण दर्शन से विनाश ही भाँप गई।**
**उस कंपित शंकित सेना पर कपि नाहर की मार पड़ी।**
**त्राहि-त्राहि शिव त्राहि-त्राहि शिव की सब ओर पुकार पड़ी॥**

**–श्यामनारायण पाण्डेय : जय हनुमान्**

यहाँ भय स्थायी भाव है। लंका की सेना आश्रय एवं हनुमान् आलम्बन हैं। गर्जन-रव और भीषण-दर्शन उद्दीपन हैं। काँपना, त्राहि-त्राहि पुकारना आदि अनुभाव हैं। शंका, चिन्ता, सन्त्रास आदि संचारी भाव हैं। इनसे पुष्ट भय स्थायी भाव भयानक रस को प्राप्त हुआ है।

## (7) वीभत्स रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से जुगुप्सा (घृणा) स्थायी भाव वीभत्स रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

**कोउ अँतड़िनि की पहिरि माल इतरात दिखावत।**
**कोउ चरबी लै चोप सहित निज अंगनि लावत॥**
**कोउ मुंडनि लै मानि मोद कंदुक लौं डारत।**
**कोउ रुंडनि पै बैठि करेजौ फारि निकारत॥**

**—रत्नाकर : हरिश्चन्द्र**

उपर्युक्त पद में जुगुप्सा स्थायी भाव है। श्मशान का दृश्य आलम्बन है। अँतड़ी की माला पहनकर इतराना, चोप सहित शरीर पर चर्बी का पोतना, हाथ में मुण्डों को लेकर गेंद की तरह उछालना आदि उद्दीपन विभाव हैं। दैन्य, ग्लानि, निर्वेद आदि संचारी भाव हैं। इन सबसे पुष्ट जुगुप्सा स्थायी भाव वीभत्स रस दशा को प्राप्त हुआ है।

## (8) अद्भुत रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से विस्मय नामक स्थायी भाव अद्भुत रस की दशा को प्राप्त होता है। विविध प्रकरणों में लोकोत्तरता देखकर जो आश्चर्य होता है, उसे विस्मय कहते हैं। उदाहरण—

**इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा। मति भ्रम मोरि कि आन बिसेखा॥**
**तन पुलकित मुख वचन न आवा। नयन मूँदि चरनन सिर नावा॥**

**—तुलसी : रामचरितमानस**

यहाँ विस्मय स्थायी भाव है। माता कौशल्या आश्रय तथा यहाँ-वहाँ दो बालक दिखायी देना आलम्बन है। 'तन पुलकित मुख वचन न' में रोमांच और स्वरभंग अनुभाव हैं। जड़ता, वितर्क आदि संचारी हैं, अतः यहाँ अद्भुत रस है।

## (9) शान्त रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से निर्वेद नामक स्थायी भाव शान्त रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

**अबलौं नसानी अब न नसैहौं।**
**राम कृपा भव निसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं।**
**पायो नाम चारु चिंतामनि उर करतें न खसैहौं।**
**श्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।**
**परबस जानि हँस्यो इन इन्द्रिन निज बस ह्वै न हँसैहौं।**
**मन मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद कमल बसैहौं।**

**—तुलसी : विनयपत्रिका**

यह निर्वेद स्थायी भाव है। सांसारिक असारता और इन्द्रियों द्वारा उपहास उद्दीपन हैं। स्वतन्त्र होने तथा राम के चरणों में रति होने का कथन अनुभाव है। धृति, वितर्क, मति आदि संचारी हैं। इन सबसे पुष्ट निर्वेद शान्त रस को प्राप्त हुआ है।

## (10) वात्सल्य (वत्सल) रस

वात्सल्य नामक स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से 'वात्सल्य रस' सम्पुष्ट होता है।

उदाहरण—

**जसोदा हरि पालने झुलावैं।**
**हररावैं दुलरावैं मल्हावैं, जोइ सोइ कछु गावैं।**
**मेरे लाल को आव री निंदरिया, काहे न आन सुवावैं।**
**तू काहैं नहीं बेगहिं आवै तोकौं कान्ह बुलावैं।**
**कबहुँ पलक हरि मूंदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावैं।**
**सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि करि सैन बतावैं।**
**इहि अन्तर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरै गावैं।**
**जो सुख 'सूर' अमर-मुनि दुर्लभ, सो नंद-भामिनी पावैं।** **–सूर : सूरसागर**

इसमें वात्सल्य स्थायी भाव है। यशोदा आश्रय और कृष्ण आलम्बन हैं। यशोदा का गीत गाना आदि अनुभाव हैं। इन सबसे पुष्ट वात्सल्य स्थायी भाव वत्सल रस दशा को प्राप्त हुआ है।

# छन्द

छन्द कविता की स्वाभाविक गति के नियम-बद्ध रूप हैं। सामान्य धारणा के अनुसार जातीय संगीत और भाषावृत्ति के आधार पर निर्मित लयादर्श की आवृत्ति को छन्द कहते हैं। छन्द में निश्चित मात्रा या वर्ण की गणना होती है। छन्द के आदि आचार्य पिंगल हैं। इसी से छन्दशास्त्र को 'पिंगलशास्त्र' भी कहते हैं।

**चरण**—प्रत्येक छन्द चरणों में विभाजित होता है। इनको पद या पाद कहते हैं। जिस प्रकार मनुष्य चरणों पर चलता है, उसी प्रकार कविता भी चरणों पर चलती है। एक छन्द में प्राय: चार चरण होते हैं जो सामान्यत: चार पंक्तियों में लिखे जाते हैं। किन्हीं-किन्हीं छन्दों में, जैसे—छप्पय, कुण्डलियाँ आदि में छह चरण होते हैं।

**वर्ण और मात्रा**—वर्णों की गणना करते समय वर्ण चाहे लघु हो अथवा गुरु, उसे एक ही माना जाता है, यथा—'रम', 'राम', 'रामा', तीनों शब्दों में दो–दो वर्ण हैं। मात्रा से अभिप्राय उच्चारण के समय की मात्रा से है। गुरु में लघु की अपेक्षा दूना समय लगता है इसलिए मात्राओं की जहाँ गणना होती है वहाँ लघु की एक मात्रा होती है और गुरु की दो मात्राएँ होती हैं। लघु का संकेत खड़ी रेखा '।' और गुरु का संकेत वक्र रेखा 'ऽ' होता है। लघु के लिए 'ल' और गुरु के लिए 'ग' के संकेतों का भी प्रयोग होता है।

**गण–**तीन वर्णों के लघु गुरु क्रम के अनुसार योग को गण कहते हैं।

गणों को समझने के लिए निम्न सूत्र उपयोगी है—

**यमाताराजभानसलगा**

इस सूत्र से आठों गणों का स्वरूप ज्ञात हो जाता है। यथा—

| **गण का नाम** | **संकेत** | **सूत्रगत उदाहरण** | **सार्थक उदाहरण** |
|---|---|---|---|
| यगण | ।ऽ ऽ | यमाता | यशोदा |
| मगण | ऽऽऽ | मातारा | मायावी |
| तगण | ऽऽ। | ताराज | तालाब |
| रगण | ऽ।ऽ | राजभा | रामजी |
| जगण | ।ऽ। | जभान | जलेश |
| भगण | ऽ।। | भानस | भारत |
| नगण | ।।। | नसल | नगर |
| सगण | ।।ऽ | सलगा | सरिता |

## ➡ सम, अर्द्धसम और विषम

जिन छन्दों के चारों चरणों की मात्राएँ या वर्ण एक से हों वे सम कहलाते हैं, जैसे चौपाई, इन्द्रवज्रा आदि। जिनमें पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे चरणों की मात्राओं या वर्णों में समता हो वे अर्द्धसम कहलाते हैं, जैसे दोहा, सोरठा आदि। जिन छन्दों में चार से अधिक छह चरण और वे एक से न हों, वे विषम कहलाते हैं, जैसे—छप्पय और कुण्डलिया।

**गति**–पढ़ते समय कविता के स्पष्ट सुखद प्रवाह को गति कहते हैं।

**यति**–छन्दों में विराम या रुकने के स्थलों को यति कहते हैं।

# छन्द के प्रकार

मात्रा और वर्ण के आधार पर छन्द मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं—मात्रिक और वर्णवृत्त।

## मात्रिक छन्द

मात्रिक छन्दों में केवल मात्राओं की व्यवस्था होती है, वर्णों के लघु और गुरु के क्रम का विशेष ध्यान नहीं रखा जाता। इन छन्दों के प्रत्येक चरण में मात्राओं की संख्या नियत रहती है। मात्रिक छन्द तीन प्रकार के होते हैं—सम, अर्द्धसम और विषम।

### (1) चौपाई

चौपाई सम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 16 मात्राएँ होती हैं। अन्त में जगण और तगण के प्रयोग का निषेध है।

**उदाहरण**—

I I I S I S II I I S S
**निरखि सिद्ध साधक अनुरागे।**
**सहज सनेहु सराहन लागे॥**
**होत न भूतल भाउ भरत को।**
**अचर सचर चर अचर करत को॥** **–तुलसी : रामचरितमानस**

इस छन्द के प्रत्येक चरण में 16-16 मात्राएँ हैं, अतः यह चौपाई छन्द है।

### (2) दोहा

यह अर्द्धसम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं। इसके पहले और तीसरे चरण में 13-13 मात्राएँ तथा दूसरे और चौथे चरण में 11-11 मात्राएँ होती हैं। इसके विषम चरणों के आदि में जगण नहीं होना चाहिए तथा सम चरणों के अन्त में गुरु लघु होना चाहिए। **उदाहरण**—

I I I S I I I S I S S I S I I I S I
**लसत मंजु मुनि मंडली, मध्य सीय रघुचंदु।**
**ग्यान सभां जनु तनु धरें भगति सच्चिदानन्दु॥** **–तुलसी : रामचरितमानस**

इस पद्य के पहले और तीसरे चरण में 13-13 मात्राएँ हैं और दूसरे तथा चौथे चरण में 11-11 मात्राएँ हैं, अतः यह दोहा छन्द है।

### (3) सोरठा

यह अर्द्धसम मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम और तृतीय चरण में 11-11 मात्राएँ तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में

13-13 मात्राएँ होती हैं। पहले और तीसरे चरण के अन्त में गुरु लघु आते हैं और कहीं-कहीं तुक भी मिलती है। यह दोहा का उलटा होता है। **उदाहरण—**

ऽ। ।ऽ।। ऽ। ।।। ।।। ऽ। । ।।।
**नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन**
**करउ सो मम उर धाम, सदा छीरसागर सयन॥** **—तुलसी : रामचरितमानस**

इस पद्य के प्रथम और तृतीय चरण में 11-11 तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में 13-13 मात्राएँ हैं, अतः यह छन्द सोरठा है।

### (4) रोला

यह सम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। 11 और 13 मात्राओं पर यति होती है। **उदाहरण—**

। । ऽ ।। ऽ ऽ। ऽ । ।। ।।।। ऽ। ।
**कोउ पापिह पंचत्व प्राप्त सुनि जमगन धावत।**
**बनि बनि बावन वीर बढ़त चौचंद मचावत।**
**पै तकि ताकी लोथ त्रिपथगा के तट लावत।**
**नौ द्वै, ग्यारह होत तीन पाँचहिं बिसरावत॥** **—भारतेन्दु : गंगावतरण**

इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ हैं। 11-13 पर यति है, अतः यह छन्द रोला है।

### (5) कुण्डलिया

यह विषम मात्रिक छन्द है। इसमें छह चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। आदि में एक दोहा और बाद में एक रोला जोड़ कर कुण्डलिया छन्द बनता है। ये दोनों छन्द मानो कुण्डली रूप में एक दूसरे से गुंथे रहते हैं, इसलिए इसे कुण्डलिया छन्द कहते हैं। जिस शब्द से इस छन्द का प्रारम्भ होता है उसी से इसका अन्त भी होता है। दोहे का चौथा चरण रोला के प्रथम चरण का भाग होकर आता है। **उदाहरण—**

ऽ ऽ ऽ। । ऽ । ऽ ।। ऽ । । । । ऽ ।
**साईं बैर न कीजिए गुरु पण्डित कवि यार।**
**बेटा बनिता पौरिया यज्ञ करावन हार।**
**यज्ञ करावनहार राजमंत्री जो होई।**
**विप्र पड़ोसी वैद्य आपुको तपै रसोई।**
**कह गिरिधर कविराय जुगन सों यह चलि आई।**
**इन तेरह को तरह दिये बनि आवै साई।**

इस पद्य के प्रथम एवं द्वितीय चरण दोहा हैं तथा आगे के चार चरण रोला हैं। दोनों के कुण्डलित होने से कुण्डलिया छन्द का निर्माण हुआ है।

### (6) हरिगीतिका

यह सम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती हैं। 16 और 12 मात्राओं पर यति होती है। प्रत्येक चरण के अन्त में रगण (ऽ । ऽ) आना आवश्यक है। **उदाहरण—**

। । ऽ। ऽ ऽ ऽ । ऽ । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ
**खग-वृन्द सोता है अतः कल कल नहीं होता वहाँ।**
**बस मंद मारुत का गमन ही मौन है खोता जहाँ।**

**इस भाँति धीरे से परस्पर कह सजगता की कथा।**
**यों दीखते हैं वृक्ष ये हो विश्व के प्रहरी यथा।**

**–हरिऔध : प्रियप्रवास**

इसके प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ हैं, अतः यह हरिगीतिका छन्द है।

### (7) बरवै

यह अर्द्धसम मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम एवं तृतीय चरण में 12-12 मात्राएँ तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में 7-7 मात्राएँ होती हैं। सम चरणों के अन्त में जगण (। ऽ ।) होता है। **उदाहरण—**

ऽ ।। ।। ऽ ।। । । । । । । ऽ ।

**चम्पक हरवा अँग मिलि, अधिक सुहाय।**
**जानि परै सिय हियरे, जब कुँभिलाय।**

**–तुलसी : बरवै रामायण**

## वर्ण-वृत्त छन्द

जिन छन्दों की रचना वर्णों की गणना के आधार पर की जाती है, उन्हें वर्ण-वृत्त या वर्णिक छन्द कहते हैं।

वर्ण-वृत्तों के तीन मुख्य भेद हैं—सम, अर्द्धसम, विषम।

### (1) इन्द्रवज्रा

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 11 वर्ण त त ज ग ग अर्थात् दो तगण, एक जगण और दो गुरु के क्रम से रहते हैं।

**उदाहरण–**

**त त ज ग ग**

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

**मैं जो नया ग्रंथ विलोकता हूँ,**
**भाता मुझे सो नव मित्र सा है।**
**देखूँ उसे मैं नित नेम से ही,**
**मानो मिला मित्र मुझे पुराना।**

**–हरिऔध**

उपर्युक्त पद्य के प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और दो गुरु के क्रम से 11 वर्ण हैं, अतः यह छन्द इन्द्रवज्रा है।

### (2) उपेन्द्रवज्रा

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 'ज त ज ग ग' अर्थात् जगण तगण जगण और दो गुरु के क्रम से 11 वर्ण होते हैं। **उदाहरण—**

**ज त ज ग ग**

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

**बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै**
**परन्तु पूर्वापर सोच लीजै।**
**बिना विचारे यदि काम होगा,**
**कभी न अच्छा परिणाम होगा।**

**–हरिऔध**

इस पद्य के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण और दो गुरु के क्रम से 11 वर्ण हैं, अतः यह छन्द उपेन्द्रवज्रा है।

### (3) वसन्ततिलका

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 'त भ ज ज ग ग' अर्थात् तगण, भगण, दो जगण और दो गुरु के क्रम से चौदह वर्ण होते हैं। **उदाहरण–**

त भ ज ज ग ग
ऽ ऽ।  ऽ।।  ।ऽ।  ।ऽ।  ऽ  ऽ

**जो राजपंथ वन-भूतल में बना था,**
**धीरे उसी पर सधा रथ जा रहा था।**
**हो हो विमुग्ध रुचि से अवलोकते थे,**
**ऊधो छटा विपिन की अति ही अनूठी।**

**–हरिऔध : प्रियप्रवास**

इस छन्द के प्रत्येक चरण में तगण, भगण, दो जगण और दो गुरु के क्रम से 14 वर्ण हैं, अतः यह वसन्ततिलका छन्द है।

### (4) सवैया

22 से 26 तक के वर्ण-वृत्त सवैया कहलाते हैं। मत्तगयंद, सुन्दरी, सुमुखी आदि इसके कुछ प्रमुख भेद हैं।

### (5) मत्तगयंद (सवैया)

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 7 भगण और दो गुरु के क्रम से 23 वर्ण होते हैं। **उदाहरण—**

भ भ भ भ भ भ भ ग ग
ऽ।  ।ऽ  ।।ऽ।  ।ऽ।  ।ऽ।।  ऽ।।ऽ।  ।ऽऽ

**सीस जटा, उर-बाहु बिसाल बिलोचन लाल तिरीछी सी भौंहैं।**
**तून सरासन-बान धरें तुलसी बन मारग में सुठि सोहैं।**
**सादर बारहिं बार सुभाय चितै तुम्ह त्यों हमरो मनु मोहैं।**
**पूँछति ग्राम वधू सिय सों, कहौ सांवरे से सखि रावरे को हैं।**

**–तुलसी : कवितावली**

इस पद्य में 7 भगण और दो गुरु के क्रम से 23 वर्ण हैं। अतः यह मत्तगयंद सवैया छन्द है। इसके प्रथम चरण के अन्त में 'छी सी' का लघु उच्चारण 'छि सि' होगा।

### (6) सुन्दरी (सवैया)

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में आठ सगण और एक गुरु वर्ण के क्रम से 25 वर्ण होते हैं। **उदाहरण—**

स स स स स स स स ग
।।  ऽ।।ऽ।।  ऽ।।  ऽ  ।।ऽ।।ऽ।।ऽ  ।।ऽऽ

**भुव भारहि संयुत राकस को गन जाय रसातल मैं अनुराग्यौ।**
**जग में जय शब्द समेतहिं 'केसव' राज विभीषन के सिर जाग्यौ।**
**मय-दानव नंदिनी के सुख सों मिलि कै सिव के हिय के दुख भाग्यौ।**
**सुर दुंदुभि सीस गजा सर राम को रावन के सिर साथहि लाग्यौ।**

**–केशव : रामचन्द्रिका**

**नोट**—26 से अधिक वर्णों वाले छन्द दण्डक कहलाते हैं।

**(7) सुमुखी (सवैया)**

इसमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में 23 वर्ण होते हैं। सात जगण (। ऽ ।) और अन्त में एक लघु और एक गुरु होते हैं। इसे **मल्लिका छन्द** भी कहते हैं। **उदाहरण**—

ज ज ज ज ज ज ज

। ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ

**जु लोग लगैं सिय रामहि साथ चलै वन माहि फिरैन चहैं।**
**हमें प्रभु आयुसु, देहु चलैं रउरे यों करि जोरि कहैं।**
**चलें कछु दूरि नमै पगधूरि भले फल जन्म अनेक लहैं।**
**सिया सुमुखी हरि फेरि तिन्हे बहु भाँतिनि ते समुझाइ रहैं।**

**(8) मनहर कवित्त**

यह दण्ड वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 31 वर्ण होते हैं। 16-15 वर्णों पर यति होती है। अन्त में एक गुरु वर्ण होता है। **उदाहरण**—

**मैं निज अलिन्द में खड़ी थी सखि, एक रात,**
**रिमझिम बूँदें पड़ती थीं घटा छाई थी।**
**गमक रहा था केतकी का गन्ध चारों ओर,**
**झिल्ली झनकार यही मेरे मन भाई थी।**
**करने लगी मैं अनुकरण स्वनूपुरों से,**
**चंचला थी चमकी, घनाली घहराई थी।**
**चौंक देखा मैंने चुप कोने में खड़े थे प्रिय,**
**माई! मुख लज्जा उसी छाती में छिपी थी।**

**–मैथिलीशरण गुप्त : साकेत**

इसके प्रत्येक चरण में 31 वर्ण हैं और 16 तथा 15 पर यति है। यह मनहर कवित्त है। इसे मनहरण कवित्त भी कहते हैं।

# अलंकार

काव्य की शोभा बढ़ानेवाले तत्त्वों को अलंकार कहते हैं। अलंकार के मुख्य दो भेद हैं—शब्दालंकार और अर्थालंकार। जहाँ शब्दों के कारण चमत्कार आ जाता है वहाँ शब्दालंकार तथा जहाँ अर्थ के कारण रमणीयता आ जाती है वहाँ अर्थालंकार होता है।

## शब्दालंकार

अनुप्रास, यमक और श्लेष शब्दालंकार हैं।

**(1) अनुप्रास**

जहाँ व्यंजनों की बार-बार आवृत्ति हो, चाहे उनके स्वर मिलें या न मिलें वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। अनुप्रास के पाँच भेद होते हैं–

(1) छेकानुप्रास, (2) वृत्त्यनुप्रास, (3) श्रुत्यनुप्रास, (4) लाटानुप्रास, (5) अन्त्यानुप्रास।

**छेकानुप्रास**—जहाँ एक या अनेक वर्णों की आवृत्ति केवल एक बार होती है वहाँ छेकानुप्रास होता है।

**राधा के बर बैन सुनि चीनी चकित सुभाइ।**
**दाख दुखी मिसरी मुई सुधा रही सकुचाइ।**

यहाँ ब, च, द, म और स वर्णों की एक एक बार आवृत्ति हुई है, अतः छेकानुप्रास है।

**वृत्त्यनुप्रास**—जहाँ एक अथवा अनेक वर्णों की आवृत्ति दो या दो से अधिक बार हो, वहाँ वृत्त्यनुप्रास होता है।

**तरनि-तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।**

यहाँ 'त' वर्ण की अनेक बार आवृत्ति होने के कारण वृत्त्यनुप्रास है।

**श्रुत्त्यनुप्रास**—जहाँ कण्ठ-तालु आदि एक स्थान से बोले जाने वाले वर्णों की आवृत्ति होती है, वहाँ श्रुत्त्यनुप्रास होता है।

**तुलसीदास सीदत निसिदिन देखत तुम्हारि निठुराई।**

इसमें दन्त्य वर्णों त, स, र, न की आवृत्ति हुई है, अतः इसमें श्रुत्त्यनुप्रास है।

**लाटानुप्रास**—जब शब्द और उसका अर्थ वही रहे, केवल अन्वय करने से अर्थ में भेद हो जाय, उसे लाटानुप्रास कहते हैं।

**तीरथ-व्रत-साधन कहा, जो निस दिन हरिगान।**
**तीरथ-व्रत-साधन कहा, बिन निस दिन हरिगान।**

इसमें शब्द और अर्थ वही है, परन्तु अन्वय करने से अर्थ में भिन्नता आ जाने के कारण लाटानुप्रास है।

**विशेष**—लाट प्रदेश के कवियों द्वारा खोजे और फिर प्रचलित किये जाने के कारण यह अलंकार लाटानुप्रास कहलाता है। गुजरात में भड़ौच और अहमदाबाद के पास यह प्रदेश था।

**अन्त्यानुप्रास**—जहाँ चरण या पद के अन्त में स्वर या व्यंजन की समानता होती है, वहाँ अन्त्यानुप्रास होता है।

**गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।**
**नयन अमिय दृग दोष विभंजन॥**

इसमें अन्त में न वर्ण की समानता के कारण अन्त्यानुप्रास है।

### (2) यमक

जहाँ भिन्न-भिन्न अर्थों वाले शब्दों की आवृत्ति हो वहाँ यमक अलंकार होता है।

**इकली डरी हौं, घन देखि के डरी हौं,**
**खाय बिस की डरी हौं घनस्याम मरि जाइ हौं।**

ऊपर के पद में 'डरी' तीन बार आया है—अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। पहली डरी का अर्थ पड़ी है, दूसरी डरी का अर्थ 'भयभीत' है तथा तीसरी डरी का अर्थ विष की डली या टुकड़ी है।

### (3) श्लेष

जहाँ एक शब्द का एक ही बार प्रयोग होता है और उसके एक से अधिक अर्थ होते हैं, वहाँ श्लेषालंकार होता है।

**चिरजीवो जोरी जुरे क्यों न सनेह गँभीर।**
**को घटि ए वृषभानुजा ए हलधर के वीर॥**

यहाँ वृषभानुजा दो अर्थों में प्रयुक्त है, पहला वृषभानु की पुत्री राधा, दूसरा वृषभ की अनुजा गाय।

इसी प्रकार 'हलधर के वीर' के भी दो अर्थ हैं—(1) हलधर अर्थात् बलराम के कृष्ण तथा (2) हलधर को धारण करने वाले बैल के भाई बैल। 'वृषभानुजा' तथा 'हलधर' के एक से अधिक अर्थ होने के कारण यहाँ श्लेष अलंकार है।

# अर्थालंकार

## (1) उपमा

समान धर्म के आधार पर जहाँ एक वस्तु की समानता या तुलना किसी दूसरे वस्तु से की जाती है वहाँ उपमा अलंकार माना जाता है। इसके चार अंग हैं—

(1) **उपमेय**—जिसकी उपमा दी जाय अर्थात् वह वर्ण्य विषय, जिसके लिए उपमा की योजना की जाती है, उसे उपमेय कहते हैं।

(2) **उपमान**—जिससे उपमा दी जाये वह उपमान होता है।

(3) **साधारण धर्म**—उपमेय एवं उपमान के बीच जो भाव, रूप, गुण, क्रिया आदि समान धर्म हो, उसे साधारण धर्म कहते हैं।

(4) **वाचक**—उपमेय और उपमान की समानता को प्रकट करने वाले—सा, इव, सम, समान, सों आदि शब्दों को वाचक कहते हैं।

**उदाहरणार्थ–**

**हरिपद कोमल कमल से।**

इस एक पंक्ति में उपमा के चारों अंग उपस्थित हैं। हरिपद का वर्णन किया जा रहा है, वे उपमेय हैं। उनकी समता कमल से की गयी है, अतः कमल उपमान है। कोमलता वाले गुण में ही दोनों के बीच समानता दिखायी गयी है, अतः यह साधारण धर्म है तथा 'से' शब्द वाचक है। इस पंक्ति में पूर्णोपमा है क्योंकि इसमें चारों अंग हैं। जहाँ उपमा के चारों अंगों में से कोई अंग लुप्त रहता है, वहाँ लुप्तोपमा होती है।

**उपमेय लुप्तोपमा**—जहाँ केवल उपमेय लुप्त हो, वहाँ उपमेय लुप्तोपमा अलंकार होता है। यथा—

**साँवरे गोरे घन छटा से फिरैं मिथिलेस की बाग थली में।**

**उपमान लुप्तोपमा**—जहाँ उपमान का लोप हो वहाँ उपमान लुप्तोपमा अलंकार होता है। यथा—

**सुन्दर नन्द किसोर सो, जग में मिलै न और।**

**साधारण-धर्म लुप्तोपमा**—जहाँ साधारण धर्म का लोप हो वहाँ धर्म लुप्तोपमा अलंकार होगा। यथा—

**कुन्द इन्दु सम देह उमा रमन करुना अयन।**

**वाचक लुप्तोपमा**—जहाँ वाचक शब्द का लोप हो वहाँ वाचक लुप्तोपमा अलंकार होता है। जैसे–

**नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन।**

जहाँ उपमेय का उत्कर्ष दिखाने के हेतु अनेक उपमान एकत्र किये जायँ वहाँ मालोपमा अलंकार होता है। जैसे–

**इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअंभ पर,**
**रावण सदम्भ पर रघुकुल राज हैं।**

## (2) रूपक

जहाँ उपमेय में उपमान का आरोप हो वहाँ रूपक अलंकार होता है।

(1) **सांगरूपक**—जहाँ उपमेय पर उपमान का सर्वांग आरोप हो, वहाँ सांगरूपक होता है।

**उदित उदय गिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग।**
**बिगसे सन्त सरोज सब हरखे लोचन भृंग॥**

यहाँ रघुवर, मंच, संत, लोचन आदि उपमेयों पर बाल सूर्य, उदयगिरि, सरोज तथा भृंग आदि उपमानों का आरोप किया गया है, अतः यहाँ सांगरूपक है।

(2) **निरंग रूपक**—जहाँ उपमेय पर उपमान का आरोप सर्वांग न हो वहाँ निरंग रूपक होता है।

**अवसि चलिय बन राम पहुं भरत मंत्र भल कीन्ह।**
**सोक सिन्धु बूड़त सबहिं, तुम अवलम्बन दीन्ह॥**

यहाँ सिन्धु उपमान का शोक उपमेय में आरोप मात्र है, अतः निरंग रूपक है।

(3) **परम्परित रूपक**–जहाँ मुख्य रूपक किसी दूसरे रूपक पर अवलम्बित हो या जहाँ एक आरोप दूसरे का कारण बनता हुआ दिखाया जाय वहाँ परम्परित रूपक होता है।

**बन्दौं पवन कुमार खल बन पावक ज्ञान घन।**
**जासु हृदय आगार बसहिं राम सरचाप धर॥**

यहाँ हनुमान् में जो अग्नि का आरोप प्रदर्शित किया गया है, उसका कारण खलों में वन का आरोप है, अतः इस आरोप पर ही प्रथम आरोप अवलम्बित है।

### (3) अनन्वय

जहाँ उपमान के अभाव में उपमेय ही को उपमान मान लिया जाय वहाँ अनन्वय अलंकार होता है।

**राम से राम सिया सी सिया**
**सिर मौर बिरंचि बिचारि सँवारे।**

### (4) प्रतीप

जहाँ प्रसिद्ध उपमान को उपमेय बना दिया जाय अथवा उसकी व्यर्थता प्रदर्शित की जाय वहाँ प्रतीप अलंकार होता है। जैसे साँवले रंग के शरीर का प्रसिद्ध उपमान यमुना जल है। तुलसीदासजी ने भगवान् राम के वनवास जाते समय मार्ग में यमुना स्नान करने के प्रसंग में इस अलंकार का प्रयोग किया है–

**उतरि नहाये जमुन जल जो सरीर सम स्याम।**

राम उस जमुना-जल में नहाये जो उनके शरीर के समान साँवले रंग का है। इस प्रकार उपमेय को उपमान बना दिया और उपमान को उपमेय। प्रतीप का अर्थ ही उल्टा होता है।

**जगप्रकाश तुव जस करै बृथा भानु यह देख।**

यहाँ पर भी प्रसिद्ध उपमान सूर्य की व्यर्थता प्रतिपादित कर देने से प्रतीप अलंकार है।

### (5) सन्देह

जहाँ किसी वस्तु की समानता अन्य वस्तु से दिखायी पड़ने से यह निश्चित न हो पाये कि यह वस्तु वही है या कोई अन्य, वहाँ सन्देह अलंकार होता है।

लंका-दहन के वर्णन में हनुमान् की पूँछ को देखकर यह निश्चित ज्ञान नहीं हो पाता कि यह आकाश में अनेक पुच्छल तारे हैं या पर्वत से अग्नि की नदी सी निकल रही है–

**कैधौं व्योम बीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु**
**कैधौं चली मेरु तैं कृसानुसारि भारी है।**

सन्देह अलंकार का एक और उदाहरण–

**नारी बीच सारी है कि सारी बीच नारी है**
**कि सारी ही की नारी है कि नारी ही की सारी है।**

### (6) भ्रान्तिमान

सन्देह में तो यह संदेह बना रहता है कि यह वस्तु रस्सी है या सर्प है, परन्तु भ्रान्तिमान में तो अत्यन्त समानता के कारण एक वस्तु को दूसरी समझ लिया जाता है और उसी भूल के अनुसार कार्य भी कर डाला जाता है। यथा–

**बिल बिचारि प्रविसन लग्यौ नाग शुंड में ब्याल।**
**ताहू कारी ऊख भ्रम लियो उठाय उत्ताल॥**

यहाँ सर्प को हाथी की सूँड़ में बिल होने की भ्रान्ति हुई और वह उसी भूल के अनुसार क्रिया भी कर बैठा, उसमें घुसने लगा। उधर हाथी को भी सर्प में काले गन्ने की भ्रान्ति हुई और उसने तत्काल उसे गन्ना समझ कर उठा लिया।

### (7) उत्प्रेक्षा

जहाँ उपमेय में उपमान की सम्भावना की जाय वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। इसके तीन भेद हैं—

1. वस्तूत्प्रेक्षा 2. हेतूत्प्रेक्षा 3. फलोत्प्रेक्षा।

**( 1 ) वस्तूत्प्रेक्षा**—जहाँ किसी वस्तु में किसी अन्य वस्तु की सम्भावना की जाती है वहाँ वस्तूत्प्रेक्षा होती है। यथा—

**सखि सोहति गोपाल के उर गुंजन की माल।**
**बाहिर लसति मनो पिये दावानल की ज्वाल॥**

गुंजन की माल उपमेय में दावानल ज्वाल उपमान की सम्भावना की गयी है।

**( 2 ) हेतूत्प्रेक्षा**—जहाँ अहेतु में अर्थात् जो कारण न हो, उसमें हेतु की सम्भावना की जाय, वहाँ हेतूत्प्रेक्षा होती है। यथा—

**रवि अभाव लखि रैनि में दिन लखि चन्द्र विहीन।**
**सतत उदित इहिं हेतु जन यश प्रताप मुख कीन॥**

राजा के यश प्रताप के सतत देदीप्यमान होने का हेतु रात्रि में सूर्य का और दिन में चन्द्र का अभाव बताया गया है, अतः अहेतु में हेतु की सम्भावना की गयी है।

**( 3 ) फलोत्प्रेक्षा**—जहाँ अफल में फल की सम्भावना की गयी हो, वहाँ फलोत्प्रेक्षा होती है। यथा—

**तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।**
**झुके कूल सों जल परसन हित मनहुँ सुहाये॥**

यहाँ तमालों को झुके हुए होने का पवित्र जमुना जल स्पर्श का पुण्यलाभ प्राप्त करना फल या उद्देश्य बताया गया है। यहाँ अफल को फल मान लेने के कारण फलोत्प्रेक्षा है।

### (8) दृष्टान्त

जहाँ उपमेय व उपमान के साधारण धर्म में भिन्नता होते हुए भी बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से कथन किया जाय वहाँ दृष्टान्त अलंकार होता है।

**दुसह दुराज प्रजान को क्यों न बड़ै दुख द्वन्द्व।**
**अधिक अँधेरो जग करत मिलि मावस रवि चन्द॥**

### (9) अतिशयोक्ति

जहाँ किसी वस्तु की इतनी अधिक प्रशंसा की जाय कि लोकमर्यादा का अतिक्रमण हो जाय, वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है।

**अब जीवन की है कपि आस न कोय।**
**कनगुरिया की मदुरी कँगना होय॥**

यहाँ शरीर की क्षीणता को व्यंजित करने के लिए अँगूठी को कंगन होना बताया गया है, अतः यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है।

# || बहुविकल्पीय प्रश्न ||

1. 'सिर पर बैठो काग, आँखि दोउ खात निकारत, उक्त पद में प्रयुक्त रस का नाम है—
(i) वात्सल्य (ii) हास्य (iii) शान्त (iv) वीभत्स
2. भयानक रस का स्थायी भाव है—
(i) निर्वेद (ii) वत्सलता (iii) भय (iv) रति
3. आचार्यों ने संचारी भावों की संख्या निश्चित की है—
(i) 33 (ii) 34 (iii) 35 (iv) 36
4. 'जुगुप्सा' स्थायी भाव है—
(i) रौद्र रस का (ii) वीभत्स रस का (iii) भयानक रस का (iv) अद्‌भुत रस का
5. 'श्याम और सुन्दर दोउ जोरी। निरखति छवि जननी तृनतोरी।' उक्त पद में कौन-सा रस है?
(i) शान्त रस (ii) वत्सल रस (iii) शृंगार रस (iv) करुण रस
6. 'कहूँ हाड परौ, कहूँ जरो अधजरो माँस, कहूँ गीध भीर नोचत अरी अहै।' उक्त पद में कौन-सा रस है?
(i) हास्य (ii) वीभत्स (iii) भयानक (iv) रौद्र
7. फहरी ध्वजा, फड़कीं भुजा, बलिदान की ज्वाला उठी।
निज मातृभूमि के मन में, चढ़ मुण्ड की माला उठी।।
उपर्युक्त पद में कौन-सा रस है?
(i) शृंगार (ii) वीर (iii) शान्त (iv) अद्‌भुत
8. हास्य रस का स्थायी भाव है—
(i) हास (ii) भय (iii) जुगुप्सा (iv) रति
9. शृंगार रस का स्थायी भाव है—
(i) विस्मय (ii) उत्साह (iii) रति (iv) हास
10. अर्ध राति गइ कपि नहिं आयउ। राम उठाय अनुज उर लायउ।।
सकहु न दुखित देखि मोहिं काऊ। बन्धु सदा तव मृदुल सुभाऊ।।
जौ जनतेऊँ बन बंधु बिछोहू। पिता बचन मनतेऊँ नहिं ओहू।।
उपर्युक्त पंक्तियों में कौन-सा रस है?
(i) अद्‌भुत (ii) करुण (iii) वीर (iv) शान्त
11. वीभत्स रस का स्थायी भाव है—
(i) उत्साह (ii) निर्वेद (iii) जुगुप्सा (iv) रति
12. 'इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा, मति भ्रम मोर कि आन बिसेखा' पद प्रयुक्त रस है—
(i) शृंगार (ii) अद्‌भुत (iii) भक्ति (iv) शान्त
13. 'ओचिन्ता की पहली रेखा, अरे विश्व वनकी व्याली' में अलंकार है—
(i) यमक (ii) रूपक (iii) श्लेष (iv) प्रतीष
14. जहाँ उपमेय व उपमान के साधारण धर्म में भिन्नता होते हुए भी बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से कथन किया जाए, वहाँ अलंकार होता है—
(i) उत्प्रेक्षा (ii) सन्देह (iii) दृष्टान्त (iv) अतिशयोक्ति

15. 'विदग्ध होके कण धूलि राशि का, तपे हुए लौह कणों समान था।' उक्त पद में अलंकार है—
(i) अनुप्रास (ii) यमक (iii) श्लेष (iv) उपमा
16. "वर्ण्य विषय को बहुत उत्कृष्ट दिखाने के क्रम में, उसके समान कोई अन्य है ही नहीं सूचित करने के लिए उपमेय को ही उपमान बना देना", किस अलंकार का लक्षण है?
(i) प्रतीप (ii) भ्रान्तिमान (iii) अनन्वय (iv) सन्देह
17. "जनक वचन छूये बिखा लजारु के से, वीर रहे सकल सकुचि सिखाय के।" उक्त पद में अलंकार है—
(i) अनुप्रास (ii) यमक (iii) श्लेष (iv) उपमा
18. जहाँ उपमेय को उपमान और उपमान को उपमेय बना दिया जाय, वहाँ कौन-सा अलंकार है?
(i) प्रतीप (ii) अनन्वय (iii) भ्रान्तिमान (iv) सन्देह
19. कनक-कनक तें सौ गुनी, मादकता अधिकाइ।
उहिं खाएं बौराइ, इहिं पाएं ही बौराइ।।
उपर्युक्त पद में अलंकार है—
(i) रूपक (ii) उत्प्रेक्षा (iii) यमक (iv) श्लेष
20. जहाँ उपमेय में उपमान की कल्पना या सम्भावना की जाती है, वहाँ अलंकार होता है—
(i) उपमा (ii) सन्देह (iii) उत्प्रेक्षा (iv) श्लेष
21. उस काल मारे क्रोध के तनु काँपने उसका लगा।
मानो हवा के वेग से सोता हुआ सागर जगा।।
उपर्युक्त पंक्तियों में अलंकार है—
(i) उपमा (ii) सन्देह (iii) प्रतीप (iv) उत्प्रेक्षा
22. 'बसन्ततिलका' छन्द के एक चरण में कुल कितनी मात्राएँ होती हैं—
(i) 16 (ii) 18 (iii) 28 (iv) 14
23. 'प्रिय पति वह मेरा, प्राण प्यारा कहाँ है? दुःख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है।' में प्रयुक्त छन्द है—
(i) मालिनी (ii) बसन्ततिलका (iii) इन्द्रवज्रा (iv) उपेन्द्रवज्रा
24. 'हरिगीतिका' छन्द के प्रत्येक चरण में कितनी मात्राएँ होती हैं?
(i) 24 (ii) 28 (iii) 22 (iv) 26
25. 'सकल मलिन मन दीन दुखारी। देखी सासु आन अनुसारी।" में छन्द है—
(i) रोला (ii) सोरठा (iii) दोहा (iv) चौपाई
26. 'रोला' छन्द के एक चरण में कुल कितनी मात्राएँ होती हैं—
(i) 22 (ii) 24 (iii) 26 (iv) 28
27. 'चम्पक हरवा अंग मिलि, अधिक सुहाय।
जानि परै सिय हियरै, जब कुँभिलाय।।
उक्त में छन्द है—
(i) सोरठा (ii) रोला (iii) हरिगीतिका (iv) बरवै

# पत्र-लेखन

अपनी बात को दूसरों तक पहुँचाने का प्रमुख माध्यम पत्र है। लिपि के विकास के साथ ही मानवीय भावों की लिखित अभिव्यक्ति हेतु पत्र-लेखन की विधा आरंभ हुई थी। समय के साथ-साथ पत्र-लेखन की कला में अनेक परिवर्तन हुए। वर्तमान में पत्र के अनेक आयाम सामाजिक, व्यावसायिक, शासकीय/प्रशासकीय भी विकसित हुए हैं।

## पत्रों के प्रकार

पत्रों के प्रमुख भेद इस प्रकार हैं–

(i) निजी/व्यक्तिगत/घरेलू या पारिवारिक पत्र

(ii) सामाजिक पत्र

(iii) व्यापारिक या व्यावसायिक पत्र

(iv) सरकारी/शासकीय/प्रशासकीय या आधिकारिक पत्र

(v) आवेदन-पत्र

(vi) शिकायती पत्र

(vii) संपादक के नाम पत्र

उपर्युक्त श्रेणियों के अलावा जो पत्र लिखे जाते हैं उन्हें विविध पत्र की श्रेणी में रखा जाता है।

### अच्छे पत्र के गुण

(i) पत्र की भाषा सरल व बोधगम्य होनी चाहिए क्योंकि इसका पाठक के मन पर बहुत प्रभाव होता है।

(ii) पत्र में प्रस्तुत विचार स्पष्ट और विनम्र होना चाहिए, जिससे उसे प्राप्त करने वाला उसे ठीक ढंग से समझ सके।

(iii) पत्र यथासंभव संक्षेप में लिखना चाहिए। इस बात का प्रयास करना चाहिए कि पत्र में कोई ऐसी बात न लिखी जाय जिससे पढ़ने वाले को अरुचि उत्पन्न हो।

(iv) पत्र लेखक और उसे पाने वाले के बीच कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य होता है। यदि पत्र आयु और पद में बड़े किसी व्यक्ति को लिखा जा रहा हो तो उसे आदरपूर्वक, मित्रों को सौहार्दपूर्वक और अपने से छोटों को स्नेहपूर्वक लिखा जाना चाहिए।

(v) पत्र में औपचारिक अभिवादन के पश्चात् लेखक को सीधे मुख्य विषय पर आना चाहिए।

## नियुक्ति आवदेन-पत्र

आवेदन-पत्र से अभिप्राय उन पत्रों से लिया जाता है, जो किसी संस्था में नौकरी प्राप्त करने हेतु आवेदक द्वारा भेजे जाते हैं। आवेदन-पत्र में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है–

1. आवेदन-पत्र की भाषा शिष्ट, किन्तु स्पष्ट होनी चाहिए।

2. नियुक्ति के पद का नाम एवं सूचना का सूत्र भी स्पष्ट होना चाहिए।
3. आवेदक की पूर्ण योग्यताओं का उल्लेख होना चाहिए।
4. शैक्षिक योग्यता के साथ-साथ कार्य अनुभव का भी उल्लेख होना चाहिए।
5. विनम्रता के साथ कर्त्तव्यनिष्ठा एवं कार्यवहन की क्षमता के आश्वासन का उल्लेख भी होना चाहिए।

## (1)

**किसी विद्यालय के प्रबन्धक के नाम प्रवक्ता पद पर अपनी नियुक्ति हेतु एक आवेदन-पत्र लिखिए।**

*अथवा* **अपने जिला विद्यालय निरीक्षक को एक आवेदन-पत्र लिखिए, जिसमें स्थानीय विद्यालय के रिक्त सहायक-अध्यापक पद पर अस्थायी नियुक्ति के लिए प्रार्थना की गयी है।**

*अथवा* **अपने जनपद के किसी विद्यालय में शिक्षक के रूप में कार्य करने के लिए अपना आवेदन-पत्र विद्यालय प्रबन्धक को प्रस्तुत कीजिए।**

सेवा में,

प्रबन्धक
महात्मा गाँधी इन्टर कॉलेज,
मेरठ (उ0 प्र0)

महोदय,

दैनिक समाचार-पत्र आज दिनांक 13 मई, 20...... से ज्ञात हुआ है कि आपके विद्यालय में अर्थशास्त्र प्रवक्ता का पद रिक्त है। उक्त पद के लिए मैं अपना आवेदन-पत्र आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ। मेरी शैक्षिक एवं अन्य योग्यताओं का विवरण निम्न प्रकार है–

| कक्षा | वर्ष | श्रेणी | विषय |
|---|---|---|---|
| 1. हाईस्कूल | 1995 | द्वितीय | हिन्दी, संस्कृत, गणित, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र |
| 2. इण्टरमीडिएट | 1997 | द्वितीय | हिन्दी, संस्कृत, भूगोल, अर्थशास्त्र, अंग्रेजी |
| 3. बी0 ए0 | 2000 | द्वितीय | हिन्दी, संस्कृत, अर्थशास्त्र |
| 4. एम0 ए0 | 2002 | प्रथम | अर्थशास्त्र |
| 5. बी0 एड0 | 2004 | प्रथम/द्वितीय | निर्धारित विषय |

मैं 2004 से एम0 पी0 इण्टर कॉलेज, जौनपुर में अर्थशास्त्र-प्रवक्ता के रूप में कार्य कर रहा हूँ, परन्तु यह पद अस्थायी है। आपसे निवेदन है कि मेरी शैक्षणिक योग्यताओं पर विचार करते हुए मुझे अपने कॉलेज में सेवा का अवसर प्रदान करने की कृपा करें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं अपने परिश्रम, कार्यक्षमता एवं अध्यापन-कार्य से अपने छात्रों को सदैव सन्तुष्ट रखूँगा और आपको किसी भी प्रकार की शिकायत का अवसर नहीं दूँगा।

दिनांक : 18-05-20.......
संलग्नक : प्रमाण-पत्रों की सत्यापित प्रतिलिपियाँ

**आवेदक**
रमेश सिंह
513 कीडगंज, इलाहाबाद।

## (2)

**किसी बैंक के प्रबन्धक को कोई व्यवसाय करने हेतु ऋण-प्राप्ति के लिए एक आवेदन-पत्र लिखिए।**

*अथवा* **अपना कुटीर उद्योग प्रारम्भ करने हेतु किसी बैंक के प्रबन्धक को ऋण प्रदान करने हेतु एक पत्र लिखिए।**

*अथवा* **पंजाब नेशनल बैंक के शाखा प्रबन्धक को एक आवेदन-पत्र का प्रारूप प्रस्तुत कीजिए, जिसमें एम.बी.ए. की शिक्षा हेतु 'शिक्षा ऋण' की माँग की गई हो।**

*अथवा* **अपने निकटस्थ बैंक की शाखा के प्रबन्धक के नाम एक प्रार्थना-पत्र लिखिए जिसमें निजी रोजगार के लिए ऋण लेने हेतु निवेदन किया गया हो।**

सेवा में,

प्रबन्धक
पंजाब नेशनल बैंक
सिविल लाइन्स
बरेली

महोदय,

सविनय निवेदन है कि वर्ष 2009 में अवध विश्वविद्यालय से बी0 ए0 की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के बाद से अब तक मुझे कहीं कोई रोजगार प्राप्त नहीं प्राप्त हो सका है। मुझे ज्ञात हुआ कि विभिन्न सरकारी ऋण-योजनाओं के अन्तर्गत आपका बैंक भी बेरोजगार युवकों को 50,000 रुपए तक की ऋण-सुविधा प्रदान कर रहा है। अतः सन्दर्भ में आवश्यक प्रपत्र आदि भरवारकर मुझे भी उक्त राशि का ऋण प्रदान करने की कृपा करें।

दिनांक : 10-05-20.......

**प्रार्थी**
महेश प्रसाद
गोसाईगंज, फैजाबाद।

## (3)

**अपने मुहल्ले की सड़कों, नालियों आदि की गन्दगी को दूर करने के लिए उपयुक्त अधिकारी को पत्र लिखिए।**

*अथवा* **किसी हिन्दी दैनिक समाचार-पत्र के सम्पादक के नाम एक पत्र लिखिए जिसमें सड़कों की दुर्दशा की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित किया गया हो।**

*अथवा* **अपने महानगर के महापौर को एक शिकायती पत्र लिखिए जिसमें मुहल्ले के चौराहों पर एकत्र गंदगी एवं कूड़े-करकट को हटाने का अनुरोध किया गया हो।**

*अथवा* **नगर की स्वच्छता हेतु नगरपालिका अध्यक्ष को आवेदन देते हुए उनका ध्यान गन्दगी से होने वाली बीमारियों की ओर आकृष्ट कीजिए।**

सेवा में,

अधिशासी अधिकारी
नगरपालिका, देवरिया।

महोदय,

मैं आपका ध्यान शहर में व्याप्त गन्दगी और दुर्दशा की ओर आकर्षित कराना चाहता हूँ जिन स्थानों पर नालियाँ बनाई गई हैं, वे जगह-जगह से टूट गई हैं। जहाँ नालियाँ हैं, वहाँ पर उनकी सफाई के लिए सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति नहीं की गई है, परिणामतः पानी हर समय सड़ता रहता है।

अतः आपसे निवेदन है कि दुर्दशा को देखते हुए शहर की सड़कों की मरम्मत और गन्दे पानी के निकास की उचित व्यवस्था कराने की कृपा करें।

दिनांक : 10-05-20.......

**भवदीय**
निलेश कुमार
देवरिया।

# निबन्ध लेखन

## निबन्ध से आशय

कम लेकिन चुने हुए शब्दों में किसी विषय पर अपने विचार प्रकट करने का प्रयत्न निबन्ध कहलाता है। निबन्ध के विषय असीमित हैं। छोटे से लेकर बड़े किसी भी विषय पर निबन्ध लिखा जा सकता है।

## निबन्ध की शुरुआत

निबन्ध का आरंभ इस ढंग से किया जाना चाहिए कि इसे पढ़ने वालों की जिज्ञासा शुरू से ही बढ़ जाए और वह उसे पूरा पढ़ने को विवश हो। विचारपूर्णता, मौलिकता और मनोरंजकता निबन्ध के आवश्यक गुण हैं।

## निबन्ध के साधन

पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों का अध्ययन निबन्ध-लेखन का प्रमुख साधन है। पर्याप्त अध्ययन और उससे अर्जित ज्ञान निबन्ध लेखन में उपयोगी होता है।

## निबन्ध के अंग

निबन्ध के तीन विशिष्ट अंग होते हैं–1. प्रस्तावना, 2. प्रसार, 3. उपसंहार।

**1. प्रस्तावना**–निबन्ध की भूमिका प्रस्तावना में अंकित होती है। इसमें निबन्ध में वर्णित विषय का परिचय दिया होता है। प्रस्तावना में लेखक द्वारा यह स्पष्ट किया जा सकता है कि वह निबन्ध में किस विषय का वर्णन करना चाहता है।

**2. प्रसार–**प्रसार में निबन्ध का प्रारूप (कलेवर) रहता है। यह निबन्ध का सबसे विस्तृत व महत्त्वपूर्ण अंश शामिल होता है। निबन्ध लेखक को इसके अन्तर्गत निबन्ध-विषय के सम्बन्ध में अपनी पूरी जानकारी, संक्षिप्त, संयत तथा मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करना होता है।

**3. उपसंहार–**उपसंहार निबन्ध का अंतिम भाग होता है। इसमें निबन्ध की शुरुआत से उसके अंत तक का सम्पूर्ण विवरण संक्षेप में प्रदान किया जाता है। इस तरह निबन्ध का सिंहावलोकन अंकित किया जाता है।

## निबन्ध के प्रकार

निबन्ध प्रमुख रूप से तीन प्रकार के होते हैं–(1) वर्णनात्मक, (2) आख्यानात्मक तथा, (3) विचारात्मक।

**(1) वर्णनात्मक निबन्ध**–इस प्रकार के निबन्ध में किसी स्थान, यात्रा, घटना, दृश्य, वस्तु, पदार्थ आदि का वर्णन किया जाता है। इसमें वर्ण्य विषय से सम्बन्धित प्रमाण आदि नहीं दिए जाते बल्कि वर्ण्य विषय का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत किया जाता है।

**(2) आख्यानात्मक निबन्ध**–इस तरह का निबन्ध किसी प्रख्यात व्यक्ति के व्यक्तित्व के जीवन को आधार बनाकर लिखा जाता है। इसमें व्यक्ति के शारीरिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन का ही नहीं बल्कि उसके व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डाला जाता है। इसके साथ ही व्यक्ति के गुण-दोषों पर भी प्रकाश डाला जाता है।

**(3) विचारात्मक निबन्ध**–विचारात्मक निबन्ध के अंतर्गत निबन्ध की रचना किसी विचार और भाव को लेकर की जाती है। दर्शनशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, धर्म, संस्कृति, सभ्यता, विज्ञान, इतिहास आदि से सम्बन्धित विषय सम्बन्धित के अंतर्गत की जाती है।

विचारात्मक निबन्ध के दो भेद होते हैं–

(अ) भावप्रधान निबन्ध (ख) तर्कप्रधान निबन्ध

**(अ) भावप्रधान निबन्ध :** इस प्रकार के निबन्धों में लेखक अपने मन की भावनाओं में प्रवाहित हुआ भावनात्मक शैली में अपनी बात को प्रस्तुत करता है। लेखक अपने मन में आए हुए भावों को सत्य मानते हुए उन्हें शब्दों में पिरोता है।

**( ब ) तर्कप्रधान निबन्ध :** इसके अन्तर्गत विचार को तर्क अथवा उचित-प्रमाणों के आधार पर सत्यापित करने का प्रयास किया जाता है। इसके अन्तर्गत कभी-कभी किसी विचार का विवेचन या विश्लेषण भी प्रस्तुत किया जाता है। इसमें किसी भाव या विचार पर वाद-विवाद भी किया जाता है। साथ ही, इसमें किसी वस्तु, विषय या रचना की आलोचना या प्रत्यालोचना भी प्रस्तुत की जाती है।

## 1. पर्यावरण प्रदूषण की समस्या और समाधान

**प्रदूषण का अर्थ**—स्वच्छ वातावरण में ही जीवन का विकास सम्भव है। जब वातावरण में कुछ हानिकारक तत्त्व आ जाते हैं तो वातावरण को दूषित कर देते हैं। यह गन्दा वातावरण जीवधारियों के लिए अनेक प्रकार से हानिकारक होता है। इस प्रकार वातावरण के दूषित हो जाने को ही प्रदूषण कहते हैं। जनसंख्या की असाधारण वृद्धि एवं औद्योगिक प्रगति ने प्रदूषण की समस्या को जन्म दिया है। औद्योगिक तथा रासायनिक कूड़े-कचरे के ढेर से पृथ्वी, हवा तथा पानी प्रदूषित हो रहे हैं।

**प्रदूषण के प्रकार**—आज के वातावरण में प्रदूषण निम्न रूपों में दिखाई पड़ता है–1. वायु-प्रदूषण, 2. जल-प्रदूषण, 3. ध्वनि-प्रदूषण, 4. रासायनिक-प्रदूषण।

**1. वायु-प्रदूषण**—वायुमण्डल में विभिन्न प्रकार की गैसें एक विशेष अनुपात में उपस्थित रहती हैं। जीवधारी अपनी क्रियाओं द्वारा ऑक्सीजन और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड छोड़ते रहते हैं। हरे पौधे प्रकाश की उपस्थिति में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड लेकर ऑक्सीजन निष्कासित करते रहते हैं। इससे वातावरण में ऑक्सीजन और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का सन्तुलन बना रहता है; किन्तु मानव अपने अज्ञानवश और आवश्यकता के नाम पर इस सन्तुलन को नष्ट करता रहता है।

**2. जल-प्रदूषण**—सभी जीवधारियों के लिए जल बहुत महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है। पौधे भी अपना भोजन जल के माध्यम से प्राप्त करते हैं। यह भोजन पानी में घुला रहता है। जल में अनेक प्रकार के खनिज तत्त्व, कार्बनिक-अकार्बनिक पदार्थ तथा गैसें घुली रहती हैं। यदि जल में यह पदार्थ आवश्यकता से अधिक मात्रा में हो जाते हैं तो जल प्रदूषित होकर हानिकारक हो जाता है और वह प्रदूषित जल कहलाता है।

**3. ध्वनि-प्रदूषण**—ध्वनि-प्रदूषण आज की एक नयी समस्या है। इसे वैज्ञानिक प्रगति ने पैदा किया है। मोटर-कार, ट्रैक्टर, जेट विमान, कारखानों के साइरन, मशीनें तथा लाउडस्पीकर आदि ध्वनि के सन्तुलन को बिगाड़कर ध्वनि-प्रदूषण उत्पन्न करते हैं। तेज ध्वनि में श्रवण-शक्ति का ह्रास होता है और कार्य करने की क्षमता पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। कभी-कभी पड़ोस में लाउडस्पीकर बजने से रात भर नींद नहीं आती। इससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। अत्यधिक ध्वनि-प्रदूषण से मानसिक विकृति तक हो सकती है।

**4. रासायनिक प्रदूषण**—कारखाने से बहते हुए अवशिष्ट द्रव्यों के अलावा खाद्यान्न की उपज में वृद्धि की दृष्टि से प्रयुक्त कीटनाशक दवाइयों से और रासायनिक खादों से भी स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये पदार्थ पानी के साथ बहकर नदियों, तालाबों और अन्ततः समुद्र में पहुँच जाते हैं और जीवन को अनेक प्रकार से हानि पहुँचाते हैं।

**प्रदूषण के कारण**—पर्यावरण-प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण विश्व की जनसंख्या में तेजी से होने वाली वृद्धि है। विश्व की जनसंख्या आज सुरसा की भाँति अपना मुँह फैलाती जा रही है। जनसंख्या में जिस तेजी के साथ विस्तार होता जा रहा है, उतनी ही तेजी से आदमी की सुविधाओं में ह्रास होता जा रहा है। रहने के लिए स्थान की भारी कमी आ रही है। खाने के लिए सन्तुलित भोजन उपलब्ध होना कठिन हो गया है।

पर्यावरण-प्रदूषण का दूसरा बड़ा कारण विज्ञान है। विज्ञान के आविष्कार जहाँ मानव जाति के लिए वरदान-स्वरूप सिद्ध हुए हैं, वहीं उनसे मानव का भयंकर अहित भी हुआ है। विज्ञान ने विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के लिए अनेक मशीनों का निर्माण किया है। इन मशीनों को चलाने के लिए ईंधन के रूप में पेट्रोल, डीजल, कोयला, लकड़ी, तेल आदि का उपयोग किया जाता है। कारखानों की ऊँची-ऊँची चिमनियों से दिन-रात निकलने वाले धुएँ की अपार राशि सारे वातावरण को दूषित करती रहती है। धुएँ से सारा वातावरण कालिमामय दिखाई देता है। इसके साथ ही इन कारखानों से निकलने वाला दूषित जल जहाँ भी जाकर स्वच्छ जल में मिलता है, वहाँ का जल विषाक्त हो जाता है। बड़ी-बड़ी नदियों में जहाँ-जहाँ ऐसे कारखाने का जल मिलता है, वहाँ बड़ी दूर तक नदियों का जल विषाक्त हो जाता है। उनमें कोई जीव-जन्तु जीवित नहीं बच पाता।

**प्रदूषण की रोकथाम के उपाय**—पर्यावरण को दूषित करने वाली परिस्थितियाँ आज मानव के समक्ष चुनौती बनकर खड़ी हैं। वातावरण को दूषित करने में हम सभी जिम्मेदार हैं। अतः इसका निदान भी हम सबको मिलकर ही करना पड़ेगा। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने इस समस्या को गम्भीरता से समझा था। इसलिए उन्होंने यज्ञ की सृष्टि की थी। यज्ञों में प्रयुक्त घी, तिल आदि के कारण वातावरण शुद्ध रहता है। लेकिन आज इन चीजों का प्रयोग करना कठिन है। यज्ञ की कल्पना आज असम्भव हो गयी है।

अतः इस समस्या पर नियन्त्रण के लिए सबसे प्रथम उपाय तो यह है कि बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियन्त्रण किया जाय। सीमित जनसंख्या रहने से पर्यावरण दूषित होने की सम्भावना कम रहेगी। साथ ही अधिक-से-अधिक वृक्षारोपण भी पर्यावरण को स्वच्छ बनाने में मदद करता है और उस जगह का वातावरण भी सुन्दर होगा।

नदियों के पानी को प्रदूषण से बचाने के लिए हमें उस जल में मृत जीवों अथवा शवों को प्रवाहित नहीं करना चाहिए। धुआँ रोकने के लिए यह सुगम उपाय है कि कल-कारखाने ऐसे स्थानों पर लगाएँ जायँ जहाँ जनसंख्या अधिक न हो।

**उपसंहार—**उपर्युक्त उपायों से हम वातावरण को शुद्ध बनाये रख सकते हैं। पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या सारे विश्व में है। इससे कोई भी देश या क्षेत्र बच नहीं सकता, अतः इस समस्या को सामूहिक रूप से सुलझाने का प्रयत्न करना चाहिए। शासन द्वारा इस दिशा में जो प्रयास किये जा रहे हैं, उनमें हमें भी पूरी सामर्थ्य के साथ सहायता करनी चाहिए। हम गरीब देश और प्रदेश के निवासी हैं। पर्यावरण-प्रदूषण के महँगे कार्यक्रमों पर चलना हमारे लिए सरल नहीं है। यदि इन कार्यक्रमों के उत्पादन-पक्ष का समावेश कर लें तो फिर हमारे लिए वह भी सुगम हो जायेगा।

## 2. विज्ञान : वरदान है या अभिशाप

विज्ञान आज ईश्वर की भाँति सर्वव्यापी हो गया है। मानव जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं, कोई ऐसा कोना नहीं, जहाँ विज्ञान न हो। मानव सुख-सुविधाओं के लिए विज्ञान ने क्या नहीं किया। मनोरंजन के सुलभ साधन– रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, सिनेमा, ग्रामोफोन ये सभी उपकरण विज्ञान की ही देन हैं। विज्ञान की बदौलत आज मानव जीवन एक रंगीन कल्पनाओं का सुनहरा संसार बन गया है। काल की दाढ़ में उलझे-कराहते रोगी के लिए विज्ञान नव-जीवन का वरदान लेकर प्रकट हुआ है। चिकित्सा के एक-से-एक साधन विज्ञान उपलब्ध कराता है। शरीर का एक-एक अंग यहाँ तक कि हृदय और आँख तक भी विज्ञान के सहारे प्रत्यारोपित किये जा रहे हैं। अब तो परखनली के सहारे सृष्टि सर्जना का भी प्रयास किया जा रहा है और शव में भी प्राण फूँकने के लिए वैज्ञानिक प्रयत्नशील हैं।

**विज्ञान वरदान है—**आधुनिक विज्ञान ने मानव-सेवा के लिए अनेक प्रकार के साधन जुटा दिए हैं। पुरानी कहानियों में वर्णित अलादीन का चिराग आज मामूली और तुच्छ जान पड़ता है। अलादीन के चिराग का दैत्य जो काम करता था, उन्हें विज्ञान बड़ी सरलता से कर देता है। रातों-रात महल बनाकर खड़ा कर देना, आकाश-मार्ग से उड़कर दूसरे स्थान पर चले जाना, शत्रु के नगरों को मिनटों में बरबाद कर देना ऐसे ही कार्य हैं। यथा— विज्ञान मानव जीवन के लिए महान वरदान सिद्ध हुआ है। उसकी वरदायिनी शक्ति ने मानव को अपरिमित सुख-समृद्धि प्रदान की है।

**( क ) परिवहन के क्षेत्र में—**पहले लम्बी यात्राएँ दुरूह स्वप्न-सी लगती थी; किन्तु आज रेलों, मोटरों और वायुयानों ने लम्बी यात्राओं को अत्यन्त सुगम व सुलभ कर दिया है। पृथ्वी ही नहीं, आज के वैज्ञानिक साधनों के द्वारा मनुष्य ने चन्द्रमा पर भी अपने कदमों के निशान बना दिये हैं।

**( ख ) संचार के क्षेत्र में—**टेलीफोन, टेलीग्राम, टेलीप्रिन्टर आदि द्वारा क्षण भर में सन्देश पहुँचाये जा सकते हैं। रेडियो और टेलीविजन द्वारा कुछ ही पलों में एक समाचार विश्व भर में फैलाया जा सकता है।

**( ग ) औद्योगिक क्षेत्र में—**भारी मशीनों के निर्माण ने बड़े-बड़े कल-कारखानों को जन्म दिया है, जिससे श्रम, समय और धन की बचत के साथ-साथ प्रचुर मात्रा में उत्पादन सम्भव हुआ है। इससे विशाल जनसमूह को आवश्यक वस्तुएँ सस्ते मूल्य पर उपलब्ध करायी जा सकती हैं।

**( घ ) कृषि के क्षेत्र में—**ट्रैक्टरों, ट्यूबवेलों, रासायनिक खाद एवं बीजों की नयी-नयी किस्मों ने कृषि-उत्पादन को बहुत बढ़ाया है, जिससे विश्व की बढ़ती जनसंख्या का पेट भरना संभव हो सका है।

**( ङ ) शिक्षा के क्षेत्र में—**मुद्रण-यन्त्रों के आविष्कार ने बड़ी संख्या में पुस्तकों का प्रकाशन सम्भव बनाया है, जिससे पुस्तकें सस्ते मूल्य पर मिल सकी हैं। इसके अतिरिक्त समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ आदि भी मुद्रण-क्षेत्र में हुई क्रान्ति के फलस्वरूप घर-घर पहुँचकर लोगों का ज्ञानवर्द्धन कर रही हैं। आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि की सहायता से शिक्षा के प्रसार में बड़ी सहायता मिली है। कम्प्यूटर के विकास ने तो इस क्षेत्र में क्रान्ति ला दी है।

**( च ) मनोरंजन के क्षेत्र में—**चलचित्र, आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि ने मनोरंजन को सस्ता और सुलभ बना दिया है। वी0 सी0 आर0, ग्रामोफोन, टेपरिकार्डर आदि इस दिशा में और सहायक सिद्ध हुए हैं।

**( छ ) चिकित्सा के क्षेत्र में—**चिकित्सा के क्षेत्र में तो विज्ञान वास्तव में वरदान सिद्ध हुआ है। आधुनिक चिकित्सा-पद्धति इतनी विकसित हो गयी है कि अन्धों को आँखें और अपंग को अंग मिलना अब असम्भव नहीं लगता। कैंसर, टी0 बी0, हृदयरोग जैसे भयंकर और प्राणघातक रोगों पर विजय पाना विज्ञान के माध्यम से ही सम्भव हुआ है।

**( ज ) खाद्यान्न के क्षेत्र में**—आज हम अन्न के मामले में आत्म-निर्भर होते जा रहे हैं; इसका श्रेय आधुनिक विज्ञान को ही है। विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, कीटनाशक दवाओं, खेती के आधुनिक साधनों तथा जल-सम्बन्धी कृत्रिम व्यवस्था ने खेती को सरल व लाभदायक बना दिया है।

**( झ ) दैनिक जीवन में**—हमारे दैनिक जीवन का प्रत्येक कार्य विज्ञान पर आधारित है। विद्युत हमारे जीवन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन गयी है। बिजली के पंखे, गैस, स्टोव, फ्रिज आदि के निर्माण ने मानव को सुविधापूर्ण जीवन का वरदान दिया है। इन आविष्कारों से समय, शक्ति और धन की पर्याप्त बचत हुई है।

विज्ञान ने हमारे जीवन को इतना अधिक परिवर्तित कर दिया है कि यदि दो सौ वर्ष पूर्व का कोई व्यक्ति हमें देखे, तो यही समझे कि हम स्वर्ग में रह रहे हैं। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति न होगी कि भविष्य का विज्ञान मृत व्यक्ति को भी जीवनदान दे सकेगा। इसलिए विज्ञान को वरदान न कहा जाय तो क्या कहा जाय?

**वैज्ञानिक अभिशाप**—वैज्ञानिक अभिशाप के दो रूप हैं—एक तो प्रत्यक्ष रूप है, जो विध्वंसकारी अस्त्र-शस्त्रों से सम्बन्धित है। टैंक, डायनामाइट, राकेट बम, परमाणु बम, हाइड्रोजन बम आदि ऐसे अस्त्र हैं, जो पलक झपकते ही लाखों जीवों का संहार कर सकते हैं। इन बमों के विस्फोट से वायुमण्डल भी दूषित हो जाता है, जिससे अनेक रोग पैदा हो जाते हैं।

वैज्ञानिक अभिशाप के अप्रत्यक्ष रूप के अन्तर्गत कला और संस्कृति का ह्रास होता है। वैज्ञानिक आविष्कारों की बदौलत अनेक प्रकार की मशीनें तैयार हुई हैं, जो कम व्यय, थोड़े श्रम और अल्प समय में अधिक-से-अधिक मात्रा में वस्तुओं को तैयार कर देती हैं । इस प्रकार श्रमिक की निजी कला का ह्रास हो जाता है। उनकी रोजी-रोटी पर भी अप्रत्यक्ष हानिकारक प्रभाव पड़ता है। देश में विलासिता की वृद्धि होती जा रही है। मनुष्य की आत्मनिर्भरता समाप्त हो जाती है। वह मशीनों का गुलाम हो जाता है। दूसरी ओर श्रमिकों में बेकारी तो बढ़ती है, छोटे-छोटे उद्योग-धन्धे समाप्त हो जाते हैं।

**विज्ञान वरदान या अभिशाप**—विज्ञान के विषय में उक्त दोनों दृष्टियों पर विचार करने के बाद यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है कि एक ओर विज्ञान हमारे कल्याण का उपासक है तो दूसरी ओर विनाश का कारण भी। किन्तु सारे विनाश के लिए विज्ञान को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। विज्ञान तो एक शक्ति है, जिसका उपयोग अच्छे और बुरे—दोनों तरह के कार्यों के लिए किया जा सकता है। यह एक तलवार है, जिससे शत्रु का गला भी काटा जा सकता है और मूर्खता से अपना भी। विनाश करना विज्ञान का दोष नहीं है, अपितु मनुष्य के असंस्कृत मन का दोष है।

यदि मनुष्य अपनी प्रवृत्तियों को रचनात्मक दिशा में ढाल दे तो विज्ञान एक बड़ा वरदान है; किन्तु जब तक मनुष्य मानसिक विकास की उस सीढ़ी पर नहीं पहुँचता, तब तक विज्ञान से जितना विनाश होगा, उसे अभिशाप ही समझा जाएगा।

## 3. कम्प्यूटर की शैक्षिक उपयोगिता

वास्तव में कम्प्यूटर ऐसे यान्त्रिक मस्तिष्क का रूपात्मक और समन्वयात्मक योग तथा गुणात्मक घनत्व है, जो तीव्रतम गति से न्यूनतम समय में त्रुटिहीन गणना कर सके। मानव सदा से ही अपनी गणितीय गणनाओं के लिए गणना-यन्त्रों का प्रयोग करता रहा है। आज तो अनेक प्रकार के जटिल गणना-यन्त्र बना लिए गये हैं, जो बहुत जटिल गणनाओं का परिकलन अपने-आप कर लेते हैं। इन सबमें सर्वाधिक तीव्र, शुद्ध एवं सबसे उपयोगी गणना करने वाला यन्त्र कम्प्यूटर है। चार्ल्स बेवेज नामक व्यक्ति ने 19वीं शताब्दी के आरम्भ में पहला कम्प्यूटर बनाया। यह कम्प्यूटर लम्बी-लम्बी गणनाएँ कर उनके परिणामों को मुद्रित कर देता था। धीरे-धीरे विकसित होकर आज कम्प्यूटर स्वयं गणनाएँ करके जटिल-से-जटिल समस्याओं को मिनटों में हल कर देता है, जिसे करने के लिए मनुष्य को कदाचित कई दिन अथवा महीने लग जाएँ। कम्प्यूटर से की जाने वाली गणनाओं के लिए एक विशेष भाषा में निर्देश तैयार किये जाते हैं। इन निर्देशों और सूचनाओं को कम्प्यूटर का 'प्रोग्राम' कहा जाता है। यदि कम्प्यूटर से प्राप्त होने वाला परिणाम अशुद्ध है तो उसका तात्पर्य यह है कि उसके 'प्रोग्राम' में कहीं-न-कहीं त्रुटि रह गयी, क्योंकि कम्प्यूटर कोई गलती कर ही नहीं सकता। कम्प्यूटर का केन्द्रीय मस्तिष्क अपने सारे काम दो अंगों या संकेतों की गणितीय भाषा में ही करता है। अक्षरों या शब्दों को भी दो संकेतों की इस मशीनी भाषा में बदला जा सकता है। इस तरह अब शब्दों या पाठों का अथवा पूरी पाठ्य-पुस्तकें कम्प्यूटर के द्वारा छापी जा सकती हैं।

**कम्प्यूटर का प्रयोग**—कम्प्यूटर आज मानव-मस्तिष्क पर पूरी तरह छा गया है। बड़े-बड़े व्यवसाय, तकनीकी संस्थान और महत्त्वपूर्ण संस्थानों में कम्प्यूटर का प्रयोग मानव-मस्तिष्क के रूप में किया जा रहा है। आज कम्प्यूटर की सहायता से सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं और सूचनाएँ भेजी जा सकती हैं।

बड़े-बड़े बैंकों में खातों के रख-रखाव के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा रहा है। टंकण एवं प्रकाशन के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। दूर-संचार के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है। वास्तुशिल्प एवं डिजाइनिंग में भी

कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इसके द्वारा डिजाइनें तैयार की जा सकती हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान में भी कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। औद्योगिक क्षेत्र के भी कार्य-संचालन में कम्प्यूटर का विशेष योगदान है। कम्प्यूटर का आविष्कार युद्ध के एक साधन के रूप में भी किया गया है। एटम बम की गणना के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है।

वर्तमान समय में कम्प्यूटर का प्रयोग परीक्षाफल के निर्माण, मौसम की जानकारी, चिकित्सा क्षेत्र, चुनाव-कार्य आदि में भी किया जाता है।

**कम्प्यूटर और मानव-मस्तिष्क**—कम्प्यूटर के मस्तिष्क का निर्माण मानव-बुद्धि ने किया है। यह बात नितांत सत्य है कि कम्प्यूटर समस्याओं को मानव-मस्तिष्क की अपेक्षा बहुत कम समय में हल कर सकता है। फिर भी वह एक यन्त्र है जो संवेदनाओं, रुचियों तथा चिन्तनों से रहित है। यह केवल निर्देशित कार्यों को ही करता है। वह कोई निर्णय स्वयं नहीं ले सकता और न ही कोई नवीन बात सोच सकता है। यह सभी मानवीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम है, परन्तु मानव-मस्तिष्क की बराबरी नहीं कर सकता।

**उपसंहार**—वर्तमान कम्प्यूटर युग में प्रवेश करके हमने पूर्णरूप से अपने को कम्प्यूटर के हवाले कर दिया है। कम्प्यूटर हमें बोलना, व्यवहार करना, अपने जीवन को जीना, मित्रों से मिलना और उनके विषय में ज्ञान प्राप्त करना आदि सब कुछ सिखायेगा। इसका अभिप्राय यह हुआ कि हम अपने प्रत्येक निर्णय को कम्प्यूटर से पूछने पर विवश हो जायेंगे। किन्तु कम्प्यूटर में जो कुछ भी एकत्रित किया गया है, वह आज के असाधारण बुद्धिजीवियों की देन है।

अतः स्पष्ट है कि वर्तमान युग में कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

## 4. मेरे प्रिय साहित्यकार (लेखक) : मुंशी प्रेमचन्द

मुंशी प्रेमचन्द की दृष्टि में सब समान थे। वे दीन-दुखियों के पक्षधर, कृषकों के मित्र, अन्याय के विरोधी, शोषण के शत्रु और साहित्य के पुजारी थे। प्रेमचन्द का जन्म वाराणसी के निकट लमही गाँव में 31 जुलाई, 1880 ई. को हुआ था। निरन्तर साहित्य-सेवा करते हुए भारत की मुक्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हुए उपन्यास-सम्राट प्रेमचन्द भारत के स्वाधीन होने से दस-ग्यारह वर्ष पहले 8 अक्टूबर, 1936 ई. को हमसे सदा के लिए विदा हो गए।

प्रेमचन्द के पुत्र **श्री अमृतराय** के शब्दों में—"क्या तो उनका हुलिया था। घुटनों से जरा ही नीचे तक पहुँचने वाली मिल की धोती, उसके ऊपर गाढ़े का कुर्ता और पैर में बन्ददार जूता; यानि कुल मिलाकर आप उसे देहकान ही कहते, गँवइया भुच्च, जो अभी गाँव से चला आ रहा है, जिसे कपड़ा पहनने की भी तमीज नहीं। यह भी नहीं मालूम कि धोती-कुर्ते पर चप्पल पहनी जाती है या पम्प। आप शायद उन्हें प्रेमचन्द कहकर पहचानने से ही इनकार कर देते।.........और अब भी मुझे उनके दोनों पैरों की कानी उँगली अच्छी तरह याद है, जो जूते को चीरकर बाहर निकली रहती थी। सादगी इससे आगे नहीं जा सकती।"

**कथा-साहित्य में आगमन**—हिन्दी कथा-साहित्य में प्रेमचन्द के आगमन से एक नये युग का सूत्रपात हुआ। उन्होंने हिन्दी कथा-साहित्य को नया आयाम दिया और उसे अनन्त विस्तारमय क्षितिजों का संस्पर्श कराया।

**विषय की विविधता**—प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में विषय की विविघता है। वे कहानी को मानव-जीवन का चित्रण मानते हैं। मानव-जीवन विविधतापूर्ण है, अतः उनकी कहानियों और उपन्यासों में जीवन के विविध मार्मिक पक्षों का उद्घाटन हुआ है। उनमें कहीं पर जीवन का सामाजिक पक्ष उभरा है, कहीं आर्थिक, कहीं नैतिक तो कहीं मनोवैज्ञानिक पक्ष दिखाई देता है।

**यथार्थ का चित्रण**—प्रेमचन्द शिव के उपासक थे। उनकी रचनाओं में यथार्थ जीवन का चित्रण हुआ है; किन्तु जीवन के आदर्श रूप की ओर मुड़ती हुई ये रचनाएँ हमारे मन पर मंगलमय प्रभाव छोड़ती हैं। इस प्रकार उनकी रचनाएँ यथार्थ की पृष्ठभूमि पर प्रतिष्ठित होते हुए भी आदर्श की ओर उन्मुख हैं। यह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद उनकी रचनाओं की अपनी विशेषता कही जा सकती है।

**शाश्वत जीवन-मूल्य**—प्रेमचन्द शाश्वत जीवन-मूल्यों के लेखक थे। उनकी धारदार दृष्टि ने जीवन की वास्तविकता को देखा और परखा था। उन्होंने पराधीनता की कठोरता को देखा और भोगा था। उनका साहित्य इन परिस्थितियों और अनुभवों का सच्चा दस्तावेज है। जिन जीवन-मूल्यों को प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में उद्घाटित किया है, वे आज भी हमारे समाज में पूर्ण रूप से मूल्यवान हैं।

**देश की संस्कृति पर आधारित दृष्टिकोण**—प्रेमचन्द की सम्पूर्ण रचनाएँ भारतीयता से ओत-प्रोत हैं। उनके साहित्य में स्वतन्त्रतापूर्व भारतीय परिवेश की जीती-जागती झाँकी प्रस्तुत हुई है। उसमें सामाजिक जीवन के विविध रूप व व्यापक दृश्य आज भी ज्यों-के-त्यों बोलते-से दिखाई देते हैं। गाँधीजी ने देश की स्वाधीनता के लिए जिस विचार क्रान्ति की वकालत की थी, उसे प्रेमचन्द ने अपने साहित्य द्वारा विकसित किया। इस दृष्टि से प्रेमचन्द क्रान्तिद्रष्टा साहित्यकार कहे जा सकते हैं। वस्तुतः प्रेमचन्द हमारे युग के साहित्य-सुधाकर थे। उनकी प्रतिभा का पूर्ण आकलन कर पाना लगभग असम्भव है। उनकी महानता ऐसी है कि वे समय के प्रवाह के

साथ उत्तरोत्तर अग्रसर होने पर और अधिक जगमगाएँगे। उनके द्वारा रचित कृतियाँ मात्र हिन्दी साहित्य की ही नहीं, राष्ट्र की भी गौरव प्रतीक हैं।

## 5. मेरे प्रिय कवि (सुमित्रानन्दन पन्त)

सुमित्रानन्दन पन्त जी ने अपने शैशव की किलकारियाँ प्रकृति के आँचल में ही भरीं। उनका जन्म अल्मोड़ा नगर के कौसानी गाँव में 20 मई, 1900 ई. को हुआ था। उनके पिता का नाम पं. गंगादत्त एवं माता का नाम सरस्वती देवी था। परन्तु जन्म के कुछ समय बाद ही माता का देहान्त हो गया। उनके बचपन का नाम गुसाँई दत्त था। काशी के जयनारायण स्कूल से 1919 ई. में उन्होंने हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की और इलाहाबाद में म्योर सेन्ट्रल कालेज में प्रवेश लिया। 1921 ई. में गाँधीजी के आह्वान पर उन्होंने कालेज छोड़ दिया और साहित्य साधना में संलग्न हो गये। कविता लिखने का शौक उन्हें बचपन से ही रहा और इसकी प्रेरणा-स्रोत थी प्रकृति।

**रचनाएँ**—पन्तजी मूलतः कवि थे। उन्होंने कहानी, नाटक, निबन्ध पर भी लेखनी चलाई, किन्तु उधर उनका अधिक मन नहीं रमा। अन्ततः काव्य ही उनकी मूल साधना रही। वीणा, ग्रन्थि, पल्लव, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्ण-धूलि, स्वर्ण-किरण, युग-पथ, उत्तरा, अतिमा, रजत-रश्मि, चिदम्बरा, कला और बूढ़ा चाँद, रश्मिबन्ध, लोकायतन आदि उनके काव्य-ग्रन्थ हैं।

**काव्यगत विशेषताएँ**—पन्त जी की काव्यगत विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

**प्राकृतिक सौन्दर्य-चेतना**— पन्त जी की प्रकृति-सौन्दर्य-चेतना सर्वप्रथम हिमाच्छादित पर्वतमालाओं, बादलों, इन्द्रधनुष, नक्षत्र और सरिताओं की सुषमा देखकर सजग हुई और उनका कवि-हृदय आनन्द से भाव-विभोर हो उठा। यौवन के प्रथम चरण में उन्होंने किसी किशोरी के बाल-जाल में अपने लोचन उलझाने की आकांक्षा मन में प्रकट की थी, फिर भी वृक्षों की छाया को छोड़ प्रेयसि केशों में उलझना उन्हें स्वीकार नहीं हो सका—

**छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,**
**तोड़ प्रकृति से भी माया**
**बाले तेरे बाल जाल में,**
**कैसे उलझा दूँ लोचन।**

वास्तव में पन्तजी प्रकृति की सुकुमार भावनाओं के कवि हैं। उनका रहस्यवाद भी प्रकृति-सौन्दर्य से प्रभावित है।

**राष्ट्र-प्रेम की भावना**—पन्तजी के काव्य में प्रकृति-सौन्दर्य और युग-चेतना के साथ-साथ राष्ट्र-प्रेम की भावना भी विद्यमान है। कवि को देश से स्वाभाविक प्रेम है। भारत माता का सजीव चित्र देखिए—

**भारत माता ग्राम वासिनी।**
**तीस कोटि सन्तान नग्न, तन**
**अर्द्धक्षुधित शोषित निरस्त्र जन,**
**मूढ़ असभ्य अशिक्षित निर्धन,**
**नत मस्तक तरु तल निवासिनी।**

**भाषा-शैली**—पन्त जी की भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ीबोली है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया गया है, फिर भी भाषा में कोमलता और माधुर्य कूट-कूट कर भरा हुआ है। कहीं-कहीं फारसी और ब्रजभाषा के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। यत्र-तत्र सन्धि और लिंग के नियमों का उल्लंघन भी भाषा में दिखाई पड़ता है।

**रस-छन्द-अलंकार**—पन्तजी के प्रेमात्मक काव्य में शृंगार और प्रगतिवादी रचनाओं में करुण रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। यद्यपि पन्त जी की रचनाओं में संयोग और वियोग दोनों रसों का वर्णन है, किन्तु संयोग की अपेक्षा वियोग-चित्रण में इनको विशेष सफलता मिली।

पन्तजी ने मात्रिक छन्दों का विशेष प्रयोग किया है। काव्य में संगीतात्मकता और कोमलता लाने के लिए उन्होंने आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया है।

उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सादृश्यमूलक अलंकार पन्तजी को विशेष प्रिय हैं; किन्तु उनका प्रयोग किसी सजावट के आग्रह से नहीं, बल्कि स्वाभाविक रूप से हुआ है। इसके अतिरिक्त अनुप्रास, सन्देह, उल्लेख आदि अलंकारों का भी प्रयोग काव्य में देखने को मिल जाता है।

**उपसंहार**—भाव और कला दोनों दृष्टियों से विचार करने पर यह सिद्ध होता है कि पंतजी आधुनिक युग के प्रतिनिधि कवि हैं। इनके काव्य में विचारों की गहनता के साथ-साथ भावों की व्यंजना इतनी कोमल और कमनीय पदावली में हुआ है कि यह निर्णय कर

पाना कठिन हो जाता है कि पन्त जी कवि अधिक हैं अथवा विचारक या शिल्पी। सचमुच ही पन्त जी प्रकृति के सुकुमार कवि हैं, युग के महान चिन्तक हैं और काव्य के सुन्दर शब्द-शिल्पी हैं। उनके काव्य का नाद-सौन्दर्य अत्यन्त ही सुन्दर और आकर्षक है।

## 6. भारतीय किसानों की समस्याएँ और समाधान

**प्रस्तावना–**ग्राम भारतीय सभ्यता के प्रतीक हैं। भोजन एवं अन्य आवश्यकताएँ गाँव ही पूर्ण करते हैं। भारत का औद्योगिक स्वरूप भी ग्रामीण कृषकों पर ही निर्भर है। वस्तुतः भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल आधार ग्राम ही है। यदि गाँवों का विकास होगा तभी देश भी समृद्ध होगा।

**किसानों की सामाजिक समस्याएँ–** विकास के इस युग में भी गाँवों में शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन तथा परिवहन के साधनों की समुचित व्यवस्था नहीं हो सकी है, जिसके कारण भारतीय किसानों को अनेक परेशानियाँ सहनी पड़ती हैं। वह साधनों के अभाव में अपने बच्चों के लिए शिक्षा का प्रबन्ध भी नहीं कर पा रहा है, जो उसके पिछड़ने का सबसे बड़ा कारण है। भारतीय किसान अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही पूरा जीवन प्रयास करता रहता है। इसी कारण वह आधुनिक परिवेश से अनभिज्ञ ही रहता है।

**आर्थिक समस्याएँ–**गाँवों के अधिकांश किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। उसकी उपज का उचित मूल्य उसे नहीं मिल पाता। धन के अभाव में वह अच्छी पैदावार भी नहीं ले पाता, जिसका प्रभाव सम्पूर्ण राष्ट्र के विकास पर पड़ता है। गाँवों में निर्धनता, भुखमरी और बेरोजगारी अपनी चरम सीमा पर है। कृषकों को कृषि से सम्बन्धित जानकारी सुगमता से सुलभ नहीं हो पाती।

**वर्तमान स्थिति–** गाँवों में अभी भी पक्की सड़कों का अभाव है। शिक्षा, स्वास्थ्य तथा मनोरंजन के साधनों का उपयुक्त प्रबन्ध नहीं है। बेरोजगारी अपने चरम पर है तथा संचार के समुचित साधनों, पेय-जल, उपयुक्त निर्देशन एवं परामर्श सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव है।

**कृषि की स्थिति–** देश के कुल निर्यात में कृषि का योगदान लगभग 18 प्रतिशत है। अनाज की प्रति व्यक्ति उपलब्धता सन् 2000 ई. में प्रतिदिन 467 ग्राम तक पहुँच गई, जबकि पाँचवें दशक की शुरुआत में यह प्रति व्यक्ति 395 ग्राम प्रतिदिन थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् निरन्तर कृषि उत्पादन में वृद्धि दर्ज की गई है, लेकिन वर्ष 2002 में देश के अधिकांश हिस्सों में सूखा पड़ा जिसके कारण 2001-02 ई. के लिए कृषि उत्पादन के लिए लगाए गये सारे अनुमान बेकार हो गए। यद्यपि धान की पूरी फसल नष्ट हो गई, फिर भी आज हम खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हैं।

**विज्ञान का योगदान–** जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। पहले इतनी बड़ी जनसंख्या के लिए अन्नपूर्ति करना असम्भव ही प्रतीत होता था, परन्तु आज हम अन्न के मामले में आत्म-निर्भर हो गए हैं। इसका श्रेय आधुनिक विज्ञान को ही है। विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, बुआई-कटाई के आधुनिक साधनों, कीटनाशक दवाइयों तथा सिंचाई के कृत्रिम साधनों ने खेती को अत्यन्त सुविधापूर्ण एवं सरल बना दिया है।

**नवीन योजनाएँ–** गाँव के विकास हेतु सरकार के द्वारा नवीन योजनाओं का शुभारम्भ किया जा रहा हैं। गाँवों में परिवहन, विद्युत, सिंचाई के साधन, पेयजल, शिक्षा आदि की व्यवस्था हेतु व्यापक स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। किसानों को उन्नत बीजों का प्रयोग करने के लिए विभिन्न योजनाओं के द्वारा प्रोत्साहित किया जा रहा है। आधुनिक कृषि यन्त्र खरीदने के लिए विभिन्न प्रकार के अनुदान दिए जा रहे हैं। किसानों के उत्थान के लिए राष्ट्रीय-कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना की गई है, जिसका उद्देश्य कृषि, पशुपालन, कुटीर तथा ग्रामोद्योग को आर्थिक सहायता देकर प्रोत्साहित करना है।

**राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक–** राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक का उद्देश्य कृषि, लघु उद्योगों, कुटीर तथा ग्रामोद्योगों, दस्तकारियों और ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहन देने के लिए ऋण उपलब्ध कराना था ताकि ग्रामीण क्षेत्रों को खुशहाल बनाया जा सके।

**कृषि अनुसंधान और शिक्षा–** कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग की स्थापना कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत 1973 ई. में की गई थी। यह विभाग कृषि, पशुपालन और मत्स्यपालन के क्षेत्र में अनुसंधान और शैक्षिक गतिविधियाँ संचालित करने के लिए उत्तरदायी है। कृषि मंत्रालय के कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग के प्रमुख संगठन 'भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्' ने कृषि प्रौद्योगिकी के विकास, निवेश सामग्री तथा खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता लाने के लिए प्रमुख वैज्ञानिक जानकारियों को आम लोगों तक पहुँचाने के मामले में प्रमुख भूमिका निभाई है।

## 7. बेरोजगारी की समस्या और समाधान

बेरोजगारी का अभिप्राय उस स्थिति से है, जब कोई योग्य तथा काम करने के लिए इच्छुक व्यक्ति प्रचलित मजदूरी की दरों पर कार्य करने के लिए तैयार हो और उसे काम न मिलता हो। बालक, वृद्ध, रोगी, अक्षम एवं अपंग व्यक्तियों को बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता क्योंकि जो व्यक्ति काम करने के इच्छुक नहीं हैं और परजीवी हैं वे बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं आते।

बेरोजगारी किसी भी देश अथवा समाज के लिए अभिशाप होती है। इससे एक ओर निर्धनता, भुखमरी तथा मानसिक अशान्ति फैलती है तो दूसरी ओर युवकों में आक्रोश तथा अनुशासनहीनता को भी प्रोत्साहन मिलता है। चोरी, डकैती, हिंसा, अपराध-वृत्ति एवं आत्महत्या आदि अनेक समस्याओं के मूल में एक बड़ी सीमा तक बेरोजगारी ही जिम्मेदार है। बेरोजगारी एक ऐसा भयंकर विष है, जो सम्पूर्ण देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन को दूषित कर देता है।

हमारे देश में बेरोजगारी के अनेक कारण हैं। इनमें से कुछ प्रमुख कारणों का उल्लेख निम्नलिखित है—

1. बेरोजगारी का प्रमुख कारण है—जनसंख्या में तीव्रगति से वृद्धि। विगत कुछ दशकों में भारत में जनसंख्या का विस्फोट हुआ है। हमारे देश की जनसंख्या में प्रति वर्ष लगभग 2.5% की वृद्धि हो जाती है; जबकि इस दर से बेकार हो रहे व्यक्तियों के लिए हमारे देश में रोजगार की व्यवस्था नहीं है।

2. भारतीय शिक्षा सैद्धान्तिक अधिक है। यह व्यावहारिकता से शून्य है। इसमें पुस्तकीय ज्ञान पर ही विशेष ध्यान दिया जाता है; फलतः यहाँ के स्कूल-कॉलेजों से निकलने वाले छात्र दफ्तर के लिपिक ही बन पाते हैं। वे निजी उद्योग-धन्धे स्थापित करने योग्य नहीं बन पाते हैं।

3. विगत पंचवर्षीय योजनाओं में देश के औद्योगिक विकास के लिए प्रशंसनीय कदम उठाए गए हैं, किन्तु समुचित रूप से देश का औद्योगिकीकरण नहीं किया जा सकता है; अतः बेकार व्यक्तियों के लिए रोजगार नहीं उपलब्ध हो पा रहे हैं।

4. हमारे देश में कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी है। अतः उद्योगों के सफल संचालन के लिए विदेशों से प्रशिक्षित कर्मचारी बुलाने पड़ते हैं। इस कारण से देश के कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों के बेकार हो जाने की भी समस्या हो जाती है।

इनके अतिरिक्त मानसून की अनियमितता, भारी संख्या में शरणार्थियों का आगमन, मशीनीकरण के फलस्वरूप होनेवाली श्रमिकों की छँटनी, श्रम की माँग एवं पूर्ति से असन्तुलन, आर्थिक साधनों की कमी आदि से भी बेरोजगारी में वृद्धि हुई है। देश को बेरोजगारी से उबारने के लिए इनका समुचित समाधान नितान्त आवश्यक है।

**उपाय**—बेरोजगारी को दूर करने में निम्नलिखित उपाय कारगर सिद्ध हो सकते हैं—

1. जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि बेरोजगारी का मूल कारण है, अतः इस पर नियन्त्रण बहुत आवश्यक है। जनता को परिवार-नियोजन का महत्त्व समझाते हुए उसमें छोटे परिवार के प्रति चेतना जाग्रत करनी चाहिए। 2. शिक्षा को व्यवसाय-प्रधान बनाकर शारीरिक श्रम को भी उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए। 3. कुटीर उद्योगों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। 4. देश में व्यापक स्तर पर औद्योगीकरण किया जाना चाहिए। इसके लिए विशाल उद्योगों की अपेक्षा लघुस्तरीय उद्योगों को अधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। 5. मुख्य उद्योगों के साथ-साथ सहायक उद्योगों का भी विकास किया जाना चाहिए, जैसे—कृषि के साथ पशुपालन तथा मुर्गीपालन आदि। सहायक उद्योगों का विकास करके ग्रामीणजनों को बेरोजगारी से मुक्त कराया जा सकता है। 6. देश में बेरोजगारी को दूर करने के लिए राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी विविध कार्यों का विस्तार किया जाना चाहिए। सड़कों का निर्माण, रेल-परिवहन का विकास, पुल-निर्माण तथा वृक्षारोपण जैसे कार्यों पर बल दिया जाना चाहिए।

**उपसंहार**—हमारी सरकार बेरोजगारी उन्मूलन के लिए जागरूक है और इस दिशा में उसने महत्त्वपूर्ण कदम भी उठाए हैं। परिवार नियोजन, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, कच्चा माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की सुविधा, कृषि-भूमि की हदबन्दी, नये-नये उद्योगों की स्थापना, अप्रेण्टिस (प्रशिक्षु) योजना, प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना आदि अनेकानेक कार्य ऐसे हैं, जो बेरोजगारी को दूर करने में एक सीमा तक सहायक सिद्ध हुए हैं।

## 8. आतंकवाद : समस्या और समाधान

**आतंकवाद का अर्थ**—आतंकवाद पूर्णतया अनर्थकारी होते हुए भी अर्थ से भारी कद का है, जिसे क्षेत्रवाद, जातिवाद, मजहबवाद और सम्प्रदायवाद का बड़ा भाई कहा जा सकता है। तात्पर्य यह है कि इन सभी वादों का वीभत्स रूप आतंकवाद है। वस्तुतः आतंकवाद एक ऐसी पशु-प्रवृत्ति है, जिसकी न कोई जाति है, न धर्म है, न समाज और न ही कोई राष्ट्र है। यह तो विघटनकारी तत्त्वों

द्वारा स्वार्थान्ध होकर किया गया सामूहिक हिंसात्मक प्रयास है, जिसमें राष्ट्रदोह के प्रति राग और देशभक्ति के प्रति द्वेषभाव मुख्य रूप से रहता है।

**आतंकवाद के कारण और उद्देश्य**—अर्थ के अन्तर्गत प्रस्तुत आतंकवाद के स्वरूप के आधार पर इसके कारण और उद्देश्य स्पष्ट होते हैं। आतंकवादी व्यक्ति मात्र एक माध्यम होता है। उसके हाथ और हथियार किसी दूसरे के होते हैं। आतंकवादी तो लक्ष्यहीन होता है। उसे दिशा भी दूसरा व्यक्ति ही बताता है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रगति की दौड़ में प्रत्येक राष्ट्र एक-दूसरे के प्रगति-पथ पर पत्थर रखना चाहता है। आतंकवाद भी एक पत्थर ही है जो जाति, धर्म, भाषा तथा क्षेत्र आदि को माध्यम बनाकर प्रगति-पथ पर गतिरोधक बनाकर रखा जाता है। गतिरोधक पूरे देश में अस्थिरता पैदा कर देता है, जिसके पीछे एक घृणित और कुत्सित महत्त्वाकांक्षा होती है।

**भारत में आतंकवाद**— आतंकवाद की आग से सर्वाधिक पीड़ित देश भारत है। हालत यहाँ तक आ पहुँची है कि 13 दिसम्बर, 2001 को हमारी संसद पर भी हमला हुआ। इसमें पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आई. एस. आई. के हाथ होने की पुष्टि हुई है। ऐसा ही हमला जम्मू-कश्मीर विधान सभा पर भी हो चुका है। हमारे भारत में आंतकवाद का सिर दिनों-दिन उठता ही जा रहा है। पंजाब और असम इस संत्रास से कुछ समय पहले ही बाहर आये हैं। कश्मीर की स्थिति ऐसी है कि वह अपनी व्यथा-कथा को सुना नहीं पा रहा है, क्योंकि उसके मुँह पर मात्र अपने देश के देशद्रोहियों के हाथ नहीं हैं, अपितु कई विदेशी देशों के भी हाथ हैं। आतंकवाद की लगी आग में वर्षों से जल रहे पंजाब की पीड़ा अभी शान्त भी नहीं हुई थी कि भारत का एक कोना कश्मीर कराह उठा और कहने लगा कि मुझ पर मेरे अपनो के ही खंजर भोंके जा रहे हैं। उस दिन तो कश्मीर के मुँह पर कालिख ही वहाँ के कुछ आतंकवादियों ने पोत दी, जब उन लोगों ने केन्द्रीय गृहमंत्री की युवा अविवाहिता पुत्री का अपहरण कर उसकी रिहाई के बदले उन कैदी आतंकवादियों को रिहा करा लिया, जो अपने मुँह की कालिख कश्मीर के कपोल पर पोतने का प्रयास कर रहे थे। आज भी ऐसे कुछ कश्मीरी कुपुत्र हैं, जो खाते यहाँ का हैं और गाते पाकिस्तान का हैं। अपनी माँ को दूसरे के हाथों सौंपने की बात करने वाले कुपुत्रों को कश्मीर कभी माफ नहीं कर सकता। असम आज भी बोडो आन्दोलन की आग में झुलस रहा है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि भारत में आतंकवाद दिनों-दिन पूरे जोर से आगे बढ़ रहा है।

**आतंकवाद के अन्त का उपाय**— आतंकवाद के अन्त के लिए हमें युद्धस्तर पर जूझना पड़ेगा। आज सद्भावना के प्रसार की आवश्यकता है। युवा पीढ़ी जो भटकाव के रास्ते पर है, उन्हें विश्वास में लिया जाय और उनमें देशभक्ति की भावना का प्रचार-प्रसार किया जाय। आतंकवादियों से किसी प्रकार का समझौता राष्ट्र के लिए घातक सिद्ध होगा। उन्हें देश-द्रोह के आरोप में मृत्युदण्ड दे दिया जाना चाहिए। प्रशासन को चुस्त-दुरुस्त बनाया जाय और समुचित अधिकार दिये जायें, जिससे वे हर परिस्थिति में स्वयं निर्णय ले सकें। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद को बढ़ावा देने वाले राष्ट्रों के विरुद्ध संघर्ष किया जाय और उनकी निन्दा हो। आतंकवाद के आश्रयदाता पर भी देशद्रोह का आरोप लगाकर कड़ी सजा दी जानी चाहिए। भारत यदि यह समझता है कि राजनीतिक स्तर पर आतंकवाद की समस्या का समाधान है, तो उसे इसके लिए आगे बढ़ना चाहिए; लेकिन यह आवश्यक है कि समझौता 'सर कटा सकते हैं लेकिन सर झुका सकते नहीं' के सिद्धान्त से प्रेरित हो। ऐसा समझौता कठिन हो सकता है, किन्तु असम्भव नहीं।

**उपसंहार**—आतंकवाद और भारत क्रमशः मृत्यु और जीवन जैसे एक-दूसरे के सामने खड़े हैं। अतः प्रत्येक जनता का उत्तरदायित्व है कि वह इसको समाप्त करने के लिए अन्त तक संघर्ष करे। किसी देश में अशान्ति और आतंक फैलाना उस देश में अस्थिरता की आग फैलाना है। इससे शत्रुओं को तो बल मिलता ही है, धन-जन की भी बहुत हानि होती है। प्रगतिवादी योजनाओं की प्रगति के पाँव रुक जाते हैं। प्रशासन का पूरा समय आतंकवाद से निपटने में लग जाता है। अतः यदि हम चाहते हैं कि हम और हमारा भारत शान्तिमय रहे, अहिंसा के पथ पर चले और अन्य बड़े देश की भाँति प्रगति के पथ पर चले, तो भारत के जन-जन का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वे आतंकवाद के विरुद्ध आवाज उठाएँ।

## 9. साहित्य समाज का दर्पण

**साहित्य का अर्थ**— साहित्य वह है, जिसमें हित की भावना निहित है। साहित्य मानव के सामाजिक सम्बन्धों को दृढ़ बनाता है; क्योंकि साहित्य में सम्पूर्ण मानव-जाति का हित निहित रहता है। साहित्य द्वारा साहित्यकार अपने भावों और विचारों को समाज में प्रसारित करता है, इस कारण उसमें सामाजिक जीवन स्वयं मुखरित हो जाता है।

**साहित्य और समाज का पारस्परिक सम्बन्ध**— साहित्य और समाज का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है। साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब है। साहित्य का सर्जन जन-जीवन के धरातल पर ही होता है। समाज की समस्त शोभा, उसकी श्रीसम्पन्नता और मान-मर्यादा साहित्य पर अवलम्बित है। सामाजिक शक्ति या सजीवता, सामाजिक अशान्ति या निर्जीवता, सामाजिक सभ्यता या असभ्यता का

निर्णायक एकमात्र साहित्य ही है। कवि एवं समाज एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं; अतः साहित्य से भिन्न कोई वस्तु नहीं है। यदि समाज शरीर है तो साहित्य उसका मस्तिष्क।

जातियों की क्षमता और सजीवता यदि कहीं प्रत्यक्ष देखने को मिल सकती है तो साहित्य रूपी दर्पण में। साहित्य हमारी जिज्ञासावृत्ति को शान्त करता है, ज्ञानपिपासा को तृप्त करता है और मस्तिष्क की क्षुधापूर्ति करता है। साहित्य के द्वारा ही हम अपने राष्ट्रीय इतिहास से, अपने देश की गौरव-गरिमा से, अपनी संस्कृति और सभ्यता से, अपने पूर्वजों के अनुभव से, विचारों एवं अनुसन्धानों से, अपने प्राचीन रीति-रिवाजों से, रहन-सहन और परम्पराओं से परिचय प्राप्त कर सकते हैं।

साहित्य हमारे अमूर्त अस्पष्ट भावों को मूर्तरूप देता है और उनका परिष्कार करता है। वह हमारे विचारों की गुप्त शक्ति को सक्रिय करता है। साथ ही साहित्य गुप्त रूप से हमारे सामाजिक संगठन और जातीय जीवन के विकास में निरन्तर योग देता रहता है। साहित्यकार हमारे महान विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए हम उन्हें अपने जातीय सम्मान और गौरव का संरक्षक मानकर यथेष्ट सम्मान प्रदान करते हैं। शेक्सपियर एवं मिल्टन पर अंग्रेजों को गर्व है, कालिदास, सूर एवं तुलसी पर हमें गर्व है। इस प्रकार साहित्य युग और परिस्थितियों की अभिव्यक्ति है। यह अभिव्यक्ति हृदय के माध्यम से होती है। कवि और साहित्यकार अपने युग को अपने आँसुओं से सींचते हैं, ताकि आनेवाली पीढ़ियाँ उसके मधुर फल का आस्वादन कर सकें।

**साहित्य पर समाज का प्रभाव—** साहित्य और समाज का ठीक वही सम्बन्ध है, जैसे आत्मा और शरीर का। जिस प्रकार बिना आत्मा के शरीर व्यर्थ है, ठीक उसी प्रकार बिना साहित्य के समाज का कोई अस्तित्व नहीं है। साहित्य के निर्माण में समाज का प्रमुख हाथ होता है। इसलिए समाज में होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर बराबर पड़ता रहता है। यदि कोई साहित्य सामाजिक परिवर्तनों से अछूता रह गया है तो निश्चय ही वह निष्प्राण है। उदाहरण के लिए यदि आधुनिक युग में कोई साहित्यकार 'शृंगार' की रचनाएँ अलापने लगे तो वह निश्चय ही आज के सामाजिक परिवर्तन से अछूता है और उसका साहित्य न तो युग का प्रतिनिधित्व कर सकने में समर्थ होगा और न भावी पीढ़ी को कोई नयी दिशा ही दे पायेगा।

**समाज पर साहित्य का प्रभाव—**एक ओर जहाँ साहित्य समाज से अपनी जीवनी शक्ति ग्रहण करता है, दूसरी ओर वह समाज के पूर्णतः बौद्धिक, मानसिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास के लिए दिशा-निर्देश करता है। साहित्य की छाया में समाज अपनी क्लान्ति और निराशा को दूर कर नवजीवन प्राप्त करता है। साहित्य से ही प्रेरणा लेकर समाज अपना भावी मार्ग निर्धारित करता है। समाज जहाँ युग-भावना में डूबा हुआ निष्क्रिय और निष्प्राण पड़ा रहता है, साहित्य उसमें युग-चेतना का स्वर भरता है, उसे जगाता है और उसे सारी परिस्थितियों से जूझने के लिए प्रोत्साहित करता है।

**उपसंहार—** इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी जाति अथवा समाज का साहित्य उस जाति अथवा समाज की शक्ति अथवा सभ्यता का द्योतक है। वह उसका प्रतिरूप, प्रतिच्छाया, प्रतिबिम्ब कहला सकता है। दूसरी ओर साहित्य अपने समाज को जीवनी शक्ति प्रदान करता है, उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। अतः साहित्य और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचन करने के उपरान्त साहित्य-सर्जना में विशेष सतर्कता रखने की आवश्यकता है। जो साहित्य समाज के लिए हितकारी न हो, जिससे समाज को कोई ठोस दिशानिर्देश न मिले, जिसमें समाज का वास्तविक स्वरूप प्रतिभासित न हो, वह साहित्य निश्चय ही साहित्य कहे जाने योग्य नही है।

## 10. जनसंख्या विस्फोट : समस्या और समाधान

**प्रस्तावना—**जिस देश को कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था, जहाँ कभी दूध की नदियाँ बहा करती थीं, उसी देश के अधिकांश बच्चों को शायद आज दूध के रंग का भी पता न हो। आज असंख्य लोगों को रहने के लिए घर, तन ढकने के लिए पर्याप्त वस्त्र और खाने के लिए भरपेट भोजन भी नहीं मिल पाता। आखिर क्यों? इसका एकमात्र कारण है—जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि। जनसंख्या की इस अपार वृद्धि के कारण सम्पूर्ण देश की प्रगति अवरुद्ध हो रही है। भारतवर्ष में विश्व की जनसंख्या का छठा भाग निवास करती है। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष की जनसंख्या 68.38 करोड़ थी; जबकि सन् 1991 की जनगणना के अनुसार यह संख्या बढ़कर 84.39 करोड़ हो गई। मार्च, सन् 2001 तक यह आंकड़ा 1,02,70,15,247 तक पहुँच गई। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 1 अरब 21 करोड़ है। यद्यपि जनसंख्या किसी देश अथवा राज्य का प्रमुख तत्त्व है और उसके बिना किसी राज्य एवं जाति की कल्पना भी नहीं की जा सकती; किन्तु 'अति सर्वत्र वर्जयेत्'। जनसंख्या की वृद्धि का यह दानव आज सम्पूर्ण भारतवर्ष के सामने मुँह बाये खड़ा है, क्योंकि जिस गति से भारतवर्ष में जनसंख्या की वृद्धि हो रही है, वह अत्यधिक दुःखदायी है।

**भारतवर्ष में जनसंख्या-वृद्धि के कारण—**भारतवर्ष में जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि के कुछ विशेष कारण हैं, जिनमें बाल-विवाह, बहु-विवाह, दरिद्रता, मनोरंजन के साधनों का अभाव, गर्म जलवायु, अशिक्षा, रूढ़िवादिता, ग्रामीण क्षेत्रों में सन्तति-निरोध की सुविधाओं का कम प्रचार हो पाना, परिवार-नियोजन के नवीनतम साधनों की अनभिज्ञता एवं पुत्र की अनिवार्यता आदि मुख्य कारण हैं।

**जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि से हानि**—भारत की वर्तमान आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं का मुख्य कारण बढ़ती हुई जनसंख्या है। 'ऋग्वेद' में कहा गया है—"**जहाँ प्रजा का आधिक्य होगा, वहाँ निश्चय ही दुःख एवं कष्ट की मात्रा अधिक होगी।**" यही कारण है कि आज भारत में सर्वत्र अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, निम्न जीवन-स्तर, सामाजिक कलह, अस्वस्थता एवं खाद्यान्न-संकट आदि अनेकानेक समस्याएँ निरन्तर बढ़ रही हैं। निश्चय ही जनसंख्या का यह विस्फोट भारत के लिए अभिशाप है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **माल्थस** का विचार है कि "जनसंख्या की वृद्धि गुणोत्तर गति से होती है, जबकि उत्पादन अंकगणितीय गति से।" **प्रो. कारसाण्डर्स** का अनुमान है कि "संसार की जनसंख्या में एक प्रतिशत प्रति वर्ष की गति से वृद्धि हो रही है।" यदि यह वृद्धि इसी गति से होती रही तो पाँच-सौ वर्ष पश्चात् मनुष्यों को पृथ्वी पर खड़े होने की जगह भी नहीं मिल पाएगी। इसी बात को प्रसिद्ध हास्य कवि **काका हाथरसी** ने अपनी विनोदपूर्ण शैली में इस प्रकार लिखा है—

**यदि यही रहा क्रम बच्चों के उत्पादन का,**
**तो कुछ सवाल आगे आएँगे बड़े-बड़े।**
**सोने को किंचित जगह धरा पर मिले नहीं,**
**मजबूरन हम तुम सब सोएँगे खड़े-खड़े।**

हमारे देशवासी जनसंख्या की वृद्धि से होने वाली हानियों के प्रति आज भी लापरवाह हैं। इतना ही नहीं, वे सन्तान को ईश्वर की देन मानते हुए उसके जन्म पर नियन्त्रण करना पाप मानते हैं। निश्चित ही जनसंख्या की वृद्धि का यदि यही क्रम रहा तो मानव-जीवन अत्यधिक संघर्षपूर्ण एवं अशान्त हो जाएगा।

भूतपूर्व प्रधानमन्त्री **श्रीमती इन्दिरा गांधी** ने जनसंख्या विस्फोट से होने वाली हानियों पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था कि "जनसंख्या के तीव्र गति से बढ़ते रहने पर योजनाबद्ध विकास करना, बहुत-कुछ ऐसी भूमि पर मकान खड़ा करने के समान है, जिसे बाढ़ का पानी बराबर बहाए ले जा रहा है।"

**परिवार नियोजन की उपयोगिता**—संसार के समस्त प्राणी अपने जीवन को सुखी एवं व्यवस्थित बनाना चाहते हैं। ऐसा तभी सम्भव है, जबकि व्यय का अनुपात आय के अनुकूल हो। व्यक्ति व्यय को तो नियन्त्रित कर सकता है, किन्तु आय की सीमाएँ होती हैं। यदि परिवार सीमित है तो व्यक्ति कम आय में भी अपने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई पर ध्यान दे सकता है और स्वयं को भी व्यवस्थित रख सकता है। परिवार सीमित रहे, इसके लिए आवश्यक है–परिवार नियोजन। बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियन्त्रण रखने का सर्वोत्तम साधन ब्रह्मचर्य का पालन है; किन्तु इस भौतिकवादी युग में इसका पूर्णतया पालन सम्भव प्रतीत नहीं होता। नियोजित परिवार के लाभ हमारे देशवासियों से छिपे नहीं हैं। 'छोटा परिवार सुखी परिवार' का सन्देश अब जन-जन का कण्ठहार बन गया है। परिवार नियोजन का चिह्न 'लाल तिकोन' है जो 'स्वास्थ्य, शिक्षा एवं समृद्धि' अथवा 'सुख, शान्ति और विकास' का प्रतीक है। यह चिह्न 'पति, पत्नी एवं बालक' का भी सूचक है। परिवार नियोजन से देश, समाज तथा व्यक्ति तीनों को ही लाभ है। परिवार नियोजन अपनाकर प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन सुख एवं शान्ति से व्यतीत कर सकेगा, उसके रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो सकेगा तथा वह अपने आश्रितों की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति करता हुआ उन्हें अधिक सुखी रख सकेगा। वास्तव में कम बच्चों वाले माता-पिता अपने सभी बच्चों की शिक्षा एवं उनके स्वास्थ्य का समुचित प्रबन्ध अवश्य कर सकते हैं। इस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने एवं निर्धनता के अभिशाप को दूर करने में परिवार-नियोजन का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

**पंचवर्षीय योजनाओं में परिवार-नियोजन की प्रगति**—प्रथम पंचवर्षीय योजनाओं में परिवार नियोजन कार्यक्रम केवल शहरी अस्पतालों तक ही सीमित रहा। केन्द्रीय सरकार ने 146 तथा राज्य सरकारों ने 205 परिवार नियोजन केन्द्र शहरों व गाँवों में स्थापित किए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन कार्यक्रम को गाँवों तक पहुँचाने की चेष्टा की गई। तृतीय पंचवर्षीय योजना में सरकार ने ग्रामीणों को परिवार नियोजन की आवश्यकता एवं उसके महत्त्व का ज्ञान कराकर उन्हें इस कार्यक्रम को अपनाने के लिए प्रेरित किया। चतुर्थ योजनाकाल में केन्द्रों की संख्या न बढ़ाकर पुराने केन्द्रों पर ही सुविधाएँ बढ़ाने का प्रयत्न किया गया। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन को राष्ट्रीय स्तर पर अत्यधिक महत्त्व देकर इस कार्यक्रम के तीव्र क्रियान्वयन हेतु परिवार नियोजन अपनाने वाले दम्पतियों को पुरस्कार आदि देकर प्रोत्साहित किया गया। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने जनसंख्या विस्फोट पर नियन्त्रण हेतु 'गर्भपात अधिनियम' भी बनाया, जिससे अनचाहे गर्भ से छुटकारा पाने को वैधानिक समर्थन प्राप्त हुआ। छठवीं, सातवीं तथा आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं में भी सरकार ने इस ओर विशेष ध्यान दिया। अब प्रत्येक गाँव में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोले जाएँगे और वहाँ परिवार नियोजन-सम्बन्धी पूर्ण सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँगी तथा जगह-जगह पर कैम्प लगाकर नवीन पद्धतियों के माध्यम से परिवार-नियोजन-कार्यक्रम में तीव्रता लाई जाएगी।

**जनसंख्या नियन्त्रण के उपाय**—जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के लिए कुछ उपाय निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं—

(1) बाल-विवाह एवं बहु-विवाह जैसी कुप्रथाओं पर रोक लगाई जाए।

(2) परिवार नियोजन कार्यक्रम का व्यापक प्रचार किया जाए।

(3) विवाह की आयु में वृद्धि करके लड़कियों के लिए न्यूनतम आयु 20 वर्ष एवं लड़कों के लिए 25 वर्ष निर्धारित की जाए।

(4) बच्चों की आयु में अन्तर रखने के लिए परिवार नियोजन सम्बन्धी सामग्री अपनाने की प्रेरणा दी जाए।

(5) अधिक बच्चों को जन्म देने वाले माता-पिता को हतोत्साहित किया जाए। इसके लिए उन्हें विभिन्न शासकीय सुविधाओं से वंचित रखा जाए, भले ही वे किसी भी वर्ग के हों।

**उपसंहार**—आज भारतवर्ष में वे कुप्रथाएँ समाप्त होती जा रही हैं जिनसे जनसंख्या में वृद्धि हो रही थी। बाल-विवाह जैसी कुप्रथा अब लगभग समाप्त हो गई है और शिक्षा का निरन्तर प्रसार हो रहा है। परिणामतः भारतीय जनता परिवार नियोजन के महत्त्व को जानकर जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के लिए प्रयासरत है। चिकित्सा-क्षेत्र में नवीन पद्धतियों के आने से, गर्भ निरोध के साधनों के प्रति जनता का भय समाप्त हो गया है। अतः राष्ट्र हित को देखते हुए हमें जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण रखना होगा तभी देश प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा।

## 11. धर्म और राजनीति

आधुनिक युग में विद्वानों का मत है कि धर्म और राजनीति एक-दूसरे के विरोधी हैं। इसलिए भारत को धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया गया है। अंग्रेजों की धर्म-नीति और राजनीति एक-दूसरे से मिली हुई थी। इसलिए वहाँ की प्रगति हुई, परन्तु भारत में धर्म और राजनीति एक-दूसरे के विरोधी रहे, इसलिए यहाँ के लोग प्रगति की दौड़ में पीछे रह गये।

**धर्म का अर्थ**—'धारयति सः धर्मः' अर्थात् जो धारण करता है, वही धर्म है। प्रकृति रूप में आत्मा जिस आचरण को धारण करती है, वही धर्म है। अतः प्रेम, उदारता, करुणा, कर्त्तव्यपरायणता, ईमानदारी आदि सभी धर्म के ही अंग हैं। इसके विपरीत लालच, स्वार्थ आदि सभी अधर्म के अन्तर्गत हैं।

**धर्म का स्वरूप**—आज यहाँ मन्दिर, गिरजाघर आदि में ईश्वर की पूजा, उपासना, रोजा आदि क्रिया-कर्मों को धर्म माना जाता है। सात्विक प्रवृत्तियों को धर्म और तामसिक प्रवृत्तियों को अधर्म माना गया। धर्म के विविध स्वरूप हमारे सामने आते हैं जैसे–हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म, ईसाई धर्म, जैन धर्म आदि।

**राजनीति, धर्म और नीति**—राजनीति भी मानव को ऐसी नीति पर चलना सिखाती है, जिससे मानव अधिकाधिक सुख व समृद्धि का जीवन व्यतीत कर सके। जब धर्म मानव को आत्म-शुद्धि करके चिन्तन-सुख और आनन्द की ओर ले जाता है, तब राजनीति मानसिक शान्ति व भौतिक सुख-समृद्धि देने की योजना बनाती है। राजनीति राज्य की सृष्टि करती है, जो राज्य के जनों के लिए शान्ति-व्यवस्था की स्थापना करता है तथा उन्हें अर्थोपार्जन के अवसर प्रदान करता है। आत्मशुद्धि के लिए जिस साधना की आवश्यकता है, उसकी मनःस्थिति समाज में शान्ति-व्यवस्था व आर्थिक समृद्धि पर आधारित है। जिस समाज में अराजकता, अनाचार, उत्पीड़न व अशान्ति का साम्राज्य हो, उसमें आत्म-साक्षात्कार के लिए साधना की मनःस्थिति बन ही नहीं सकती। इस प्रकार राजनीति धार्मिक वातावरण की प्रस्थापना में महत्त्वपूर्ण अंग है। दूसरी ओर धार्मिक वृत्ति के जन जो प्रेम, उदारता, सहिष्णुता, ईमानदारी व कर्त्तव्य-परायणता की भावना से परिपूर्ण होते हैं, वे ही जन-जन के लिए सुख-शान्ति का मार्ग प्रशस्त करने वाली राजनीति चला सकते हैं। अधार्मिक जन तो अन्याय, अनीति व अनाचार की राजनीति की यातना में जीने के लिए विवश करते हैं।

**धर्म और राजनीति**—आज के राजनेता यह घोषणा करते हैं कि धर्म को राजनीति से अलग रखना चाहिए। सम्राट अशोक ने भी धर्म का आश्रय लेकर प्रेम, उदारता, करुणा व सहिष्णुता का सन्देश दिया था। छत्रपति शिवाजी ने भी धर्म का आश्रय लेकर हिन्दू-मुसलमानों में एकता का बीजारोपण किया था। इतिहास इस बात का प्रमाण है कि किसी हिन्दू राजा ने धर्म के नाम पर युद्ध नहीं किया, बल्कि अन्याय-अत्याचार के विरुद्ध उसने संघर्ष किया है। औरंगजेब की इस्लामी धर्मान्धता के कारण ही मुगल साम्राज्य का पतन हुआ।

**उपसंहार**—उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि धर्म के तात्त्विक परिवेश को ही देखना चाहिए और उसका अनुसरण करना चाहिए। साम्प्रदायिकता और धर्मान्धता एक विष है, जो स्वयं अपने अनुयायियों का विनाश करती है। जो व्यक्ति धर्म के वास्तविक स्वरूप को अपनाता है, वही व्यक्ति सुखी रहता है, जो मानव नहीं है, वह राजनेता होने योग्य नहीं है, क्योंकि धार्मिक व्यक्ति ही कुशल राजनेता है और मानवता का प्रेमी है।

## 12. विद्यार्थी जीवन में अनुशासन

**प्रस्तावना**—विद्या का विनय से अत्यन्त ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। **'विद्या ददाति विनयं'** के आधार पर विद्या से ही विनय का प्रादुर्भाव होता है, किन्तु आज देश का दुर्भाग्य है कि विद्या मन्दिरों में जहाँ विनयशीलता का साम्राज्य होना चाहिए, वहाँ घोर अनुशासनहीनता अपना दानवी दामन पसारे क्रूरता भरा अट्टहास कर रहा है। चारों ओर उच्छृंखलता का ही बोलबाला है। न अध्यापकों में गुरु की गरिमा है और न छात्रों में शिष्य का शील स्वभाव।

**अनुशासन से तात्पर्य**—'अनुशासन' शब्द 'शास्' धातु से बना है, जिसका तात्पर्य 'शासन' अथवा 'नियन्त्रण' करना होता है। विश्व के सारे कार्य-कलाप चाहे वे जड़ से सम्बद्ध हों अथवा चेतन से एक निश्चित नियम से आबद्ध होते हैं। पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा नियमानुसार नित्य एक निश्चित गति से चक्कर लगाते रहते हैं। एक निश्चित अवधि पर ऋतुओं में परिवर्तन होता रहता है। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से इनका नियन्त्रणकर्ता दिखाई नहीं पड़ता, किन्तु ब्रह्माण्ड का कण-कण अनुशासन से आबद्ध होता है। मनुष्य सामाजिक और वैज्ञानिक नियमों से नियन्त्रित होता है, तो ऋतुएँ काल से नियन्त्रित होती हैं। यदि ये नियन्त्रण टूट जायँ, तो विश्व में बर्बरता व्याप्त हो जाय और संसार प्रलय के कगार पर लड़खड़ाता दिखाई देने लगे। अनुशासन के नियन्त्रण से जीवन सुखी और शान्त होता है। बिना अंकुश का हाथी, बिना लगाम का घोड़ा जिस प्रकार भयंकर और विनाशकारी होता है, ठीक उसी प्रकार अनुशासन रहित समाज अत्यन्त ही विनाशकारी होता है। अनुशासन जीवन को गति देता है, उसे सुरक्षित रखता है और जीवन के उद्देश्यों को सार्थक बनाता है। अनुशासन से व्यक्ति में शक्ति और आत्म-विश्वास की भावना का उदय होता है। उसका मनोबल ऊँचा होता है।

**अनुशासन का महत्त्व**—मानव जीवन में अनुशासन का बहुत बड़ा महत्त्व है। अनुशासन से तात्पर्य मुख्यतः आत्मानुशासन से ही है। नियन्त्रण तो भय और दबाव से भी किया जा सकता है, किन्तु उसका प्रभाव अस्थायी होता है। भय और दबाव समाप्त हो जाने के पश्चात् पुनः उच्छृंखलता की पूर्व स्थिति आ जाती है, जो अपने लिए, समाज के लिए और सारे विश्व के लिए अत्यन्त ही घातक होती है। अनुशासन अपने सच्चे अर्थों में ही सार्थक होगा, जो स्वेच्छा से ग्राह्य किया गया हो। जीवन के कार्य-क्षेत्र में हमारे लिए अनेक कल्याणकारी नियम बनाये गये। उनका पालन करना हमारे कर्त्तव्य के अन्दर आता है। उन नियमों का पालन कानून या डण्डे के बल पर सदैव नहीं कराया जा सकता। व्यक्ति को स्वयं अपने को उन नियमों के अन्तर्गत नियन्त्रित करना होगा। यदि समाज के सभी प्राणी पूर्णतः नियन्त्रित और अनुशासित हो जायँ तो सर्वत्र सुख और शान्ति का साम्राज्य व्याप्त हो जाय। धरती पर स्वर्ग उतर आये। अनुशासन सभी सुखों की जड़ है। वह कठोरता का ऐसा पाषाणखण्ड है, जिसके नीचे आनन्द का मधुर जल-स्रोत छिपा हुआ है।

**विद्यालयों में अनुशासनहीनता और उसके कारण**—यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि विद्यालयों में, जहाँ हमारे राष्ट्र के भावी निर्माता गढ़े जा रहे हैं, अनुशासनहीनता अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है। सरस्वती के पावन मन्दिर में अनुशासनहीनता के कारण दानवीर बर्बरताओं का ही राज्य है। छात्र अपने कर्त्तव्य को भूल गया है और अपने अधिकार की जोरदार माँग कर रहा है। विद्यालयों में शांतिपूर्ण शैक्षणिक वातावरण बनाने के लिए आज गम्भीरतापूर्वक चिन्तन-मनन की आवश्यकता महसूस हो रही है। मोटे तौर पर विचार किया जाय तो विद्यालयों में व्याप्त इस अनुशासनहीनता के पीछे निम्नलिखित कारण काम कर रहे हैं—

**(क) अभिभावकों द्वारा बालकों की उपेक्षा**—आज का अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय की चहारदीवारी के भीतर बन्द करा कर अपने उत्तरदायित्व से मुक्ति पा लेता है। परिणाम यह होता है कि बालक विद्यालय के घेरे से बाहर आते ही उन्मुक्त वातावरण में अपने को स्वच्छन्द पाता है और अनुशासनहीन हो जाता है।

**(ख) दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली**—मैकाले की शिक्षा-प्रणाली आज भी बिना किसी परिवर्तन के स्वतन्त्र भारत में भी ज्यों की त्यों व्यवहार में लाई जा रही है। येन-केन-प्रकारेण छात्र किसी भी प्रकार उत्तीर्ण होकर प्रमाण-पत्र पाने के लिए एड़ी-चोटी का पसीना एक करता है। भले ही उसमें योग्यता कुछ न हो, किन्तु प्रमाण-पत्र प्राप्त करके वह अपनी रोजी-रोटी पा सकता है, अतः इसके लिए बेकारी और बेरोजगारी के इस युग में वह नकल करता है, रोकने पर झगड़े के लिए उतारू होता है, छुरे और तमंचे निकालता है। इस प्रकार दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली के कारण भी छात्रों में अनुशासनहीनता अंकुरित होती है।

**(ग) राजनीतिक दलों का प्रोत्साहन**—अपरिपक्व बुद्धि वाले छात्रों को अनुशासनहीन बनाने में राजनीतिक दलों का पूरा-पूरा हाथ है। ये छात्रों की लोकतान्त्रिक शासन-व्यवस्था के प्रशिक्षण के नाम पर विद्यालयों में छात्र-संघों की स्थापना कराते हैं और उन्हीं की आड़ में अपना राजनीतिक रोटी सेंकते हैं। छात्र इतने भावुक और संवेदनशील होते हैं कि आवेश में आकर बड़े-से-बड़ा अनर्थ कर देने में भी इन्हें कोई हिचक नहीं है।

**( घ ) अध्यापकों के प्रति श्रद्धा का अभाव**–आज का छात्र अध्यापक को अपना गुरु नहीं सेवक मानता है। गुरु के प्रति जो श्रद्धा होनी चाहिए, वह उसमें नहीं है। इसके पीछे प्रबन्ध समितियों की पारस्परिक कलह, विद्यालयों की बढ़ती हुई संख्या, समाज दूषित वातावरण आदि अनेक कारण हैं। इसके साथ-ही-साथ अध्यापकों की दोष-पूर्ण कार्यक्षमता भी इसमें कम सहायक नहीं है।

**अनुशासनहीनता के निराकरण का प्रयास**–विद्यालयों में व्याप्त इस घोर अनुशासनहीनता के निराकरण के लिए उपाय सोचना होगा। छात्रों में असन्तोष को दूर करने के लिए उसके सभी अभावों को दूर करना होगा। भावी जीवन के प्रति उसे आश्वस्त करना होगा। छात्र-संघों के वास्तविक उद्देश्य को समझाना होगा। इसके साथ-ही-साथ सरकार ने राजनीतिक दलों से पृथक् रहने के लिए छात्रों पर कठोर कदम उठाये हैं। इस प्रकार छात्रों ने अपने कर्त्तव्य को समझा है और बहुत आशा है कि विद्यालयों में अनुशासनहीनता की समस्या कुछ अंशों तक समाप्त हो जाएगी।

**उपसंहार**–इसमें सन्देह नहीं कि छात्रों में असीम शक्ति भरी हुई है। मनुष्य ने झरनों और प्रपातों के जल को अनुशासित करके असीम शक्ति एकत्रित करने में सफलता प्राप्त कर ली है। यदि छात्रों की इस असीम शक्ति को भी अनुशासित करके देश और समाज-कल्याण के कार्यों में लगाया जाय तो निश्चय ही इससे राष्ट्र का बहुत बड़ा हित होगा।

# 1 संस्कृत व्याकरण

# सन्धि, शब्द-रूप, धातु-रूप, प्रत्यय, विभक्ति, समास

## (क) सन्धि

सन्धि का साधारण अर्थ है मेल। दो वर्णों के निकट आने से उनमें जो विकार होता है उसे सन्धि कहते हैं। इस प्रकार की सन्धि के लिए दोनों वर्णों का निकट होना आवश्यक है, क्योंकि दूरवर्ती शब्दों या वर्णों में सन्धि नहीं होती है। वर्णों की इस निकट स्थिति को ही सन्धि कहते हैं। अत: संक्षेप में यही समझना चाहिए कि "दो वर्णों के पास-पास आने से उनमें जो परिवर्तन या विकार उत्पन्न होता है उसे सन्धि कहते हैं।" **जैसे–**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| हिम | + | आलय: | = | हिमालय: |
| रमा | + | ईश: | = | रमेश: |
| सूर्य | + | उदय: | = | सूर्योदय: |

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि हिम में म के 'अ' और आलय के 'आ' इन दोनों के मिलने से आ होकर हिमालय: रूप बनता है। इसी प्रकार रमा के 'आ' और ईश: के 'ई' – इन दोनों वर्णों के मेल से 'ए' होकर रमेश: शब्द बना है तथा सूर्य के 'अ' और उदय के 'उ' आपस में मिलने से 'ओ' होकर सूर्योदय: रूप बन गया है। इसी प्रकार अन्यत्र भी समझना चाहिए।

यह सन्धि स्वर, व्यञ्जन और विसर्ग भेद से तीन प्रकार की होती है। स्वर सन्धि में कतिपय मुख्य सन्धियों का परिचय पिछली कक्षाओं में मिल चुका है। यहाँ उनसे भिन्न कुछ सन्धियों से परिचय कराया जायगा।

### स्वर सन्धि

**परिभाषा–** स्वर (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ऌ, ए, ऐ, ओ, औ) के सामने स्वर आने पर इनके मेल से जो परिवर्तन होता है, उसे 'स्वर सन्धि' कहते हैं। उदाहरणार्थ–

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| राम | + आधार: | = | रामाधार: | (अ + आ = आ) |
| विद्या | + आलय: | = | विद्यालय: | (आ + आ = आ) |
| नर | + इन्द्र: | = | नरेन्द्र: | (अ + इ = ए) |
| देश | + उद्धार: | = | देशोद्धार: | (अ + उ = ओ) |
| राज | + ऋषि: | = | राजर्षि: | (अ + ऋ = अर्) |

**स्वर सन्धि के भेद**–स्वर सन्धि के पाँच भेद होते हैं–(१) दीर्घ सन्धि (२) गुण सन्धि (३) वृद्धि सन्धि (४) यण् सन्धि (५) अयादि सन्धि।

### (१) दीर्घ सन्धि

**सूत्र–अक: सवर्णे दीर्घ:।**

**नियम–**यदि ह्रस्व या दीर्घ स्वर अ, इ, उ, ऋ के बाद क्रमश: ह्रस्व अथवा दीर्घ अ, इ, उ, ऋ आयें तो दोनों मिलकर क्रमश: आ, ई, ऊ, ऋ हो जाते हैं।

**उदाहरणार्थ–**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| धर्म: | + अर्थ: | = | धर्मार्थ: | (अ + अ = आ) |
| भग्न | + अवशेष: | = | भग्नावशेष: | (अ + अ = आ) |
| परम | + अर्थ: | = | परमार्थ: | (अ + अ = आ) |
| कृष्ण | + अयन: | = | कृष्णायन: | (अ + अ = आ) |
| हर्ष | + अतिरेक: | = | हर्षातिरेक: | (अ + अ = आ) |
| परम | + अवसर: | = | परमावसर: | (अ + अ = आ) |
| मुर | + अरि | = | मुरारि | (अ + अ = आ) |
| शरण | + अर्थी | = | शरणार्थी | (अ + अ = आ) |

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| अजर | + | अमर | = | अजरामर | (अ | + | अ | = आ) |
| ज्ञान | + | अर्जन | = | ज्ञानार्जन | (अ | + | अ | = आ) |
| काम | + | अरि | = | कामारि | (अ | + | अ | = आ) |
| राम | + | आनन्द | = | रामानन्द | (अ | + | अ | = आ) |
| मंगल | + | आचरण | = | मंगलाचरण | (अ | + | अ | = आ) |
| धन | + | आदेश | = | धनादेश | (अ | + | अ | = आ) |
| परम | + | आत्मा | = | परमात्मा | (अ | + | अ | = आ) |
| दीप | + | आलोक | = | दीपालोक | (अ | + | अ | = आ) |
| अश्व | + | आरोही | = | अश्वारोही | (अ | + | अ | = आ) |
| निर | + | आश्रित | = | निराश्रित | (अ | + | अ | = आ) |
| सत्य | + | आग्रह | = | सत्याग्रह | (अ | + | अ | = आ) |
| दिव्य | + | आत्मा | = | दिव्यात्मा | (आ | + | अ | = आ) |
| विद्या | + | अर्थी | = | विद्यार्थी | (आ | + | अ | = आ) |
| यथा | + | अवसर | = | यथावसर | (अ | + | अ | = आ) |
| तथा | + | अपि | = | तथापि | (आ | + | अ | = आ) |
| करुणा | + | आर्द्र | = | करुणार्द्र | (आ | + | आ | = आ) |
| विद्या | + | आलय | = | विद्यालय | (आ | + | आ | = आ) |
| सदा | + | आचार | = | सदाचार | (आ | + | आ | = आ) |
| रवि | + | इन्द्र | = | रवीन्द्र | (इ | + | इ | = ई) |
| सुधि | + | इन्द्र | = | सुधीन्द्र | (इ | + | इ | = ई) |
| कपि | + | ईश | = | कपीश | (इ | + | ई | = ई) |
| गिरि | + | ईश | = | गिरीश | (इ | + | ई | = ई) |
| मुनि | + | ईश | = | मुनीश | (इ | + | ई | = ई) |
| क्षिति | + | ईश | = | क्षितीश | (इ | + | ई | = ई) |
| नदी | + | इन्द्र | = | नदीन्द्र | (ई | + | इ | = ई) |
| मही | + | इन्द्र | = | महीन्द्र | (ई | + | इ | = ई) |
| रजनी | + | ईश | = | रजनीश | (ई | + | ई | = ई) |
| नदी | + | ईश | = | नदीश | (ई | + | ई | = ई) |
| भानु | + | उदय | = | भानूदय | (उ | + | उ | = ऊ) |
| लघु | + | उर्मि | = | लघूर्मि | (उ | + | उ | = ऊ) |
| वधू | + | उत्सव | = | वधूत्सव | (ऊ | + | उ | = ऊ) |
| पितृ | + | ऋण: | = | पितृण: | (ऋ | + | ऋ | = ॠ) |

## ( २ ) गुण सन्धि

**सूत्र– आद्गुण:**–यदि अ अथवा आ के पश्चात् ह्रस्व या दीर्घ इ, उ, ऋ, ऌ आवे तो अ और इ मिलकर ए, अ और उ मिलकर ओ, अ और ऋ मिलकर अर् तथा अ और ऌ मिलकर अल् हो जाता है।

**उदाहरणार्थ–**

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| राम | + | इन्द्र | = | रामेन्द्र | (अ | + | इ | = ए) |
| देव | + | इन्द्र | = | देवेन्द्र | (अ | + | इ | = ए) |
| जित | + | इन्द्रिय | = | जितेन्द्रिय | (अ | + | इ | = ए) |
| भारत | + | इन्दु | = | भारतेन्दु | (अ | + | इ | = ए) |
| नर | + | इन्द्र | = | नरेन्द्र | (अ | + | इ | = ए) |
| उप | + | इन्द्र | = | उपेन्द्र | (अ | + | इ | = ए) |
| परम | + | ईश्वर | = | परमेश्वर | (अ | + | ई | = ए) |

| | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| महा | + | ईश | = | महेश | (आ | + | ई | = | ए) |
| रमा | + | ईश | = | रमेश | (अ | + | ई | = | ए) |
| गण | + | ईश | = | गणेश | (अ | + | ई | = | ए) |
| सुर | + | ईश | = | सुरेश | (अ | + | ई | = | ए) |
| देव | + | ईश | = | देवेश | (अ | + | ई | = | ए) |
| त्रिलोक | + | ईश्वर | = | त्रिलोकेश्वर | (अ | + | ई | = | ए) |
| यथा | + | इष्ट | = | यथेष्ट | (आ | + | इ | = | ए) |
| महा | + | इन्द्र | = | महेन्द्र | (आ | + | इ | = | ए) |
| महा | + | ईश्वर | = | महेश्वर | (आ | + | ई | = | ए) |
| आत्म | + | उत्सर्ग | = | आत्मोत्सर्ग | (अ | + | उ | = | ओ) |
| लोक | + | उक्ति | = | लोकोक्ति | (अ | + | उ | = | ओ) |
| लोक | + | उत्तर | = | लोकोत्तर | (अ | + | उ | = | ओ) |
| चरम | + | उन्नति | = | चरमोन्नति | (अ | + | उ | = | ओ) |
| सर्व | + | उत्तम | = | सर्वोत्तम | (अ | + | उ | = | ओ) |
| विकास | + | उन्मुख | = | विकासोन्मुख | (अ | + | उ | = | ओ) |
| सूर्य | + | उदय | = | सूर्योदय | (अ | + | उ | = | ओ) |
| सर्व | + | उदय | = | सर्वोदय | (अ | + | उ | = | ओ) |
| चन्द्र | + | उदय | = | चन्द्रोदय | (अ | + | उ | = | ओ) |
| भाग्य | + | उदय | = | भाग्योदय | (अ | + | उ | = | ओ) |
| देश | + | उद्धार | = | देशोद्धार | (अ | + | उ | = | ओ) |
| पतन | + | उन्मुख | = | पतनोन्मुख | (अ | + | उ | = | ओ) |
| समय | + | उचित | = | समयोचित | (अ | + | उ | = | ओ) |
| महा | + | उत्सव | = | महोत्सव | (आ | + | उ | = | ओ) |
| गंगा | + | उद्कम | = | गंगोद्कम | (आ | + | उ | = | ओ) |
| जल | + | ऊर्मि | = | जलोर्मि | (अ | + | ऊ | = | ओ) |
| गंगा | + | ऊर्मि | = | गंगोर्मि | (आ | + | ऊ | = | ओ) |
| राज | + | ऋषि | = | राजर्षि | (अ | + | ऋ | = | अर्) |
| महा | + | ऋषि | = | महर्षि | (आ | + | ऋ | = | अर्) |
| ब्रह्म | + | ऋषि | = | ब्रह्मर्षि | (अ | + | ऋ | = | अर्) |
| देव | + | ऋषि | = | देवर्षि | (अ | + | ऋ | = | अर्) |
| तव | + | ऌकार | = | तवल्कार | (अ | + | ऌ | = | अल्) |

## ( ३ ) यण् सन्धि

**सूत्र– इकोयणचि**–ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ, ऋ तथा ऌ के बाद कोई असमान स्वर आये तो इ का य, उ का व् और ऋ कर र् तथा ऌ का ल् हो जाता है।

**उदाहरणार्थ–**

| | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| रीति | + | अनुसार | = | रीत्यानुसार | (इ | + | अ | = | य) |
| इति | + | आदि | = | इत्यादि | (इ | + | आ | = | या) |
| प्रति | + | आशा | = | प्रत्याशा | (इ | + | आ | = | या) |
| यदि | + | अपि | = | यद्यपि | (इ | + | अ | = | य) |
| प्रति | + | एक | = | प्रत्येक | (इ | + | ए | = | ये) |
| प्रति | + | उत्तर | = | प्रत्युत्तर | (इ | + | उ | = | यु) |
| देवी | + | आदेश | = | देव्यादेश | (ई | + | आ | = | या) |
| मधु | + | अरि | = | मध्वरि | (उ | + | अ | = | व) |
| सु | + | आगतम | = | स्वागतम | (उ | + | आ | = | वा) |

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गुरु | + आदेश | = | गुर्वादेश | (उ + आ = वा) |
| वधू | + आगमन | = | वध्वागमन | (ऊ + आ = वा) |
| पितृ | + आज्ञा | = | पित्राज्ञा | (ऋ + आ = रा) |
| मातृ | + आज्ञा | = | मात्राज्ञा | (ऋ + आ = रा) |
| लृ | + आकृति | = | लाकृति | (लृ + आ = ला) |

### (४) अयादि :– एचोऽयवायावः

जब ए, ऐ, ओ और औ (एच्) के आगे कोई स्वर आवे, तो उन (एच्) के स्थान में क्रमशः अय्, आय् तथा अव, आव् हो जाते हैं। अर्थात् ए के स्थान में अय्, ऐ के स्थान में आय्, ओ के स्थान में अव् और औ के स्थान में आव् हो जाते हैं। **जैसे–**

ने + अनम् = नयनम्
नै + अकः = नायकः
पो + अनः = पवनः
पौ + अकः = पावकः
शे + अनम् = शयनम्
भो + अनम् = भवनम्
नौ + इकः = नाविकः
गै + अकः = गायकः

### (५) पूर्वरूप :– एङः पदान्तादति

यदि किसी पद के अन्त में एकार या ओकार (एङ्) हो और उसके बाद में अ आया हो तो दोनों ही स्थान में क्रमशः एकार तथा ओकार (पूर्व रूप) हो जाते हैं, चिह्न अ की पूर्व उपस्थिति के सूचक के रूप में (ऽ) रख दिया जाता है। **जैसे–**

हरे + अव = हरेऽव (हे हरि ! रक्षा कीजिए)
विष्णो + अव = विष्णोऽव (हे विष्णु! रक्षा कीजिए)

### (६) पररूप :– एङि पररूपम्

यदि अकारान्त उपसर्ग के बाद ऐसी धातु जिनके आरम्भ में ए अथवा ओ हो तो उपसर्ग का अ तथा धातु के ए या ओ दोनों के स्थान पर 'ए' या 'ओ' हो जाता है; **जैसे–**

प्र + एजते = प्रेजते
उप + ओषति = उपोषति

*[**संकेत** :–दीर्घ, गुण, यण् एवं अयादि सन्धि का ही अध्ययन पाठ्यक्रमानुसार सामान्य हिन्दी के छात्र-छात्राओं के लिए आवश्यक है।]*

## हल् (व्यञ्जन सन्धि)

### (१) स्तोः श्चुनाश्चुः

यदि सकार या त वर्ग के साथ शकार या च वर्ग आये तो सकार और त वर्ग के स्थान में क्रम से शकार और च वर्ग हो जाते हैं; **जैसे–**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हरिस् | + | शेते | = | हरिश्शेते | (हरि सोता है) |
| रामस् | + | चिनोति | = | रामश्चिनोति | (राम इकट्ठा करता है) |
| सत् | + | चित् | = | सच्चित् | (सत्य और ज्ञान) |
| सत् | + | चयनम् | = | सच्चयनम् | (सही चुनाव) |

### (२) ष्टुनाष्टुः

यदि सकार या त वर्ग के साथ ष् या ट वर्ग आये तो सकार और त वर्ग के स्थान में क्रम से ष् और ट वर्ग हो जाते हैं; **जैसे–**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रामस् | + | षष्ठः | = | रामष्षष्ठः | (राम छठा है) |
| रामस् | + | टीकते | = | रामष्टीकते | (राम जाता है) |
| तत् | + | टीका | = | तट्टीका | (उसकी टीका या व्याख्या) |
| चक्रिन् | + | ढौकसे | = | चक्रिण्ढौकसे | (हे कृष्ण! तू जाता है) |

### (३) झलां जश् झशि

झल् (अर्थात् अन्त:स्थ–य र ल व और अनुनासिक व्यञ्जन को छोड़कर और किसी व्यञ्जन के पश्चात् झश् (किसी वर्ग का तृतीय या चतुर्थ वर्ण) आवे तो पहले वाले व्यञ्जन जश् (ज् ब् ग् ड् द्) में बदल जाते हैं, **जैसे–**

दोघ् + धा = दोग्धा
लभ् + ध: = लब्ध:
योध् + धा = योद्धा

### (४) खरि च

यदि झल् प्रत्याहारवाले वर्ण के आगे खर् प्रत्याहार के वर्ण (वर्णों का प्रथम, द्वितीय तथा श् ष् स् में से कोई) हो तो झल् के स्थान पर चर् प्रत्याहार के अक्षर (क् च् ट् त् प्) हो जाते हैं, जैसे–

विपद् + काल: = विपत्काल:
सम्पद् + समय: = सम्पत्समय:
ककुभ् + प्रान्त: = ककुप्प्रान्त:।

### (५) मोऽनुस्वार:

यदि किसी पद के अन्त में म् आया हो और उसके बाद कोई व्यञ्जन वर्ण हो तो उसके स्थान में अनुस्वार हो जाता है; **जैसे–**

हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे
गृहम् + गच्छति = गृहं गच्छति
दु:खम् + प्राप्नोति = दु:खं प्राप्नोति

### (६) तोर्लि

यदि त वर्ग के किसी वर्ण से परे ल हो तो त वर्गीय वर्ण के स्थान पर ल् हो जाता है। **जैसे–**

उद् + लिखितम् = उल्लिखितम् उद् + लेख: = उल्लेख:
तद् + लीन: = तल्लीन: विद्वान + लिखति = विद्वांल्लिखति

**विशेष**–अनुनासिक न् के स्थान में अनुनासिक ल् होता है।

### (७) अनुस्वारस्य ययि परसवर्ण:–

यदि अनुस्वार से परे यय् प्रत्याहार का वर्ण (श, ष, स, ह को छोड़कर) हो तो अनुस्वार के स्थान पर परसवर्ण (अग्रिम वर्ण का सवर्ण, वर्ग का पाँचवाँ वर्ण) हो जाता है। **जैसे–**

धनम् + जय: (मोऽनुस्वार:) धनं + जय: = धनञ्जय:
त्वम् + करोषि (मोऽनुस्वार:) त्वं + करोषि = त्वङ्करोषि
त्वाम् + पश्यामि (मोऽनुस्वार:) त्वां + पश्यामि = त्वाम्पश्यामि

## विसर्ग सन्धि

विसर्ग (:) के आगे स्वर या व्यञ्जन वर्ण होने पर विसर्ग में जो विकार होता है उसे विसर्ग सन्धि कहते हैं–

### (१) विसर्जनीयस्य स:

विसर्ग के बाद यदि 'खर्' प्रत्याहार का कोई वर्ण (वर्गों का प्रथम, द्वितीय तथा श्, ष्, स्) रहे तो विसर्ग के स्थान में स् हो जाता है **जैसे–**

हरि: + चरति = हरिस् + चरति = हरिश्चरति
नर: + चलति = नरस् + चलति = नरश्चलति
पूर्ण: + चन्द्र: = पूर्णस् + चन्द्र: = पूर्णश्चन्द्र:
गौ: + चरति = गौस् + चरति = गौश्चरति
प्रभु: + चलति = प्रभुस् + चलति = प्रभुश्चलति

उपर्युक्त उदाहरणों में विसर्ग को स् होने के बाद 'स्तो: श्चुनाश्चु:' के द्वारा स् का श् हो गया है।

### (२) ससजुषो रु: (खरवसानयोर्विसर्जनीय:)

पदान्त स् तथा सजुष् शब्द के ष् के स्थान में र् (रु) हो जाता है। इस पदान्त र् के बाद खर् प्रत्याहार (वर्गों के प्रथम, द्वितीय

और श् ष् स्) का कोई अक्षर हो अथवा कोई भी वर्ण न हो तो र् के स्थान में विसर्ग हो जाता है। **जैसे–**

रामस् + पठति > रामर् + पठति = रामः पठति।

सजुष् > सजुर् = सजुः।

### (३) अतो रोरप्लुतादप्लुते

अलुप्त अत् (ह्रस्व 'अ') से परे रु (र्) के स्थान पर उ हो जाता है, यदि उसके बाद अत् (ह्रस्व 'अ') हो। **जैसे–**

बालस + अस्ति = बाल र् + अस्ति = बाल उ + अस्ति = बालो अस्ति = बालोऽस्ति।

शिवम् + अर्च्यः = शिवर् + अर्च्यः = शिव उ + अर्च्यः = शिवो + अर्च्यः + शिवोऽर्च्यः

मूर्खम् + अपि = मूर्ख र् + अपि = मूर्ख उ + मूर्खो अपि = मूर्खोऽपि

कस् + अपि = कर् + अपि = क उ + अपि = को + अपि = कोऽपि

यहाँ सर्वत्र पहले स् को रु (र्) हुआ है, तदनन्तर 'र्' को उ हुआ है, फिर गुण ओ हुआ है और अन्त में पूर्वरूप हुआ है। इसी प्रकार रामोऽस्ति, एषोऽब्रवीत, सोऽपि आदि में समझना चाहिए।

### (४) (हशि च)

अलुप्त अत् (ह्रस्व 'अ') से परे रु (र्) को 'उ' हो जाता है, यदि हश् (ह्, य्, व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, ध्, द्, ध्, ज्, ब्, भ्, ड्, द्) परे हो। **उदाहरण–**

बालः + गच्छति = बालो गच्छति

मूर्खः + याति = मूर्खो याति

कृष्णः + नमति = कृष्णो नमति

छात्रः + गृहणाति = छात्रो गृहणाति

शिवः + वन्द्यः = शिवोवन्द्यः

यहाँ सर्वत्र सर्व प्रथम विसर्ग को 'स' फिर 'स्' को रु (र्) होता है, फिर गुण 'ओ' हो जाता है।

### (५) (रोरि)

यदि र् से परे र हो तो पूर्व र् का लोप हो जाता है। उस लुप्त 'र्' से पहले यदि अ, इ, उ हो तो उनका दीर्घ हो जाता है। **जैसे–**

गौर् + रम्भते = गौ रम्भते।

पुनर् + रमते = पुनारमते।

हरिर् + रम्यः = हरी रम्यः।

३हरेर् + रमणम् = हरे रमणम्।

## (ख) शब्द-रूप

### संज्ञा-शब्द

### (१) आत्मन् (आत्मा) पुँलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | आत्मा | आत्मानौ | आत्मानः |
| द्वितीया | आत्मानम् | आत्मानौ | आत्मनः |
| तृतीया | आत्मना | आत्मभ्याम् | आत्मभिः |
| चतुर्थी | आत्मने | आत्मभ्याम् | आत्मभ्यः |
| पञ्चमी | आत्मनः | आत्मभ्याम् | आत्मभ्यः |
| षष्ठी | आत्मनः | आत्मनोः | आत्मनाम् |
| सप्तमी | आत्मनि | आत्मनोः | आत्मसु |
| सम्बोधन | हे आत्मन्! | हे आत्मानौ! | हे आत्मानः! |

## (२) राजन् (राजा) पुँलिङ्ग

| **विभक्ति** | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | राजा | राजानौ | राजान: |
| द्वितीया | राजानम् | राजानौ | राज्ञ: |
| तृतीया | राज्ञा | राजभ्याम् | राजभि: |
| चतुर्थी | राज्ञे | राजभ्याम् | राजभ्य: |
| पञ्चमी | राज्ञ: | राजभ्याम् | राजभ्य: |
| षष्ठी | राज्ञ: | राज्ञो: | राज्ञाम् |
| सप्तमी | राज्ञि, राजनि ] | राज्ञो: | राजसु |
| सम्बोधन | हे राजन्! | हे राजानौ! | हे राजान:! |

## (३) सरित् (नदी) स्त्रीलिङ्ग

| **विभक्ति** | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | सरित्, सरिद् | सरितौ | सरित: |
| द्वितीया | सरितम् | सरितौ | सरित: |
| तृतीया | सरिता | सरिद्भ्याम् | सरिद्भि: |
| चतुर्थी | सरिते | सरिद्भ्याम् | सरिद्भ्य: |
| पञ्चमी | सरित: | सरिद्भ्याम् | सरिद्भ्य: |
| षष्ठी | सरित: | सरितो: | सरिताम् |
| सप्तमी | सरिति | सरितो: | सरित्सु |
| सम्बोधन | हे सरित्, हे सरिद्! | हे सरितौ! | हे सरित:! |

## (४) नामन् (नाम) नपुंसकलिङ्ग

| **विभक्ति** | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | नाम | नाम्नी, नामनी | नामानि |
| द्वितीया | नाम | नाम्नी, नामनी | नामानि |
| तृतीया | नाम्ना | नामभ्याम् | नामभि: |
| चतुर्थी | नाम्ने | नामभ्याम् | नामभ्य: |
| पञ्चमी | नाम्न: | नामभ्याम् | नामभ्य: |
| षष्ठी | नाम्न: | नाम्नो: | नाम्नाम् |
| सप्तमी | नाम्नि, नामनि | नाम्नो: | नामसु |
| सम्बोधन | हे नाम, नामन्! | हे नाम्नी, नामनी! | हे नामानि! |

## (५) जगत् (संसार) नपुंसकलिङ्ग

| **विभक्ति** | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | जगत् | जगती | जगन्ति |
| द्वितीया | जगत् | जगती | जगन्ति |
| तृतीया | जगता | जगद्भ्याम् | जगद्भि: |
| चतुर्थी | जगते | जगद्भ्याम् | जगद्भ्य: |
| पञ्चमी | जगत: | जगद्भ्याम् | जगद्भ्य: |
| षष्ठी | जगत: | जगतो: | जगताम् |
| सप्तमी | जगति | जगतो: | जगत्सु |
| सम्बोधन | हे जगत्! | हे जगती! | हे जगन्ति! |

# सर्वनाम-शब्द

## (६) सर्व (सब) पुँलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | सर्व: | सर्वौ | सर्वे |
| द्वितीया | सर्वम् | सर्वौ | सर्वान् |
| तृतीया | सर्वेण | सर्वाभ्याम् | सर्वै: |
| चतुर्थी | सर्वस्मै | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्य: |
| पञ्चमी | सर्वस्मात् | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्य: |
| षष्ठी | सर्वस्य | सर्वयो: | सर्वेषाम् |
| सप्तमी | सर्वस्मिन् | सर्वयो: | सर्वेषु |
| सम्बोधन | हे सर्व! | हे सर्वौ! | हे सर्वे! |

## सर्व
## स्त्रीलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | सर्वा | सर्वे | सर्वा: |
| द्वितीया | सर्वाम् | सर्वे | सर्वा: |
| तृतीया | सर्वया | सर्वाभ्याम् | सर्वाभि: |
| चतुर्थी | सर्वस्यै | सर्वाभ्याम् | सर्वाभ्य: |
| पञ्चमी | सर्वस्या: | सर्वाभ्याम् | सर्वाभ्य: |
| षष्ठी | सर्वस्या: | सर्वयो: | सर्वासाम् |
| सप्तमी | सर्वस्याम् | सर्वयो: | सर्वासु |
| सम्बोधन | हे सर्वा! | हे सर्वे! | हे सर्वा:! |

## सर्व
## नपुंसकलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | सर्वम् | सर्वे | सर्वाणि |
| द्वितीया | सर्वम् | सर्वे | सर्वाणि |
| तृतीया | सर्वेण | सर्वाभ्याम् | सर्वै: |
| चतुर्थी | सर्वस्मै | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्य: |
| पञ्चमी | सर्वस्मात् | सर्वाभ्याम् | सर्वेभ्य: |
| षष्ठी | सर्वस्य | सर्वयो: | सर्वेषाम् |
| सप्तमी | सर्वस्मिन् | सर्वयो: | सर्वेषु |
| सम्बोधन | हे सर्वम्! | हे सर्वे! | हे सर्वाणि! |

## (७) यद् (जो) पुँलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | य: | यौ | ये |
| द्वितीया | यम् | यौ | यान् |
| तृतीया | येन | याभ्याम् | यै: |
| चतुर्थी | यस्मै | याभ्याम् | येभ्य: |
| पञ्चमी | यस्मात्, यस्माद् | याभ्याम् | येभ्य: |
| षष्ठी | यस्य | ययो: | येषाम् |
| सप्तमी | यस्मिन् | ययो: | येषु |

## यद्
### स्त्रीलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | या | ये | या: |
| द्वितीया | याम् | ये | या: |
| तृतीया | यया | याभ्याम् | याभि: |
| चतुर्थी | यस्यै | याभ्याम् | याभ्य: |
| पञ्चमी | यस्या: | याभ्याम् | याभ्य: |
| षष्ठी | यस्या: | ययो: | यासाम् |
| सप्तमी | यस्याम् | ययो: | यासु |

## यद्
### नपुंसकलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | यत्, यद् | ये | यानि |
| द्वितीया | यत्, यद् | ये | यानि |
| तृतीया | येन | याभ्याम् | यै: |
| चतुर्थी | यस्मै | याभ्याम् | येभ्य: |
| पञ्चमी | यस्मात्, यस्माद् | याभ्याम् | येभ्य: |
| षष्ठी | यस्य | ययो: | येषाम् |
| सप्तमी | यस्मिन् | ययो: | येषु |

## (८) इदम् (यह) पुँलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | अयम् | इमौ | इमे |
| द्वितीया | इमम्, एनम् | इमौ, एनौ | इमान्, एनान् |
| तृतीया | अनेन, एनेन | आभ्याम् | एभि: |
| चतुर्थी | अस्मै | आभ्याम् | एभ्य: |
| पञ्चमी | अस्मात्, अस्माद् | आभ्याम् | एभ्य: |
| षष्ठी | अस्य | अनयो:, एनयो: | एषाम् |
| सप्तमी | अस्मिन् | अनयो:, एनयो: | एषु |

## इदम्
### स्त्रीलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | इयम् | इमे | इमा: |
| द्वितीया | इमाम्, एनाम् | इमे, एने | इमा:, एना: |
| तृतीया | अनया, एनया | आभ्याम् | आभि: |
| चतुर्थी | अस्यै | आभ्याम् | आभ्य: |
| पञ्चमी | अस्या: | आभ्याम् | आभ्य: |
| षष्ठी | अस्या: | अनयो:, एनयो: | आसाम् |
| सप्तमी | अस्याम् | अनयो:, एनयो: | आसु |

### इदम्
### नपुंसकलिङ्ग

| विभक्ति | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| प्रथमा | इदम् | इमे | इमानि |
| द्वितीया | इदम्, एनत् | इमे, एने | इमानि, एनानि |
| तृतीया | अनेन, एनेन | आभ्याम् | एभि: |
| चतुर्थी | अस्मै | आभ्याम् | एभ्य: |
| पञ्चमी | अस्मात्, अस्माद् | आभ्याम् | एभ्य: |
| षष्ठी | अस्य | अनयो:, एनयो: | एषाम् |
| सप्तमी | अस्मिन् | अनयो:, एनयो: | एषु |

# (ग) धातु-रूप

## परस्मैपदी धातु

### (१) स्था (ठहरना)

### वर्तमान–लट् लकार

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | तिष्ठति | तिष्ठत: | तिष्ठन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | तिष्ठसि | तिष्ठथ: | तिष्ठथ |
| **उत्तम पुरुष** | तिष्ठामि | तिष्ठाव: | तिष्ठाम: |

### आज्ञा–लोट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | तिष्ठतु | तिष्ठताम् | तिष्ठन्तु |
| **मध्यम पुरुष** | तिष्ठ | तिष्ठतम् | तिष्ठत |
| **उत्तम पुरुष** | तिष्ठानि | तिष्ठाव | तिष्ठाम |

### भूतकाल–लङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | अतिष्ठत् | अतिष्ठताम् | अतिष्ठन् |
| **मध्यम पुरुष** | अतिष्ठ: | अतिष्ठतम् | अतिष्ठत |
| **उत्तम पुरुष** | अतिष्ठम् | अतिष्ठाव | अतिष्ठाम |

### चाहिए–विधिलिङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | तिष्ठेत् | तिष्ठेताम् | तिष्ठेयु: |
| **मध्यम पुरुष** | तिष्ठे: | तिष्ठेतम् | तिष्ठेत |
| **उत्तम पुरुष** | तिष्ठेयम् | तिष्ठेव | तिष्ठेम |

### सामान्य भविष्यत् – लृट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | स्थास्यति | स्थास्यत: | स्थास्यन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | स्थास्यसि | स्थास्यथ: | स्थास्यथ |
| **उत्तम पुरुष** | स्थास्यामि | स्थास्याव: | स्थास्याम: |

## (२) पा (पिब्) पीना

### लट् लकार

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | पिबति | पिबत: | पिबन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | पिबसि | पिबथ: | पिबथ |
| **उत्तम पुरुष** | पिबामि | पिबाव: | पिबाम: |

### लोट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | पिबतु | पिबताम् | पिबन्तु |
| **मध्यम पुरुष** | पिब | पिबतम् | पिबत |
| **उत्तम पुरुष** | पिबानि | पिबाव | पिबाम |

### लङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | अपिबत् | अपिबताम् | अपिबन् |
| **मध्यम पुरुष** | अपिब: | अपिबतम् | अपिबत |
| **उत्तम पुरुष** | अपिबम् | अपिबाव | अपिबाम |

### विधिलिङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | पिबेत् | पिबेताम् | पिबेयु: |
| **मध्यम पुरुष** | पिबे: | पिबेतम् | पिबेत |
| **उत्तम पुरुष** | पिबेयम् | पिबेव | पिबेम |

### लृट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | पास्यति | पास्यत: | पास्यन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | पास्यसि | पास्यथ: | पास्यथ |
| **उत्तम पुरुष** | पास्यामि | पास्याव: | पास्याम: |

## (३) कृ (करना)

### लट् लकार

| | एकवचन | द्विवचन | बहुवचन |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | करोति | कुरुत: | कुर्वन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | करोषि | कुरुथ: | कुरुथ |
| **उत्तम पुरुष** | करोमि | कुर्व: | कुर्म: |

### लोट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | करोतु, कुरुतात् | कुरुताम् | कुर्वन्तु |
| **मध्यम पुरुष** | कुरु, कुरुतात् | कुरुतम् | कुरुत |
| **उत्तम पुरुष** | करवाणि | करवाव | करवाम |

### विधिलिङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | कुर्यात् | कुर्याताम् | कुर्यु: |
| **मध्यम पुरुष** | कुर्या: | कुर्यातम् | कुर्यात |
| **उत्तम पुरुष** | कुर्याम् | कुर्याव | कुर्याम |

### लङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | अकरोत् | अकुरुताम् | अकुर्वन् |
| **मध्यम पुरुष** | अकरो: | अकुरुतम् | अकुरुत |
| **उत्तम पुरुष** | अकरवम् | अकुर्व | अकुर्म |

### लृट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | करिष्यति | करिष्यत: | करिष्यन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | करिष्यसि | करिष्यथ: | करिष्यथ |
| **उत्तम पुरुष** | करिष्यामि | करिष्याव: | करिष्याम: |

## (४) नी (ले जाना)

### लट् लकार

| | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | नयति | नयत: | नयन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | नयसि | नयथ: | नयथ |
| **उत्तम पुरुष** | नयामि | नयाव: | नयाम: |

### लोट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | नयतु | नयताम् | नयन्तु |
| **मध्यम पुरुष** | नय | नयतम् | नयत |
| **उत्तम पुरुष** | नयानि | नयाव | नयाम |

### विधिलिङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | नयेत् | नयेताम् | नयेयु: |
| **मध्यम पुरुष** | नये: | नयेतम् | नयेत |
| **उत्तम पुरुष** | नयेयम् | नयेव | नयेम |

### लङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | अनयत् | अनयताम् | अनयन् |
| **मध्यम पुरुष** | अनय: | अनयतम् | अनयत |
| **उत्तम पुरुष** | अनयम् | अनयाव | अनयाम |

### लृट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | नेष्यति | नेष्यत: | नेष्यन्ति |
| **मध्य पुरुष** | नेष्यसि | नेष्यथ: | नेष्यथ |
| **उत्तम पुरुष** | नेष्यामि | नेष्याव: | नेष्याम: |

## (५) दा (देना)

### लट्लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | ददाति | दत: | ददति |
| **मध्यम पुरुष** | ददासि | दत्थ: | दत्थ |
| **उत्तम पुरुष** | ददामि | दद्व: | दद्म: |

### लृट्लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | दास्यति | दास्यत: | दास्यन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | दास्यसि | दास्यथ: | दास्यथ |
| **उत्तम पुरुष** | दास्यामि | दास्याव: | दास्याम: |

### लङ्लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | अददात् | अदत्ताम् | अददु: |
| **मध्यम पुरुष** | अददा: | अदत्तम् | अदत्त |
| **उत्तम पुरुष** | अददाम् | अदद्व | अदद्म |

### लोट्लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | ददातु, दत्तात् | दत्ताम् | ददतु |
| **मध्यम पुरुष** | देहि, दत्तात् | दत्तम् | दत्त |
| **उत्तम पुरुष** | ददानि | ददाव | ददाम |

### विधिलिङ्लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | दद्यात् | दद्याताम् | दद्युः |
| **मध्यम पुरुष** | दद्याः | दद्यातम् | दद्यात |
| **उत्तम पुरुष** | दद्याम् | दद्याव | दद्याम |

## (६) चुर् (चोरी करना)

### लट् लकार

| | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | चोरयति | चोरयतः | चोरयन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | चोरयसि | चोरयथः | चोरयथ |
| **उत्तम पुरुष** | चोरयामि | चोरयावः | चोरयामः |

### लृट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | चोरयिष्यति | चोरयिष्यतः | चोरयिष्यन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | चोरयिष्यसि | चोरयिष्यथः | चोरयिष्यथ |
| **उत्तम पुरुष** | चोरयिष्यामि | चोरयिष्यावः | चोरयिष्यामः |

### लङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | अचोरयत् | अचोरयताम् | अचोरयन् |
| **मध्यम पुरुष** | अचोरयः | अचोरयतम् | अचोरयत |
| **उत्तम पुरुष** | अचोरयम् | अचोरयाव | अचोरयाम |

### लोट् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | चोरयतु | चोरयताम् | चोरयन्तु |
| **मध्यम पुरुष** | चोरय | चोरयतम् | चोरयत |
| **उत्तम पुरुष** | चोरयानि | चोरयाव | चोरयाम |

### विधिलिङ् लकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | चोरयेत् | चोरयेताम् | चोरयेयुः |
| **मध्यम पुरुष** | चोरयेः | चोरयेतम् | चोरयेत |
| **उत्तम पुरुष** | चोरयेयम् | चोरयेव | चोरयेम |

# (घ) प्रत्यय

संस्कृत में प्रत्यय लगाकर नये शब्दों का निर्माण होता है। प्रत्यय धातु या शब्दों के बाद लगते हैं। प्रत्यय मुख्यतः **कृत** और **तद्धित** दो प्रकार के होते हैं। यहाँ पर कतिपय प्रत्ययों का परिचय दिया जा रहा है।

**(१) कृदन्त (कृत्) प्रत्यय–** जहाँ किसी धातु में प्रत्यय जोड़कर नवीन शब्दों का निर्माण किया जाता है, वहाँ कृदन्त (कृत) प्रत्यय होता है तथा इस प्रकार बनाये गये शब्दों को 'कृदन्त' कहा जाता है।

**(अ) क्त (त)–** भूतकालिक क्रिया तथा विशेषण शब्द बनाने के लिए क्त प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। क्त प्रत्यय भाव और कर्म में होता है अर्थात् कर्त्ता में तृतीया तथा कर्म में प्रथमा विभक्ति तथा क्रिया कर्म के पुरुष, वचन और लिङ्ग के अनुसार होती है। हतः, दत्तः, लब्धः, कथितः, गतः, प्रेषितः आदि शब्द क्त (त) प्रत्यय के उदाहरण हैं। **जैसे–**

(क) मया पत्रं प्रेषितम् (मैंने पत्र भेजा) (ख) गुरुणा आदेश: दत्त: (गुरुजी ने आदेश दिया)

**(ब) क्त्वा (त्वा)–** जब किसी क्रिया के हो जाने पर दूसरी क्रिया आरम्भ होती है, तब सम्पन्न हुई क्रिया को 'पूर्वकालिक क्रिया' कहते हैं। हिन्दी में इसका बोध **'करके'** लगाकर होता है। पूर्वकालिक क्रिया का बोध कराने के लिए संस्कृत में धातु के आगे क्त्वा (त्वा) प्रत्यय जोड़ा जाता है। **जैसे–**

| **धातु** | | **प्रत्यय** | | **कृदन्त** |
|---|---|---|---|---|
| कृ | + | क्त्वा | = | कृत्वा |
| दा | + | क्त्वा | = | दत्वा |
| गम् | + | क्त्वा | = | गत्वा |
| नी | + | क्त्वा | = | नीत्वा |
| पठ् | + | क्त्वा | = | पठित्वा |
| दृश् | + | क्त्वा | = | दृष्ट्वा |

**(स) तव्यत् (तव्य), अनीयर् (अनीय)**

क्रिया में 'चाहिए अर्थ के लिए तव्यत् और अनीयर् प्रत्ययों का प्रयोग होता है। जैसे–

श्रु + तव्यत् (तक) = श्रोतव्यम् (सुनना चाहिए)।

दा + तव्यत् (तक) = दातव्य:।

पठ् + तव्यत् (तक) = पठितव्य (पढ़नी चाहिए)।

पठ् + अनीयर् (अनीय) = पठनीय (पढ़नी चाहिए या पढ़ने योग्य)।

गम् + अनीयर् (अनीय) = गमनीयम्।

मया पुस्तकं पठितव्यम् (पठनीयम्) = मुझे पुस्तक पढ़नी चाहिए।

पा + अनीयर् = पानीयम् (पीने योग्य)।

कृ + अनीयर् = करणीय: (करने योग्य)।

दृश् + अनीयर् = दर्शनीय:।

**(२) तद्धित प्रत्यय–** जहाँ किसी शब्द में प्रत्यय जोड़कर नवीन शब्दों का निर्माण किया जाय, वहाँ तद्धित प्रत्यय होता है।

**(अ) त्व, तल–** संज्ञा और विशेषण से भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए त्व और तल् प्रत्ययों का प्रयोग होता है। **जैसे–**

(क) महत्– महत्त्व, महत्ता।

(ख) प्रभु– प्रभुत्व, प्रभुता।

(ग) गुरु– गुरुत्व, गुरुता।

(घ) कटु– कटुत्व, कटुता।

(ङ) पशु– पशुत्व, पशुता।

(च) दीन– दीनत्व, दीनता।

**(ब) मतुप्, वतुप्–** संज्ञा से 'वाला' अर्थ प्रकट करनेवाले विशेषण बनाने के लिए मतुप् प्रत्यय का प्रयोग होता है। मतुप् का 'मत्' कभी-कभी 'वत्' भी हो जाता है। ये शब्द विशेषण होते हैं तथा इनके रूपों में विशेष्य के अनुसार लिङ्ग, वचन और विभक्ति आते हैं। **जैसे–**

| | | | | | | **पुंलिङ्ग** | **स्त्रीलिङ्ग** |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| ● बल | + | वतुप् | → | बलवत् | = | बलवान् | बलवती |
| ● श्री | + | मतुप् | → | श्रीमत् | = | श्रीमान् | श्रीमती |
| ● भग | + | वतुप् | → | भगवत् | = | भगवान् | भगवती |
| ● धी | + | मतुप् | → | धीमत् | = | धीमान् | धीमती |

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| ● गुण | + | वतुप् | → | गुणवत् | = | गुणवान् | गुणवती |
| ● रस | + | वतुप् | → | रसवत् | = | रसवान् | रसवती |
| ● पुत्र | + | वतुप् | → | पुत्रवत् | = | पुत्रवान् | पुत्रवती |
| ● धन | + | वतुप् | → | धनवत् | = | धनवान् | धनवती |

# (ङ) विभक्ति-परिचय

## (१) अभित:परित:समयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि।

अभित: (चारों ओर), परित: (सब ओर), समया (समीप), निकषा (समीप), हा (शोक के लिए प्रयुक्त), प्रति (ओर) शब्दों के योग में **द्वितीया विभक्ति** होती है।

**उदाहरणार्थ–**

(क) ग्रामम् अभित: (परित:) वृक्षा: सन्ति। (गाँव के चारों ओर वृक्ष हैं।)
(ख) ग्रामम् समया विद्यालय: अस्ति। (गाँव के समीप विद्यालय है।)
(ग) हा दुष्टम्। (हाय दुष्ट)
(घ) विद्यालयम् निकषा। (विद्यालय के समीप।)
(ङ) गृहं परित:। (घर के चारों ओर।)
(च) विद्यालयं निकषा जलाशय: अस्ति। (विद्यालय के समीप जलाशय है।)
(छ) कृष्णं परित: गाव: सन्ति। (कृष्ण के चारों ओर गायें हैं।)
(ज) परित: कृष्णम्। (कृष्ण के चारों ओर)
(झ) विद्यालयं परित: उद्यानमस्ति। (विद्यालय के चारों ओर उद्यान हैं)

## (२) येनाङ्गविकार:

जिस विकृत अंग के द्वारा अंगी (अंगोंवाला) का विकार लक्षित होता है, उस अंग में **तृतीया विभक्ति** होती है।

**उदाहरणार्थ–**

(क) दिनेश: पादेन खञ्ज: अस्ति। (दिनेश पैर से लँगड़ा है।)
(ख) मोहन: नेत्रेण काण: अस्ति। (मोहन नेत्र से काना है।)
(ग) अक्ष्णा काण:। (आँख का काना।)
(घ) सुरेश: शिरसा खल्वाट:। (सुरेश सिर से गंजा है।)
(ङ) पादेन खञ्ज:। (पैर से लँगड़ा।)
(च) कर्णेन बधिर:। (कान से बहरा।)
(छ) भिक्षुक: पादेन खञ्ज: अस्ति। (भिक्षुक पैर से लँगड़ा है।)
(ज) देवदत्त: नेत्रेण काण: अस्ति। (देवदत्त आँख से काना है।)
(झ) आदर्श: पादेनखञ्ज: अस्ति। (आदर्श पैर से लँगड़ा है।)

## (३) सहयुक्तेऽप्रधाने।

सह के योग में अप्रधान (जो प्रधान क्रिया के कर्त्ता का साथ देता है) में **तृतीया विभक्ति** होती है।

**उदाहरणार्थ–**

(क) सुनीता पुत्रेण सह गच्छति। (सुनीता पुत्र के साथ जाती है।)
(ख) पुत्रेण सह पिता गच्छति। (पुत्र के साथ पिता जाता है।)

(ग) रामेण सह सीता वनम् अगच्छत्। (राम के साथ सीता वन को गयी।)
(घ) रामः लक्ष्मणेन सह गच्छति। (राम लक्ष्मण के साथ जाते हैं।)
(ङ) गुरुणा सह शिष्यः अपि आगच्छति। (गुरु के साथ शिष्य भी आता है।)

## (४) नमःस्वस्तिस्वाहास्वधाऽलंवषट्योगाच्च।

नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलं, वषट् शब्दों के योग में **चतुर्थी विभक्ति** होती है।

**उदाहरणार्थ–**

(क) श्री गणेशाय नमः। (गणेश जी को नमस्कार।)
(ख) तस्मै श्रीगुरवे नमः। (उन गुरु को नमस्कार।)
(ग) रामाय स्वाहा। (राम के लिए स्वाहा।)
(घ) इन्द्राय वषट्। (इन्द्र के लिए भेंट।)
(ङ) स्वस्ति तुभ्यम्। (तुम्हारा कल्याण हो।)
(च) शुकदेवाय नमः। (शुकदेव को नमस्कार।)
(छ) सूर्याय स्वाहा। (सूर्य के लिए स्वाहा।)
(ज) प्रजाभ्यः स्वस्ति। (प्रजा का कल्याण हो।)
(झ) पुत्राय स्वस्ति। (पुत्र का कल्याण हो।)
(ञ) दुर्गायै स्वाहा। (दुर्गा के लिए स्वाहा।)
(ट) कृष्णाय नमः। (कृष्ण को नमस्कार।)
(ठ) राधावल्लभाय नमः। (राधावल्लभ को नमस्कार)

## (५) षष्ठी शेषे

जहाँ स्वामी तथा सेवक, जन्य तथा जनक, कार्य तथा कारण इत्यादि के मध्य कोई सम्बन्ध दिखाये जाते हैं, वहाँ **षष्ठी विभक्ति** होती है। इस सूत्र का अर्थ है कि अन्य विभक्तियों के आधार पर न बतायी जा सकने वाली बातों को बताने के लिए षष्ठी विभक्ति का प्रयोग होता है।

**उदाहरणार्थ–**

(क) कृष्णस्य पुस्तकम्। (कृष्ण की पुस्तक।)
(ख) राज्ञः पुरुषः। (राजा का पुरुष।)
(ग) रामस्य माता। (राम की माता।)
(घ) सुदामा कृष्णस्य मित्रम् आसीत्। (सुदामा कृष्ण के मित्र थे।)
(ङ) कवीनाम् कालिदासः श्रेष्ठः। (कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं।)
(च) सुमित्रा लक्ष्मणस्य माता अस्ति। (सुमित्रा लक्ष्मण की माता है।)
(छ) कृष्णस्य पिता वसुदेवः। (कृष्ण के पिता वसुदेव।)

## (६) यतश्च निर्धारणम्

यदि किसी की अपने समुदाय में विशिष्टता दिखायी जाती है तो उस समुदायवाचक शब्द में **षष्ठी** या **सप्तमी** विभक्ति होती है।

**उदाहरणार्थ–**

(क) यशः छात्राणां श्रेष्ठः। (यश छात्रों में श्रेष्ठ है।)
(ख) गोषु वा कपिला श्रेष्ठा। (गायों में कपिला श्रेष्ठ है।)
(ग) बालकेषु सौरभः श्रेष्ठः। (बालकों में सौरभ श्रेष्ठ है।)

| | |
|---|---|
| (घ) नदीनां वा गङ्गा श्रेष्ठा। | (नदियों में गंगा श्रेष्ठ है।) |
| (ङ) छात्रासु स्वाती श्रेष्ठा। | (छात्राओं में स्वाती श्रेष्ठ है।) |
| (च) काव्येषु नाटकं रम्यं। | (काव्यों में नाटक सुन्दर होता है।) [ |

# (च) समास

दो या दो से अधिक शब्दों (पदों) के मेल से एक नवीन शब्द के निर्माण की प्रक्रिया को 'समास' कहा जाता है। जैसे पीतम् अम्बरं यस्य स: (पीले हैं वस्त्र जिसके)। इन शब्दों को मिलाकर एक सामासिक पद बनाया जाता है– पीताम्बर:।

**समस्त-पद–** समास के नियम से मिले हुए शब्द-समूह को 'समस्त-पद' कहते हैं, जैसे– 'पीताम्बर:' समस्त-पद है।

**विग्रह–** समास के अर्थ-बोधक वाक्य को 'विग्रह' कहते हैं; जैसे–पीतम् अम्बरं यस्य स:।

सामान्यतया समास के छह भेद हैं– अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुव्रीहि तथा द्वन्द्व।

पाठ्यक्रमानुसार निम्नलिखित तीन समासों का विवरण दिया जा रहा है।

## (१) अव्ययीभाव समास

जिस समास में पूर्व पद अव्यय हो और उसी के अर्थ की प्रधानता हो, उसे 'अव्ययीभाव' समास कहते हैं। इसमें पहला पद अव्यय होता है और दूसरा संज्ञा। समस्त-पद अव्यय हो जाता है। अव्ययीभाव का नपुंसकलिङ्ग एकवचन में रूप बनता है।

**उदाहरणार्थ–**

| | **समस्त-पद** | **समास-विग्रह** | **हिन्दी-अर्थ** |
|---|---|---|---|
| (१) | अनुदिनम् | दिनस्य पश्चात् | दिन के पश्चात् |
| (२) | प्रतिदिनम् | दिनं दिनंप्रति | प्रत्येक दिन |
| (३) | उपगङ्गम् | गङ्गाया: समीपम् | गंगा के समीप |
| (४) | उपतटम् | तटस्य समीपे | तट के समीप |
| (५) | सहरि | हरे: सादृश्यम् | हरि के सदृश |
| (६) | प्रत्यक्षं | अक्ष्ण: प्रति | आँखों के सामने |
| (७) | अनुरूपम् | रूपस्य योग्यम् | रूप के योग्य |
| (८) | यथाशक्ति: | शक्तिम् अनतिक्रम्य | शक्ति के अनुसार |
| (९) | प्रत्येक: | एकं-एकं प्रति | हर एक |
| (१०) | यथाकामम् | कामम् अनतिक्रम्य | काम के अनुसार |

## (२) कर्मधारय समास

जिस समास में पहला पद विशेषण तथा दूसरा पद विशेष्य होता है, वहाँ 'कर्मधारय समास' होता है।

**उदाहरणार्थ–**

| | **समस्त-पद** | **समास-विग्रह** | **हिन्दी-अर्थ** |
|---|---|---|---|
| (१) | कृष्णसर्प: | कृष्ण: सर्प: | काला साँप |
| (२) | नीलकमलम् | नीलम् कमलम् | नीला कमल |
| (३) | श्वेताम्बरं | श्वेतम् अम्बरम् | सफेद वस्त्र |
| (४) | घनश्याम: | घन इव श्याम: | घन के समान श्याम |
| (५) | पुरुषव्याघ्र: | पुरुष एव व्याघ्र: | पुरुषरूपी व्याघ्र |

| | | | |
|---|---|---|---|
| (६) | सज्जन: | सत्य: जन: | सच्चा व्यक्ति |
| (७) | कुपुत्र: | कुत्सित पुत्र: | बुरा पुत्र |
| (८) | रक्तवस्त्रम् | रक्तम् वस्त्रम् | लाल वस्त्र |
| (९) | नीलाश्व: | नील: अश्व: | नीला घोड़ा |
| (१०) | पीतकमलम् | पीतम् कमलम् | पीला कमल |
| (११) | रक्ताम्बरम् | रक्तं अम्बरम् | लाल वस्त्र |
| (१२) | पीतवस्त्रम् | पीतं वस्त्रम् | पीला वस्त्र |
| (१३) | नीलाम्बुजम् | नीलं अम्बुजम् | नीला कमल |
| (१४) | महाजन: | महान् चासौ जन: | महान् जन |
| (१५) | विद्याधनम् | विद्या एव धनम् | विद्यारूपी धन |
| (१६) | महात्मा | महान् चासौ आत्मा | महान् आत्मा |

## (३) बहुव्रीहि समास

जब दोनों समस्त-पदों में से किसी भी पद के अर्थ की प्रधानता नहीं होती, वरन् ये किसी अन्य पद के विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं और उसी पद के अर्थ की प्रधानता होती है, तब वहाँ 'बहुव्रीहि समास' होता है। इसमें विग्रह करते समय 'यत्' शब्द के रूपों (यस्य, येन, यस्मै आदि) का प्रयोग किया जाता है।

**उदाहरणार्थ–**

| | **समस्त-पद** | **समास-विग्रह** | **हिन्दी-अर्थ** |
|---|---|---|---|
| (१) | महात्मा | महान आत्मा यस्य स: | जिसकी आत्मा महान् हो वह |
| (२) | त्रिनेत्र: | त्रय नेत्राणि यस्य स: | तीन नेत्र हैं जिसके |
| (३) | लम्बोदर: | लम्बम् उदरं यस्य स: | लम्बा है उदर जिसका |
| (४) | गजानन: | गज: इव आनन: यस्य स: | गज के समान मुख है जिसका |
| (५) | महाधन: | महान् धन: यस्य स: | महान् धन है जिसका वह |
| (६) | गदाहस्त: | गदा हस्ते यस्य स: | गदा है हाथ में जिसके वह |
| (७) | पीताम्बर: | पीतम् अम्बरं यस्य स: | पीले हैं वस्त्र जिसके |
| (८) | दशानन: | दश आननानि यस्य स: | दस मुख हैं जिसके |
| (९) | यशपाणि: | यशं पाणौ यस्य स: | यश है हाथ में जिसके |
| (१०) | जितेन्द्रिय: | जितानि इन्द्रियाणि येन स: | जीत ली हैं इन्द्रियाँ जिसने |
| (११) | चक्रपाणि: | चक्रं पाणौ यस्य स: | चक्र है हाथ जिसका |
| (१२) | चन्द्रशेखर: | चन्द्र: शेखरे यस्य स: | चन्द्र है जिसके शेखर पर |
| (१३) | नीलकण्ठ: | नील: कण्ठ: यस्य स: | नीला है कण्ठ जिसका |
| (१४) | वीणापाणि: | वीणा पाणौ यस्य स: | वीणा है हाथ में जिसके |
| (१५) | जितेन्द्रिय | जितानि इन्द्रियाणि येन स: | जिसने इन्द्रियों को जीत लिया है |

●●

# 2 हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद

किसी एक भाषा को दूसरी भाषा में ज्यों-का-त्यों या आवश्यकतानुसार रूपान्तरित कर देना ही अनुवाद कहलाता है। इसी प्रकार अन्य भाषा के वाक्यों को संस्कृत भाषा में रूपान्तरित कर देना ही संस्कृत अनुवाद कहलायेगा। **जैसे–** मोहन पढ़ता है, यह हिन्दी वाक्य है; इसका संस्कृत अनुवाद होगा– ''मोहन: पठति।''

सभी भाषाओं में भाव प्रकाशन का माध्यम वाक्य ही होता है। कर्त्ता और क्रिया वाक्यरूपी भवन के दो दृढ़ स्तम्भ हैं, अत: कर्त्ता और क्रिया का सम्बन्ध सुदृढ़ होना चाहिए। संस्कृत में यद्यपि शब्दों के क्रम में उलटफेर करने से अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता, फिर भी अनुवाद की सरलता के लिए संस्कृत के वाक्यों का क्रम भी हिन्दी के समान ही है। पहले कर्त्ता फिर कर्म और अन्त में क्रिया।

संस्कृत में कोई भी शब्द विभक्ति-रहित नहीं प्रयुक्त होता। इसकी क्रियाओं में लिङ्ग-भेद नहीं होता है। तीनों लिङ्गों में क्रिया समान हो सकती है।

**अनुवाद के कुछ आवश्यक अङ्ग निम्नलिखित हैं–**

**(क) वचन–** संस्कृत में तीन वचन होते हैं–

(1) एकवचन (एक वस्तु के लिए)

(2) द्विवचन (दो वस्तु के लिए)

(3) बहुवचन (दो से अधिक वस्तु के लिए।)

**(ख) पुरुष–** संस्कृत में तीन पुरुष होते हैं–

(1) प्रथम पुरुष या अन्य पुरुष– जिसके विषय में बात कही जाय।

(2) मध्यम पुरुष–जिससे बात कही जाय।

(3) उत्तम पुरुष– जो बात को कहता है।

प्रत्येक पुरुष तीनों वचनों में होते हैं। क्रियाओं के रूप भी पुरुषों के आधार पर ही चलाये जाते हैं। इसलिए प्रत्येक क्रिया के नौ रूप उदाहरणार्थ इस प्रकार होते हैं–

| | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | पठति | पठत: | पठन्ति |
| **मध्यम पुरुष** | पठसि | पठथ: | पठथ |
| **उत्तम पुरुष** | पठामि | पठाव: | पठाम: |

क्रियाओं के साथ प्रत्येक पुरुष के प्रत्येक वचन में जुड़ने वाले कर्त्ता भी नौ हैं–

| | **एकवचन** | **द्विवचन** | **बहुवचन** |
|---|---|---|---|
| **प्रथम पुरुष** | स: (वह) | तौ (वे दोनों) | ते (वे सब) |
| **मध्यम पुरुष** | त्वम् (तुम) | युवाम् (तुम दोनों) | यूयम् (तुम सब) |
| **उत्तम पुरुष** | अहम् (मैं, हम) | आवाम् (हम दोनों) | वयम् (हम सब) |

**(ग) कर्त्ता–** क्रिया के करने वाले को कर्त्ता कहते हैं। कर्त्ता में प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। क्रिया के पहले 'कौन' लगाने से उत्तर में जो शब्द प्राप्त हो, वही कर्त्ता है।

**(घ) क्रिया–**जिससे किसी काम का करना या होना पाया जाय, उसे क्रिया कहते हैं।

**(ङ) काल–** क्रिया के तीन प्रमुख काल होते हैं–

**(1) वर्तमान काल–** जिससे चालू समय का बोध हो, वह वर्तमान काल है। इसके लिए लट् लकार का प्रयोग होता है।

**(2) भूतकाल–** जिससे बीते समय का बोध होता है, वह भूतकाल है। इसमें लङ् लकार का प्रयोग होता है।
**(3) भविष्यत् काल–** जिससे आने वाले समय का बोध होता है, वह भविष्यत् काल है। इसमें ऌट् लकार का प्रयोग होता है।
**(च) लिङ्ग–** लिङ्ग तीन प्रकार के होते हैं। संस्कृत में क्रिया के ऊपर लिङ्ग का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
(1) पुंलिङ्ग– जिससे पुरुष जाति का बोध होता है।
(2) स्त्रीलिङ्ग– जिससे स्त्री जाति का बोध होता है।
(3) नपुंसकलिङ्ग– जिससे न पुरुष जाति का बोध हो और न स्त्री जाति का।
**(छ) कारक–** कारक आठ होते हैं। ये निम्नलिखित हैं—

| **विभक्ति** | **कारक का नाम** | **चिह्न** |
|---|---|---|
| प्रथमा | कर्त्ता | ने |
| द्वितीया | कर्म | को |
| तृतीया | करण | से, के द्वारा |
| चतुर्थी | सम्प्रदान | के लिए |
| पंचमी | अपादान | से (अलग होने में) |
| षष्ठी | सम्बन्ध | का, के, की, रा,रे, री |
| सप्तमी | अधिकरण | में, पर, पे |
| सम्बोधन (प्रथमा) | सम्बोधन | हे, भो, अरे |

## लट् लकार (वर्तमान काल) प्रथम पुरुष

**नियम 1–** वर्तमान काल में लट् लकार का प्रयोग होता है। कर्तृवाच्य में कर्त्ता में प्रथमा विभक्ति होती है, अर्थात् प्रथमा विभक्ति का रूप लिखा जाता है और उसी कर्त्ता के अनुसार क्रिया का प्रयोग होता है।

**यथा–**

1. बालक: पठति – लड़का पढ़ता है।
2. बालिका पठति – लड़की पढ़ती है।
3. फलं पतति – फल गिरता है।
4. सा पठति – वह पढ़ती है।
5. भवान् गच्छति – आप जाते हैं।
6. भवती लिखति – आप लिखती हैं।
7. बालकौ गच्छत: – दो लड़के जाते हैं।
8. छात्रा: पठन्ति – छात्र पढ़ते हैं।

**नियम 2–** जब वाक्य में दो कर्त्ता होते हैं और 'च' (और) से जुड़े होते हैं, तब क्रिया द्विवचन होती है।
**नियम 3–** जब वाक्य में दो कर्त्ता 'वा' (अथवा) से जुड़े होते हैं, तब क्रिया द्विवचन की न होकर एकवचन की ही होती है।
**नियम 4–** जब वाक्य में दो से अधिक कर्त्ता 'च' से जुड़े होते हैं, तब क्रिया बहुवचन की होती है।
**नियम 5–** जब वाक्य में दो से अधिक कर्त्ता 'वा' से जुड़े होते हैं, तब क्रिया एकवचन की होती है।
**नियम 6–** 'च' 'वा' 'अथवा' आदि अव्यय हैं। हिन्दी में ये शब्द जिस शब्द के पहले आते हैं, संस्कृत में उसी शब्द के बाद प्रयुक्त होते हैं।

### आदर्श वाक्य

1. राम: कृष्णश्च पठत: – राम और कृष्ण पढ़ते हैं।
2. राम: कृष्ण: वा गच्छति – राम या कृष्ण जाता है।
3. राम: कृष्ण: मोहनश्च लिखन्ति – राम, कृष्ण और मोहन लिखते हैं।
4. राम: कृष्ण: हरि: वा गच्छति – राम या कृष्ण या हरि जाता है।
5. छात्रौ पठत: – दो छात्र पढ़ते हैं।

| | | |
|---|---|---|
| 6. बालिके हसतः | – | दो लड़कियाँ हँसती हैं। |
| 7. भवन्तः वदन्ति | – | आप लोग बोलते हैं। |
| 8. भवत्यः पश्यन्ति | – | आप लोग देखती हैं। |

## अभ्यास - 1

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए—**

1. वे सब जा रहे हैं। 2. लड़के और लड़कियाँ लिखते हैं। 3. राम और श्याम दौड़ते हैं। 4. मोहन या सोहन खा रहा है। 5. हरि, मोहन और सुरेश हँसते हैं। 6. सीता, गीता या लता आती है। 7. वे देखते हैं। 8. दो लड़कियाँ खा रही हैं। 9. लड़कियाँ गा रही हैं। 10. हाथी जा रहे हैं।

**सहायक शब्द—** आती है = आगच्छति। देखते हैं = पश्यन्ति। गा रही हैं = गायन्ति।

## लट् लकार (वर्तमान काल) मध्यम पुरुष

**नियम 1—** संस्कृत में तुम, तुम दोनों, तुम सब मध्यम पुरुष के लिये 'युष्मद्' शब्द का प्रयोग 'त्वम्, युवाम्, यूयम्' होता है।

**नियम 2—** यदि मध्यम पुरुष के साथ प्रथम पुरुष का कर्त्ता 'च' से जुड़ा हो तो क्रिया मध्यम पुरुष द्विवचनान्त होती है और यदि दो से अधिक कर्त्ता हों तो क्रिया मध्यम पुरुष बहुवचनान्त होती है।

**नियम 3—** यदि कई कर्त्ता में 'वा' अथवा 'या' जुड़े होते हैं, तो क्रिया अपने सबसे निकट (पास) के कर्त्ता के पुरुष तथा वचन के अनुसार होती है।

**आदर्श वाक्य**

| | | |
|---|---|---|
| 1. त्वं पठसि | – | तुम पढ़ते हो, पढ़ती हो। |
| 2. युवां पठथः | – | तुम दोनों पढ़ते हो, पढ़ती हो। |
| 3. यूयं पठथ | – | तुम सब या तुम लोग पढ़ते हो, पढ़ती हो। |
| 4. त्वं रामश्च गच्छथः | – | तुम और राम जाते हो। |
| 5. युवां रामः हरिश्च गच्छथ | – | तुम, राम और हरि जाते हो। |
| 6. यूयं महेशः सुरेशश्च गच्छथ | – | तुम लोग, महेश और सुरेश जाते हो। |
| 7. त्वं रामः हरिः वा गच्छति | – | तुम, राम या हरि जाते हो। |
| 8. युवां रामः ते वा गच्छन्ति | – | तुम दोनों राम या वे जाते हैं। |

## अभ्यास - 2

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए—**

1. हम या तुम पढ़ते हैं। 2. तुम लोग या वे देखते हैं। 3. तुम लोग या वह दौड़ता है। 4. वह और मैं लिखता हूँ। 5. हरि या राम खेल रहा है। 6. तुम, गंगा और गायत्री हँस रही हो। 7. तुम और गीता बोलते हो। 8. तुम दोनों खाते हो। 9. वे लोग और तुम पूछते हो। 10. तुम लोग या वे लोग आ रहे हैं।

**सहायक शब्द—** देखता हूँ = पश्यन्ति। दौड़ते हैं = धावन्ति। लिखता हूँ = लिखावः। हँस रही हो = हसथ। पूछते हो = पृच्छथ। आ रहे हैं = आगच्छन्ति।

## लट् लकार (वर्तमान काल) उत्तम पुरुष

**नियम 1—** संस्कृत में उत्तम पुरुष 'मैं, हम दोनों, हम सब या हम लोग' के लिए 'अस्मद्' शब्द का प्रयोग 'अहम्, आवाम्, वयम्' होता है।

**नियम 2—** यदि वाक्य में दो से अधिक कर्त्ता हों और वे 'च' से जुड़े हों तथा वे प्रथम, मध्यम और उत्तम पुरुष के हों, तो क्रिया उत्तम पुरुष बहुवचन की होती है।

**नियम 3–** यदि वाक्य में 'च' अव्यय से जुड़े हुए उत्तम और मध्यम पुरुष के दो ही कर्त्ता हों तो क्रिया उत्तम पुरुष द्विवचन की होगी।

**आदर्श वाक्य**

| | | |
|---|---|---|
| 1. अहं पश्यामि | – | मैं देखता हूँ, देखती हूँ। |
| 2. आवां पश्याव: | – | हम दोनों देखते हैं, देखती हैं। |
| 3. वयं पश्याम: | – | हम लोग देखते हैं, देखती हैं। |
| 4. त्वम् अहं रामश्च पठाम: | – | तुम, मैं और राम पढ़ते हैं। |
| 5. त्वम् अहं च हसाव: | – | तुम और मैं हँसता हूँ। |
| 6. स: वा त्वं वा अहं वा लिखामि | – | वह, तुम या मैं लिखता हूँ। |

## अभ्यास - 3

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. हम लोग खाते हैं। 2. मैं बोलता हूँ। 3. हम दोनों दौड़ते हैं। 4. हम, तुम और गोपाल पूछते हैं। 5. तुम और मैं देखता हूँ। 6. हरि या तुम आते हो। 7. तुम हरि और मैं रक्षा करता हूँ। 8. हम लोग या वे लोग सोते हैं। 9. वे दोनों और हम दोनों गिरते हैं। 10. तुम दोनों और हम लोग पाते हैं।

**सहायक शब्द–** पूछते हैं = पृच्छाम:। देखता हूँ = पश्याव:। आते हो = आगच्छसि। रक्षा करता हूँ = रक्षाम:। सोते हैं = शेरते। गिरते हैं = पताम:। पीते हैं = पिबाम:।

## लङ् लकार (भूतकाल) सभी पुरुष

**नियम 1–** जो काम बीते हुए समय में हो चुका है, उस काल (समय) को भूतकाल कहते हैं। भूतकाल के लिए संस्कृत में लङ्लकार का प्रयोग होता है।

**नियम 2–** कभी-कभी वर्तमान काल के प्रथम पुरुष की क्रिया में 'स्म' जोड़कर भूतकाल व्यक्त किया जाता है। यह प्राय: 'था' के लिए प्रयुक्त होता हैं। जैसे– पठति स्म = पढ़ रहा था, हसति स्म = हँसता था।

**आदर्श वाक्य**

| | | |
|---|---|---|
| 1. छात्र: अगच्छत् | – | छात्र चला गया। |
| 2. छात्रा अगच्छत् | – | छात्रा चली गयी। |
| 3. फलम् अपतत् | – | फल गिरा। |
| 4. स: अपश्यत् | – | उसने देखा। |
| 5. यूयम् अपतत् | – | तुम लोग गिर गये। |
| 6. आवाम् अकथयाव | – | हम दोनों ने कहा। |
| 7. बालक: गच्छति स्म | – | लड़का जा रहा था। |
| 8. बालिका लिखति स्म | – | लड़की लिख रही थी। |

## अभ्यास - 4

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

1. लड़कों ने खा लिया। 2. वे लोग चले गये। 3. हमने देखा। 4. लड़कियाँ रो रही थीं। 5. चोर भाग गये। 6. आप लोगों ने देखा। 7. श्याम ने लिखा। 8. वे दौड़ रहे थे। 9. हम लोगों ने सुना। 10. छात्रों ने याद किया।

**सहायक शब्द–** देखा = अपश्यन्। भाग गये = अपलायन्। दौड़ रहे थे = धावन्ति स्म। सुना = अशृणुम। याद किया = स्मरन्।

**2. कोष्ठक में दी हुई क्रिया को लङ् लकार में बदलो–**

(1) त्वं (लिखसि)। (2) तौ कुत्र (गच्छत:)। (3) बालकौ (स्मरत:)। (4) ते (हसन्ति)। 5. शिष्या: (नमन्ति)। 6. सा (गच्छति)। 7. युवां (पचथ:)। 8. मालाकार: (सिञ्चति)। 9. अहं (पृच्छामि)।

## लृट् लकार (भविष्यत्काल) सभी पुरुष

**नियम 1–** जब कोई काम आगे आने वाले समय में होता है, तब वह भविष्य काल में होता है और भविष्यकाल में लृट्लकार का प्रयोग होता है। इसके रूप लट्लकार के समान होते हैं। केवल 'ति' 'त' आदि प्रत्ययों के पहले 'स्य' जुड़ जाता है। जैसे– पठति–पठिष्यति।

**आदर्श वाक्य**

| | | |
|---|---|---|
| 1. सः पठिष्यति | – | वह पढ़ेगा। |
| 2. सा पठिष्यति | – | वह पढ़ेगी। |
| 3. फलं पतिष्यति | – | फल गिरेगा। |
| 4. रामः श्यामश्च गमिष्यतः | – | राम और श्याम जायेंगे। |
| 5. श्यामः हरिः वा भक्षयिष्यति | – | श्याम या हरि खायेगा। |
| 6. भवन्तः द्रिक्ष्यन्ति | – | आप लोग देखेंगे। |
| 7. भवती गमिष्यति | – | आप जायेंगी। |

## अभ्यास - 5

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. लड़के जायेंगे। 2. आप लोग लिखेंगे। 3. गीता खायेगी। 4. हम दोनों ठहरेंगे। 5. सतीश या शेखर पूछेगा। 6. तुम दोनों दोगे। 7. गणेश हँसेगा। 8. वे लोग आवेंगे। 9. मोहन, सोहन और रमेश देखेंगे। 10 हम लोग याद करेंगे।

**2. कोष्ठक में दी गयी हिन्दी क्रियाओं को संस्कृत में बदल कर लिखें–**

(1) आवां (जायेंगे)। (2) भवन्तः (लिखेंगी)। (3) सीता (पढ़ेगी)। (4) गुरुः (उपदेश देंगे)। (5) कन्याः (पकायेंगी)। (6) अहं (बैठूँगा)। (7) लता (गायेगी)। (8) पुत्रः (होगा) (9) बालिका (नाचेगी)। (10) शुकौ (बोलेंगे)।

## लोट् लकार, सभी पुरुष

**नियम 1–** लोट् लकार का प्रयोग आज्ञा, इच्छा, प्रार्थना, अनुमति, आशीर्वाद आदि अर्थों में होता है।

**नियम 2–** प्रथम पुरुष में इस लकार का प्रयोग प्रायः इच्छा प्रार्थना अर्थ में होता है।

**नियम 3–** मध्यम पुरुष में इसका प्रयोग आज्ञा, आशीर्वाद अर्थ में होता है। कभी-कभी आज्ञा में 'तुम' कर्त्ता छिपा रहता है। ऐसी दशा में क्रिया छिपे हुए कर्त्ता के अनुसार मध्यम पुरुष की होती है।

**नियम 4–** उत्तम पुरुष में इसका प्रयोग इच्छा और प्रश्न अर्थ में होता हैं।

**आदर्श वाक्य**

| | | |
|---|---|---|
| 1. सः लिखतु | – | वह लिखे |
| 2. सा पठतु | – | वह पढ़े |
| 3. भवान् आगच्छत् | – | आप आयें |
| 4. त्वं पठ | – | तुम पढ़ो |
| 5. चिरंजीवी भव | – | दीर्घायु हो |
| 6. अहं गच्छानि | – | मैं जाऊँ |
| 7. किम् अहं लिखानि | – | क्या मैं लिखूँ? |

## अभ्यास - 6

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. तुम लोग जाओ। 2. क्या मैं पढ़ूँ। 3. आप लोग कहें। 4. लड़के जायें। 5. आप प्रसन्न हों। 6. तुम दोनों ठहरो। 7. हाथी जाय। 8. वे लोग आवें। 9. पानी बरसे। 10. सेवक देखें।

**सहायक शब्द– कहें** = कथयन्तु। **बैठो** = तिष्ठतम् । **बरसे** = वर्षसु।

**2. कोष्ठांकित धातु का रिक्त स्थान में लोट् लकार रूप लिखें–**

(1) राम ............. (पठ्)। (2) जना: ............. (गम्)। (3) शिष्यौ .......... (नम्)। (4) पुत्रा: ............. (नम्)। (5) अहं ............. (लिख्)। (6) अत्र ......... (उप + विश्)। (7) त्वं बहि: मा ......... (गम्)।

## विधिलिङ् लकार (चाहिए) सभी पुरुष

**नियम 1–** विधिवाक्य (जिसमें 'चाहिए' शब्द का प्रयोग होता है)। इच्छा प्रकट करना, अनुमति, प्रार्थना, सम्भावना, सामर्थ्य प्रकट करना इत्यादि अर्थों में तथा यदि के साथ विधिलिङ् का प्रयोग होता है।

**विशेष–** इन अर्थों में कहीं-कहीं लोट् लकार का भी प्रयोग किया जाता है। 'चाहिए' से युक्त वाक्यों में कर्त्ता में 'को' का चिह्न लगा रहता है, उसे कर्म का चिह्न नहीं समझना चाहिए।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. बालक: पठेत् | – | लड़के को पढ़ना चाहिए या लड़का पढ़े। |
| 2. बालिका पठेत् | – | लड़की को पढ़ना चाहिए या लड़की पढ़े। |
| 3. बालका: पठेयु: | – | लड़कों को पढ़ना चाहिए या लड़के पढ़ें। |
| 4. छात्र: तत्र पठेत् | – | छात्र को वहाँ पढ़ना चाहिए या छात्र वहाँ पढ़ें। |
| 5. बालक: किं कुर्यात् | – | लड़का क्या करे? |
| 6. किम् अहं पठानि | – | क्या मैं पढ़ूँ। |

## अभ्यास - 7

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. उसे जाना चाहिए। 2. तुम लोगों को पढ़ना चाहिए। 3. यदि लड़के वहाँ आयें। 4. क्या वे जायँ। 5. उन लोगों को पीना चाहिए। 6. हम लोगों को दौड़ना चाहिए। 7. तुम्हें हँसना चाहिए। 8. लड़कियों को नाचना चाहिए। 9. हम दोनों को सोना चाहिए। 10. आप को सुनना चाहिए।

**सहायक शब्द–** पठेत् = पढ़ना चाहिए। धावेम् = दौड़ना चाहिए।

**2. रिक्त स्थानों में कोष्ठांकित धातु का विधिलिङ् लकार में उचित रूप लिखें–**

(1) भवन्त: ........... (पठ्)। (2) भवन्त: ........... (गम्)। (3) त्वम् ........... (नम्)। (4) सेवकौ ........... (नी)। (5) अहं ........... (दृश)। (6) ऋषि .......... (तप्)।

## अव्यय का प्रयोग

**नियम–** अव्यय शब्दों का रूप नहीं बदलता। इसलिए वे वाक्य में ज्यों का त्यों लिखे जाते हैं। 'च' 'वा' कुत्र, यत्र, तत्र, सर्वत्र, यदा, तदा, कदा, तर्हि आदि अनेक अव्यय शब्द हैं।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. इदानीं त्वं कुत्र गच्छसि | – | इस समय तुम कहाँ जा रहे हो? |
| 2. वयम् अद्य न पठिष्याम: | – | हम लोग आज नहीं पढ़ते? |
| 3. ते अत्र कदा आगच्छन्ति | – | वे यहाँ कब आते हैं? |
| 4. यत्र त्वम् इच्छसि तत्र गच्छ | – | जहाँ तुम चाहते हो, वहाँ जाओ। |

## अभ्यास - 8

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. लड़के वहाँ नहीं जायेंगे। 2. ईश्वर सब जगह हैं। 3. वे यहाँ कब आयेंगे। 4. जैसा चाहते हो, वैसा होगा।

5. आप लोग जहाँ चाहें वहाँ ठहरें। 6. तुम लोग यहाँ मत आना। 7. तुम लोगों ने वहाँ क्या देखा। 8. वह नित्य सबेरे पढ़ता है। 9. जब वह गया, तब फिर नहीं आया। 10. उसे कल जाना चाहिए।

**सहायक शब्द–** जैसा = यथा। वैसा = तथा। चाहें = इच्छासु। क्या = किम्। सबेरे = प्रात:। फिर = पुन:। कल = श्व।

## सर्वनाम का प्रयोग

**नियम– 1–** तद् (वह), यद् (जो), इदम् (यह), एतत् (यह), किम् (कौन, क्या), सर्व (सब), युष्मद् (तुम), अस्मद् (मैं, हम), अदस् (वह) आदि शब्द सर्वनाम हैं। इसमें युष्मद् और अस्मद् क्रमश: मध्यम तथा उत्तम पुरुष के हैं। शेष सभी प्रथम पुरुष के हैं।

**नियम 2–** सर्वनामों का प्रयोग विशेषणों की तरह होता है। जहाँ ये विशेषणों की तरह काम में आते हैं वहाँ उनके लिङ्ग, वचन और विभक्ति अपने विशेष्य के अनुसार होते हैं।

**नियम 3–** सर्वनाम शब्दों का प्रयोग संज्ञाओं के स्थान पर होता है, अत: इनके रूप तीनों लिङ्गों में चलते हैं।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. का लिखति | – | कौन लिखती है? |
| 2. का गच्छति | – | कौन जा रही है? |
| 3. अयं हसति | – | यह हँसती है। |
| 4. के गच्छन्ति | – | कौन जा रहे हैं? |
| 5. सर्वे पश्यन्ति | – | सब देख रहे हैं। |
| 6. अयं क: अस्ति | – | यह कौन है? |

## अभ्यास - 9

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. जो चलता है, वह गिरता है। 2. ये लोग कहाँ जा रहे हैं? 3. वहाँ कौन जायेगा? 4. वह कौन लिख रही है? 5. यहाँ कौन आया था? 6. सब लोग वहाँ बैठे हैं। 7. कौन रो रही हैं? 8. जो लिखेगा वह पढ़ेगा। 9. वह कौन देख रही है? 10. वह यहाँ नहीं आया।

**सहायक शब्द–** ये लोग = इमे। कौन = का (स्त्रीलिङ्ग)। जो = य: (पुंलिङ्ग)

## विशेषण का प्रयोग

**नियम 1–** जो शब्द संज्ञा और सर्वनाम की विशेषता बतलाते हैं, उन्हें विशेषण कहते हैं। जिसकी विशेषता प्रकट की जाती है, उसे विशेष्य कहते हैं। **जैसे–** सुन्दर: बालक:– सुन्दर लड़का, इसमें लड़का विशेष्य और सुन्दर विशेषण हुआ।

**नियम 2–** जो लिङ्ग, वचन और कारक विशेष्य में होता है, वही लिङ्ग, वचन और कारक (विभक्ति) उसके विशेषण में भी होता है **जैसे–** सुन्दर: पुरुष: – सुन्दर पुरुष (पुंलिङ्ग)। सुन्दरी नारी - सुन्दर स्त्री (स्त्रीलिङ्ग)। सुन्दरम् गृहम् (नपुंसकलिङ्ग)।

**नियम 3–** तद्, यद्, इदम्, अदस् , किम्, युष्मद्, अस्मद्, सर्व आदि सर्वनाम शब्दों का प्रयोग भी विशेषण की तरह होता है। जहाँ ये विशेषण की तरह प्रयुक्त होते हैं वहाँ इनके लिङ्ग, वचन तथा कारक (विभक्ति) अपने विशेष्य के अनुसार होते हैं। **जैसे–** अयं बालक: – यह लड़का (पुंलिङ्ग), इयं बालिका– यह लड़की (स्त्रीलिङ्ग), इदम् फलम्– यह फल (नपुंसकलिङ्ग)।

**नियम 4–** संस्कृत में किम् (क्या) शब्द के आगे 'चित्' जोड़ देने से उसका अर्थ 'किसी' हो जाता है। ऐसे स्थान पर किम् शब्द का रूप उसके विशेष्य के अनुसार बनाकर' 'चित्' जोड़ा जाता है तथा आवश्यकतानुसार संधि भी करनी पड़ती है। **जैसे–** कस्मिश्चिद् वने–किसी वन में, आदि।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. श्याम: बुद्धिमान् बालक: अस्ति | – | श्याम बुद्धिमान लड़का है। |
| 2. श्यामा बुद्धिमती बालिका अस्ति | – | श्यामा चतुर लड़की है। |

| | | |
|---|---|---|
| 3. इदं गृहं सुन्दरं वर्तते | – | यह घर सुन्दर है। |
| 4. काशी विशाला नगरी अस्ति | – | काशी बड़ी नगरी है। |

## अभ्यास - 10

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत अनुवाद कीजिए–**

1. यह उत्तम छात्र है। 2. जो लड़का जा रहा है वह मोटा है। 3. रावण बड़ा दुष्ट था। 4. वह लड़की चली गई। 5. यह मनोहर फूल है। 6. राधा सुन्दर नारी थी। 7. रमेश बुद्धिमान छात्र है। 8. भगवद्गीता उत्तम पुस्तक है। 9. यह वस्त्र पीला है। 10. यह चन्द्रमा है।

**सहायक शब्द–** मोटा = स्थूल:। पीला = पीतम्। बड़ा = अति।

### संख्यावाचक विशेषण

**नियम 1–** संख्यावाचक (एक, द्वि, त्रि, चतुर, पंचन्) आदि शब्द विशेषण होते हैं। अत: इनके रूप अपने विशेष्य के अनुसार तीनों लिङ्गों में होते हैं। **जैसे–**एक: बालक: (एक लड़का), एका बालिका (एक लड़की)। एकम् नगरम्– (एक नगर) आदि।

**नियम 2–** प्रथम: (पहला), द्वितीय: (दूसरा), तृतीय: (तीसरा), चतुर्थ: (चौथा), पंचम: (पाँचवाँ), षष्ठ: (छठवाँ) आदि क्रमबोधक संख्यावाचक विशेषण सभी लिङ्गों और वचनों में अपने विशेष्य के अनुसार होते हैं। **जैसे–**प्रथम: बालक: (पहला लड़का), द्वितीय: पुरुष (दूसरा आदमी), तृतीय: पुष्पम् (तीसरा फूल) आदि।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. अयम् एक: गज: अस्ति | – | यह एक हाथी है। |
| 2. द्वितीय: क: पुरुष: अस्ति | – | दूसरा कौन आदमी है। |
| 3. इयम् एका बालिका आगच्छति | – | यह एक लड़की आ रही है। |
| 4. इदम् एकं पुष्पम् अस्ति | – | यह एक फूल है। |
| 5. तृतीया बालिका किं करोति | – | तीसरी लड़की क्या कर रही है? |

## अभ्यास - 11

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. एक लड़का है। 2. पहला घोड़ा दौड़ रहा है। 3. दूसरी स्त्री कहाँ जायेगी। 4. एक घर गिर गया। 5. यह एक मनोहर फूल है। 6. ये तीन फल हैं। 7. महेश एक अच्छा लड़का है। 8. तीसरी लड़की यहाँ आयेगी। 9. यह नवीं कक्षा है। 10. पहला आदमी मोटा है।

**सहायक शब्द–** घोड़ा = अश्व:। घर = गृहम्। अच्छा = उत्तम। यह = इदम्।

### कर्त्ता कारक (प्रथमा विभक्ति)

**नियम 1–** क्रिया करने वाले को कर्त्ता कहते हैं और कर्तृवाच्य के कर्त्ता में प्रथमा विभक्ति होती है। इसका चिह्न (पहचान) 'ने' है। यह कहीं-कहीं छिपा रहता है। **जैसे–** राम लिखता है–राम: लिखति (कर्तृवाच्य) में 'ने' छिपा है और राम: प्रथमा विभक्ति का शब्द है।

**नियम 2–** संस्कृत में बिना विभक्ति लगाये शब्द निरर्थक होते हैं, अत: अर्थ बताने के लिए संज्ञा शब्दों में प्रथमा विभक्ति आती है। **जैसे–**राम: = राम। गज: = हाथी, शुक: = तोता, आदि।

**नियम 3–** पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग बनाने के लिए भी प्रथमा विभक्ति आती है। **जैसे–** तट: (पुंलिङ्ग), तटी (स्त्रीलिङ्ग), तटम् (नपुंसकलिङ्ग)– किनारा आदि।

**नियम 4–** अव्ययों के साथ तथा केवल नाम के कथन में प्रथमा विभक्ति होती है। **जैसे–** गाँधी 'बापू' इति प्रसिद्ध: अस्ति– गाँधी बापू इस (नाम से) प्रसिद्ध हैं।

## आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. बालक: बालिका च पठत: | – | लड़का और लड़की पढ़ रहे हैं। |
| 2. भानु: शशि: वा गच्छति | – | भानु या शशि जाता है। |
| 3. शक: एक: पक्षी अस्ति | – | तोता एक चिड़िया है। |
| 4. इदम् एकं नगरम् अस्ति | – | यह एक नगर है। |
| 5. इयम् एका नगरी अस्ति | – | यह एक नगरी है। |
| 6. संस्कृत देवभाषा इति प्रसिद्धा अस्ति | – | संस्कृत देवभाषा के नाम से प्रसिद्ध है। |

## अभ्यास - 12

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

1. अशोक 'प्रियदर्शी' इस नाम से प्रसिद्ध था। 2. राम और लक्ष्मण भाई थे। 3. गीता और रेखा चली गयीं। 4. सीता या रीता नहीं आयेंगी। 5. यह एक सुन्दर उपवन है। 6. हम और तुम वहाँ कब चलेंगे। 7. सीता सती नारी थी। 8. वे लोग वहाँ जायें।

**सहायक शब्द–** इस नाम से = इति। भाई = भ्रातरौ।

## कर्म कारक (द्वितीया विभक्ति)

**नियम 1–** किसी वाक्य में प्रयोग किये गये पदार्थों में से कर्त्ता जिसको सबसे अधिक चाहता है, उसे कर्म कहते हैं, अर्थात् जिस पर क्रिया का फल समाप्त होता है (पड़ता) है, उसे कर्म कहते हैं। कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है। **जैसे–** बालक: वानरं ताडयति–लड़का बन्दर को मारता है। यहाँ 'ताडयति' क्रिया का फल वानर पर पड़ता है, अत: उसमें द्वितीया विभक्ति हुई है।

**विशेष–** क्रिया के पहले 'किसको' अथवा 'क्या' लगाने से जो उत्तर में आता है, वह कर्म होता है। हिन्दी में 'कर्म' का चिह्न 'को' है। यह कहीं-कहीं छिपा भी रहता है। जैसे–राम: पुस्तकं पठति– राम पुस्तक पढ़ता है। यहाँ कर्म का चिह्न 'को' छिपा है। यहाँ वाक्य में 'क्या' लगाने से 'क्या पढ़ता है, उत्तर में 'पुस्तक' आती है, अत: इसमें द्वितीया विभक्ति होगी।

वाक्य में यदि कर्म एक होता है तो उसमें एकवचन, दो हों तो द्विवचन और दो से अधिक हों तो बहुवचन होता है। **जैसे–** अहं गणेशं नमामि–मैं गणेश को प्रणाम करता हूँ। बालका: फलानि खादन्ति—लड़के फल खाते हैं, आदि। **यथा–**

| | | |
|---|---|---|
| 1. बालक: नाटकम् अपश्यत् | – | लड़के ने नाटक देखा। |
| 2. बालिका: गीतं गायन्ति | – | लड़कियाँ गीत गाती हैं। |
| 3. अहं सूर्यं पश्यामि | – | मैं सूर्य को देखता हूँ। |
| 4. शिक्षक: छात्रान् ताडयति | – | अध्यापक छात्रों को पीटता है। |

**नियम 2–**याच् (माँगना), पच् (पकाना), पृच्छ (पूछना), ब्रू (बोलना), नी (ले जाना), हृ (चुराना) आदि और इनके अर्थ वाली अन्य धातुओं के योग में द्वितीया विभक्ति होती है।

**जैसे–गुरुः छात्रं प्रश्नं पृच्छति–**गुरुजी छात्र से प्रश्न पूछते हैं। यहाँ 'छात्र से' कर्म कारक नहीं है, किन्तु इस विशेष नियम से 'छात्र' में द्वितीया विभक्ति हो गयी है।

**अन्य उदाहरण–**

| | | |
|---|---|---|
| 1. शिशु: मातरं मोदकं याचते | – | बच्चा माँ से लड्डू माँगता है। |
| 2. स: तण्डुलान् ओदनं पचति | – | वह चावलों से भात पकाता है। |
| 3. अध्यापक: छात्रं प्रश्नं पृच्छति | – | अध्यापक छात्र से प्रश्न पूछता है। |
| 4. गोपाल: पुस्तकं गृहं नयति | – | गोपाल पुस्तक घर ले जाता है। |

**नियम 3–**गमनार्थक धातु के योग में द्वितीया विभक्ति होती है। **जैसे–**बालक: गृहं गच्छति–लड़का घर में जाता है।

**नियम 4–**शी (सोना), स्था (ठहरना) तथा आस् (बैठना) धातु से पहले यदि 'अधि' उपसर्ग लगा हो तो इनके आधार में

द्वितीया विभक्ति हो जाती है। **जैसे—**राम: शिलाम् अधि- शेते–राम शिला पर सोता है।

**नियम 5—**अभित: (सब तरफ), परित: (चारो तरफ), सर्वत: (सब तरफ), उभयत: (दोनों ओर), हा, धिक, प्रति, बिना आदि के योग में (इन शब्दों की जिससे निकटता प्रतीत होती है, उनमें) द्वितीया विभक्ति होती है।

## आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. कपि: वृक्षम् आरोहति | – | बन्दर पेड़ पर चढ़ता है। |
| 2. सिंह: वनम् अटति | – | सिंह वन में घूमता है। |
| 3. राजा सिंहासनम् अधितिष्ठति | – | राजा सिंहासन पर स्थित है। |
| 4. विद्यालयम् उभयत: एका नदी बहति | – | विद्यालय के दोनों ओर एक नदी बहती है। |
| 5. व्याध: मृगं प्रति अपश्यत् | – | बहेलिये ने हिरन की ओर देखा। |
| 6. मम् ग्रामं परित: वृक्षा: सन्ति | – | मेरे गाँव के चारों ओर पेड़ हैं। |

## अभ्यास - 13

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—**

1. सड़क के दोनों ओर पेड़ हैं। 2. विद्यार्थी गुरु के चारों ओर बैठे हैं। 3. तुम्हारे प्रति कोई ध्यान करेगा। 4. लंका के चारों ओर समुद्र है। 5. राम ने रावण को मारा। 6. रमेश पुस्तक लाता है। 7. सुरेश शिक्षक को प्रणाम करता है। 8. छात्र अध्यापक से पुस्तक माँगते हैं। 9. नौकर गाँव से बकरी चुराता है। 10. वे लोग फल खाएँगे।

**2. कोष्ठांकित शब्दों में उचित विभक्ति लगाओ—**

(1) (नगर) परित: जलं अस्ति।
(2) मुनि: (कुशासन) अधितिष्ठति।
(3) हरि: (वैकुण्ठ) अधितिष्ठति।
(4) मम विद्यालय: (गृह) निकषा अस्ति।
(5) (लवण) बिना भोजन स्वादु न भवति।

## करण कारक (तृतीया विभक्ति)

**नियम 1—**जिसकी सहायता से कर्त्ता अपना कार्य पूरा करता है, उसे करण कहते हैं। करण में तृतीया विभक्ति होती है। उसकी पहचान 'से' या 'द्वारा' है। **जैसे—**छात्र: मुखेन खादति–छात्र मुख से खाता है। यहाँ कर्त्ता छात्र मुख से अपना काम पूरा कर रहा है, अत: वह करण कारक है और उसमें तृतीया विभक्ति 'मुखेन' हुई।

**विशेष—** आँख, कान, हाथ, पैर प्रत्येक आदमी के दो होते हैं। अत: जब एक के लिए इसका प्रयोग होता है, तब ये सदा द्विवचन में ही आते हैं। **जैसे—**अहं नेत्राभ्यां पश्यामि–मैं आँख से देखता हूँ।

जहाँ इनका प्रयोग एक से अधिक के लिए होता है, वहाँ इसमें द्विवचन और बहुवचन दोनों ही हो सकते हैं। जैसे– **वयं कर्णाभ्याम्** (द्विवचन) अथवा **कर्णै:** (बहुवचन) **शृणुम:—** हम लोग कान से सुनते हैं। यहाँ द्विवचन या बहुवचन दोनों हो सकता है।

**यथा—**

| | |
|---|---|
| (1) सीता नाक से फूल सूँघती है। | सीता नासिकया पुष्पं जिघ्रति। |
| (2) मैं गेंद से खेलता हूँ। | अहं कन्दुकेन क्रीडामि। |
| (3) मैं मुँह से बोलता हूँ। | अहं मुखेन वदामि। |
| (4) हम सब आँखों से देखते हैं। | वयं नेत्राभ्यां पश्याम:। |
| (5) किसान हल से खेत जोतता है। | कृषक: हलेन क्षेत्रं कर्षति। |

**नियम 2—** 'साथ' का अर्थ रखने वाले सह, साकम्, सार्द्धम्, समम् शब्दों के योग में तृतीया विभक्ति होती है।

**नियम 3—** जिस शब्द से शरीर के किसी अंग का विकार सूचित होता है, उस अंगवाचक शब्द में तृतीया विभक्ति होती है।

**नियम 4**— समानार्थक तुल्य:, सम:, समान: शब्दों के योग में तृतीया विभक्ति होती है।
**नियम 5**— किसी वस्तु के मूल्य में तृतीया विभक्ति होती है।
**नियम 6**—निषेधार्थक 'आलम्' के योग में तृतीया विभक्ति होती है।
**नियम 7**—किम्, कार्यम्, कोऽर्थ:, प्रयोजनम् के योग में तृतीया विभक्ति होती है।

## आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. सीता राम के साथ वन गयी। | – | सीता रामेण सह वनम् अगच्छत् । |
| 2. मैं पिताजी के साथ बाजार जाता हूँ। | – | अहं जनकेन साकं/समं आपणं गच्छामि। |
| 3. राम नेत्र से काणा है। | – | राम: नेत्रेण काण: अस्ति। |
| 4. पैर से लँगड़ा वह पुरुष चल नहीं सकता। | – | पादेन खञ्ज: स: जन: चलितुं न शक्नोति। |
| 5. अर्जुन के समान धनुर्धारी नहीं था। | – | अर्जुनेन सम: धनुर्धारी न आसीत् । |
| 6. सीता का मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर है। | – | सीताया: मुखं चन्द्रेण तुल्यम् अस्ति। |
| 7. विवाद मत करो। | – | विवादेन अलम् । |
| 8. मूर्खों को पुस्तकों से क्या प्रयोजन? | – | मूर्खाणां पुस्तकै: किं प्रयोजनम्? |

## अभ्यास - 14

**(1) निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—**

(1) ग्वाले कृष्ण के साथ खेलते हैं। (2) मैं गेंद से खेलता हूँ। (3) तुम कलम से लिखते हो। (4) पुत्र पिता को मस्तक से नमस्कार करता है। (5) राम पैर से लँगड़ा है। (6) कानों से बहरा संगीत की ध्वनि नहीं सुनता है। (7) वे डण्डे से मारते हैं। (8) भीम गदा से प्रहार करता है। (9) कर्ण के समान दानी नहीं था (10) रोओ मत।

**(2) नीचे दिये गये शब्दों में से चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—**

नेत्राभ्याम्, कर्णाभ्याम्, हस्तेन, कन्दुकेन, वाणेन, हलेन, विद्या, विनयेन, ज्ञानेन।

(1) अहं ............... क्रीडामि। (2) वृषभौ ................ भूमिं कर्षत:। (3) नर: ............... प्रतिष्ठां प्राप्नोति। (4) बालक: ............ पश्यति। (5) राम: ............ हन्ति। (6) कृषक: ........... ताडयति। (7) राम: ........... शृणोति। (8) अहं ........... लिखामि। (9) मनुष्यस्य शोभा ........... अस्ति।

## सम्प्रदान कारक (चतुर्थी विभक्ति)

**नियम 1**—जिसको कोई वस्तु दी जाती है या जिसके लिए कोई कार्य किया जाता है, उसे सम्प्रदान कहते हैं। सम्प्रदान में चतुर्थी विभक्ति होती है। सम्प्रदान का चिह्न 'को' या 'के लिए' है।

**यथा—**

| | |
|---|---|
| (1) मैं तेरे लिए पुस्तक लाऊँगा। | अहं तुभ्यं पुस्तकम् आनेष्यामि। |
| (2) वह दरिद्रों को धन देता है। | स: दरिद्रेभ्य: धनं यच्छति। |
| (3) राजा भिक्षुओं को भोजन देता है। | नृप: भिक्षुकेभ्य: भोजनं ददाति। |
| (4) वे हमें फल देते हैं। | ते अस्मभ्यं फलानि यच्छन्ति। |
| (5) वे दोनों राम के लिए जल लाते हैं। | तौ रामाय जलम् आनयत:। |

**नियम 2**—'रुच्' धातु या उसके समान अर्थ वाली धातु के योग में, प्रसन्न होने में चतुर्थी विभक्ति होती है।
**नियम 3**—स्पृह् धातु के योग में ईप्सित पदार्थ में चतुर्थी विभक्ति होती है।
**नियम 4**—क्रुध्, दुह्, ईर्ष्य्, असूय् धातुओं के योग में, जिसके प्रति क्रोध आदि किया जाता है, चतुर्थी विभक्ति होती है।
**नियम 5**—नम:, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा तथा अलम् के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है।

## आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. मुझे लड्डू अच्छे लगते हैं। | – | मह्यं मोदका: रोचन्ते। |
| 2. उसे पूआ अच्छा लगता है। | – | तस्मै अपूप: स्वदते। |
| 3. पिता पुत्र पर गुस्सा होता है। | – | जनक: पुत्राय क्रुध्यति। |
| 4. रावण राम से द्रोह करता है। | – | रावण: रामाय द्रुह्यति। |
| 5. दुर्जन सज्जनों से ईर्ष्या करते हैं। | – | दुर्जना: सज्जनेभ्य: ईर्ष्यन्ति। |
| 6. गुरु को नमस्कार। | – | गुरुवे नम:। |
| 7. पुत्र का कल्याण। | – | पुत्राय स्वस्ति। |
| 8. भूतों के लिए बलि। | – | भूतेभ्य: बलि:। |
| 9. अग्नि के लिए स्वाहा। | – | अग्नये स्वाहा। |

## अभ्यास - 15

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

1. दुष्ट सज्जनों से ईर्ष्या करते हैं। 2. तुम लड़कों से द्रोह करते हो। 3. कौरव पाण्डवों पर क्रोध करते थे। 4. इस समय छात्रों को पढ़ना अच्छा नहीं लगता। 5. सज्जनों को विवाद अच्छा नहीं लगता। 6. भगवान शिव को नमस्कार है। 7. शाम को टहलना सबको अच्छा लगता है। 8. राम ने कृष्ण को गेंद दी। 9. नौकर स्वामी के लिए फल लाया।

**सहायक शब्द–**सज्जनों से = सज्जनेभ्य:। द्रोह करते हो = द्रुह्यसि। पढ़ना = पठनम्, अध्ययनम्। अच्छा नहीं लगता = न रोचते। टहलना = भ्रमणम्।

## अपादान कारक (पंचमी विभक्ति)

**नियम 1–**जिससे किसी वस्तु का प्रत्यक्ष अथवा कल्पित रूप से अलग होना प्रकट होता है, उसे अपादान कारक कहते हैं। अपादान में पंचमी विभक्ति होती है। इसकी पहचान (चिह्न) 'से' है। जैसे–**हरि अश्वात् अपतत्–**हरि घोड़े से गिर पड़ा। इस वाक्य में 'घोड़े से' हरि अलग हो गया है, अत: अश्व में पंचमी विभक्ति हुई।

**अन्य उदाहरण–**

| | | |
|---|---|---|
| 1. मम हस्तात् पुस्तकम् अपतत् | – | मेरे हाथ से किताब गिर गयी। |
| 2. छात्रा: गृहात् आगच्छन्ति | – | छात्र घर से आते हैं। |
| 3. अशोक: वृक्षात् अवतरति | – | अशोक पेड़ से उतरता है। |
| 4. वृक्षात् पत्राणि पतन्ति | – | पेड़ से पत्ते गिरते हैं। |
| 5. कूपात् जलम् आनय | – | कुएँ से पानी लाओ। |

**नियम 2–**जिससे डरा जाता है या रक्षा की जाती है, उसमें पंचमी विभक्ति होती है। जैसे–**स: चौरात् विभेति–**वह चोर से डरता है। **पिता पुत्रं पापात् त्रायते–**पिता पुत्र को पाप से बचाता है।

**नियम 3–** जिसमें कोई वस्तु हटायी जाती है उसमें पंचमी विभक्ति होती है। जैसे– **गुरु: शिष्यं कुमार्गात् निवारयति–**गुरु शिष्य को कुमार्ग से रोकता है।

**नियम 4–** जिससे नियमपूर्वक पढ़ा जाता है, उसमें पंचमी विभक्ति होती है। जैसे– **अहं गुरो: व्याकरण पठामि–** मैं गुरुजी से व्याकरण पढ़ता हूँ।

**नियम 5–** अन्य (सिवाय) दूर, इतर (दूसरा) ऋते (बिना) दिशावाचक तथा कालवाचक शब्दों के योग में पंचमी विभक्ति होती है। जैसे–**ग्रामात् पूर्व नदी बहति–**गाँव से पूर्व नदी बहती है।

## आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. जना: सिंहात् विभ्यति | – | लोग सिंह से डरते हैं। |
| 2. त्वं चौरात् बालं रक्ष | – | तुम चोर से बालक को बचाओ। |

| | | |
|---|---|---|
| 3. कृषका: क्षेत्रात् पशून् निवारयन्ति | – | किसान खेत से पशुओं को रोकते हैं। |
| 4. बालका: अध्यापकात् गणितं पठन्ति | – | लड़के अध्यापक से गणित पढ़ते हैं। |
| 5. ज्ञानात् ऋते न मुक्ति: | – | ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं होती। |
| 6. गंगा हिमालयात् प्रभवति | – | गंगा हिमालय से निकलती है। |

## अभ्यास - 16

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए–**

1. आजकल विद्यार्थी अध्यापक से नहीं डरते हैं। 2. चूहे बिल्ली से डरते हैं। 3. तालाब में कमल पैदा होते हैं। 4. मैं अपने मित्र के साथ पढ़ता हूँ। 5. माली बाग से जानवरों को निकालता है। 6. चैत के पहले फागुन आता है। 7. कृष्ण के सिवाय मेरी रक्षा कौन करेगा? 8. मेरे गाँव से दूर एक पहाड़ है।

**सहायक शब्द–** आजकल = इदानीम्। चूहे = मूषका:। पैदा होते हैं = प्रभवन्ति। आता है = आयाति। कृष्ण के सिवाय = कृष्णात् अन्य:।

**2. कोष्ठांकित शब्दों में उचित विभक्ति लगाइए–**

(1) यमुना (हिमालय) प्रभवति। (2) शिष्य (अध्यापक) निलीयते। (3) (फाल्गुन) अनन्तरं चैत्र: आयाति। (4) (धन) ऋते सुखं न अस्ति। (5) बालिका (सर्प) त्रसति।

## सम्बन्ध कारक (षष्ठी विभक्ति)

जब दो या अधिक शब्दों में सम्बन्ध दिखाया जाता है, उसमें षष्ठी विभक्ति होती है। विभक्ति के चिह्न 'का, के, की; रा, रे, री' है।

### आदर्श वाक्य

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | कृष्ण वसुदेव के पुत्र थे। | – | कृष्ण: वसुदेवस्य पुत्र: आसीत्। |
| 2. | राम भरत के बड़े भाई थे। | – | राम: भरतस्य ज्येष्ठ: भ्राता आसीत्। |
| 3. | कौशल दशरथ की रानी थी। | – | कौशल्या दशरथस्य राज्ञी आसीत्। |
| 4. | रामू नरेश का नौकर है। | – | रामू नरेशस्य सेवक: अस्ति:। |
| 5. | कुएँ का जल मीठा है। | – | कूपस्य जलं मधुरम् अस्ति। |
| 6. | समुद्र का पानी खारा होता है। | – | समुद्रस्य जलं क्षारं भवति। |
| 7. | यह किसान का खेत है। | – | एतत् कृषकस्य क्षेत्रम् अस्ति। |
| 8. | हमारा विद्यालय नगर के मध्य है। | – | अस्माकं विद्यालय: नगरस्य मध्ये अस्ति। |
| 9. | रामायण के रचयिता वाल्मीकि हैं। | – | रामायणस्य रचयिता वाल्मीकि: अस्ति। |
| 10. | गंगा का जल पवित्र होता है। | – | गंगाया: जलं पवित्रं भवति। |

## अभ्यास - 17

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत-अनुवाद कीजिए–**

(1) यह राम का घर है। (2) यह कृष्ण की पुस्तक है। (3) यह लाल फूलों की माला है। (4) लक्ष्मण राम के भाई थे। (5) कृष्ण सुदामा के मित्र थे। (6) गाँव के पास बगीचा है।

## अधिकरण कारक (सप्तमी विभक्ति)

जिस स्थान में कोई कार्य होता है, उसमें अधिकरण कारक होता है। अधिकरण कारक में सप्तमी विभक्ति होती है। अधिकरण के चिह्न 'में, पर, पे' है।

**नियम 1**–जिस पर स्नेह किया जाता है, जिसमें भक्ति या विश्वास किया जाता है, उसमें सप्तमी विभक्ति होती है।

**नियम 2**—जब किसी एक कार्य के हो जाने पर दूसरे कार्य का होना प्रतीत हो, तब पहले हो चुके कार्य में तथा उसके कर्त्ता में सप्तमी विभक्ति होती है।

**नियम 3**—जिस समय कोई काम होता है, समयवाचक शब्द सप्तमी विभक्ति में रखा जाता है।

**नियम 4**—जब किसी वस्तु की अपने समूह में विशेषता प्रकट की जाती है तो समूहवाचक शब्द में सप्तमी विभक्ति या षष्ठी विभक्ति होती है।

**नियम 5**—कुशल, निपुण, पटु आदि अर्थवाची शब्दों के योग में सप्तमी विभक्ति होती है।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. मैं आसन पर बैठा हूँ। | – | अहम् आसने उपविशामि। |
| 2. वह नगर में रहता है। | – | सः नगरे वसति। |
| 3. खेत में अन्न उत्पन्न होता है। | – | क्षेत्रे अन्नम् उत्पन्नं भवति। |
| 4. तालाब में कमल खिलते हैं। | – | सरोवरे कमलानि विकसन्ति। |
| 5. पात्र में जल है। | – | पात्रे जलम् अस्ति। |
| 6. मैं सवेरे घूमता हूँ। | – | अहम् प्रातःकाले भ्रमणामि। |
| 7. वे दो बजे यहाँ आये। | – | ते द्विवादनसमये अत्र आगच्छन् । |
| 8. माँ बालक से प्यार करती है। | – | माता बालके स्निह्यति। |
| 9. रमेश माँ के लिए अच्छा है। | – | रमेशः मातुः साधुः। |

## अभ्यास - 18

**1. निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—**

(1) मैं विद्यालय में पढ़ता हूँ। (2) फूलों पर भौंरे गूँजते हैं। (3) वृक्षों पर पक्षी बैठे हैं। (4) सैनिक पर्वत पर खड़ा है। (5) राम के चले जाने पर भरत अयोध्या आये।

**2. कोष्ठांकित शब्दों का सप्तमी विभक्ति में उचित रूप लिखो—**

(1) सः (गृह) वसति। (2) (नगर) एकः विद्यालयः अस्ति। (3) मम (कक्षा) त्रिंशत् छात्राः पठन्ति। (4) पिता (पुत्र) स्निह्यति। (5) अहं (मध्याह्न) नगरं गमिष्यामि।

### सम्बोधन

**नियम 1**— जिसे पुकारा जाता है उसमें सम्बोधन होता है। सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति होती है। इसका चिह्न हे, अरे, ए, आदि हैं। ये चिह्न शब्द से पहले लगते हैं। **जैसे**— हे राम! भो बालक!— हे राम अरे लड़के, आदि।

**नियम 2**— संस्कृत में सम्बोधन के एकवचन का रूप बदलता है, शेष में कर्त्ता कारक के समान होता है।

**विशेष**— सर्वनाम शब्दों में सम्बोधन नहीं होता है।

### आदर्श वाक्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. भो पुत्र ! त्वं कुत्र गच्छसि। | – | अरे बेटा! तुम कहाँ जा रहे हो? |
| 2. बालकाः प्रतिदिनं प्रातः उद्यानं भ्रमत। | – | लड़कों प्रतिदिन सबेरे बगीचे में भ्रमण करो। |

## अभ्यास - 19

**निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—**

1. छात्रो ! परिश्रम से पढ़ो। 2. गुरुदेव! चित्र में क्या है? 3. हे राम ! मेरी रक्षा करो। 4. महर्षि ! आप सब कुछ जानते हैं। 5. विद्यार्थियो ! अपने आसन पर बैठ जाओ।

●●

# 3 हिन्दी व्याकरण

## (क) शब्दों में सूक्ष्म अन्तर

कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनके अर्थ लगभग समान होते हैं, किन्तु उनके अर्थ में सूक्ष्म अन्तर होता है। यहाँ कुछ शब्द और उनके सूक्ष्म अन्तर दिये गये हैं–

1. **अस्त्र**–फेंककर चलाया जाने वाला हथियार जैसे–परमाणु बम।
   **शस्त्र**–हाथ में लेकर चलाया जाने वाला हथियार जैसे–बन्दूक।
2. **अज्ञानी**–जिसे कुछ भी ज्ञान न हो।
   **अनभिज्ञ**–जिसे कुछ भी अनुभव न हो।
3. **अध्यक्ष**–विभाग का प्रमुख।
   **सभापति**–सभा की अध्यक्षता करने वाला।
4. **अध्ययन**–सामान्य रूप से पढ़ना-लिखना।
   **अनुशीलन**–गम्भीर तथा शोधपरक अध्ययन
5. **अलि**–भौंरा।
   **अली**–सखी।
6. **भिज्ञ**–जानकार।
   **अनभिज्ञ**–अनजान।
7. **अवलम्ब**–सहारा।
   **अविलम्ब**–शीघ्र।
8. **अविराम**–लगातार।
   **अभिराम**–सुन्दर।
9. **प्रलाप**–बकवास।
   **विलाप**–रोना।
10. **श्वजन**–कुत्ता।
    **स्वजन**–आदमी।
11. **पुरुष**–आदमी।
    **परुष**–कठोर।
12. **कुल**–वंश।
    **कूल**–किनारा।
13. **निर्धन (दरिद्र)**–जिसके पास कोई सम्पत्ति न हो।
    **दीन**–निर्धन होने के चलते स्वाभिमान से रहित।
14. **कलंक**–किसी बुराई के चलते प्राप्त लांछन।
    **अपयश**–व्यापक बदनामी, बुराई।
15. **कविता**–पद्यबद्ध कथन।
    **काव्य**–कवि का कृतित्व।
16. **कष्ट**–तन और मन की असुविधा।
    **क्लेश**–पूरे मन का अप्रिय भाव।
    **व्यथा**–कष्टकारक अनुभव।
17. **चेष्टा**–शक्ति के अनुसार कार्य।
    **प्रयत्न**–उपाय या प्रयास।

18. **मुनि**–धर्म या आध्यात्मिक तत्त्वों को बताने वाला।
**ऋषि**–मन्त्रों या आध्यात्मिक तत्त्वों को बताने वाला।
19. **माप**–तरल पदार्थों की तौल।
**नाप**–लम्बाई या दूरी का आकलन।
20. **क्षमता**–कार्य करने की सामर्थ्य या शक्ति।
**योग्यता**–कार्य करने की गुणयुक्त विशेषता।
21. **वीरता**–वीर का स्वाभाविक गुण।
**साहस**–भय पर विजय पाने का भाव।
22. **स्त्री**–कोई भी महिला।
**पत्नी**–किसी पुरुष की विवाहित स्त्री।
23. **पारितोषिक**–किसी प्रतियोगिता में विजयी होने पर मिला उपहार।
**पुरस्कार**–किसी विशेष सेवा कार्य के लिए प्राप्त उपहार।
24. **सभ्यता**–रहन-सहन या व्यवहार का बाहरी रूप।
**संस्कृति**–आन्तरिक सुन्दर संस्कार।
25. **सेवा**–गुरुजनों के लिए परिजन का कार्य।
**शुश्रूषा**–रोगी व्यक्ति के लिए कार्य।
**परिचर्या**–दोनों प्रकार की सेवा।
26. **अवस्था**–दशा।
**आयु**–उम्र।
27. **अलौकिक**–जो संसार में प्राप्त न हो, स्वर्गिक, ईश्वरीय।
**असाधारण**–सामान्य से अधिक विशेषता युक्त।
28. **निश्चय**–तय करना।
**संकल्प**–प्रणपूर्वक निश्चय।
29. **भक्ति**–धर्म की भावना से युक्त प्रेम।
**श्रद्धा**–किन्हीं गुणों के कारण आदर सहित प्रेम।
30. **संघर्ष**–परिस्थितियों से व्यक्तियों से सामना करना।
**द्वन्द्व**–दो व्यक्तियों या भावों के बीच संघर्ष।
31. **तट**–नदी या समुद्र का किनारा।
**पुलिन**–किनारे की गीली भूमि।
32. **जलद**–बादल।
**जलधि**–समुद्र।
33. **अनिल**–हवा।
**अनल**–आग।

# || बहुविकल्पीय प्रश्न ||

**निर्देश– निम्नलिखित शब्द-युग्मों के सही विकल्प का चयन कीजिए–**

1. **श्रवण-श्रमण**
(क) पाप और पुण्य (ख) सज्जन और दुर्जन (ग) कान और भिक्षु (घ) सावन और परिश्रमी
**उत्तर–(ग) कान और भिक्षु।**
2. **वसन-व्यसन**
(क) विवश और व्याकुल (ख) वस्त्र और आदत (ग) कवच और भोजन (घ) विस्तार और अवधि
**उत्तर–(ख) वस्त्र और आदत।**
3. **अविराम-अभिराम**
(क) लगातार और रुचिकर (ख) बिना रोक के और सुन्दर (ग) अनवरत और आकर्षक (घ) सुन्दर और आकर्षक
**उत्तर–(ख) बिना रोक के और सुन्दर।**

4. **अंश-अंशु**
(क) भाग और सूर्य (ख) सूर्य और भाग (ग) भाग और किरण (घ) भाग और वरुण
**उत्तर–(ग) भाग और किरण।**

5. **कटिबन्ध-कटिबद्ध**
(क) फेंटा और तैयार (ख) करधनी और तैयार (ग) तैयार और बावजूद (घ) उद्यत और उद्धत
**उत्तर–(ख) करधनी और तैयार।**

6. **बात-वात**
(क) बातें और हवा (ख) रोग और दवा (ग) वायु और विकार (घ) विचार और शिकार
**उत्तर–(क) बातें और हवा।**

7. **द्रव-द्रव्य**
(क) तरल पदार्थ और धन (ख) धन और धान्य (ग) दान और दातार (घ) दवा और दया
**उत्तर–(क) तरल पदार्थ और धन।**

8. **स्वर्ण-सवर्ण**
(क) सोना और अच्छा रंग (ख) सुनार और सोना (ग) सोना और चाँदी (घ) सोना और उच्च जाति
**उत्तर–(घ) सोना और उच्च जाति।**

9. **विहग-विहंग**
(क) पक्षी और बालक (ख) पक्षी और तोता (ग) पक्षी और आकाश (घ) आकाश और पक्षी
**उत्तर–(ख) पक्षी और तोता।**

10. **अंस-अंश**
(क) अंकुर और हिस्सा (ख) हिस्सा और अंकुर (ग) कंधा और हिस्सा (घ) हिस्सा और कंधा
**उत्तर–(ग) कंधा और हिस्सा।**

11. **अन्न-अन्य**
(क) अनाज और दूसरा (ख) भोजन और अनेक (ग) गेहूँ और वह (घ) बेकार और दूसरा
**उत्तर–(क) अनाज और दूसरा।**

12. **अचार-आचार**
(क) बुरा आचरण और अच्छा (ख) मुरब्बा और आचरण (ग) स्थिर और चल (घ) आम और चारा
**उत्तर–(ख) मुरब्बा और आचरण।**

13. **अभय-उभय**
(क) निडर और दोनों (ख) भयरहित और निडर (ग) निर्भर और कायर (घ) आभायुक्त और अन्य
**उत्तर–(क) निडर और दोनों।**

14. **अंबुज-अंबुद**
(क) कमल और बादल (ख) जल और कमल (ग) बादल और समुद्र (घ) समुद्र और कमल
**उत्तर–(क) कमल और बादल।**

15. **अपेक्षा-उपेक्षा**
(क) तुला और निरादर (ख) तुलना और बुराई (ग) तुलना में और अवहेलना (घ) चाह और बुराई
**उत्तर–(ग) तुलना में और अवहेलना।**

16. **अनल-अनिल**
(क) वायु और अग्नि (ख) पानी और आग (ग) अग्नि और वायु (घ) जल और हवा
**उत्तर–(ग) अग्नि और वायु।**

17. **अम्ब-अम्बु**
(क) आम-जल (ख) माता-जल (ग) माता-आम (घ) जल-आम
**उत्तर–(ख) माता-जल।**

# (ख) अनेकार्थी शब्द

जब एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, तो उन्हें अनेकार्थक या पर्यायवाची शब्द कहा जाता है। यद्यपि शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, किन्तु एक प्रसंग में उनका एक ही अर्थ होता है। कुछ अनेकार्थी शब्द यहाँ दिये जा रहे हैं–

1. **अम्बर** वस्त्र, आकाश।
2. **अलि** भौंरा, सखी, बिच्छू।
3. **अर्क** सूर्य, मदार।
4. **अक्षत** चावल का दाना, अखण्ड।
5. **उत्तर** जवाब, भविष्य।
6. **कर** हाथ, किरण।
7. **कनक** सोना, धतूरा।
8. **कर्ण** कान, कुन्ती का पुत्र, समकोण त्रिभुज के सामने की भुजा।
9. **काल** समय, मृत्यु।
10. **काण्ड** घटना, अध्याय, समूह।
11. **गो** गाय, इन्द्रिय।
12. **गुरु** अध्यापक, बड़ा।
13. **घन** बादल, घना।
14. **चपला** लक्ष्मी, बिजली।
15. **जीवन** पानी, प्राण।
16. **कमल** जलज, मोती, सेवार, शंख।
17. **जड़** मूर्ख, मूल।
18. **तम** अँधेरा, तमोगुण।
19. **दल** समूह, पत्ता।
20. **द्विज** पक्षी, दाँत, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य।
21. **नग** पर्वत, नगीना, वृक्ष।
22. **नाग** सर्प, हाथी।
23. **पत्र** पत्ता, चिट्ठी।
24. **पक्ष** पंख, पन्द्रह दिन, तरफ।
25. **पतंग** सूर्य, गुड्डी (चंग), पृथ्वी।
26. **पय** दूध, पानी।
27. **पयोधर** स्तन, बादल।
28. **पूत** पवित्र, पुत्र।
29. **मधु** शहद, शराब, चैत का महीना।
30. **मित्र** दोस्त, सूर्य।
31. **मुद्रा** रुपया-पैसा, विशेष आकृति।
32. **राग** प्रेम, आसक्ति, गाने की लय।
33. **वर** श्रेष्ठ, दूल्हा, वरदान।
34. **वर्ण** अक्षर, रंग, जाति।
35. **विधि** ब्रह्मा, ढंग (रीति)।

36. **सोम** सोमवार, चन्द्र, कुबेर, स्वर्ण।
37. **शक्ति** बल, दुर्गा आदि।
38. **शिखा** चोटी, आग की लौ।
39. **शिव** महादेव, कल्याण।
40. **सुरभि** कामधेनु, बसन्त, सुगन्ध।
41. **सर** तालाब, बाण।
42. **सारंग** मोर, साँप, कोयल।
43. **हरि** विष्णु, बन्दर, सिंह।
44. **हर** महादेव, आग।
45. **हार** पराजय, गले का हार।
46. **नीरज** जलज, अम्बुज, कमल।
47. **चन्द्रमा** शशि, चाँद, चन्द्र, सुधांशु।
48. **अग्नि** आग, पावक, अनल।
49. **खल** दुष्ट, दुर्जन, अधम।
50. **कर्ण** कान, कुन्ती के पुत्र का नाम, समकोण त्रिभुज के सामने की भुजा।
51. **कल** चैन, सुन्दर, मधुर, ध्वनि, बीता हुआ या आने वाला दिन, मशीन।
52. **कला** कार्य की योग्यता, सीना पिरोना, भोजन बनाना, शृंगार आदि 64 कलाएँ।
53. **काम** कामना, सौन्दर्य का देवता, इच्छा, वासना।
54. **कुल** समस्त, वंश, केवल।
55. **केतु** ध्वजा, एक ग्रह का नाम, पुच्छल तारा।
56. **खग** पक्षी, तार, गन्धर्व वाण।
57. **खल** दुष्ट, धतूरा, दवा कूटने का पात्र (खरल)।
58. **गण** समूह, समुदाय, भूत-प्रेत, छन्द के वर्ण समूह (जगण, तगण आदि आठ गण)।
59. **गुण** विशेषता, रस्सी।
60. **गज** हाथी, नापने की एक इकाई।
61. **चक्र** कुम्हार का चाक, गोला, पहिया, चकवा।
62. **चीर** वस्त्र, पोशाक, चिथड़ा, रेखा, बक्कल।
63. **छन्द** पद्य, इच्छा, मत, कार्य।
64. **जलद** बादल, समुद्र।
65. **टेक** सहारा, प्रतिज्ञा, हठ, गीत का बार-बार दुहराया जाने वाला अंश।
66. **तात** पिता, पूज्य, भाई, मित्र।
67. **दण्ड** डण्डा, सजा, समय की छोटी नाप।
68. **दाम** मूल्य, धन, माला, रस्सी।
69. **नाक** नासिका, स्वर्ग, आकाश।
70. **पद** पैदल, स्थान, अधिकार, छन्द का एक चरण, गीत (पद)।
71. **पय** दूध, जल, अन्न।
72. **फल** लाभ, परिणाम, किसी वृक्ष का फल, शस्त्र की धार।
73. **मधु** शहद, शराब, पराग, वसन्त ऋतु, चैत्र मास।
74. **मित्र** दोस्त, सूर्य, सहयोगी।

| | | |
|---|---|---|
| 75. | **मुद्रा** | अँगूठी, छाप, रुपया, आकृति। |
| 76. | **वर्ण** | रंग, अक्षर, आकृति। |
| 77. | **विग्रह** | लड़ाई, शरीर, समाज को बाँटना। |
| 78. | **सांग** | मोर, साँप, हिरन, हंस, सिंह, कोयल, भ्रमर, धनुष। |
| 79. | **रजत** | चाँदी, हाथी, सफेद, दाँत। |
| 80. | **वन** | जंगल, किरण, वाटिका, मकान। |
| 81. | **गरल** | विष, बिच्छू, साँप। |
| 82. | **गिरिधर** | गोवर्धन पर्वत धारण करने वाले, कृष्ण। |
| 83. | **तनया** | पुत्री, पिण्वन नाम की लता। |
| 84. | **अज** | अजन्मा, ब्रह्मा, बकरा, कामदेव। |

# || बहुविकल्पीय प्रश्न ||

**निर्देश– सही विकल्प का चयन कीजिए–**

1. **'उदधि' शब्द का कौन-सा अर्थ सही नहीं है?**
(क) उत्तम दधि (ख) समुद्र (ग) सागर (घ) जलधि
**उत्तर–(क) उत्तम दधि।**

2. **'करि' शब्द के सही अर्थ को चुनकर लिखिए।**
(क) हाथी (ख) सूँड़ वाला (ग) करने वाला (घ) चोर
**उत्तर–(क) हाथी।**

3. **'अकाल' शब्द का अर्थ नहीं है–**
(क) दुर्भिक्ष (ख) मृत्यु (ग) कमी (घ) असमय
**उत्तर–(ग) कमी।**

4. **'तारा' शब्द का अर्थ है–**
(क) नक्षत्र (ख) चन्द्र (ग) लेखनी (घ) रश्मि
**उत्तर–(क) नक्षत्र।**

5. **'हार' शब्द के सही अर्थ को चुनकर लिखिए–**
(क) गले का आभूषण (ख) पराजय (ग) घबराना (घ) दुःख
**उत्तर–(ख) पराजय।**

6. **'द्विज' का अर्थ है–**
(क) ब्राह्मण (ख) पशु (ग) सिंह (घ) क्षत्रिय
**उत्तर–(क) ब्राह्मण।**

7. **'अम्बर' शब्द का कौन-सा अर्थ नहीं है?**
(क) आकाश (ख) वस्त्र (ग) आम (घ) केशर
**उत्तर–(घ) केशर।**

8. **'मित्र' शब्द का सही अर्थ है–**
(क) धन (ख) सूर्य (ग) हाथ (घ) वानर
**उत्तर–(ख) सूर्य।**

**9. 'हंस' शब्द का सही अर्थ नहीं है–**

(क) एक पक्षी (ख) हँसना (ग) सूर्य (घ) आत्मा

**उत्तर–(ख) हँसना।**

**10. 'सुरभि' शब्द का कौन-सा अर्थ सही नहीं है?**

(क) सुगन्धि (ख) सवेरा (ग) पृथ्वी (घ) गौ

**उत्तर–(ख) सवेरा।**

## (ग) अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

| | शब्द-समूह | एक शब्द |
|---|---|---|
| 1. | जो ईश्वर में विश्वास करता है | आस्तिक |
| 2. | जिसे काटा न जा सके | अकाट्य |
| 3. | जो पढ़ना-लिखना जानता हो | साक्षर |
| 4. | नारी जिसका पति न हो | विधवा |
| 5. | जो शिक्षा देता है | शिक्षक |
| 6. | पिता की हत्या करने वाला | पितृहन्ता |
| 7. | जो कहा न जा सके | अकथनीय |
| 8. | सौ वर्ष की आयु पूरी करने वाला | शतायु |
| 9. | जिसकी गणना न की जा सके | अगणित |
| 10. | सत्य आचरण करने वाला | सदाचारी |
| 11. | जो कभी जन्म नहीं लेता | अजन्मा |
| 12. | किये गये उपकार को न मानने वाला | कृतघ्न |
| 13. | जिसको ईश्वर में विश्वास न हो | नास्तिक |
| 14. | जानने की इच्छा रखने वाला | जिज्ञासु |
| 15. | सौ वर्ष का समय | शताब्दी |
| 16. | दोपहर के बाद का समय | अपराह्न |
| 17. | वह पुरुष जिसकी पत्नी मर गयी हो | विधुर |
| 18. | जिसका कोई स्वामी या रक्षक न हो | अनाथ |
| 19. | जिसकी उपमा न हो | निरुपम |
| 20. | जो सब कुछ जानता हो | सर्वज्ञ |
| 21. | प्रतिदिन प्रकाशित होने वाला समाचार-पत्र | दैनिक |
| 22. | जिसमें कुछ करने की क्षमता न हो | अक्षम |
| 23. | जो एक ही माता के उदर से उत्पन्न हुए हों | सहोदर |
| 24. | अभी-अभी स्नान किया हुआ | सद्यस्नात |
| 25. | जो कीचड़ से उत्पन्न होता है | पंकज |
| 26. | जिसकी आँखें हिरण की आँखों के समान हैं | मृगनयनी |
| 27. | जो भूखा हो | बुभुक्षित |
| 28. | जंगल की अग्नि | दावाग्नि |
| 29. | जो वन्दना करने योग्य हो | वन्दनीय |

| | शब्द-समूह | एक शब्द |
|---|---|---|
| 30. | जिसके आने की कोई तिथि न हो | अतिथि |
| 31. | जो स्त्री कविता लिखती हो | कवयित्री |
| 32. | जो कभी न मरता हो | अमर |
| 33. | जिसे क्षमा किया जा सके | क्षम्य |
| 34. | स्वयं उत्पन्न होने वाला | स्वयंभू |
| 35. | जो पहले कभी न हुआ हो | अभूतपूर्व |
| 36. | जीने की इच्छा | जिजीविषा |
| 37. | पृथ्वी और आकाश के बीच का स्थान | अन्तरिक्ष |
| 38. | रास्ता दिखाने वाला | पथप्रदर्शक |
| 39. | घृणा के योग्य | घृणास्पद |
| 40. | सदा सत्य बोलने वाला | सत्यवादी |
| 41. | जिसे अपने कार्य में सफलता मिली हो | कृतकार्य |
| 42. | सत्य में जिसका दृढ़ विश्वास हो | सत्यनिष्ठ |
| 43. | जिसकी इच्छाएँ बहुत ऊँची हों | महत्त्वाकांक्षी |
| 44. | दोपहर का समय | मध्याह्न |
| 45. | जो इन्द्रियों से परे हो | इन्द्रियातीत |
| 46. | जिससे किसी की तुलना न की जा सके | अतुलनीय |
| 47. | जिसका दमन न किया जा सके | अदम्य |
| 48. | जिसके समान कोई दूसरा न हो | अद्वितीय |
| 49. | जिसका कोई अन्त न हो | अनन्त |
| 50. | जो गलत कार्य के लिए हठ करे | दुराग्रही |
| 51. | जिसका कोई शत्रु पैदा ही न हो | अजातशत्रु |
| 52. | जो जीता न जा सके | अजेय |
| 53. | हृदय की बात जानने वाला | अन्तर्यामी |
| 54. | अनुकरण करने योग्य | अनुकरणीय |
| 55. | जो सामान्य नियम के विरुद्ध हो | अपवाद |
| 56. | जो ऋण से मुक्त हो गया हो | उऋण |
| 57. | को कभी बूढ़ा नहीं होता | अजर |
| 58. | जिसको क्षमा न किया जा सके | अक्षम्य |
| 59. | जिसका जन्म पहले हुआ हो ऐसा भाई | अग्रज |
| 60. | हाथी हाँकने का छोटा भाला | अंकुश |
| 61. | जिसकी कल्पना न की जा सके | अकल्पनीय |
| 62. | जिसके पास कुछ न हो | अंकिचन |
| 63. | सबसे पहले गिना जाने वाला | अग्रगण्य |
| 64. | बिना वेतन लिए काम करने वाला | अवैतनिक |
| 65. | जो विधान या नियम के प्रतिकूल हो | अवैधानिक |
| 66. | रोगियों की चिकित्सा का स्थान | चिकित्सालय |
| 67. | जो नष्ट होने वाला हो | नश्वर |

| शब्द-समूह | एक शब्द |
|---|---|
| 68. जिसका कोई आकार न हो | निराकार |
| 69. पन्द्रहवें दिन वाला | पाक्षिक |
| 70. जिसके आर-पार देखा जा सके | पारदर्शी |
| 71. किसी कार्य को बार-बार करना | पुनरावृत्ति |
| 72. जो तुरन्त किसी बात को सोच ले | प्रत्युत्पन्नमति |
| 73. समान रूप से आगे बढ़ने की चेष्टा | प्रतिस्पर्द्धा |
| 74. जो आँखों के सामने हो | प्रत्यक्ष |
| 75. जो लौट गया है | प्रत्यावर्तित |
| 76. विदेश में रहने वाला | प्रवासी |
| 77. प्राप्त करने-योग्य | प्राप्तव्य |
| 78. प्रार्थना-पत्र भेजने वाला | प्रार्थी |
| 79. प्रिय बोलने वाली | प्रियंवदा |
| 80. बहुत-से रूप धारण करने वाला | बहुरूपिया |
| 81. जल में लगने वाली आग | बड़वाग्नि |
| 82. जिसने बहुत विद्वानों को सुना है | बहुश्रुत |
| 83. जो बहुत कुछ जानता हो | बहुज्ञ |
| 84. बहुत-सी भाषाओं को जानने वाला | बहुभाषाविद् |
| 85. वर्ष में एक बार प्रकाशित होने वाला | वार्षिक |
| 86. जिसके जोड़ का कोई दूसरा न हो | बेजोड़ |
| 87. छोटे कद का आदमी | बौना |
| 88. दीवार पर बने हुए चित्र | भित्तिचित्र |
| 89. किसी मत को मानने वाला | मतानुयायी |
| 90. किसी बात का गूढ़ रहस्य जानने वाला | मर्मज्ञ |
| 91. जो मान-सम्मान के योग्य हो | माननीय |
| 92. संयम से और कम बोलने वाला | मितभाषी |
| 93. संयम से और कम खर्च करने वाला | मितव्ययी |
| 94. जो कम खाता हो | मितभोजी |
| 95. मोक्ष की इच्छा रखने वाला | मुमुक्षु |
| 96. नए युग का नई प्रवृत्ति को जन्म देने वाला | युगप्रवर्त्तक |
| 97. किसी देश का दूसरे देश में नियुक्त राजनीतिक प्रतिनिधि | राजदूत |
| 98. जिसे देख या सुनकर रोंगटे खड़े हो जाएँ | रोमांचकारी |
| 99. जिसके पास लाख रुपये की सम्पत्ति हो | लखपति |
| 100. वन में रहने वाला | वनवासी |
| 101. जो अधिक बोलता हो | वाचाल |
| 102. जिसके भीतर की हवा का तापमान समस्थिति में रखा गया हो | वातानुकूलित |
| 103. बीता हुआ | विगत |

| शब्द-समूह | एक शब्द |
|---|---|
| 104. विदेश से सम्बन्ध रखने वाला | विदेशी |
| 105. किसी विषय का प्रकाण्ड पण्डित | विशेषज्ञ |
| 106. जो अपने धर्म के विपरीत आचरण करता हो | विधर्मी |
| 107. किसी भी पक्ष का समर्थन न करने वाला | तटस्थ |
| 108. किसी पद अथवा सेवा से मुक्ति का पत्र | त्यागपत्र |
| 109. तीनों कालों की बात जानने वाला | त्रिकालज्ञ |
| 110. तीनों युगों में होने वाला | त्रियुगी |
| 111. तीनों लोकों का समूह | त्रिलोक |
| 112. तीन नदियों (गंगा, यमुना, सरस्वती) का संगम | त्रिवेणी |
| 113. तीन मास में एक बार आने वाला | त्रैमासिक |
| 114. देखने-योग्य | दर्शनीय |
| 115. एक राजनीतिक दल छोड़कर दूसरे में सम्मिलित होने वाला | दलबदलू |
| 116. दस वर्ष का समय | दशक |
| 117. जो दर्शनशास्त्र को जानता हो | दार्शनिक |
| 118. वन में लगने वाली आग | दावानल |
| 119. जो कठिनता से समझ में आए | दुर्ज्ञेय |
| 120. जहाँ पहुँचना कठिन हो | दुर्गम |
| 121. जिसका दमन करना कठिन हो | दुर्दमनीय |
| 122. जिसे प्राप्त करना कठिन हो | दुर्लभ |
| 123. जिसे पार करना कठिन हो | दुस्तर |
| 124. जिसे समझना कठिन हो | दुर्बोध |
| 125. अनुचित या बुरा आचरण करने वाला | दुराचारी |
| 126. दूर तक देखने वाला | दूरदर्शक |
| 127. आगे की बात पहले ही सोचने वाला | दूरदर्शी |
| 128. धर्म में रुचि रखने वाला | धर्मात्मा |
| 129. यात्रियों के लिए धर्मार्थ बना हुआ भवन | धर्मशाला |
| 130. दूसरे के बच्चे का पालन-पोषण करने वाली स्त्री | धाय |
| 131. नख से लेकर शिखा तक के सब अंग | नखशिख |
| 132. नया उत्पन्न हुआ | नवजात |
| 133. नया उदित होने वाला | नवोदित |
| 134. जो नष्ट होने वाला हो | नश्वर |
| 135. निश्चित तिथि पर आने वाला | नियमित |
| 136. जिसका कोई आकार न हो | निराकार |
| 137. जिसे कोई भय न हो | निर्भय |
| 138. जिसकी उपमा न दी जा सके | निरुपम |
| 139. मध्यरात्रि का समय | निशीथ |
| 140. नीति को जानने व समझने वाला | नीतिज्ञ |
| 141. जो न्यायशास्त्र की बात जानता हो | न्यायविद् |
| 142. जिसके पाँच मुख हों | पंचमुखी |

| | शब्द-समूह | एक शब्द |
|---|---|---|
| 143. | अपने पद से हटाया हुआ | पदच्युत |
| 144. | पानी में डूबकर चलने वाली नाव | पनडुब्बी |
| 145. | परमलक्ष्य की कामना करने वाला | परमार्थी |
| 146. | दूसरों के आश्रय में रहने वाला | पराश्रयी |
| 147. | जो दूसरों का उपकार करता हो | परोपकारी |
| 148. | जो पांचाल देश की राजकुमारी हो | पांचाली |
| 149. | नरक में रहने वाला | नारकीय |
| 150. | शक्ति की उपासना करने वाला | शाक्त |
| 151. | तत्काल कविता करने वाला | आशुकवि |
| 152. | जिसके हृदय में ममता न हो | निर्मम |
| 153. | जिसके हृदय में दया न हो | निर्दयी |
| 154. | जो मांस का भोजन न करता हो | निरामिषभोजी |
| 155. | रास्ते के लिए भोजन (कलेवा) | पाथेय |
| 156. | कही गयी बात को बार-बार कहना | पिष्ट-पेषण |
| 157. | जिसने अपनी इन्द्रियों को जीत लिया हो | जितेन्द्रीय |
| 158. | जिसके आने की कोई तिथि निश्चित न हो | अतिथि |
| 159. | जिसकी बहुत अधिक चर्चा की गयी हो | बहुचर्चित |
| 160. | हरिण के समान नेत्रों वाली स्त्री | मृगनयनी |
| 161. | जिसका पेट लम्बा हो | लम्बोदर |
| 162. | सर्वसाधारण जनता में गाया जाने वाला गीत | लोकगीत |
| 163. | वरण या स्वीकार करने योग्य | वरेण्य |
| 164. | विश्वास न करने योग्य | अविश्वस्त |
| 165. | जिसका पति मर गया हो | विधवा |
| 166. | जिसका पति जीवित हो | सधवा |
| 167. | जिसकी पत्नी मर गयी हो | विधुर |
| 168. | जो अपने स्थान से हटाया गया हो | विस्थापित |
| 169. | शरण में आया हुआ | शरणागत |
| 170. | अधिक सहन करने वाला | सहिष्णु |
| 171. | जो स्वयं अपनी इच्छा से सेवा करता हो | स्वयंसेवक |
| 172. | स्मरण करने योग्य | स्मरणीय |
| 173. | हँसी के योग्य | हास्यास्पद |
| 174. | त्रिकाल (भूत, भविष्यत, वर्तमान) की बात को जानने वाला | त्रिकालज्ञ |
| 175. | दोपहर के बाद का समय | अपराह्न |
| 176. | बहुत दूर की बात पहले से सोचने वाला | दूरदर्शी |
| 177. | जो अपना कार्य स्वयं करता हो | स्वावलम्बी |
| 178. | क्षण भर में नष्ट हो जाने वाला | क्षणभंगुर |
| 179. | किये गये उपकार को मानने वाला | कृतज्ञ |
| 180. | ईश्वर को साकार मानने वाला भक्त | सगुणोपासक |
| 181. | प्रारम्भ से अंत तक | आद्योपान्त |

# (घ) वाक्यों में त्रुटिमार्जन

## ( लिंग, वचन, कारक, काल और वर्तनी सम्बन्धी त्रुटि से सम्बन्धित )

## (अ) लिंग सम्बन्धी अशुद्धियाँ

(1) हिन्दी में केवल दो ही लिंग होते हैं–पुल्लिग और स्त्रीलिंग।
(2) क्षेत्रीय प्रयोगों को उचित न मानकर मानक हिन्दी (खड़ीबोली) में प्रयुक्त लिंग व्यवस्था को ही उचित मानना चाहिए।
(3) जिन पुल्लिग शब्दों का स्त्रीलिंग बनता है, उनका सावधानीपूर्वक उचित प्रयोग करना चाहिए।
(4) जब भिन्न लिंगी कर्त्ता विभक्ति रहित एक वचन में हों तथा 'और' संयोजक से जुड़े हों, तो उनकी क्रिया पुल्लिग बहुवचन में होगी।

**उदाहरण**

| | |
|---|---|
| **अशुद्ध**–महादेवी वर्मा विद्वान कवयित्री थीं। | **शुद्ध**–महादेवी वर्मा विदुषी कवयित्री थीं। |
| **अशुद्ध**–लक्ष्मीबाई वीर महिला थीं। | **शुद्ध**–लक्ष्मीबाई वीरांगना थीं। |
| **अशुद्ध**–यदि आप मेरे घर पधारेंगे तो आपकी महती कृपा होगी। | **शुद्ध**–यदि आप मेरे घर आयेंगे तो आपकी महती कृपा होगी। |
| **अशुद्ध**–राम और श्याम बातचीत कर रहा है। | **शुद्ध**–राम और श्याम बातचीत कर रहे हैं। |
| **अशुद्ध**–क्या मेरा तौलिया सूख गया? | **शुद्ध**–क्या मेरी तौलिया सूख गयी? |
| **अशुद्ध**–कृष्णा और राधा नृत्य कर रहे हैं। | **शुद्ध**–कृष्णा और राधा नृत्य कर रही हैं। |
| **अशुद्ध**–पुत्री पराया धन होता है। | **शुद्ध**–पुत्री पराया धन होती है। |

## (आ) वचन सम्बन्धी अशुद्धियाँ

हिन्दी में केवल दो वचन होते हैं–एकवचन तथा बहुवचन। यहाँ वचन सम्बन्धी कुछ नियम लिखे जा रहे हैं–

(1) कुछ शब्द सदैव बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं; यथा, प्राण, दर्शन, हस्ताक्षर, आँसू, होश, बाल–अनेक आदि।
(2) भाववाचक संज्ञाएँ सदा एकवचन में प्रयुक्त होती हैं; जैसे—बुढ़ापा, बचपन, लड़कपन, भावुकता।
(3) आदरणीय व्यक्तियों के साथ एकवचन होते हुए भी बहुवचन की क्रिया लगाई जाती है।
(4) कुछ शब्द सदैव एकवचन होते हैं; यथा—सामान, माल, जनता आदि से संस्कृत में अनुवाद।

**उदाहरण**

| | |
|---|---|
| **अशुद्ध–**टक्कर लगते ही उसका प्राण निकल गया। | **शुद्ध–**टक्कर लगते ही उसके प्राण निकल गये। |
| **अशुद्ध–**प्रधानाचार्य जी ने हस्ताक्षर कर दिया। | **शुद्ध–**प्रधानाचार्य जी ने हस्ताक्षर कर दिये। |
| **अशुद्ध–**मैंने मन्दिर जी का दर्शन कर लिया। | **शुद्ध–**मैंने मन्दिर जी के दर्शन कर लिए। |
| **अशुद्ध–**चाँटा लगते ही उसका आँसू निकल पड़ा। | **शुद्ध–**चाँटा लगते ही उसके आँसू निकल पड़े। |
| **अशुद्ध–**कृपया मेरे सामानों पर निगाह रखना। | **शुद्ध–**कृपया मेरे सामान पर निगाह रखना। |
| **अशुद्ध–**आज सभा में अनेकों नेताओं के भाषण हुए। | **शुद्ध–**आज सभा में अनेक नेताओं के भाषण हुए। |
| **अशुद्ध–**मेरा बड़ा भाई आ रहा है। | **शुद्ध–**मेरे बड़े भाई आ रहे हैं। |
| **अशुद्ध–**अध्यापक कक्षा में पढ़ा रहा है। | **शुद्ध–**अध्यापक कक्षा में पढ़ा रहे हैं। |

## (इ) कारक सम्बन्धी अशुद्धियाँ

हिन्दी में कारक सम्बन्धी प्रयोग के नियम संस्कृत से पर्याप्त भिन्न हैं। अत: हिन्दी कारक चिह्नों का सही प्रयोग समझना चाहिए। हिन्दी में कारक चिह्न निम्न प्रकार से हैं—

| | |
|---|---|
| (1) कर्त्ता—ने | (2) कर्म—को |
| (3) करण—से या द्वारा | (4) सम्प्रदान—के लिए या को |
| (5) अपादान—से (अलगाव अर्थ में) | (6) सम्बन्ध—का, की, के, रा, री, रे |
| (7) अधिकरण—मैं, पर | (8) सम्बोधन—हे, रे, अरे |

**उदाहरण**

| | |
|---|---|
| **अशुद्ध–**मैं भोजन कर लिया हूँ। | **शुद्ध–**मैंने भोजन कर लिया है। |

**अशुद्ध**—इन बातों से तेरे को क्या लेना-देना। **शुद्ध**—इन बातों से तुझे क्या लेना-देना।
**अशुद्ध**—मैं कलम के साथ लिखता हूँ। **शुद्ध**—मैं कलम से लिखता हूँ।
**अशुद्ध**—मुझे कहा गया है कि घर से आज न निकलूँ। **शुद्ध**—मुझसे कहा गया है कि आज घर से न निकलूँ।
**अशुद्ध**—तुम मेरे से मत बोलो। **शुद्ध**—तुम मुझसे मत बोलो।
**अशुद्ध**—उसको लड़का हुआ है। **शुद्ध**—उसके लड़का हुआ है।
**अशुद्ध**—राम ने पुस्तक को पढ़ा लिया। **शुद्ध**—राम ने पुस्तक पढ़ा ली।
**अशुद्ध**—ओ बालक! खड़ा रह। **शुद्ध**—रे बालक! खड़ा रह।

## (ई) काल सम्बन्धी अशुद्धियाँ

हिन्दी में तीन काल हैं–वर्तमान काल, भूत काल और भविष्य काल। काल का निर्णय क्रिया से होता है, किन्तु कभी-कभी क्रिया को देखकर काल का निर्णय करना कठिन हो जाता है। यहाँ कतिपय अशुद्धियों के उदाहरण दिये जा रहे हैं।

### उदाहरण

**अशुद्ध**—मैं लड़के को पढ़ाया हूँ। **शुद्ध**—मैंने लड़के को पढ़ाया है।
**अशुद्ध**—सूर्य पूरब में निकलता था। **शुद्ध**—सूर्य पूरब में निकलता है।
**अशुद्ध**—यदि तुम आये होते तो मैं भी चलूँगा। **शुद्ध**—यदि तुम आये होते तो मैं भी चलता हूँ।
**अशुद्ध**—जब तुम मेरे यहाँ आओ तो मैं भी चलूँगा। **शुद्ध**—जब तुम मेरे यहाँ आओगे तो मैं भी चलूँगा।
**अशुद्ध**—एक पुरुष और एक स्त्री जा रही है। **शुद्ध**—स्त्री और पुरुष जा रहे हैं।
**अशुद्ध**—तुम बच्चों को कहानी सुनाया कर। **शुद्ध**—तुम बच्चों को कहानी सुनाया करो।

## (उ) वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ

वाक्य में प्रयुक्त किसी भी शब्द की वर्तनी अशुद्ध होने पर वाक्य भी अशुद्ध माना जाता है। अत: शब्दों को, चाहे वह सामासिक शब्द हों या सन्धि युक्त शब्द, शुद्ध रूप से जानना आवश्यक है। यहाँ कुछ अशुद्ध शब्दों के शुद्ध लिखे जा रहे हैं—

| अशुद्ध | शुद्ध | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| अध्यन | अध्ययन | अनुदित | अनूदित |
| अहार | आहार | अनुग्रहीत | अनुगृहीत |
| अंगीठी | अँगीठी | अनुषंगिक | अनुषांगिक |
| अनुसूइया | अनसूया | अत्याधिक | अत्यधिक |
| अनाथिनी | अनाथा | अन्तकरण | अन्त:करण |
| अतिथी | अतिथि | अध्यात्मिक | आध्यात्मिक |
| इन्द्रा गांधी | इन्दिरा गाँधी | अपेच्छा | अपेक्षा |
| इक्षा | इच्छा | उत्तदाई | उत्तरदायी |
| उन्नतशील | उन्नतिशील | उपलक्ष | उपलक्ष्य |
| उपेच्छित | उपेक्षित | उछाह | उत्साह |
| उपरोक्त | उपर्युक्त | उपसंघार | उपसंहार |
| उज्वल | उज्ज्वल | अनाधिकार | अनधिकार |
| अन्तर्ध्यान | अन्तर्धान | कवियत्री | कवयित्री |
| करम | कर्म | कोशिल्या | कौशल्या |
| कालीदास | कालिदास | कन्ठ, कंठ | कण्ठ |
| कनिष्ट | कनिष्ठ | क्रतघ्नी | कृतघ्न |
| क्रतज्ञ | कृतज्ञ | कलस | कलश |
| क्रतार्थ | कृतार्थ | ग्रहस्थ | गृहस्थ |
| गत्यावरोध | गत्यवरोध | गमार | गंवार |

| अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|
| गरिष्ट | गरिष्ठ |
| घमन्ड | घमण्ड |
| चंचल | चञ्चल |
| चर्म सीमा | चरम सीमा |
| जगतेश | जगदीश |
| जन्ता | जनता |
| तात्कालीन | तत्कालीन |
| टिप्पड़ी | टिप्पणी |
| दुसह | दुःसह या दुस्सह |
| देहिक | दैहिक |
| दाइत्व | दायित्व |
| धेर्य | धैर्य |
| नसीला | नशीला |
| नगन्य | नगण्य |
| परलौकिक | पारलौकिक |
| परिच्छा | परीक्षा |
| प्रदर्शिनी | प्रदर्शनी |
| प्रथ्वी | पृथ्वी |
| प्रिगाड़ | प्रगाढ़ |
| परोच्छ | परोक्ष |
| परुषोत्तम | पुरुषोत्तम |
| प्रशाद | प्रसाद |
| ब्रहद | वृहद |
| वालक | बालक |
| भाग्य | भाग्य |
| भागीरथ | भगीरथ |
| भगिनी | भगिनि |
| मंत्रिमंडल | मन्त्रिमण्डल |
| महूरत | मुहूर्त |
| महत्व | महत्त्व |
| महात्म्य | माहात्म्य |
| माताजी | माताजी |
| यायवार | यायावर |
| युधिष्ठर | युधिष्ठिर |
| राज | राज्य |
| रुग्ड़ | रुग्ण |
| लच्छिन | लक्षण |
| बैद्य | वैद्य |
| बैरज् | वैर |
| विधवत् | विधिवत् |
| वस्तू | वस्तु |
| बिरहणी | विरहिणी |
| विपच्छ | विपक्ष |
| सामिग्री | सामग्री |

| अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|
| घणियाल | घड़ियाल |
| चांद | चाँद |
| चच्छु | चक्षु |
| जगन्य | जघन्य |
| जनम | जन्म |
| जागृत | जाग्रत |
| जज्ञ | यज्ञ |
| तत्कालिक | तात्कालिक |
| तमासा | तमाशा |
| दुख | दुःख |
| दृष्टव्य | द्रष्टव्य |
| द्वारिका | द्वारका |
| धरम | धर्म |
| नगनि या नगन | नग्न |
| नमरता | नम्रता |
| परुपकार | परोपकार |
| प्रतिक्षा | प्रतीक्षा |
| पुजारन | पुजारिन |
| प्रथक | पृथक् |
| पैत्रिक | पैतृक |
| प्राविधान | प्रावधान |
| पाण्डे | पाण्डेय |
| पूज्यनीय | पूजनीय |
| पौदा | पौधा |
| ब्रह्मचर्य | ब्रह्मचर्य |
| भरोषा | भरोसा |
| भिकारी | भिखारी |
| भगीथी | भागीरथी |
| भासा | भाषा |
| महानता | महत्ता |
| मूरत | मूर्ति |
| मलीन | मलिन |
| माधुर्यता | मधुरता या माधुर्य |
| महेस | महेश |
| यग्य | यज्ञ |
| यसोदा | यशोदा |
| रच्छा | रक्षा |
| रजनि | रजनी |
| लछिमन | लक्ष्मण |
| लालमा | लालिमा |
| वैद्य | वैध |
| वितीत | व्यतीत |
| बकील | वकील |
| विदेशिक | वैदेशिक |

| अशुद्ध | शुद्ध | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| साधू | साधु | सन्शय | संशय |
| वापिस | वापस | सिक्षा | शिक्षा |
| व्रतान्त | वृतान्त | सुलोचनी | सुलोचना |
| शाशन | शासन | | |

**प्रश्न– निम्नलिखित अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध कीजिए–**

| अशुद्ध वाक्य | शुद्ध वाक्य |
|---|---|
| 1. वहाँ अनेकों मनुष्य जुटे थे। | 1. वहाँ अनेक मनुष्य जुटे थे। |
| 2. तुम तो कुर्सी में बैठे हो। | 2. तुम कुर्सी पर बैठे हो। |
| 3. इस सरोवर में अनेकों कमल खिले हैं। | 3. इस सरोवर में अनेक कमल खिले हैं। |
| 4. प्रदेश में मंत्रीमण्डल विस्तार हो गया। | 4. प्रदेश में मंत्रिमण्डल का विस्तार हो गया। |
| 5. क्या वह अपनी परीक्षा दी? | 5. क्या उसने परीक्षा दी। |
| 6. अनेकों नकलची पकड़े गये। | 6. अनेक नकलची पकड़े गये। |
| 7. कई विद्यालय के छात्र गिरफ्तार हुए। | 7. विद्यालय के कई छात्र गिरफ्तार हुए। |
| 8. सम्मेलन में कवित्री भाग लिया। | 8. सम्मेलन में कवयित्री ने भाग ली। |
| 9. भाश्कर उदित होता है सदैव पूर्व में। | 9. भाष्कर सदैव पूर्व में उदित होता है। |
| 10. रोजाना काम करने वाले दैनिक मजदूरों का वेतन बढ़ाने वाला है। | 10. दैनिक मजदूरों का वेतन बढ़ने वाला है। |
| 11. मुझे केवल पाँच रुपये मात्र की आवश्यकता है। | 11. मुझे मात्र पाँच रुपये की आवश्यकता है। |
| 12. उनको काम करने की इच्छा नहीं है। | 12. उनकी काम करने की इच्छा नहीं है। |
| 13. तुम तो घोड़े में सवार हो। | 13. तुम मेरे घोड़े पर सवार हो। |
| 14. इन शब्दों को अपने वाक्यों में प्रयोग करो। | 14. इन शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो। |
| 15. उसने अपनी पत्नी का गला घोंटकर मार डाला। | 15. उसने अपनी पत्नी को गला घोंटकर मार डाला। |
| 16. जनकपुर के नर-नारियाँ राम का रूप देखकर मुग्ध हो गये। | 16. जनकपुर के नर-नारियाँ राम का रूप देखकर मुग्ध हो गईं। |
| 17. उसने कुत्ते को लाठी द्वारा मारा। | 17. उसने कुत्ते को लाठी से मारा। |
| 18. हम आँखों द्वारा देखते हैं। | 18. हम आँखों से देखते हैं। |
| 19. घाव में दवा लगाओ। | 19. घाव पर दवा लगाओ। |
| 20. कृपया अवकाश देने की कृपा करें। | 20. अवकाश देने की कृपा करें। |
| 21. बच्चों से माल्यार्पण किया गया। | 21. बच्चों द्वारा माल्यार्पण किया गया। |
| 22. ये भले आदमी हैं, उनकी प्रकृति अच्छी है। | 22. ये भले आदमी हैं, इनकी प्रकृति अच्छी है। |
| 23. मैंने कह दिया था कि हम आज शाम को खाना नहीं खायेंगे। | 23. मैंने कह दिया था कि मैं आज शाम को खाना नहीं खाऊँगा। |
| 24. हरि ने घर गया और सोया। | 24. हरि घर गया और सोया। |
| 25. वह लड़का इसलिए गिर पड़ा कि वह असावधान था। | 25. वह लड़का इसलिए गिर पड़ा क्योंकि वह असावधान था। |
| 26. उपरोक्त कथन से हम सहमत हूँ। | 26. उपर्युक्त कथन से मैं सहमत हूँ। |
| 27. उसकी बुद्धि मुझसे अच्छी है। | 27. उसकी बुद्धि मेरी बुद्धि से अच्छी है। |
| 28. मैं वाराणसी गया और वहाँ गंगाजी में स्नान किया। | 28. मैं वाराणसी गया और मैंने गंगाजी में स्नान किया। |

| अशुद्ध वाक्य | शुद्ध वाक्य |
|---|---|
| 29. मैं रविवार वाले दिन पहुँच रहा हूँ। | 29. मैं रविवार को पहुँच रहा हूँ। |
| 30. सम्भवत: वह अवश्य आयेगा। | 30. वह अवश्य आयेगा। |
| 31. शायद आज वर्षा अवश्य होगी। | 31. आज वर्षा अवश्य होगी। |
| 32. वह लड़के कहाँ जा रहे हैं। | 32. वे लड़के कहाँ जा रहे हैं? |
| 33. ब्राह्मण कहाँ विद्याभ्यास के लिए गये थे? | 33. ब्राह्मण विद्याभ्यास के लिए कहाँ गये थे? |
| 34. अधिकांश हिन्दी के लेखक निर्धन हैं। | 34. हिन्दी के अधिकांश लेखक निर्धन हैं। |
| 35. सचिन के खेल की विश्व भर में प्रसिद्धि है। | 35. सचिन के खेल की प्रसिद्धि विश्व भर में है। |
| 36. कोई गाँव का आदमी यह नहीं चाहता है। | 36. गाँव का कोई आदमी यह नहीं चाहता है। |
| 37. मोहन आपके ऊपर विश्वास करता है। | 37. मोहन आप पर विश्वास करता है। |
| 38. जाकर देखो यहाँ क्या हो रहा है? | 38. जाकर देखो वहाँ क्या हो रहा है? |
| 39. इसमें समस्त मानव-मात्र का कल्याण निहित है। | 39. इसमें मानव-समाज का कल्याण निहित है। |
| 40. उसका प्राण निकलने वाला है। | 40. उसके प्राण निकलने वाले हैं। |
| 41. उसके भाषण के एक-एक शब्द नपे-तुले थे। | 41. उसके भाषण का एक-एक शब्द नपा-तुला था। |
| 42. कुछ लोग परस्पर एक-दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। | 42. कुछ लोग एक-दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। |
| 43. मैं अपने गुरुजी की श्रद्धा करता हूँ। | 43. मैं अपने गुरुजी पर श्रद्धा रखता हूँ। |
| 44. दोनों की दशा एक सी है। | 44. दोनों की दशाएँ एक-सी हैं। |
| 45. मैं सकुशलपूर्वक हूँ। | 45. मैं सकुशल हूँ। |
| 46. पाँच रेलवे के कर्मचारी पकड़े गये। | 46. रेलवे के पाँच कर्मचारी पकड़े गये। |
| 47. एक फूल की माला लाओ। | 47. फूलों की एक माला लाओ। |
| 48. अनेकों लोगों ने सरकारी नीतियों की प्रशंसा की। | 48. अनेक लोगों ने सरकारी नीतियों की प्रशंसा की। |
| 49. सरकारी मिट्टी के तेल की दुकान बन्द है। | 49. मिट्टी के तेल की सरकारी दुकान बन्द है। |
| 50. मैं आपके आधीन नहीं हूँ। | 50. मैं आपके अधीन नहीं हूँ। |
| 51. रामायण के पढ़ने से समस्त प्राणि मात्र का कल्याण सम्भव है। | 51. रामायण के पढ़ने से प्राणि मात्र का कल्याण सम्भव है। |
| 52. मेरी इच्छा स्टेशन पर मेरे बेटे से मिलने की है। | 52. मेरी इच्छा है कि मैं अपने बेटे से स्टेशन पर मिल लूँ। |
| 53. परमात्मा के अनेकों नाम हैं। | 53. परमात्मा के अनेक नाम हैं। |
| 54. यहाँ ताजे गन्ने का रस मिलता है। | 54. यहाँ गन्ने का ताजा रस मिलता है। |
| 55. वह धर्मार्थ के लिए दान दे रहा है। | 55. वह धर्मार्थ दान दे रहा है। |
| 56. मुझे केवल पाँच रुपये मात्र की आवश्यकता है। | 56. मुझे केवल पाँच रुपये की आवश्यकता है। |
| 57. ताजा हवा अच्छी होती है। | 57. ताजी हवा अच्छी होती है। |
| 58. उसकी आँखों में आँसू आ गया। | 58. उसकी आँखों में आँसू आ गये। |
| 59. महात्माजी का दर्शन करके हर्ष हुआ। | 59. महात्माजी के दर्शन करके हर्ष हुआ। |
| 60. मेरा प्राण संकट में है। | 60. मेरे प्राण संकट में हैं। |
| 61. मैंने यह निर्णय लिया है। | 61. मैंने यह निर्णय किया है। |
| 62. क्या तुमने प्रार्थना-पत्र पर अपना हस्ताक्षर कर दिया है। | 62. क्या तुमने प्रार्थना-पत्र पर अपने हस्ताक्षर कर दिये हैं। |
| 63. उसने ध्रूमपान न करने की प्रतिज्ञा ली। | 63. उसने ध्रूमपान न करने की प्रतिज्ञा की। |

| अशुद्ध वाक्य | शुद्ध वाक्य |
|---|---|
| 64. महादेवी वर्मा हिन्दी की प्रसिद्ध कवित्री हैं। | 64. महादेवी वर्मा हिन्दी की प्रसिद्ध कवयित्री है। |
| 65. हमारी सौभाग्यवती कन्या का विवाह है। | 65. मेरी सौभाग्यवती कन्या का विवाह है। |
| 66. एक हाथी भड़क गई मेले में। | 66. एक हाथी मेले में भड़क गयी। |
| 67. उसकी सौजन्यता अनुकरणीय है। | 67. उसका सौजन्य अनुकरणीय है। |
| 68. यह बालक आपकी प्रतीक्षा में सो गया। | 68. यह बालक आपकी प्रतीक्षा करते-करते सो गया। |

## (ङ) लोकोक्ति एवं मुहावरे

1. **अक्ल के पीछे लाठी लिए फिरना**—मूर्खता के काम करना।
**वाक्य-प्रयोग**—तुम्हें कितनी बार समझाया पर तुम तो अक्ल के पीछे लाठी लिए फिरते हो। अब जो है सो भोगो।

2. **आँख दिखाना**—क्रोध प्रकट करना, धमकाना।
**वाक्य-प्रयोग**—आपका आँखें दिखाना बेकार है। मैं अन्याय का भण्डाफोड़ अवश्य करूँगा।

3. **आँखों में धूल झोंकना**—धोखा देना।
**वाक्य-प्रयोग**—हमारे नेता आजकल खुले आम जनता की आँखों में धूल झोंक रहे हैं।

4. **आगबबूला होना**—बहुत क्रोधित होना।
**वाक्य-प्रयोग**—हनुमान द्वारा राम की प्रशंसा सुनकर रावण आगबबूला हो गया।

5. **आस्तीन का साँप**—मित्रता की ओट में छिपा हुआ शत्रु।
**वाक्य-प्रयोग**—सावधान रहना! हमारे दल में बहुत से आस्तीन के साँप घुस आये हैं।

6. **ईद का चाँद होना**—बहुत दिन बाद दिखाई देना।
**वाक्य-प्रयोग**—कहो मित्र, अब तक कहाँ रहे, तुम तो ईद के चाँद हो गये हो।

7. **ऊँट के मुँह में जीरा**—अत्यधिक के स्थान पर कम मिलना।
**वाक्य-प्रयोग**—इतनी बड़ी योजना के लिए एक लाख रुपये ऊँट के मुँह में जीरा है।

8. **कान पर जूँ न रेंगना**—कोई ध्यान न देना।
**वाक्य-प्रयोग**—मैंने तुम्हें हजार बार समझाया, किन्तु तुम्हारे कान पर जूँ नहीं रेंगती।

9. **गड़े मुर्दे उखाड़ना**—पुरानी दबी हुई बातों को फिर से सामने लाना।
**वाक्य-प्रयोग**—तुम दोनों को अब प्रेम से रहना चाहिए। गड़े मुर्दे उखाड़ने से क्या लाभ? उन पुरानी बातों को भूल जाओ।

10. **गागर में सागर भरना**—थोड़े में बहुत अधिक कह देना।
**वाक्य-प्रयोग**—बिहारी लाल ने अपने दोहों में गागर में सागर भर दिया है।

11. **घाव पर नमक छिड़कना**—दुःखी व्यक्ति को और दुःखी करना।
**वाक्य-प्रयोग**—तुम उसे बुरा-भला कहकर क्यों घाव पर नमक छिड़कते हो? असफलता का दुःख उसे क्या कम है?

12. **घी के दिये जलाना**—बहुत प्रसन्न होना।
**वाक्य-प्रयोग**—राम के अयोध्या लौटने पर अयोध्यावासियों ने घी के दिये जलाये थे।

13. **अक्ल के दुश्मन**—मूर्ख।
**वाक्य-प्रयोग**—तुम तो निरे अक्ल के दुश्मन हो, कहीं सम्बन्धी से भी वैर किया जाता है।

14. **अंगारे उगलना**—अत्यधिक गुस्से में बोलना।
**वाक्य-प्रयोग**—ऐसे अधिकारी से सभी कर्मचारी दुःखी रहते हैं, जो अपने सहयोगियों पर हर समय आग ही उगलता रहता है।

15. **अंगारों पर चलना**—जान-बूझकर खतरा उठाना।
**वाक्य-प्रयोग**—आजकल सत्य के मार्ग में चलना अंगारों पर चलने के समान है।

16. **अंग-अंग फूले न समाना**—अत्यधिक प्रसन्न होना।
**वाक्य-प्रयोग**—प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर रमेश का अंग-अंग फूला नहीं समा रहा था।

17. **अन्न-जल उठ जाना**—अन्तिम समय आना।
**वाक्य-प्रयोग**—रामेश्वर की बीमारी शीघ्र ही इस संसार से उसका अन्न-जल उठा लेगी।

18. **आँख का तारा**—अत्यन्त प्रिय होना।
**वाक्य-प्रयोग**—इकलौता पुत्र माता-पिता की आँख का तारा होता है।

19. **घोड़े बेचकर सोना**—गहरी नींद सोना।
**वाक्य-प्रयोग**—परीक्षा सिर पर आ जाने पर भी वह घोड़े बेचकर सो रहा है।

20. **छक्के छुड़ाना**—पराजित कर देना।
**वाक्य-प्रयोग**—इस बार भारत की क्रिकेट टीम ने इंग्लैण्ड के छक्के छुड़ा दिये।

●●●